श्रीश्रीविष्णुप्रिया - चरित

प्रभुपाद श्रीहरिदास गोस्वामी

श्रीगौराङ्ग महाप्रभुके बाल्यलीला-परिकर
तैर्थिक विप्र श्रीसत्यभानु उपाध्यायके आत्मज
प्रसिद्ध पदकर्ता द्विज बलराम दास वंशोद्भव
प्रभुपाद श्रीहरिदास गोस्वामी कृत

श्री श्री विष्णुप्रिया-चरित

●

आयरे आयरे पतित अधम
मातृ-पूजा करि अग्रे।
मायेर चरण धूलिर प्रसादे
पतित जाइबे स्वर्गे॥
जय मा जननि! गौर-घरणि!
पतितेर राजराणी।
वक्षे तुलिया आदर करिया
दाओ मा! अभय वाणी॥

——ग्रन्थकार

●

आर्यावर्त्त प्रकाशन-गृह
९५-ए, चित्तरंजन एवेन्यू, कलकत्ता-१२

प्रकाशक—
रामनिवास ढंढारिया,
आर्यावर्त्त प्रकाशन-गृह,
९५-ए, चित्तरंजन एवेन्यू,
कलकत्ता-१२।

प्रकाशन तिथि
श्रीराधाष्टमी वि० सं० २०२२
गौराब्द ४७९, शकाब्द १८८७
वंगाब्द १३७२, सन् १९६५ ई०

प्रथम संस्करण—२०००

न्यौछावर
रु० ५·०० (पांच रुपये)

प्राप्ति स्थान

- श्रीविष्णुप्रिया गौराङ्गकुञ्ज,
  बुड़ा शिवटोला,
  नवद्वीप (नदिया)
- श्रीकृष्णचन्द्र अग्रवाल
  गीतावाटिका,
  शाहपुर, गोरखपुर, (उ० प्र०)
- आर्यावर्त्त प्रकाशन-गृह,
  ९५-ए, चित्तरंजन एवेन्यू,
  कलकत्ता-१२
- गोपाल ग्रंथालय,
  १८७, दादी सेठ अग्यारी लेन,
  बम्बई-२
- राजवैद्य पं० श्रीलक्ष्मीनारायणजी,
  प्रेमगली, पुराना शहर,
  वृन्दावन (मथुरा)
- श्रीकृष्ण जन्मभूमि
  कटरा केशवदेव
  मथुरा।
- राधेश्याम गुप्ता बुकसेलर
  श्रीबांकेबिहारी मन्दिर मार्ग
  वृन्दावन
- गीता-भवन पुस्तक दुकान
  स्वर्गाश्रम
  ऋषिकेश (देहरादून)
- राधा ग्रन्थ-कुटीर,
  ९८५-ए, गाँधी नगर,
  दिल्ली-३१

मुद्रक—
मातादीन ढंढारिया,
नेशनल प्रिन्ट क्राफ्ट्स,
९५-ए, चित्तरंजन एवेन्यू,
कलकत्ता-१२ (फोन : ३४-७३२२)

श्रीश्रीविष्णुप्रिया-वल्लभाय नमः

प्रकाशकीय निवेदन

तप्तकाञ्चनवर्णाभां वैष्णवीशक्तिरूपिणीम् ।
सनातनसुतां देवीं प्रणमामि प्रभुप्रियाम् ।।

श्रीविष्णुप्रिया-चरित मूल ग्रन्थ बङ्ग भाषामें प्रभुपाद श्रीहरिदासजी गोस्वामी द्वारा लिखा गया था। इसके रचना-काल और इसके प्राकट्यके रहस्यका विवरण आगे एक अलग प्रकरण (पृ० १७) में है। पाठकोंसे प्रार्थना है कि उसे एक बार वे अवश्य पढ़ें।

श्रीहरिदासजी गोस्वामीने श्रीविष्णुप्रिया-चरितकी रचना गौराब्द ४२७, बंगाब्द १३१९-२० के लगभग की थी। इस चरितकी विशेषता यह है कि यह भक्ति-भावसे लिखा होनेपर भी अधिकतर गौड़ीय वैष्णव साहित्यके प्राचीन ग्रन्थों और महाजन पदावलीके आधार पर लिखा गया है। स्थान-स्थान पर उन ग्रन्थोंके और पदोंके उद्धरण दिये गये हैं, जो वर्णित कथाओंके सुपुष्ट प्रमाण हैं। अतः यह चरित बहुत प्रामाणिक और मान्य है। जहाँ वर्णनका आधार श्रुत कथाएँ हैं, वहाँ गोस्वामीजीने स्वयं संकेत कर दिया है। भगवद्कृपासे श्रीहरिदासजीको प्रत्यक्षलीलाओंके दर्शनोंका भी सौभाग्य प्राप्त था। वे भाव-विभोर होकर लीला-दर्शनोंमें तन्मय हो जाया करते थे; स्वयं श्रीमन्महाप्रभु और श्रीश्रीनित्यानन्दजीका साक्षात्कार उन्हें हुआ था। इसलिये कुछ घटनाएँ इन लीला-दर्शनोंके आधार पर भी वर्णित प्रतीत होती हैं।

श्रीलक्ष्मीप्रिया-चरितका प्रणयन गौराब्द ४२९ में हुआ था, जिसके सूचना-प्रसंगमें श्रीहरिदासजीने लिखा है कि श्रीलक्ष्मीप्रिया-चरित लिखे जानेकी बारम्बार प्रेरणा होनेपर उनको और ग्रन्थोंमें देवीके चरित्र सम्बन्धी पर्याप्त सामग्री न मिलनेके कारण बङ्गीय साहित्य परिषदसे ठाकुर जयानन्द कृत श्रीचैतन्यमङ्गल ग्रन्थ मँगाया जो उनको गौराब्द ४२८ के माघकी १०वीं तारीखको प्राप्त हुआ और शीघ्र ही लगभग डेढ़ महीनेमें श्रीलक्ष्मीप्रिया-चरित लिखकर गौर पूर्णिमा गौराब्द ४२९ को मुद्रणके लिये दे दिया गया।

इसके बाद ठाकुर जयानन्दके श्रीचैतन्यमङ्गलमें वर्णित श्रीमन्महाप्रभुजी द्वारा श्रीविष्णुप्रिया-देवीको वैराग्य-शिक्षाका एक प्रकरण लिखकर श्रीहरिदासजी

गोस्वामीने अपने 'गम्भीराय श्रीविष्णुप्रिया' ग्रन्थके आरम्भमें सूचना-प्रसंग अध्यायमें प्रकाशित किया। यह प्रकरण श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके चरित्रसे बहुत सम्बन्धित है। अतः हमने उसको श्रीविष्णुप्रिया-चरितके हिन्दी अनुवादमें तेईसवें अध्यायके नामसे समाविष्ट कर लिया है और बादके अध्यायोंमें मूल ग्रन्थकी अध्याय संख्यामें एक और जोड़कर प्रकरण ज्योंके त्यों रख दिये गये हैं।

मूल बंगला ग्रन्थके छब्बीसवें अध्यायमें, जो इस अनुवादित ग्रन्थमें सत्ताईसवाँ अध्याय होता है, विरह-विधुरा श्रीविष्णुप्रियाकी हालतके वर्णनमें श्रीमती विष्णुप्रिया देवी द्वारा संन्यासके उपरान्त शान्तिपुरमें विराजे हुए अपने प्राणनाथके श्रीचरणोंमें प्रेषित एक पत्रका उल्लेख है। उसका रसास्वादन मूल बंगला ग्रन्थके पच्चीसवें अध्यायमें—जो यहाँ छब्बीसवाँ अध्याय है—वर्णित श्रीविष्णुप्रियाको छोड़कर सबके शान्तिपुर प्रस्थान करनेका प्रसंग है, उस प्रसंगके वर्णनके साथ दे दिया है, क्योंकि वह वहींसे सम्बन्धित और वहीं अधिक रसास्वादन कराने वाला प्रतीत हुआ। इस स्वतन्त्रता वर्तनके लिए गौरधामगत ग्रन्थकारसे हम क्षमा प्रार्थना करते हैं।

ग्रन्थकारने मूल बंगला ग्रन्थमें परिशिष्ट रूपमें प्राचीन पदकर्त्ताओंके कुछ पद संग्रह किये हैं और कुछ अन्य प्रबन्ध भी दिए हैं। पदोंमेंसे जो चरित्रमें वर्णित लीलाओंसे सम्बन्धित है उन्हें उन स्थानोंपर पाद टिप्पणीके रूपमें दे दिया है जिससे पाठकगण उस पदका आस्वादन उस सम्बन्धी लीलाके रसास्वादनके साथ-साथ कर सकें।

इन्हीं परिशिष्टोंमें उल्लिखित एक बारह-मासिया पाठकोंको रुचिकर होता प्रतीत होनेसे परिशिष्ट रूपमें हिंदी पद्यानुवाद सहित इस अनुवादित ग्रन्थमें दे दिया गया है। इस बारह मासाको कोई ठाकुर लोचनदास कृत मानते हैं, कोई ठाकुर जयानन्द कृत। दोनों ही महाप्रभुके कृपापात्र थे। किन्हींके द्वारा भी रचित हो, यह है बड़ा प्रभावोत्पादक। बाकी बचे अंश जो लीलासे सम्बन्धित नहीं हैं ग्रन्थका कलेवर न बढ़े इसलिये छोड़ दिए गए हैं।

प्राचीन महाजन कवियोंके बङ्गला पद और भी कहीं दृष्टिगोचर हुए और इस ग्रन्थमें वर्णित लीलासे सम्बन्धित हुए उनको भी कहीं-कहीं पाद टिप्पणीमें दे दिया है।

इसके अतिरिक्त 'मुरली विलास' ग्रन्थमें श्रीवंशीवदनके पौत्र श्रीरामाई प्रभुके श्रीविष्णुप्रिया देवीके मिलन प्रसंगका वर्णन भी पाद टिप्पणीके रूपमें यथा-स्थान दिया है।

कुछ स्थानोंपर किसी-किसी लीलासे सम्बन्धित साकेतधामगत भक्तहृदय राष्ट्रकवि श्रीमैथिलीशरणजी गुप्त द्वारा रचित हिन्दीके लघुकाव्य "श्रीविष्णुप्रिया" श्रीग्रन्थके कुछ उद्धरण पाद टिप्पणीके रूपमें दिए गए हैं। इससे पाठकोंका रसास्वादन वर्द्धित होगा, ऐसा पूर्ण विश्वास है।

मूल बंगला ग्रन्थमें दो जगह 'श्रीचैतन्य-चन्द्रोदय नाटक'के उद्धरण हैं जो एक तो मूल ग्रन्थके २५वें अध्याय (अनुवादित ग्रन्थके २६वें अध्याय) के प्रारम्भमें है और दूसरा मूल ग्रन्थके २६वें अध्याय (अनुवादित ग्रन्थके २७वें अध्याय) में है। 'श्रीचैतन्य-चन्द्रोदय नाटक' मूल ग्रन्थ संस्कृतमें है जो कवि कर्णपुर द्वारा रचित है। इस ग्रन्थका कथानकके रूपमें श्रीवंशी शिक्षाके रचयिता श्रीप्रेमदासने १६३४ शकाब्दमें लौकिक (बङ्ग) भाषामें पद्यानुवाद किया था। वर्णनके पूर्वापरको समझनेमें बाधा न आवे इसलिए अनुवादकने केवल अनुवाद न करके कहीं-कहीं प्रसंग जोड़ दिये हैं जो मूल संस्कृत नाटकमें नहीं दीखते। यह अनुवादित 'चैतन्य-चन्द्रोदय नाटक' बङ्गाब्द १३०७ (अनुमानतः शकाब्द १८२२, ईस्वी सन् १९०१) में बंगभूमि कार्यालय, ९, मिर्जापुर स्ट्रीट, कलकत्ता द्वारा प्रकाशित हुआ था। इस अनुवादित श्रीविष्णुप्रिया चरितके २६ वें अध्यायके आरम्भमें जो 'चैतन्य-चन्द्रोदय नाटक'का उद्धरण है वह अनुवादित 'चैतन्य चन्द्रोदय नाटक'के पंचम अङ्कमें उक्त प्रकाशित पुस्तकके पृष्ठ १३९ में है और जो २७वें अध्यायमें है वह अनुवादित नाटकके षष्ठ अंकमें पृष्ठ १४९ पर है। मूल संस्कृत नाटक देवनागरी लिपिमें निर्णय सागर प्रेस, बम्बईसे द्वितीय संस्करण ईस्वी सन् १९१७ में प्रकाशित हुआ है। उसके पृष्ठ १०१ में इस अनुवादित ग्रन्थकी २७वें अध्यायके--

हेन वाक्य केन माता कहिले आपने। श्रुति वाक्य सम इहा खण्डे कौन जने॥

पयार छन्दको रत्नाकर (समुद्र देवताके प्रतीक) और गङ्गा (सुरसरिके प्रतीक) के संवादमें गङ्गाके द्वारा ग्रन्थकारने इन शब्दोंमें कहलवाया है--

मातः, कथमिदमुक्तम्? अतः परमस्माभिरिदं श्रुतिप्रतिपादितमिव खण्डितं न शक्यते भवद्वचः।

इस कृतिमें कई स्थानोंपर साहित्यकी दृष्टिसे पुनरुक्ति दोष दृष्टिगोचर हो सकता है। लेखकने रस-वर्द्धनके लिये ऐसा करना उचित समझा। अतएव हिन्दी अनुवादमें भी वह ज्योंका त्यों रहने दिया गया है। वास्तवमें यह ग्रन्थ साहित्य-मर्मज्ञोंके लिये न लिखा जाकर भावुक भक्तोंके लिये लिखा गया है और इसीलिये रचयिताका प्रधान लक्ष्य भावोत्कर्ष एवं रस-वर्द्धन रहा है।

हम लोगोंकी बहुत दिनोंसे इच्छा थी कि इस ग्रन्थका हिन्दी अनुवाद करवाकर हिन्दी पाठकोंकी सेवामें उपस्थित किया जाय। लेकिन कई कठिनाइयोंसे इसमें विलम्ब होता गया। भगवत् कृपासे अब वह अभिलाषा पूर्ण हो सकी है। श्रीगौरीशंकरजी द्विवेदीने इस ग्रन्थका अनुवाद करके जो अनुग्रह किया है उसके लिये हम उनके बड़े आभारी हैं।

बंगलाके पदोंका और पयार छन्दोंका अनुवाद उनके सामने शब्दानुवादके रूपमें दिया गया है जिससे अनुवाद पढ़कर बंगला पद और बंगलाके पयार छन्द पढ़े जायँ तो बड़ी सरलतासे समझमें आ जायँ। जहाँ-कहीं ऐसे अनुवादके भावमें भूल रही हो उसकी ओर ध्यान आकर्षित करनेपर अगले संस्करणमें उसके सुधारनेका ध्यान रक्खा जायगा।

ग्रन्थमें लीला-माधुर्यके रसास्वादन-संवर्द्धन हेतु श्रीगौर-विष्णुप्रिया साहित्यकी विभिन्न पुस्तकोंसे श्लोक एवं पद आदि उद्‌धृत किये गये हैं। उद्‌धृत ग्रन्थोंके नाम संक्षेपमें सांकेतिक चिह्नों द्वारा दिये गये हैं। उन ग्रन्थोंका पूर्ण विवरण यों है––

अ०प्र० –श्रीअद्वैताचार्य प्रभुके शिष्य श्रीईशाननागर कृत अद्वैत प्रकाश।
अ०व० –श्रीमनोहरदास कृत अनुराग वल्ली।
चै०त०दी० –श्रीशशिभूषण भागवत रत्न गोस्वामीकृत चैतन्य-तत्व-दीपिका।
चै०भा० –ठाकुर श्रीवृन्दावनदास कृत श्रीचैतन्य-भागवत;
चै०मं० –ठाकुर श्रीलोचनदास कृत श्रीचैतन्य-मङ्गल।
ज०चै०मं० –ठाकुर श्रीजयानन्द कृत श्रीचैतन्य-मङ्गल।
पु०वि०प० –महात्मा श्री शिशिर कुमार घोषके संरक्षणमें प्रकाशित पुरातन विष्णुप्रिया पत्रिका।
प्रे०वि० –श्रीजाह्नवा देवीके शिष्य श्रीनित्यानन्ददास कृत प्रेम-विलास।
वं०शि० –श्रीपुरुषोत्तम मिश्र (गुरुदत्त नाम-श्रीप्रेमदास) कृत वंशी शिक्षा।
श्रीगौराङ्ग-लीलामृत–श्रीपाद विश्वनाथचक्रवर्ती कृत श्रीगौराङ्ग-लीलामृत।

इस अनुवादित पुस्तकके पृष्ठ २०२ में "कति मोर वहुला भाण्डीर गोवर्द्धन" का अनुवाद किया है––मेरा बहुतसे वट वृक्षोंसे भरा गोवर्द्धन कहाँ है? श्रीकृष्णलीलाकी व्रजभूमिमें वहुला और भाण्डीर नामके वन भी हैं, अतः इसका अनुवाद यों भी हो सकता है––मेरा वहुलावन, भाण्डीरवन और गोवर्द्धन कहाँ हैं?

इस पुस्तकके पृष्ठ ३१५ में श्रीविष्णुप्रियाजीकी निद्रित छविका प्रथम छन्द

है, उसका अनुवाद इस प्रकार अधिक उपयुक्त लगता है—उसकी निद्रा भङ्ग न करना। मैं उसके माधुर्य मण्डित निश्चल निद्रित मुख मण्डलको जी भरकर देख लूँ और हृदयमें धारण करलूँ। अरे, उसकी निद्रा भङ्ग न करना।

इसी प्रकार और जगह भी सुधार संभव हो सकते हैं जो ध्यानमें लानेसे अगले सस्करणका अवसर आया तो सुधारनेका पूरा प्रयत्न किया जायगा। प्राचीन बंग भाषा पर पूरा अधिकार न रहने से ऐसी भूल छूट जाना स्वाभाविक है।

मुद्रण कार्यमें अशुद्धियाँ न रहें, इसकी—जहाँ तक बन पड़ा है—चेष्टा की गयी है, फिर भी अनभ्यस्तताके कारण, कुछ असावधानी और प्रमादवश एवं मुद्रण कालमें अक्षर टूट जाने या निकल जानेसे भूलें रह गयीं। जो ध्यानमें आयीं उनका सुधार हाथसे करवा दिया गया है। इनके अतिरिक्त भी भूलें रह सकती हैं। विद्वज्जन द्वारा इंगित कर देनेपर अगले संस्करणका यदि अवसर आया तो उनको सुधारनेकी पूर्ण चेष्टा की जायगी।

इस करुण-रस प्रधान ग्रन्थको पढ़कर हिन्दी-भाषी पाठक-पाठिकाओंने आस्वादन किया तो हम अपना परिश्रम सफल समझेंगे। मूल बंगला ग्रन्थ पढ़ने वालोंकी क्या हालत होती थी उसका किंचित् आभास रचयिताको लिखे गए एक पत्रके निम्न उद्धरणसे होता है जो पत्र स्वनामधन्य श्रीरामदास बाबाजीके शिष्य श्रीयुक्त जितेन्द्रनाथ घोषालने—जो सुदूर ब्रह्मदेश रंगूनमें केलनर कम्पनीके रेलवे होटलके मैनेजर थे—तारीख नवीं कार्तिक, १३२८ बंगाब्दको लिखा था—

> "मेरी पत्नी आपका "श्रीविष्णुप्रियाचरित" पाठ कर रही है। मैं उसको नित्य ही उसकी बात सुनानेको कहता हूँ, परन्तु वह बात आरम्भ करते ही रो-रोकर व्याकुल हो उठती है। हम लोगोंका समय किस प्रकार आनन्दमें व्यतीत हो रहा है, वह पत्रमें व्यक्त नहीं किया जा सकता।"

श्रीश्रीगौर-विष्णुप्रिया-युगल-भजन-निष्ठ श्रीश्रीविष्णुप्रिया परिवारके श्रीमान् नृत्यगोपाल गोस्वामीने "श्रीश्रीविष्णुप्रियाचरित" का पाठ करके ग्रन्थकारको लिखा था :—

> "तुमने यह क्या किया ? यही क्या तुम्हारा "श्रीविष्णुप्रिया-चरित" है ? नहीं, नहीं, तुम भूलते हो। यह तो भक्तप्राण के लिए कालाग्नि है—इसे क्या पढ़ा जा सकता है ? क्या इसके पढ़नेपर प्राण टिक सकते हैं ? यह कभी भी तुम्हारा लिखा नहीं है ? मैं तुमको बाल्यकालसे ही जानता हूँ, तुम्हारी तो सर्वदा ही कुसुमके समान कोमल प्रकृति रही है। तुम्हारे कुसुम-कोमल

हृदयसे इस प्रकारकी हृदय-विदारक ज्वालामयी भाषाका उदय कभी भी सम्भव नहीं। कुसुममें वज्रता, जलमें दाहिका शक्ति, भक्तमें क्षमाहीनता यदि सम्भव हो, तभी समझ सकता हूँ कि यह "श्रीविष्णुप्रिया-चरित" भी तुम्हारा लिखा है। यह श्रीग्रन्थ भक्तोंके लिये है ही नहीं, भक्त इसे कभी भी पढ़ नहीं सकेंगे। पढ़नेपर उनके प्राण टिकेंगे नहीं। तुम्हारे इस ग्रन्थकी विशेषता, लेखनकी भाषा और भावके समन्वय गुणसे लिखित विषयकी पंक्ति-पंक्ति और अक्षर-अक्षरमें एक कैसी अद्भुत उन्मादिनी शक्तिका समावेश हुआ है जिसके पठन व श्रवण मात्रसे पाषाण-प्राण भी पिघल जाते हैं। तुम्हारे द्वारा जो असम्भव है, वही सम्भव हो गया है। जो असम्भवको सम्भव कर सकते हैं, वे ही इसके कर्त्ता हैं। तुम तो केवल निमित्त-मात्र हो। तुमको हिप्नोटाइज़ (Hypnotise) अर्थात् चेतनाहीन करके यह कार्य कराया गया है। मैं दृढ़ताके साथ कह सकता हूँ कि चेतनावस्थामें यह लिखते तो तुम कभी भी बच नहीं सकते थे——तुम्हारे कोमल प्राण जलकर भस्म हो जाते। जो भी हो, भला मुझ जैसे पाखण्डीके पाषाण-हृदयको द्रवित करने-वाली औषधका तो सृजन हो गया।"

श्रीगौराङ्ग गत-जीवन श्रीमान् नगेन्द्रनाथ लाहिड़ी, बी० एल० वकीलने ग्रन्थकारको लिखा था :——

"एक विचार मनमें उठ रहा है जिसे आपसे कहे बिना नहीं रहा जाता। वह यह है——मैं सोचकर भी यह निश्चय नहीं कर पा रहा हूँ कि आपने कैसे "श्रीविष्णुप्रिया-चरित" लिखा। मैं इस श्रीग्रन्थके सारे स्थल नहीं पढ़ सकता, कारण कि मेरेमें यह शक्ति नहीं है। इस श्रीग्रन्थके पढ़नेके लिए अत्यधिक शक्तिकी आवश्यकता है। महादेवीजीने पार्वतीजीसे कहा था कि समस्त ब्रह्माण्डका जितना भी सुख-दुःख है, यदि वह सब एकत्रित कर दिया जाय तो भी वह श्रीमती राधाजीके सुख और दुःखके एक कणके समान भी नहीं हो सकता। आपके श्रीग्रन्थको पढ़कर मुझे उसी बातका स्मरण हो आया। आपके हृदयमें आनन्द प्राप्त करनेकी शक्ति जितनी अधिक है, उतनी ही अधिक दुःख सहन करनेकी सामर्थ्य भी है। मैं क्षुद्र-प्राण हूँ, मेरी क्षुद्र शक्तिसे इस श्रीग्रन्थका पाठ सम्भव नहीं।

श्रीराधाष्टमी वि० सं० २०२२
गौराब्द ४७९, शकाब्द १८८७
बगाब्द १३७२, सन् १९६५ ई०

निवेदक—
वैष्णव-दासानुदास
रामनिवास ढंढारिया

श्रीश्रीविष्णुप्रिया-चरित

अनुक्रमणिका

शीर्षक	पृष्ठ

शीर्षक पृष्ठ शीर्षक पृष्ठ

एकत्रिंश अध्याय

वंशीवदन और श्रीमतीजी। काञ्चनाका नीलाचल गमन

द्वात्रिंश अध्याय

शची देवी और प्रभुकी लीला-संवरण कथा

त्रयस्त्रिंश अध्याय

श्रीनिवास पर देवीकी कृपा

चतुस्त्रिंश अध्याय

श्रीधाम नवद्वीपमें श्रीश्रीमहाप्रभुकी श्रीमूर्ति-प्रतिष्ठा

●

चित्र-सूची

मङ्गलाचरणम्

श्रीश्रीगौराङ्ग-स्तोत्रम् ।*

नमामि गौराङ्गपदारविन्दं सुवर्णवर्णाङ्ग-कृपावतारम् ।
नमामि श्रीकृष्ण-प्रेमातिमत्तं वाञ्छामि गौराङ्गकृपाप्रसादम् ।।१।।
हे देव ! कारुण्यसुधाभिवर्षिन् ! त्वमेव संकीर्त्तनसृष्टिकारकः ।
त्वमेव विश्वस्य धाता-विधाता त्वमेव श्रीकृष्णप्रेमैकदाता ।।२।।
जीवस्य कैवल्यदाता त्वमेकः पापस्य-तापस्य हरस्त्वमेव ।
हे गौर अनन्तकृपासमुद्रस्त्वया बिना नास्ति गतिश्च कुत्र ।।३।।
नमामि श्रीविष्णुप्रियैकनाथं नटन्तं रटन्तं श्रीकृष्णनाम ।
अगाध सौन्दर्यमाधुर्यधाम श्रीपादपद्मं शरणं व्रजामः ।।४।।

श्रीश्रीविष्णुप्रियाष्टकम् ।*

श्रीगौराङ्गप्रियां वन्दे गौर-वक्षविलासिनीम् ।
त्रैलोक्यमोहिनीं देवीं नमामि वरवर्णिनीम् ।।१।।
बालां विष्णुप्रियां वन्दे गौराङ्ग-सहधर्म्मिणीम् ।
सर्व्वरूपगुणाढ्यां च सनातनस्य नन्दिनीम् ।।२।।
नीलाब्जनयनां वन्दे श्रीगौराङ्कनिवासिनीम् ।
सुकेशां चारुवेशाञ्च नीलवस्त्रां सुहासिनीम् ।।३।।
गौराङ्गीं सुन्दरीं मुक्ताहारद्योतितवक्षसाम् ।
चारुदतीं कम्बुकण्ठीं नमामि गजगामिनीम् ।।४।।
नवद्वीपमयीं देवीं शरच्चन्द्रनिभाननां ।
तप्तकाञ्चनवर्णाभां नमामि करुणामयीम् ।।५।।
मृणालशीतलां मन्दस्मितनित्ययुताननाम् ।
कोमलाङ्गीं विशालाक्षीं वन्दे गौराङ्गगेहिनीम् ।।६।।
महामायासुतां गौरीं नानालङ्कारभूषिताम् ।
तां नमामि महालक्ष्मीं ह्लादिनीं शक्तिरूपिणीम् ।।७।।
चिदानन्दमयीं विश्ववन्दितां पतिदेवताम् ।
जगद्धात्रीं प्रेमदात्रीं नमामि भूस्वरूपिणीम् ।।८।।
कृष्णदासीकृतं स्तोत्रं नाम्ना विष्णुप्रियाष्टकम् ।
श्रद्धया पठते यो हि प्रेमभक्तिमवाप्नुयात् ।।९।।

---

* ग्रन्थकारकी कन्या श्रीमती सुशीला सुन्दरी देवी द्वारा रचित ।

श्रीश्रीविष्णुप्रिया-तत्त्व

विष्णुप्रिया-तत्त्वकथा जानिया गभीर।
निषेधिला प्रचारिते गौर प्रेमवीर।।
ताहान आदेश हय ताहाने लुकाते।
प्रेम कथा परकाश हइवे केमते।।
प्रियाजिर कथा ताइ ग्रन्थे लेखा नाइ।
परछन्न अवतार नदेर निमाइ।।
बुझियाओ हेन कथा ना बुझे जे जन।
केमने जानिबे तत्त्व लुकान रतन।।
भजनेर पथ तार आछे बहु दूर।
प्रियाजि चिनिते चाइ प्रेम परचूर।।
विष्णुप्रिया-तत्त्व ह'वे धीरे परचार।
कलिजीव निस्तारिबे जावे हाहाकार।।
प्रभुर आदेश तांहे करिते प्रचार।
विष्णुप्रिया-तत्त्वकथा हइवे विस्तार।।
कलिर कलुषनाशी विष्णुप्रिया नाम।
सबे मिले कर तांर पदे परणाम।।
जय गौर-विष्णुप्रिया मन्त्र कर सार।
ए भव-सागर यदि ह'ते चाओ पार।।
बुझियाछ गौर-तत्त्व वाकि विष्णुप्रिया।
साधना अपूर्ण रवे ना बुझिले इहा।।
कय पापी हरिदास चरणे धरिया।
उच्चैः स्वरे बल सबे "जय विष्णुप्रिया"।।

—'गौर गीतिका' से उद्धृत

श्रीश्रीविष्णुप्रिया माँ

नाम विष्णुप्रिया साखान अमिया, कत दया मार प्राणे ।
पतितेर तरे सदा आँखि झरे, सुख नाहि मार मने ।।
अधम जीवेर त्रिताप नाशिते नयनेर जल दिया ।।
जनम मायेर ए मर - जगते नाम लये विष्णुप्रिया ।।
गौर - घरणी रमणीर मणि प्रेममयी प्रेमदात्री ।
पतित - पावनी अधम तारिणी जग माता जगद्धात्री ।।
कोले करि बसि अधम पतित पापी तापी दुराचार ।
आदर करिया दितेछेन मुखे प्रेमरस सुधाधार ।।
एमन जननी पाबि ना पाबि ना दुनिया खुँजिया आर ।
पतितेर माता गड़ेछे विधाता पूर्ण स्वतन्त्र-आकार ।।
हृदय - वेदना नयनेर जल आकुल रोदने मार ।
धौत हबे पाप कलिर जीवेर हइबे जीवोद्धार ।।
ताइ मा कातरा आँखि जले भरा सन्तान लइया वक्षे ।
नीरव रोदने महान् साधना दितेछेन प्रेम शिक्षे ।।
प्रेम - कल्पतरु पतिदेव गुरु दियाछेन महामन्त्र ।
मा आमार ताइ जपेन सतत जीवोद्धारेर तन्त्र ।।
आयरे आयरे पतित अधम मातृपूजा करि अग्रे ।
मायेर चरण धूलिर प्रसादे पतित जाइबे स्वर्गे ।।
जय मा जननी गौर - घरणी पतितेर राजराणी ।
वक्षे तुलिया आदर करिया दाओ मा अभय वाणी ।।
तुमि ना देखिले पतित पावनि ! कार काछे तारा जाबे ।
शान्तिमयीर चरण भिन्न कोथाय शान्ति पाबे ।।
श्रीचरण - रेणु पाइबार तरे छूटियाछि पापी सङ्गे ।
(तुमि) पापी भालबास ताइ माखियाछि पतितेर धूलि अङ्गे ।।
पतित बलिया रेख मा चरणे बड़ पापी 'हरिदास' ।
साधु-सङ्ग छाड़ि पतित सङ्ग करियाछि अभिलाष ।।

—'गौर गीतिका' से उद्धृत

कामना

अपराधी बले दाओ पदे दले,
मार शिरे लाथि पड़े पड़े काँदि,
चरण तबुओ छाडिबो ना ।
(ऐ) चरणेर तले बसिया बिरले,
भिजाइब माटि नयनेर जले,
काहाकेओ किछु बलिब ना ।।

(सुधु) मने मने कब किसे योग्य हब,
चरणेर रेणु चरणे मिशाब,
(ऐ) पद हते दूरे थाकिब ना ।
दूर दूर करे ताड़ाइया दिले,
पद तल हते जाइब ना चले,
मारले ओ आमि मरिब ना ।।

तोमार चरणे जीवने मरणे,
थाके जेन मति एइ आशा मने,
दूरे जेते मोरे बलिओना ।
जत किछु सुख मने भावि दुःख,
जगत संसार भावि आमि छार,
(तव) चरणेर छाया छाडिब ना ।।

(ऐ) चरणेर तल, बड़ सुशीतल,
सत ज्वाला जाय जाय हाय हाय,
(तुमि) पद रज दिये भुलिओ ना ।
हरिदासियार पराणेर साध,
पद पाखालन चरण सेवन,
बञ्चित ताते करिओ ना ।।

———
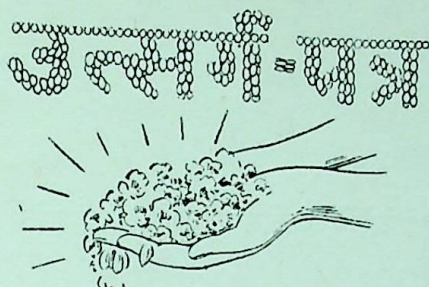
गोलोकगत परमाराध्य श्रीसीतानाथ गोस्वामी पितृदेव

श्रीकरकमलेषु

पितृदेव !

आपके पद-प्रान्तमें बैठकर बाल्यकालमें वैष्णव धर्मकी जो उच्च शिक्षा पायी थी, भक्तिशास्त्रके सार मर्मको जैसा समझ पाया था, उसका फल अब फलना आरम्भ हुआ है। किन्तु आपको वह न दिखा सका, इसका बड़ा दुःख है। बाईस वर्षसे अधिक हो गये जब आपने गोलोक धाम प्रयाण किया था*। आपके अधम अकृती सन्तानके सिरपरसे कितने विपद-समूह, कितनी दुःख-ज्वाला, कितने शोक-ताप निकल गये और हृदयको चूर-चूर कर दिया, जिसकी कोई सीमा नहीं। परन्तु आपके श्रीचरणोंके आशीर्वादसे दुःखको सुख समझकर आदरपूर्वक हृदयसे आलिङ्गन करना ही सीखा है इससे मनमें अपार आनन्द मिला है। उसी अपूर्व आनन्दके फलस्वरूप यह "श्रीश्रीविष्णुप्रिया-चरित" ग्रन्थ आपके पवित्र नामपर पितृ-भक्तिके स्मृति चिह्न स्वरूप उत्सर्गीकृत हुआ।

आपका श्रीचरण-रेणु-प्रार्थी

अधम अकृती पुत्र

हरिदास

---

* श्रीहरिदासजी गोस्वामीके पितृदेवके गोलोक प्रयाण करनेकी तिथि मंगलवार, दिनांक २० नवम्बर, सन् १८८६, बङ्गाब्द १२९६, गौराब्द ४०३ है।

—प्रकाशक

श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीके पादपद्मोंमें

ग्रन्थकारकी प्रार्थना

चैतन्य-बल्लभा तुमि जगत् ईश्वरी।
तोमार दासेर दास हैते वाञ्छा करि।।

—वं० शि०

माँ! चिरकरुणामयी! पतितोद्धारिणी! पतितपावनी!

तुम्हारा श्रीचरण-रेणु-प्रार्थी होकर, तुम्हारा दासानुदास, तुम्हारे पद-प्रान्तमें बैठकर रात-दिन तुम्हारे दुःखसे रोता रहता है—तुम्हारा कृपा-कण-भिक्षु होकर, तुम्हारा अभागा सन्तान, तुम्हारे प्रत्यादेशसे तुम्हारी पुण्य-चरित-कथा—तुम्हारे मानव-जीवनकी सुख-दुःख-गाथा एक-एक करके लिपिवद्ध कर रहा है। माँ! दयामयी! तुम्हारे आदेशसे जिस दिनसे यह जीवाधम तुम्हारी दुःखपूर्ण पवित्र जीवन-गाथा लिखनेमें प्रवृत्त हुआ, उसी दिनसे वह सर्वदा क्रन्दन करता रहता है। इस क्रन्दनका अन्त नहीं है; नेत्रोंका जल सूख भी नहीं पाता है, फिर आँसुओंसे नेत्र भर जाते हैं। माँ! तुम्हारे मलिन वदनकी ओर देख भी नहीं सकता, तुम्हारी विषादमयी श्रीमूर्ति तुम्हारे अभागे सन्तानके सम्मुख निरन्तर घूमती रहती है। माँ! तुम्हारे निकट कुछ भी नहीं छिपाऊँगा, तुम जगन्माता हो, कलिहत जीवकी जननी हो। माताके निकट सन्तानकी कोई भी बात छिपाई नहीं जाती। दयामयी! माँ मेरी! तुम्हारा अयोग्य अधम सन्तान जब भी दवात-कलम लेकर तुम्हारा पुण्य-चरित लिखने बैठता है, तभी उसका दुःख-समुद्र मानो उथल उठता है, प्राण व्याकुल होकर रो उठते हैं, अपने आप दोनों नयनोंसे जल धारा आने लगती है, आँखोंके जलसे पत्र भींज जाते हैं। माँ! तुम्हारा अधम अकृती सन्तान नयन-जल द्वारा तुम्हारा पुण्य चरित लिख रहा है, क्योंकि यह तुम्हारा आदेश है। मातृ-आज्ञा अलंघनीय है, नहीं तो, इस कठिन कार्यमें वह कभी भी

हस्तक्षेप नहीं करता। माँ! इच्छामयी! तुम कृपा करके, केश पकड़कर जो करा रही हो, तुम्हारा अधम सन्तान वही कर रहा है।

आज्ञा बलवान ताँर ना पारि ठेलिते।	आज्ञा बलवान् है, उसका उल्लंघन
लिखिब लिखाबे जाहा बसि मोर चिते॥	नहीं किया जा सकता। मेरे हृदयमें
	बैठकर जो लिखावोगी वही लिखूँगा।

माँ! तुम्हारी दुःखपूर्ण जीवन-गाथा महाजनगण नहीं लिख गये, कारण, इसमें बड़ा दुःख-कष्ट है। जो लिखें उनका स्वयंका अपना दुःख, जो पढ़ें या सुनें उन सबका दुःख—जीवके मनको दुःख देना बड़ा गर्हित कर्म है, बड़ा पाप है। प्रतीत होता है, इसीलिये महाजनगणने इस कठिन और गुरुतर कार्यमें हस्तक्षेप नहीं किया। माँ! तुम्हारा यह अधम सन्तान महापातकी है। वह आजीवन जन्म-जन्मार्जित दुःख-राशिसे जलकर मरा जा रहा है—विषम दुःखकी ताड़नासे सर्वदा हाहाकार करता है और कितने लोगोंको जला रहा है। अब जननीकी दुःख-गाथा लिखकर कितने लक्ष-कोटि जीवोंके हृदयमें दारुण आघात करने बैठा है। लेकिन यही भरोसा है कि यह तुम्हारा आदेश है। कलिके जीवका हृदय बड़ा कठोर है, सामान्य दुःखसे वह द्रवित नहीं होगा। माँ! प्रतीत होता है, इसीलिये तुम्हारा ऐसा आदेश है। कलिके जीवके कठोर हृदयको द्रवित करानेके लिए ही प्रभुका संन्यास-ग्रहण और कङ्काल-वेश धारण था। जब प्रभुकी संन्यास-कथा महाजनगण लिख गये हैं, तब माँ! तुम्हारी दुःख गाथा लिखनेमें और क्या बाधा है? प्रभुका कङ्काल-वेश दर्शन करके, उनकी संन्यास-कथा सुनकर कलिके जीवका कठोर हृदय द्रवित होकर उनके चरण-प्रान्तमें आकृष्ट हुआ था। कलिहत जीवके मङ्गलके लिए ही प्रभुका यह कङ्काल-वेश धारण था और माँ! इसी शुभ उद्देश्यसे तुम्हारा भी भिखारिणी वेश है। कलि-जीव बड़े ही निष्ठुर हैं,—उनका हृदय बड़ा ही कठोर है, इसीसे प्रभुको इतना कष्ट दिया और मेरी राजरानी माँको भिखारिणी सजाया। धिक्कार है कलिके जीवके जीवनको!

माँ। प्रभुकी संन्यास-कथा महाजनगणके मतानुसार अति पुण्य-कथा है। जिसके सुननेसे जीव भव-बन्धनसे मुक्त होता है।

शुन-शुन आरे भाइ! प्रभुर सन्न्यास।	अरे भाई! प्रभुकी संन्यास-
से कथा शुनिवे कर्म्म-बन्ध जाय नाश॥	कथा सुनो, जिसके सुननेसे कर्मोंके
—चै० भा०	बन्धनका नाश हो जाता है।

माँ ! तुम्हारी पुण्य-चरित-कथा, तुम्हारी कठोर-भजन-कथा सुननेसे भी कलि-जीवका भव-बन्धन नाश होगा। माँ ! तुम्हारी दुःख-गाथा सुनकर जिसके नयनसे एक विन्दु भी अश्रुजल गिरेगा, उसके सब पाप धुल जायेंगे—उसका हृदय निर्मल हो जायगा, वह गौर-प्रेम-प्राप्तिका अधिकारी होगा। उसको लीला-अनुभवकी शक्ति मिलेगी ! यह बात महाजनगण बता गये हैं—

ईश्वरीर नाम ग्रहण शुन भाइ सब।	हे भाई ! ईश्वरीके नाम-ग्रहणकी
से कथा श्रवणे लीलार हय अनुभव॥	कथा सब लोग सुनो, जिसके श्रवणसे
—प्रे० वि०	लीलाका अनुभव होता है।

माँ ! तुम्हारी लीला-कथामें जो अभाव था, तुम्हीं कृपा करके उसको अपने आप पूर्ण कर देती हो, इसको मैं अच्छी तरह समझ गया हूँ। माँ ! तुम्हारे शेष जीवनकी कथा कहीं भी न मिलनेसे मैं बड़ा ही उद्विग्न और कातर था। तुम्हारी सङ्गोपन-कथा और प्रभुकी अन्तर्धान-कथा एक-सी ही है, एक-से सूत्रमें गुँथी है। यह कथा किसी ग्रन्थमें नहीं है, कोई महाजन इस अपूर्व पुण्य-कथाका आभास पर्यन्त भी नहीं दे गये। किन्तु माँ ! तुम्हारे कृपा-बलसे, तुम्हारे भ्रातृवंशधर, भक्त-प्रवर, श्रीमान् नृत्यगोपाल गोस्वामीने तुम्हारे अधम सन्तानको इस अति गुह्य विषयका सन्धान बताकर कृतकृतार्थ किया है। माँ ! तुम्हींने उनके द्वारा अपनी सङ्गोपन-कथा इतने दिनोंके बाद प्रकाशित की।

दयामयी ! क्षेमङ्करी ! कलि-कलुष-नाशिनी ! हतभाग्य कलिके जीवके प्रति शुभ-दृष्टि-पात करो। यह देखो, वे आकुल प्राणोंसे सम-स्वरसे अपनी चिर-मङ्गलमयी जगज्जननी माँको पुकार रहे हैं—

जय हो, श्रीविष्णुप्रिया माँकी जय हो।
जय हो, श्रीगौरचन्द्रदेवकी जय हो॥
जय हो, श्रीगौर-विष्णुप्रियाकी जय हो॥

माँ ! तुम्हारा लीला-समुद्र अगाध है, अनन्त है। तुम्हारा नितान्त अकृती सन्तान उसका एक विन्दु भी स्पर्श नहीं कर सका।

आमि शोधिबार तरे दुःसाहस कैनु।	मैंने शोधन करनेके लिए दुःसाहस
लीला-सिन्धुर एक विन्दु छुंइते नारिनु॥	तो किया लेकिन लीला-समुद्रका एक
—अ० प्र०	विन्दु भी स्पर्श न कर सका।

'श्रीश्रीविष्णुप्रिया चरित' प्रकट होनेका रहस्य

●

श्रीमहाप्रभुजीके समकालीन वैष्णव आचार्योंने श्रीमहाप्रभुजीके सम्बन्धमें तो वृहत् साहित्यकी रचना की, पर आश्चर्यकी बात है कि किसीने भी उनकी शक्ति स्वरूपा श्रीविष्णुप्रिया देवीके सम्बन्धमें कुछ भी नहीं लिखा। गौरलीला-व्यासावतार श्रीवृन्दावनदास प्रभुने 'श्रीचैतन्य-भागवत' के आदि खण्डके तेरहवें अध्यायमें केवल विवाह-लीलाका विस्तृत वर्णन किया है। ठाकुर जयानन्दने अपने ग्रन्थ 'श्रीचैतन्य-मङ्गल' में संन्यासके पूर्व प्रभु द्वारा प्रियाजीको तीव्र वैराग्य-योगकी शिक्षाका थोड़ा-सा वर्णन किया है जिसके फलस्वरूप सासके अप्रकट होनेके उपरान्त श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीने जिस प्रकारके कठोर वैराग्यका आचरण करके दिखाया वैसा उदाहरण इतिहासमें कहीं नहीं मिलता। श्रीलोचनदास ठाकुरने अपने ग्रन्थ 'श्रीचैतन्य-मङ्गल' के आदि खण्डमें कहीं-कहीं विवाहके समयकी एक-दो बातोंका दो-दो तीन-तीन पंक्तियोंमें थोड़ा-सा वर्णन किया है और मध्य खण्डमें एक गीतकी कुछ पंक्तियोंमें प्रभुके संन्यास लेनेके विचारके समाचार पर प्रियाजीकी कातरता और प्रभु द्वारा प्रबोधका थोड़ा वर्णन एवं संन्यासकी पूर्व रात्रिके प्रेमविलास और शृंगारका वर्णन १८ पयार छन्दोंमें (बंगालका पयार छन्द लगभग चौपाई सरीखा होता है) तथा प्रभुके संन्यास लेनेके बाद आचार्य चन्द्रशेखरके लौटने पर श्रीविष्णुप्रिया देवीका विलाप २६ पयार छन्दोंमें वर्णन किया है और थोड़ा-थोड़ा उनकी विरह दशाका भी वर्णन कहीं-कहीं पर किया है। उन्होंने उनके सम्बन्ध में कुछ पद-रचना भी की है। सर्वश्री बासु घोष, माधव घोष, बलरामदास, नरहरि

आदि तत्कालीन पदकर्त्ताओंकी पद-रचनामें भी श्रीविष्णुप्रियाजीके सम्बन्धके कुछ पद मिलते हैं। पूज्यपाद कविराज गोस्वामी श्रीकृष्णदासजीने अपने 'चैतन्य-चरितामृत' श्रीग्रन्थमें श्रीविष्णुप्रियाजीका कोई विशिष्ट उल्लेख नहीं किया।

श्रीअद्वैताचार्य प्रभुके मन्त्र-शिष्य श्रीईशान नागरने अपने 'श्रीअद्वैतप्रकाश' काव्य ग्रन्थके इक्कीसवें अध्यायमें श्रीविष्णुप्रियाजीकी दिनचर्या और उनके द्वारा शचीमांकी सेवाका वर्णन तेरह पयार छन्दोंमें किया है तथा बाईसवें अध्यायमें श्रीमहाप्रभुजी और शचीमांके अन्तर्धान होने पर श्रीश्रीविष्णु-प्रियाजीकी कठोर भजन-प्रणाली और तपस्याका वर्णन भी पन्द्रह पयार छन्दोंमें किया है। पर और अधिक वर्णन करनेमें उनके मन-प्राण भी अन्तर्वेदनाके कारण असमर्थ हो गये।

श्रीविष्णुप्रिया देवीके साक्षात् कृपापात्र श्रीश्रीनिवास आचार्य प्रभुके एक शिष्य थे श्रीरामचरण चक्रवर्ती, उनके शिष्य थे श्रीरामशरण चट्टराज और श्रीचट्टराजजीके शिष्य थे श्रीमनोहरदास। श्रीमनोहरदासजीने श्रीवृन्दावन निवास कालमें (विक्रमाब्द १७५३, शकाब्द १६१८ तथा अनुमानतः गौराब्द २११ की चैत्र शुक्ला दशमीको) श्रीवृन्दावन धाम या निकट ही किसी स्थानमें रहकर 'अनुरागवल्ली' काव्य ग्रन्थकी रचना पूर्ण की थी। इस श्रीग्रन्थका प्रतिपाद्य विषय है श्रीश्रीनिवास आचार्य प्रभुका चरित्र वर्णन। अनुमान है कि अपने गुरु श्रीरामशरण चट्टराज द्वारा सुनी तत्कालीन वस्तुस्थितियोंके आधार पर ही उन्होंने इस पुस्तकमें वर्णन प्रस्तुत किया है। इस ग्रन्थकी द्वितीय मञ्जरीमें श्रीश्रीनिवास आचार्य प्रभुके प्रति की गयी कृपाके प्रसंगमें श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीकी उत्कट तपस्याका कुछ वर्णन अवश्य है, लेकिन अत्यन्त संक्षिप्त है।

इसी प्रकार श्रीविष्णुप्रिया देवीकी उत्कट तपस्याका यत्किञ्चित उल्लेख 'प्रेम-विलास' ग्रन्थके चतुर्थ विलासमें भी श्रीश्रीनिवास आचार्यके ऊपर भगवती श्रीविष्णुप्रिया देवी द्वारा की गयी कृपा-प्रसंगमें है। इस श्रीग्रन्थमें श्रीनिवास आचार्य, श्रीनरोत्तम ठाकुर और श्रीश्यामानन्दजी द्वारा श्रीरूपगोस्वामीके-षट संदर्भ ग्रन्थ और उनमें प्रतिपादित प्रेम-भक्तिका गौड़ देशमें प्रचार-प्रसंगका वर्णन है। इसके रचयिता हैं श्रीनित्यानन्ददास जिनकी दीक्षा-गुरु श्रीनित्या-

नन्द प्रभुकी गृहिणी श्रीजाह्नवी देवी थीं और शिक्षा-गुरु श्रीनित्यानन्द प्रभुके आत्मज श्रीवीरचन्द्र प्रभु थे।

शकाब्द १६३९ (अनुमानतः गौराब्द २३०) में श्रीकुल नगरके श्रीपुरुषोत्तमजी मिश्र (गुरुप्रदत्त नाम प्रेमदास) ने 'श्रीवंशी-शिक्षा' श्रीग्रन्थका प्रणयन किया जो रसराज उपासनाका एक अपूर्व ग्रन्थ है। इसके चतुर्थ उल्लासके मध्यमें श्रीमहाप्रभुजीके संन्यास लेनेके लिए चले जानेके बाद नींद खुलने पर श्रीविष्णुप्रिया देवीके विलापका संक्षिप्त वर्णन है। इसके अतिरिक्त महाप्रभुजीके अन्तर्धान होनेके बाद वंशीवदन द्वारा देवीकी देख-भाल और देवीको अपनी दारुमूर्ति स्थापनाके लिये महाप्रभुजी द्वारा स्वप्नादेशका संक्षिप्त वर्णन है।

'श्रीमुरलीविलास' नामका एक ग्रन्थ है जिसमें श्रीरामाई ठाकुरके जीवन-चरित्रका वर्णन है। इन श्रीरामाई ठाकुरका पूरा नाम श्रीरामचन्द्र है। ये वंशीवदनके पौत्र और चैतन्यदासके पुत्र थे। इस श्रीग्रन्थके रचयिता हैं प्रभु श्रीराजवल्लभ गोस्वामी जो श्रीवंशीवदनके प्रपौत्र और शचीनन्दनके पुत्र थे और श्रीरामाई ठाकुरके भतीजे होते थे। श्रीरामाई ठाकुर श्रीनित्यानन्द-गृहिणी श्रीजाह्नवी देवीके मन्त्र-शिष्य थे। इनके जन्मके समय श्रीविष्णुप्रिया देवीने श्रीवंशी शिक्षा ग्रन्थके अनुसार इनके जन्मस्थान पर जाकर इनके ऊपर कृपा की थी। 'श्रीमुरलीविलास' श्रीग्रन्थमें १२ वें परिच्छेदमें दो-तीन स्थानों पर श्रीरामाई ठाकुरका श्रीविष्णुप्रिया देवीके पास आकर कृपा प्राप्त करनेका वर्णन है। इन्हीं रामाई ठाकुरने श्रीधाम नवद्वीपके निकट श्रीवाघ्नापाड़ा की स्थापना की थी जहाँ वे वैष्णव सेवा किया करते थे।

सम्भवतः और भी किसी ग्रन्थमें कहीं-कहीं प्रसंगवस देवीके सम्बन्धमें नाममात्र उल्लेख आया हो।

श्रीहरिदासजी गोस्वामीके 'श्रीश्रीविष्णुप्रिया-सहस्रनामस्तोत्र' पुस्तकके उत्सर्ग-पत्रसे पता चलता है कि श्रीशिशिरकुमार घोष अपनी 'श्रीविष्णुप्रिया' पाक्षिक पत्रिकामें समय-समयपर श्रीविष्णुप्रिया देवीके सम्बन्धमें कुछ लिखते रहते थे। इसके अतिरिक्त उन्होंने 'अमिय-निमाई-चरित' ग्रन्थमें और 'निमाइ-सन्यास नाटक' के किसी-किसी प्रकरणमें प्रसंगके अनुसार श्रीविष्णु-प्रिया देवीके सम्बन्धमें यत्किञ्चित चर्चा की है।

शिशिर बाबू श्रीविष्णुप्रिया देवीका विस्तृत चरित्र नहीं लिख पाये। शरीर-जर्जर शिशिर बाबूने 'श्रीग्रमिय-निमाइ-चरित' श्रीग्रन्थका छः खण्डोंमें रात-दिनके कठिन परिश्रमसे प्रणयन पूरा किया ग्रौर मुद्रण-कार्यका ग्रन्तिम प्रूफ संशोधन करनेके दिन ही उन्होंने ग्रपनी इहलोक लीला समाप्त कर ली। ऐसा ग्रनुमान है कि उन्होंने ग्रपने ग्रवशिष्टकार्यके लिए श्रीहरिदासजी गोस्वामीके मुखर पाण्डित्य एवं सहृदय दैन्यको चुना तथा इनके शरीरमें सम्भवतः प्रवेश करके ही इस सारे साहित्यको पूरा करवाया। इस ग्रनुमानकी सत्यतापर निम्न लिखित घटनाग्रोंसे पर्याप्त ग्रनुकूल प्रकाश पड़ता है।

श्रीशिशिरकुमार घोषने ग्रपनी इहलोक लीला २६ वीं तारीख पौष मंगलवार बंगाब्द १३१७, गौराब्द ४२४ (दिनांक १० जनवरी सन् १९११ ई०) को समाप्त की थी। 'श्रीविष्णुप्रिया चरित' की रचना ४२७ गौराब्दमें हुई है जो लगभग १३१९-२० बंगाब्द होता है। गोस्वामी श्रीहरिदासजीने ग्रपने जब्बलपुरके प्रवासकालमें जब डाक-विभागमें डिप्टी-पोष्ट-माष्टर थे इस महान ग्रन्थकी रचना की। प्रथम संस्करणकी मुद्रित प्रतिसे भी स्पष्ट है कि इस ग्रन्थका प्रकाशन बंगाब्द १३२० सालमें हुग्रा है। इसके पश्चात् दो वर्षकी ग्रवधिमें ही 'श्रीविष्णुप्रिया-मंगल' काव्यकी रचना हुई ग्रौर उसी वर्ष 'श्रीविष्णुप्रिया-विलाप-गीति' लघुकाव्यकी रचना पूरी हुई इसके कुछ समय पश्चात् 'श्रीविष्णुप्रिया नाटक' नामक गद्यकाव्य भी प्रकाशमें ग्राया।

× × × ×

इन्हीं दिनोंमें त्रिपुरा जिलेके त्रिश नगरमें परम वैष्णव भक्त श्रीयुत् वसन्तकुमार दे निवास करते थे जो वसन्त साधु ग्रौर वसन्त दादाके नामसे प्रसिद्ध थे। इनका महात्मा श्रीशिशिरकुमार घोषके साथ प्रत्यक्ष साक्षात्कार नहीं हुग्रा था तो भी भाव समाधिमें उनसे साक्षात्कार प्राप्त कर वे उनको ग्रपना भाव-गुरु मानते थे। एक स्वप्नकी घटनाके ग्रनुसार उनका विश्वास था कि शिशिर बाबूने इहलोक छोड़नेके उपरान्त श्रीहरिदासजीके शरीरमें प्रवेश किया है ग्रौर ग्रब शिशिर बाबूके न रहने पर श्रीहरिदासजी उनके गुरु-स्थानमें हैं। श्रीहरिदासजीसे भी बसन्त साधुका कोई प्रत्यक्ष

परिचय नहीं था लेकिन शिशिर बाबूके संरक्षणमें प्रकाशित 'श्रीविष्णुप्रिया' पत्रिकामें श्रीहरिदासजीके लेख पढ़कर वे उनको जान पाये थे। प्रत्यक्ष परिचय और मिलन न होने पर भी श्रीवसन्त साधुने श्रीहरिदासजीको उनके भोपाल निवासकालमें जो प्रथम पत्र लिखा था उससे यह स्पष्ट प्रतीत होता है।

वसन्त साधुके उस पत्रका सम्बन्धित अंश निम्न प्रकार है--

"आप प्रियाजीकी शक्तिसे चालित हैं यह मैं अच्छी प्रकार समझ गया हूँ। आप प्रियाजीकी अन्तरंगा दासी हैं। ऐसा हुए बिना उनकी इतनी मर्मकथा कैसे जानी जा सकती है?"

× × × ×

एक दूसरे पत्रमें बसन्त साधुने और लिखा था--"मैंने एक मधुर स्वप्न देखा,--प्रभु प्रियाजी शयनमें हैं। रात्रिका समय है। तुम और मैं शयनगृहके गवाक्षद्वारसे उचक उचककर देख रहे हैं। हम लोगोंका स्त्री वेश है। तुम्हारी नीलवर्णकी साड़ी है और मेरी लालवर्णकी। हम लोगोंके शरीरपर नाना प्रकारके अलंकार हैं, मानो हम लोग नवयुवती हैं। मैं तुम्हारे पीछे-पीछे हूँ। इसी समय अचानक प्रियाजी शयनगृहका द्वार खोलकर बाहर आईं। तुमने उनके साथ जो-जो रंग आरम्भ किया, उसको कहनेकी मुझमें सामर्थ्य नहीं है। मैं तो लज्जासे भाग गया। बताओ न दादा*! तुम कौन हो?

× × × ×

प्रभुपाद गोस्वामी श्रीहरिदासजीकी एक मात्र कन्या सन्तान श्रीमती सुशीला सुन्दरी देवीका विवाह १० वर्षकी अवस्थामें उनके भागलपुर-कालीन निवासके समय १३ वीं फाल्गुन १३१२ बंगाब्द, २८ फरवरी सन् १९०६ ई० को हुआ था। विवाहके चौथे वर्ष अर्थात् सन् १९१० ई० में जामाताका

*बंगालमें ज्येष्ठ भ्राताको 'दादा' कह कर संबोधन किया जाता है।

स्वर्गवास हुआ। कन्याके विवाहके वर्णनमें उन्होंने आत्मकथामें लिखा है कि इस दुःखद घटनाका यथास्थान वर्णन होगा, लेकिन उसका कहीं वर्णन नहीं मिलता। उस समय वे जब्बलपुरमें ही थे। अपनी कन्याको १४ वर्षकी अवस्थामें ही पतिविहीन देखकर तथा इसी आयुमें श्रीविष्णुप्रियाजीको प्राप्त (श्रीमहाप्रभुजीके संन्यासजनित) असह्य वियोग-दुःख-दावानलके स्मरण से (इस घटना सामंजस्यसे) उनका हृदय विदीर्ण हो उठा। व्याध द्वारा तीक्ष्णवाणसे क्रौंच-मिथुनमेंसे नर क्रौंचके मार दिये जानेपर मादा क्रौंचके विरह करुण-रवसे द्रवित होनेपर जिस प्रकार आदि कवि वाल्मीकिके मुँहसे बरबस—

मा निषाद प्रतिष्ठा त्वमगमः शाश्वती समाः।
यत्क्रौंच मिथुनादेकमवधीः काममोहितम् ।।

अनुष्टुपछन्द निकल पड़ा था और करुण-रस-प्रधान रामायण महाकाव्यकी रचना सम्भव हुई थी उसी प्रकार श्रीहरिदासजीके द्रवित हृदयसे विशुद्ध करुण रसकी मन्दाकिनी बह चली। इनका प्रत्येक ग्रन्थ विशुद्ध करुण रस और वैष्णवी दैन्यकी अनुपम छटासे ओत-प्रोत है।

× × × ×

सन् १९०५ ई० के आरम्भकालमें सरकारी नौकरी करते समय तीन महीनेकी छुट्टी लेकर जब श्रीहरिदासजी गोस्वामी मोतीहारीमें अपने कनिष्ठ भ्राता श्रीगुरुदासके पास जाकर रहे थे तब उन्हें सर्व-प्रथम शिशिर बाबूके 'अमिय-निमाई-चरित' के उस समय तक प्रकाशित अंशको पढ़नेका सुअवसर मिला था। अपनी आत्मकथामें उन्होंने लिखा है कि उस समय उन्हें इसमें कोई विशेष आनन्दका अनुभव नहीं हुआ। लेकिन बादमें दूसरी बार जब उन्होंने उसे पढ़ा तब जो अनुभूति उन्हें हुई उसका वृत्तान्त पीछे लिखनेका उल्लेख है। इसके बाद द्विज बलरामदास ठाकुरकी जीवनीका जिक्र करते हुए उन्होंने लिखा है कि इनके सम्बन्धमें बहुत-सी प्राचीन अप्रकाशित सामग्री संग्रहीत हुई है जो यथास्थान मेरी 'धर्म-जीवन कथा' में व्यक्त होंगी। दुःख है कि यह सारा वृत्तान्त कहीं नहीं मिल सका। अनुमान होता है

कि जब्बलपुर निवासके समयमें ही उन्हें सम्पूर्ण "अभिय-निमाई-चरित" पढ़नेका फिर अवसर मिला जिससे वे बहुत प्रभावित हुए। उसके बाद उनसे रहा नहीं गया और बरबस किसीने उनके द्वारा--रात-रात भर जगाकर--यह कार्य सम्पादन करवाया।

अपनी सर्व-प्रथम पुस्तक 'गौर गीतिका' (जो उनके जब्बलपुर निवासकालमें प्रकाशित हुई थी और जिसकी प्रकाशन तिथि गौर पूर्णिमा गौराब्द ४२७, बंगाब्द १३१९ है) के सूचना प्रसंगमें उन्होंने लिखा है--

निमाइ चरित पड़िते पड़िते, मत्त हल मम प्राण।	निमाई चरित पढ़ते-पढ़ते मेरे प्राण मत्त हो उठे।
प्रेमेर तुफान, उठिल हृदये, सदा मुखे गौर गान।।	हृदयमें प्रेमका तूफान उठ खड़ा हुआ और मुखसे सदा गौर-गान होता।
शयने भोजने, आफिसेर काजे, देखि से सुन्दर मूर्त्ति।	सोनेके, भोजनके और आफिसका काम करते समय वह सुन्दर मूर्ति सदा देखता।
हाड़ भाङ्गा श्रमे, आयास ना माने, गान गेये कत स्फूर्त्ति।।	हड्डी तोड़ श्रममें भी परिश्रम नहीं होता और गीत गाने पर कितनी स्फूर्ति होती।
कान्दि आर लिखि, आखिनीरे भासि, कबे प्रभु पद पाव।	रोता और लिखता और अश्रुजलमें डूबा रहता कि कब प्रभुपद प्राप्त करूँगा।

शिशिर घोषेर	महात्मा शिशिर कुमार घोषके
निमाइ चरिते,	'श्रीअमिय-निमाई-चरित' से मनमें नये
ह'ल मने नव भाव ।।	भावोंका उदय हुआ ।
....	
....	

× × × ×

स्वनाम-धन्य श्रीरामदास बाबाजीके शिष्य श्रीजितेन्द्रनाथ घोषाल महाशयने (सुदूर ब्रह्मदेश रंगूनमें क्लैनेर कम्पनीके रेलवे होटलोंमें मैनेजरके पदपर काम करते हुए) अपने ६ वीं तारीख कार्तिक बंगाब्द १३२८ के पत्रमें 'विष्णुप्रिया-विलाप-गीति' और 'विष्णुप्रिया-चरित' पढ़ने पर उनका और उनकी धर्मपत्नीका जो हाल हुआ उसको वर्णन करते हुए श्रीहरिदासजी गोस्वामी को लिखते हैं कि मुझे ऐसा लगता है कि नरहरि ठाकुर जो बता गये थे कि––

"प्रभुर लीला लिखिबे जे,	प्रभुकी लीलाको जो लिखेंगे वे
अनेक परे जन्मिबे से।"	अनेक दिनोंके बाद जन्म लेंगे।

उनकी यह आश्वासन वाणी इतने दिनोंके बाद पूर्ण हुई है। जो 'विष्णुप्रिया चरित', 'अमिय-निमाई-चरित' एवं 'अनुरागवल्ली' ग्रन्थों द्वारा किंचित् प्रकाशमें आया उसीका प्राकटच अब इस ग्रन्थ द्वारा संभव हुआ है। कभी-कभी मुझे ऐसा बोध होता है कि आप ही प्रियाजीकी सखी काञ्चना थे, नहीं तो उनके अन्तरकी इतनी कथाओंकी जानकारी और तो किसीको हो नहीं सकती। कभी ऐसा भी लगता है कि आप केवल देवीकी ही अन्तरंग कथा जानते हैं, इतना ही नहीं है, आप उस समय श्रीगौराङ्गलीलामें भी सहायक थे। आप हमारे गौराङ्गके गण हों या देवीके––जो कोई भी हों, आपके श्रीचरणोंमें कोटि-कोटि प्रणाम हैं। मैं यह निश्चयपूर्वक बता सकता हूँ कि आप साधारण मानव नहीं हैं। यदि आप हम लोगोंकी तरहसे साधारण मानव हों तो कहना ही होगा कि––

"देवतार उर्द्धे तबे मानवेर स्थान।"	तब तो मानवका स्थान देवतासे भी ऊपर है।

एकबार आपके दर्शनोंकी––केवल एक बार दर्शनोंकी तथा आपकी चरण-धूलि लेकर मस्तक एवं सर्वाङ्गमें लगाकर, जन्म-जन्मार्जित पापोंसे निवृत्त होनेकी इच्छा है और कुछ नहीं।

× × × ×

श्रीश्रीगौर-विष्णुप्रिया-युगल-भजन-निष्ठ श्रीश्रीविष्णुप्रिया परिवारके श्रीमान् नृत्यगोपाल गोस्वामीने श्रीविष्णुप्रिया-चरितका पाठ करके श्री हरिदास-जीको लिखा था––

"तुमने यह क्या किया? यही क्या तुम्हारा 'विष्णुप्रिया-चरित' है? नहीं, नहीं, तुम भूलते हो। यह तो भक्तप्राणके लिये कालाग्नि है––क्या इसे पढ़ा भी जा सकता है? इसके पढ़ने पर क्या प्राण ठहर भी सकते हैं? ऐसा ग्रन्थ तुम्हारे द्वारा कैसे लिखा जा सकता है? मैं तुमको बाल्यकालसे ही जानता हूँ। तुम्हारी तो सर्वदा ही कुसुमके समान कोमल प्रकृति रही है। तुम्हारे कुसुम-कोमल हृदयसे इस प्रकारकी हृदय-विदारक ज्वालामयी भाषाका उदय कभी भी सम्भव नहीं। कुसुममें बज्रता, जलमें दाहिका शक्ति, भक्तमें क्षमाहीनता यदि सम्भव हो, तो शायद यह मान सकता हूँ कि यह 'श्रीविष्णुप्रिया-चरित' भी तुम्हारा ही लिखा हुआ होगा। यह श्रीग्रन्थ भक्तोंके लिये है ही नहीं, भक्त इसे कभी पढ़ नहीं सकेंगे। पढ़ने पर उनके प्राण ठहर नहीं पायेंगे। तुम्हारे इस ग्रन्थमें लेखनकी भाषा और भावके समन्वय गुणसे विषयकी पंक्ति-पंक्ति और अक्षर-अक्षरमें एक ऐसी अद्भुत उन्मादिनी शक्तिका समावेश हुआ है जिसके पठन व श्रवण मात्रसे पाषाण-प्राण भी पिघल जाते हैं। तुम्हारे द्वारा जो असम्भव है वही सम्भव हो गया है। जो असम्भव को सम्भव कर सकते हैं, वे ही इसके कर्त्ता हैं। तुम तो केवल निमित्त-मात्र हो। तुमको हिप्नोटाइज़ (Hypnotise) अर्थात् चेतनाहीन करके यह कार्य कराया गया है। मैं दृढ़ताके साथ कह सकता हूँ कि पूर्ण चेतनावस्थामें यह लिखते तो तुम कभी भी बच नहीं सकते थे,––तुम्हारे कोमल प्राण भस्म हो जाते। जो भी हो, मुझ जैसे पाखण्डीके पाषाण-हृदयको द्रवित करने वाली औषधिका सृजन तो हो गया।"

× × × ×

श्रीयुत् विधुभूषण शास्त्री वेदान्त भूषण, भक्तिरञ्जन महोदयने ग्रन्थ-कारको लिखा था---

"देव ! आपकी श्रीमूर्ति तो बड़ी सुन्दर है, किन्तु हृदय इतना कठोर क्यों ? कवियोंका स्वभाव ही ऐसा होता है कि उन्हें स्त्रियोंको कष्ट देना अच्छा लगता है। प्रमाणमें---आदि कवि वाल्मीकिने सीतादेवीको, व्यासदेवने द्रौपदी व उत्तराको कितने कष्ट दिये हैं ? हमारे देशमें ही ऐसा हो---यह बात नहीं है, पाश्चात्य कवियोंका भी ऐसा ही स्वभाव है। सेक्सपीयरने जुलियटको और इसके भी पूर्व होमरने हैलेनको दुःख दिया था। आपने श्रीमती विष्णुप्रियादेवीको कितना अपार कष्ट दिया है ? मैं तो आपके सम्पूर्ण ग्रन्थको पढ़ भी नहीं सका, अश्रुजलसे वक्ष तक भीग गया। आपके कुसुम-कोमल हृदयमें ऐसे हृदय-विदारक भाव आ ही नहीं सकते। निश्चय ही यह उन्हीं निज-जन-निठुर महाप्रभुजीका काम है। उन्हींने आपके द्वारा ऐसा ग्रन्थ लिखवाया है। उन्होंने निश्चय ही आपका ज्ञान हर लिया था। आपकी सूक्ष्म देह उस समय वहाँ नहीं थी। धन्य है आपकी लेखन शैली ! इस शैलीके सामने रवि बाबूकी लेखन-कला भी फीकी-सी लगती है।"

उपरोक्त वर्णित इन घटनाओंसे 'श्रीविष्णुप्रिया-चरित' प्रकट होनेके अनुमानित कारण, निमित्त और माध्यम पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है। वैसे महात्माओं, गुरुजनों, वैष्णव-संतोंके क्रिया-कलाप स्वयं प्रेरित कम ही होते हैं। उनकी वाणी, उनका कार्य और उनकी प्रत्येक चेष्टा भगवद्-प्रेरित ही होती है। अतएव 'श्रीविष्णुप्रिया-चरित' के लिखे जानेकी पृष्ठ-भूमिमें इसी सत्यको सर्वोपरि मानना चाहिए।

श्रीगौराङ्ग महाप्रभु और श्रीविष्णुप्रिया देवी

नमो विष्णुप्रियानाथ नमस्ते शचिनन्दन। नमो विष्णुप्रियादेव्यै गौरशक्त्यै नमो नमः ॥
गौराय गौरचन्द्राय नवद्वीपविहारिणे। नमो लक्ष्म्यै महादेव्यै महासाध्व्यै नमो नमः ॥

N. P. CRAFTS

श्रीश्रीविष्णुप्रिया चरित

प्रथम अध्याय

देवीका जन्म और बाल्य-लीला

सनातन गृह आलोकित क'रे। महामाया गर्भे के जनमिल रे?	सनातन मिश्रके घरको आलोकित करते हुए महामायाके गर्भसे कौन जन्मा है ?
गोलोक छाड़िया एसेछे गौराङ्ग। ताइ बूझि लक्ष्मी आसिलेन सङ्ग॥ —ग्रन्थकार	गोलोक छोड़कर श्रीगौराङ्ग पधारे हैं, मालूम होता है इसीसे लक्ष्मी भी संग पधारी हैं।

● वंश परिचय

नवद्वीप निवासी श्रीपाद सनातन मिश्र पाश्चात्य श्रेणीके वैदिक ब्राह्मण थे। उनके पिताका नाम दुर्गादास मिश्र था। मिश्रवंशका मूल निवास मिथिलामें था। उस वंशके परम भागवत नवद्वीप निवासी श्रीयुक्त

शशिभूषण गोस्वामी भागवत-रत्नने अपने 'श्रीचैतन्य-तत्त्व-दीपिका' ग्रन्थमें अपने वंशका परिचय इस प्रकार दिया है--

सर्वेषां पूर्वमस्माकं मिथिलायां निवासतः।
मिश्रोपाधि यजुर्वेदः श्रेणी तु वैदिकी मता।।

इससे जाना जाता है कि मिश्रवंशके पूर्वपुरुष मिथिला प्रदेशसे उठकर नवद्वीपमें आकर वास करने लगे थे। सनातन मिश्रको लोग राजपण्डित कहते थे। नवद्वीपके तत्कालीन निवासियोंमें वे एक सर्व-मान्य वृद्ध श्रेष्ठ थे। उनके एक कनिष्ट भ्राता थे, जिनका नाम कालीदास था। कालीदास बहुत छोटी अवस्थामें ही परलोकगामी हुए। उनकी विधवा पत्नी विधुमुखीको सनातन मिश्रकी पत्नी महामाया देवी अपनी कन्याके समान स्नेह करती थी और चाहती थी। देवर-पत्नी होने पर भी महामाया देवीके सामने विधुमुखी कन्याके समान थी। सनातन मिश्रकी माता अभी जीवित थीं। उनका नाम विजया देवी था। वे वृद्धा हो गयी थीं। अतएव महामाया देवी ही गृह-कार्य संभालती थी। सनातन मिश्र एक विष्णुभक्त, परम निष्ठावान ब्राह्मण थे। श्रीश्रीचैतन्य-भागवतमें लिखा है--

सेइ नवद्वीपे बैसे महा-भाग्यवान्।
दयाशील स्वभाव श्रीसनातन नाम।।

उस नवद्वीपमें महाभाग्यवान्, दयालु स्वभाववाले श्रीसनातन मिश्र नामके ब्राह्मण रहते थे।

अकैतव परम उदार विष्णुभक्त।
अतिथि सेवन उपकारे अनुरक्त।।

वे निश्छल, परम उदार, विष्णु-भक्त थे, सदा अतिथि सेवा और परोपकारमें रत रहते थे।

सत्यवादी जितेन्द्रिय महावंशजात।
पदवी राजपण्डित सर्वत्र विख्यात।।

सत्यवादी, जितेन्द्रिय और बड़े कुलीन थे। राजपण्डित उनकी पदवी थी, और वे सर्वत्र विख्यात थे।

व्यवहारे हन भाग्यवन्त एकजन।
अनायासे अनेकेरे करेन पालन।।

जागतिक व्यवहार में वे एक भाग्यशाली पुरुष थे और सहज स्वभावसे अनेकोंका पालन करते थे।

● जन्म

उन्हीं महापुरुषके औरस तथा उनकी भाग्यवती पत्नी महामाया देवीके गर्भसे, भुवनको आलोकित करके श्रीश्रीगौर-वक्ष-विलासिनी श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीने श्रीनवद्वीप धाममें जन्म ग्रहण करके धराधामको पवित्र किया। श्रीश्रीगौराङ्ग सुन्दर जब आठ वर्षकी अवस्थाके बालक थे, नवीन किशोर रूपमें नवद्वीप-वासियोंके मनको हरण कर रहे थे। बाल-गोपाल वेशमें गङ्गातट पर लाखों नर-नारियोंके एकमात्र लक्ष्य बनकर अपनी बाल-चापल्य लीलासे सबको उन्मत्त करके बाल्यलीला रसमें नवद्वीपधामको निमज्जित कर रहे थे। उसी समय श्रीपाद सनातन मिश्र महोदयके घरको आलोकित करके परम रूप-लावण्यमयी, सर्वशान्तिमयी, प्रेमभक्ति-प्रदायिनी श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीने भूतलपर आविर्भूत होकर, नवद्वीप वासियोंके हृदयमें एक अभिनव सुखकी तरङ्ग उठाकर सबको आनन्द-सागरमें निमज्जित कर दिया। श्रीश्रीनिमाई चाँद जब आठ वर्षके बालक थे, उसी समय श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीका जन्म हुआ। अनुमानतः १४१५ अथवा १४१६ शकाब्दमें यह शुभ दिवस नवद्वीपवासियोंके भाग्यसे उदय हुआ। धन्य है श्रीधाम-नवद्वीप! तुम्हारी-सी सौभाग्यवती पुरी त्रिलोकीमें अन्य कोई नहीं है। तुम इस धरा-धाममें बैकुण्ठरूप हो। श्रीश्रीमहालक्ष्मी स्वरूपा श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवी तथा श्रीश्रीनारायण-स्वरूप श्रीश्रीगौराङ्ग सुन्दर——दोनोंने ही तुम्हें अनुगृहीत करके समस्त जगत्‌में तुम्हारे सम्मानको बढ़ाया है। तुम श्रीश्रीलक्ष्मी-नारायणकी जन्मभूमि हो, श्रीश्रीगौर-विष्णुप्रियाके लीला-क्षेत्र हो, तुम्हारा नाम लेनेसे सारे पातक दूर होते हैं और अन्तःकरण पवित्र होता है। जय श्रीधाम नवद्वीपकी जय! जय श्रीश्रीगौर-विष्णुप्रियाकी जय!!

● बालिकाका अपूर्व रूप

इस नवजात बालिकाके रूपकी बात और क्या लिखूँ? सनातन—गृहिणीके सूतिका-गृहमें मानो एक प्रस्फुटित पद्‌म सुशोभित हो रहा हो। नवजात शिशुका ऐसा रूप कभी किसीने नहीं देखा था। वह मानो एक विद्युल्लता थी; एक तड़ितकी प्रतिमा थी! यही श्रीलोचनदास ठाकुरने लिखा है——

विष्णुप्रियार अङ्ग जिनि लाख वाला सोना।
झलमल करे जेन तड़ित प्रतिमा ।।

विष्णुप्रियाकी अङ्गकान्ति लाख बार तपाये स्वर्णको पराजित करती है, वह तड़ितकी प्रतिमाके समान चमक रही है।

उस भुवन-मोहिनी-रूपिणी तड़ित-प्रतिमाको गोदमे लेकर महामाया देवी अनिमेष नयनोंसे उसके मुखकी ओर दृष्टि किये हैं। सद्यःप्रसूता बालिकाके अङ्ग-अङ्गकी शोभा, सर्व लक्षणोंसे युक्त अङ्ग-प्रभा, जननीके मन-प्राणको एक-बारगी हरण कर रही है। दारुण प्रसव पीड़ाको बिलकुल भुलाकर, बालिकाको वक्षःस्थलपर धारण करके वे बारम्बार उसका मुख चुम्बन करती हैं और मन ही मन सोचती हैं कि, मिश्रजीको बुलाकर उनको रूप-माधुरी दिखाऊँ। इस कनक प्रतिमाको अकेले देखकर मेरा सुख अधूरा रह जाता है। उसी समय धीरे-धीरे पैर रखते हुए श्रीपाद सनातन मिश्र प्रसव-गृहके द्वारपर आकर उपस्थित हुए। उन्होंने देखा, मानो जगज्जननीकी गोदमें जगद्धात्री विराजमान हैं। रूपकी छटासे प्रसवगृह आलोकित हो रहा है, अङ्गज्योतिसे चतुर्दिक प्रभा झलमल कर रही है। प्रसव-गृह मानो देवालयमें परिणत हो गया है। चारों ओर सुगन्ध फैल रही है। मिश्रजी विस्मय और आनन्दसे स्तब्ध होकर एकटक उस सर्वाङ्गसुन्दरी श्रीमूर्तिको देखने लगे। देखते-देखते उनकी दोनों आँखोंसे झर-झर पुलकाश्रु प्रवाहित होने लगे। अपनी गृहिणीके साथ वे वार्तालाप करनेमें असमर्थ हो गये। दोनों ही एक दूसरेका मुँह ताक रहे हैं। उसी समय मानो आकाशवाणी हुई "मिश्र! तुम इन्हें पहचान नहीं रहे हो? ये तुम्हारे आराध्य देव श्रीविष्णुकी अङ्क-स्थिता श्रीश्रीविष्णुप्रिया हैं। जगन्नाथके घरमें नारायणका आविर्भाव हुआ है और आज तुम्हारे घरमें लक्ष्मी देवीका।" आकाशवाणी सुनकर सनातन मिश्रका विस्मय दूर हो गया। उनकी समझमें आया कि इस बातमें तनिक भी सन्देह नहीं है। ऐसा रूप तो मनुष्यमें संभव नहीं है। यह देवीमूर्त्ति कभी इस मर्त्यलोककी नहीं हो सकती। गृहिणीको सारी बातें उन्होंने एकान्तमें कहीं और वे उसी दिनसे सर्वान्तःकरणसे बालिकारूपी श्रीश्रीलक्ष्मी देवीकी आराधना करने लगे। दिन-प्रतिदिन वह बालिका शुक्लपक्षकी शशि-कलाके समान बढ़ने लगी। जो एक बार उस बालिकाको देख लेता, वह उसे भूल नहीं पाता था। जन्मके दिन एक-एक करके न जाने कितने लोगोंने आकर इस स्वर्ण प्रतिमाको

देखकर अपना जीवन सार्थक किया। जिसने एक बार उस बालिकाको देखा, वह फिर भूल नहीं सका। उसके जन्मके दिन ही लोगोंके मुखसे समस्त नवद्वीपमें उस सद्यःप्रसूता बालिका की अनिन्दित रूपराशि मानो बिखर पड़ी। जिसने सुना वही देखने आया।

● आनन्दोत्सव

सनातन मिश्रने सारे सुलक्षणोंसे युक्त लक्ष्मी-स्वरूपा कन्या-रत्नको पाकर घरमें आनन्दोत्सव मनानेकी आज्ञा दी। बाजा बजानेवालोंकी वाद्य-ध्वनिसे मिश्रजीका गृह गूंज उठा। मङ्गल-वाद्यके निनादको सुनकर बहुतसे बालक और बालिकाएँ आकर मिश्रके घरमें इकट्ठे हो गये। उनमें हमारे चिर-परिचित वे अष्टवर्षीय शिशु श्रीनिमाई चाँद नहीं रहे हों, यह बात मैं नहीं कह सकता। ग्रन्थकार-रचित इस अध्यायमें प्रथम उद्धृत पद्यका शेषांश यहाँ दिया जाता है। इस अधम लेखककी अक्षम लेखनीके द्वारा देवीने जो लिखाया, वही प्रकाशित किया गया। आशा करता हूँ कि दयालु पाठक-पाठिकाएँ इस विषयका शास्त्रीय प्रमाण नहीं चाहेंगे।

बालिका रूपे ते उजलि भुवन। **जनमिल आसि गृहे सनातन।।**	बालिकाके रूपमें, जगत्को आलोकित करती हुई, सनातन मिश्रके घरमें आ अवतरित हुई है।
चौदिक छुटिल सुरभि सुन्दर। **चमकिल शची मिश्र पुरन्दर।।**	चारों ओर सुन्दर सुरभि फैल गयी जिससे श्रीशची देवी और श्रीजगन्नाथ मिश्र पुरन्दर चकित हो उठे।
निमाइ चाँदेर सुन्दर वदने। **देखा दिल हासि पेयेहारा धने।।**	निमाई चाँदके सुन्दर वदनपर खोये हुए धनके मिल जानेसे हँसीकी छटा दिखायी पड़ी।
आट् बरसेर शिशु गौराङ्ग। **तखनि जानिल प्रिया प्रसङ्ग।।**	आठ वर्षके शिशु गौराङ्गने प्रियाके प्रसङ्गको उसी समय जान लिया।
पथे पथे खेले छुटाछुटि करि। **दौड़िल से दिके हरि-ध्वनि शुनि।।**	रास्तेमें इधर-उधर खेल कूद रहे थे; अचानक हरिध्वनि कानमें पड़ी और वे उधर ही दौड़ पड़े।

बाजिछे बाजना सनातन गृहे। सङ्गि गणे बले चलहे चलहे।।	सनातन मिश्रके गृहमें बाजे बज रहे थे; साथियोंने कहा, "चलो! वहाँ चलें।
कि कौतुक तथा देखिब सकले। आगेते निमाइ चले कुतुहले।।	हम सब देखेंगे, वहाँ क्या तमाशा हो रहा है।" निमाई कौतुकपूर्वक सबके आगे-आगे चलने लगे।
सनातन गृहे प्रियारे देखिया। चिनिल निमाइ सेइ विष्णुप्रिया।।	सनातन मिश्रके घर जाकर, अपनी प्रियाको देखकर निमाईने पहचान लिया—ये ही विष्णुप्रिया हैं।
नयने नयने मिलिल जखन। दु'जने दोहारे चिनिल तखन।।	जब दोनोंकी आँखोंसे आँखें मिली तो दोनोंने एक दूसरेको पहचान लिया।
पाइया प्रियारे प्रेमे मातोयारा। नाचे आङ्गिनाय नदीयार गोरा।।	अपनी प्रियाको पाकर प्रेमसे मतवाले होकर नदियाके गौरा आङ्गनमें नाचने लगे।
जन कत लोक बुझिल से भाव। सनातन गृहे लक्ष्मी आविर्भाव।।	कुछ लोगोंकी समझमें यह भाव आया कि सनातन मिश्रके घरमें लक्ष्मीका आविर्भाव हुआ है।
ताहारा हइल पुर्ण अभिलाष। भणे हरिदास पाइया आभास।।	इससे उनकी अभिलाषा पूर्ण हुई। हरिदासजी आभास पाकर वर्णन करते हैं।

● शैशव काल

वह बालिका पड़ोसियोंके लिए प्राणस्वरूप बन गयी। उसको क्षणभर भी देखे बिना उनका दिन कटना कठिन हो गया। उनकी भूख और नींद भी उड़ जाती। सारे काम-धन्धोंको छोड़कर उस मन-प्राण-हारी सर्वाङ्ग सुन्दरी प्रेममयी बालिकाको, स्नेहपूर्वक गोदमें लेकर मुख चुम्बन करके वे लोग दिनमें कितनी बार आकर उसको प्यार कर जाते—यह कहा नहीं जा सकता। अब बालिका आठ महीनेकी हो चली और तुतली वाणी बोलने लगी। शिशुके मुखसे अमृतमयी मधुर तुतली वाणी सुनकर माता-पिता और पड़ोसियोंके मनमें आनन्द

उमड़ उठता। वे मधुर स्वर उनके कर्णकुहरमें अमृतकी धारा ढाल देते। घरमें जो आता वही एक टकसे उस स्वर्ण-प्रतिमा बालिकाकी ओर ताकता रह जाता। उस झलकती हुई चञ्चल अनिन्दित रूपराशिको देखकर दृष्टि नहीं हट पाती। सनातन मिश्रकी गृहिणीको यह अच्छा नहीं लगता। दुष्ट लोगोंकी नजर लग जानेके भयसे वे कन्याको कभी-कभी घरके भीतर छिपा रखतीं। परन्तु ऐसे कब तक छिपाकर रख सकती थीं? राजपण्डित सनातन मिश्रके घर एक अपूर्व सुन्दरी कन्या उत्पन्न हुई है। ऐसी असाधारण रूपराशि कभी किसीने नहीं देखी—मानो साक्षात् लक्ष्मी देवी भूतलमें अवतीर्ण हुई हो। यह संवाद नवद्वीपके घर-घरमें फैल गया। टोले-टोलेसे दलके दल स्त्री-पुरुष आकर बालिकाको देखने लगे। जो एक बार देख जाता, वह फिर देखे बिना रह नहीं सकता, इसलिए फिर आता और दूसरे लोगोंको भी साथ ले आता। इस प्रकार राजपण्डित सनातन मिश्रका घर जन-समागमसे सदा भरा रहता। मिश्रजी तथा मिश्रगृहिणी आगन्तुक सभी जनोंको अत्यन्त मधुर शब्दोंसे तथा यथोचित सम्मानसे प्रसन्न करते।

मिश्र दम्पतिकी यह प्रथमा कन्या है। सनातन मिश्रने कन्याका शुभ अन्नप्राशन संस्कार बड़े समारोहके साथ सुसम्पन्न किया। जिन लोगोंको श्रीश्रीलक्ष्मीरूपा बालिकाका मुखचन्द्र देखनेका अवसर नहीं मिला, इस सुयोगसे उनको विद्युल्लता-सदृश भावी श्रीगौराङ्ग घरणीकी अपरूप रूपराशिके दर्शनोंका सौभाग्य प्राप्त हुआ। उन्होंने अपनेको धन्य समझा। उस सौन्दर्यमयी कनक प्रतिमाको वे फिर भूल न सके। विष्णुभक्त परम वैष्णव श्रीपाद सनातन मिश्रने बड़े उत्साहके साथ कन्याका नामकरण किया—"विष्णुप्रिया।" बालिका विष्णुप्रियाके गौर-वक्ष-विलासिनी होनेका यहींसे सूत्रपात हुआ।

विष्णुप्रिया देवीके शुभ जन्मके पश्चात् देखते-देखते सात-आठ वर्ष व्यतीत हो गये। बालिका विष्णुप्रियाकी अब शैशव प्रकृति नहीं रही। नाना प्रकारके वस्त्रालङ्कारोंसे भूषिता होकर अपने पिताके घरमें अन्यान्य बालिकाओंके साथ वह बाल क्रीड़ा करने लगी। माताके सङ्ग वह नित्य गङ्गास्नानके लिए जाती। उसका स्वभाव था अत्यन्त नम्र और धीर। मुँह उठाकर किसीसे बातें करना भी नहीं जानती। छल-छल लावण्यमय समस्त अङ्गोंकी शोभासे पितृगृहको आलोकित करके महालक्ष्मी विराज रही हैं। चन्द्रवदन मानो विश्वप्रेमसे भरा है। दया, माया, स्नेह और प्रेमसे मानो बालिकाका हृदय परिपूर्ण है। दीन-

दु:खी, पतित-अधमके प्रति माँ जननीकी अपार दया है, असीम प्रेम है। बालिका विष्णुप्रिया उनकी माँ-लक्ष्मी हैं। राजपण्डित सनातन मिश्रके घरमें किसी बातका अभाव नहीं; माँ-लक्ष्मी उदार हृदयसे दोनों हाथोंसे दीन-दरिद्र लोगोंको अन्न-वस्त्र दान किया करती। माँ हमारी साक्षात् अन्नपूर्णा हैं। जो जिस वस्तुको चाहता, माँ से वही प्राप्त कर लेता। हमारी विष्णुप्रिया दीन-दु:खियोंकी माँ हैं। नवद्वीपके बाल, वृद्ध, वनिता उनको माँ पुकार करके कृतार्थ होते। सारे जीव मानों उनकी प्रतिपाल्य सन्तान हैं। इतनी दया, इतनी माया तो कभी किसीने नहीं देखी। दयामयी माँकी दयाका अन्त नहीं है। आठ वर्षकी बालिका विष्णुप्रिया सबकी स्नेहमयी, दयामयी माँ बन बैठी। माँ जगज्जननी! माँ करुणामयी! धन्य है तुम्हारी करुणा। माँ! धन्य है तुम्हारी दया। कृपामयी! कृपाकरके करुण-नयनसे एक बार इस अधमके प्रति कृपादृष्टिसे देखो। माँ! तुम जन्म-जन्मान्तरकी हमारी माँ हो। माँ! यदि तुमने कृपा नहीं की, तो प्रभु श्रीशचीनन्दनकी कृपा प्राप्त करना बड़ा ही कठिन है। माँ! तुम्हारा कृपा-भिखारी होकर आशा-पथ देखता मैं बैठा हूँ। माँ! अधम-पातकीके ऊपर तुम्हारी बड़ी दया है, इसी कारण तुम्हारे श्रीचरण-कमलोंकी धूलिका प्रार्थी होकर तुम्हारे सामने गलेमें वस्त्र डाले, हाथ जोड़ कर मैं खड़ा हुआ हूँ। दयामयी माँ! दया करो। एक बार कृपा करके इस पतित-अधम दासको केश पकड़कर संसार रूपी नरक-कुण्डसे उठा लो माँ! तुमने जब नर-शिशुरूपमें श्रीधाम नवद्वीपमें अवत्तीर्ण होकर सबके नेत्रोंको सुख दिया था, तब इस नराधमका जन्म क्यों न हुआ? एक बार मैं आँखें भरकर उस अनिन्दित रूपराशिका दर्शन करके नयनोंको परितृप्त करता, तुम्हें जी भर कर 'माँ' कहकर-पुकार कर अपने त्रिताप-दग्ध प्राणोंको शीतल करता। इसीसे इस समय क्षोभपूर्वक गाता हूँ और रोता हूँ—

तखन ना हइल जन्म,	उस समय जन्म नहीं हुआ। इस
एबे देह किवा कर्म्म,	समय इस देहसे क्या लाभ? व्यर्थ
मिछा मात्र वहि फिरि भार।	भारको ढो रहा हूँ।

● बालिका विष्णुप्रिया और शचीदेवी

बालिका विष्णुप्रियाकी गङ्गा देवीके प्रति अति शैशवकालसे ही अचल भक्ति थी। वह प्रतिदिन तीन बार गङ्गास्नान करती। माता-पिताके प्रति बालिकाकी

प्रगाढ़ भक्ति थी। विष्णुप्रिया इस बाल्यावस्थासे ही विष्णुभक्तिपरायण थीं। श्रीवृन्दावन दास ठाकुर लिखते हैं--

शिशु हइते दुइ तिन बार गङ्गास्नान।
पितृ-मातृ-विष्णुभक्ति वहि नाहि आन ।।

बालिका विष्णुप्रिया माताके सङ्ग प्रतिदिन गङ्गास्नानके लिए जाया करती। गङ्गाके घाटपर सहस्रों नर-नारी उनकी परम लावण्यमयी सर्वाङ्ग सुन्दर श्रीमूर्त्तिका दर्शन करके उनके मुँहकी ओर एक टक देखते रहते। वे बालिका विष्णुप्रियाके अनिन्दित चन्द्रवदनको देख कर अपार आनन्दका अनुभव करते। परन्तु बालिका सर्वदा नतमुखी रहती। यदि उसकी ओर कोई दृष्टिपात करता तो वह लज्जासे गड़ जाती। माताका अञ्चल पकड़कर धीरे-धीरे, पीछे-पीछे कोमल पाद-विक्षेप करती हुई बालिका गङ्गा-स्नानको जाया करती। गङ्गाके घाटपर या मार्गमें इस प्रकार कितने ही लोगोंके साथ भेंट होती। परन्तु बालिका विष्णुप्रिया केवल एक वृद्धा स्त्रीको देखते ही रास्तेमें स्थिर होकर खड़ी हो अन्यमनस्क-सी हो जाती और अत्यन्त नम्रतापूर्वक धीरे-धीरे उनके पास जाकर उनको प्रणाम करती, उनकी चरणधूलि लेकर मस्तकपर धारण करती। वह वृद्धा विष्णुप्रियाकी माताकी परिचिता थी। प्रायः प्रतिदिन गङ्गाके घाटपर या मार्गमें उनके साथ विष्णुप्रियाकी माताकी भेंट हुआ करती। पाठक समझ गये होंगे कि वह स्त्री कौन है? वे हमारे निमाई चाँदकी माता, जगन्नाथ मिश्रकी गृहिणी श्रीशची देवी हैं। शची देवी भी बालिका विष्णुप्रियाको देखकर मनमें बड़ा सुख पाती और उनके उस अति सुन्दर, प्रफुल्ल, कमल सदृश मुखको पकड़कर लाड़-प्यार करती। विष्णुप्रियाकी माताके साथ शची देवीकी बहुत बातें होतीं जिनको बालिका बड़े ध्यानसे सुनती। शची देवी अपने मनकी बात किसीसे भी प्रकट नहीं करतीं। मनकी वासना मन ही में रखतीं। श्रीवृन्दावन दास ठाकुरने लिखा है--

शचीदेवी ताँरे देखिलेन जेइ क्षणे।	शची देवीने जिस क्षण उस कन्या
सेइ कन्या पुत्रयोग्य बूझिलेन मने ।।	को देखा उसी समय अनुमान किया
चै० मं०	कि ये मेरे पुत्रके योग्य है।

इस प्रकार प्रतिदिन गङ्गाके घाटपर शची और विष्णुप्रियाका सम्मिलन

हुआ करता। जभी वे सामने पड़ती तभी विष्णुप्रिया अतिशय भक्तिपूर्वक नम्र भावसे शची देवीको प्रणाम करती। शची देवी भी बालिकाका चिबुक धर कर मुख चुम्बन करती, तथा हृदय खोल कर आशीर्वाद देती। जैसे श्रीचैतन्य भागवतमें लिखा है——

आइरे देखिया घाटे प्रति दिने दिने। **नम्र हइ नमस्कार करेन आपने॥**	प्रतिदिन वृद्धाको घाटपर देखते ही नम्र होकर अपने आप नमस्कार करती।
आइओ करेन महाप्रीते आशीर्वाद। **योग्य पति कृष्ण तोमार करुन प्रसाद॥**	वृद्धा भी अत्यन्त प्रेमपूर्वक आशीर्वाद देती——श्रीकृष्ण तुम्हारे ऊपर कृपा करके योग्य पति प्रदान करें।
गङ्गास्नाने मने मने करेन कामना। **ए कन्या आमार पुत्रे हउक घटना॥** **चै० भा०**	गङ्गास्नान करते समय मन ही मन यह कामना करती कि इस कन्याका सम्बन्ध मेरे पुत्रके साथ हो जाय।

ग्रन्थकार-रचित गङ्गा-घाटपर शची-विष्णुप्रिया सम्मिलनका एक पद यहाँ उद्धृत किया जाता है——

मातार सहित विष्णुप्रिया जान। **सुरधुनि तीरे करिवारे स्नान॥**	विष्णुप्रिया अपनी माताके साथ गंगा तीरपर स्नान करने जाती।
शचीदेवी सने पथेते मिलन। **माझे-माझे हय मधु संभाषण॥**	शची देवीके साथ मार्गमें मिलन तथा बीच-बीचमें मधुर सम्भाषण होता।
जखनि देखेन शची देवी ताँरे। **कोलेते तुलिया लयेन आदरे॥**	जब शची देवी उसको देखती, तो आदर पूर्वक गोदमें लेलेती।
बालिकाऊ ताँरे सम्भ्रमे प्रणमे। **मुख पाने चेये दाँड़ाये सरमें॥**	बालिका भी उनको सम्मानपूर्वक प्रणाम करती और मुँहकी ओर देख कर लज्जासे खड़ी हो जाती।

शची माता और बालिका विष्णुप्रियाकी गङ्गाजीके मार्गमें भेंट

कि एक स्नेहेर भालवासा डोरे । बालिका बाँधिल प्रभुर मायेरे ।।	प्रभुकी माताको बालिकाने कैसे प्रेम और स्नेहकी डोरसे बाँधा है !
मन नाहिं सरे छाड़िया जाइते । भूले जान् शची, नाइते खाइते ।।	उसको छोड़कर शचीका मन जाना नहीं चाहता, स्नान और भोजन तक भूल जाती ।
मातार सहित स्नानेर समय । पथेते दाँड़ाए कत कथा हय ।।	स्नानके समय रास्तेमें उनकी माताके साथ खड़े-खड़े कितनी ही बातें हुआ करतीं ।
कत शत लोक, गंगास्नाने आसे । बालिकाटी देखे, सुख-नीरे भासे ।	सैकड़ों आदमी गङ्गा-स्नानके लिए आते और बालिकाको देखकर सुख-सागरमें डूब जाते ।
शची देवी कहे योग्य पति हवे । लक्ष्मी मेये तुमि चिरसुखी भवे ।।	शची देवी कहतीं— "हे लक्ष्मी बेटी ! तुम्हें योग्य पति मिले और तुम संसारमें सर्वदा सुखी रहो" ।
मने भावे शची, घर आलो करा । ए मेयेटि यदि पाइ आमि धरा ।। निमायेर सने विभा दिये एर । घरे लये जाइ माधुरी भवेर ।।	शची देवी मनमें सोचती कि घरको आलोकित करनेवाली इस कन्याको यदि मैं पकड़ पाती तो इसका व्याह निमाईके साथ करके इस संसारकी माधुरीको अपने घर ले जाती ।
भने हरिदास पूरिबे से आशा । विष्णुप्रिया चाहे प्रभु भालवासा ।	हरिदासजी कहते हैं कि उनकी वह आशा पूरी होगी । क्योंकि विष्णुप्रिया प्रभुके प्रेमकी कामना करती हैं ।

●

द्वितीय अध्याय

शुभ परिणयकी सूचना

शचीदेवी ताँरे देखिलेन जेइ क्षणे ।	शची देवीने जिस क्षण उसको देखा
सेइ कन्या पुत्र योग्य बूझिलेन मने ।।	तभी समझ लिया कि यह कन्या मेरे
--श्रीचैतन्य भागवत ।	पुत्रके योग्य है ।

● शची देवीकी चिन्ता

श्रीश्रीगौराङ्ग सुन्दरकी पहली पत्नी श्रीश्रीलक्ष्मी देवीका देहावसान हो जानेसे शची देवीका घर सूना हो गया । उनको अब कुछ भी अच्छा नहीं लगता । घर-गृहस्थीमें मन नहीं लगता । कब अपने निमाई चाँदके दोनों हाथ एक करूँगी, इसी चितासे शची देवी सदा व्याकुल रहतीं । पुत्रकी अवस्था कम है, कोई अभि-भावक नहीं है, इसके अतिरिक्त संसारमें कोई आसक्ति नहीं है । यदि शीघ्र ही पुनः विवाहकी शृङ्खलामें आवद्ध नहीं किया तो पीछे पुत्र संसारसे विरक्त हो जायगा । इसी भयसे शची देवी निमाई चाँदके दोनों हाथोंको एक करनेके लिए बहुत व्यग्र हो उठी हैं । बालिका विष्णुप्रियाको देखते ही शची देवीका मन बड़ा अस्थिर हो गया । किस उपायसे यह स्वर्ण-प्रतिमा घरमें ला सकूँ, कौन इस विषयमें उनकी सहायता करेगा, किससे इस विषयमें परामर्श करूँ--इसी चिन्तासे वे सर्वदा कातर रहने लगीं । दूसरी बात, दूसरे विषय उनके मनमें टिकते ही नहीं । बालिका विष्णुप्रिया दशमसे एकादश वर्षमें पदार्पण कर चुकी है । श्रीश्रीनिमाई चाँदकी अवस्था उस समय न्यूनाधिक बीस वर्षकी थी; जैसे वे सर्वगुणोंके गुणमणि, पण्डित शिरोमणि, अपरूप-रूपराशि सम्पन्न, तरुण वयस्क नवीन युवक वर थे, वैसे ही साक्षात् लक्ष्मी स्वरूपा, परम लावण्यमयी, परम सुन्दरी किशोर-वयस्का कन्या थी । शची माता मन ही मन सोचती कि यह युगल मिलन बड़ा ही सुन्दर और सुखकर होगा । वर कन्याको अच्छा सजेगा । कब वह शुभ दिन आयेगा, कब यह शुभ मिलन संघटित होगा, कब इस युगलरूप

माधुरीको देखकर नयन सफल करूँगी ? इसी चिन्तामें शची देवी दिन रात आकुल रहतीं। सनातन मिश्र राजपण्डित हैं, वे बड़े आदमी हैं। मेरा निमाई गरीबका लड़का है, उसकी माता अत्यन्त दुःखिनी है। दुःखिनीके पुत्रको राजपण्डित अपनी कन्या क्यों दान करेंगे ? इसके सिवा निमाई चाँद दूजवर* हैं। वह पागलके समान रास्तेमें नाचता डोलता है। इतना बड़ा लड़का गङ्गाके घाटपर जाकर दिन-रात जलमें पड़ा रहता है, धूल लपेट कर बालकके समान खेल करता है। इस पागल पुत्रको सनातन मिश्र कन्या-दान क्यों करेंगे ? इस चिन्तासे शची देवी बहुत आकुल हो उठतीं। अब तक मनकी बात खोल कर किसीसे नहीं कही। उधर बालिका विष्णु-प्रियाने उनके मन-प्राणको पूर्णतः हर लिया था। शची देवी जब गंगास्नानके लिए जातीं, तभी उस चित्तहारिणी परमा सुन्दरी बालिकाके साथ साक्षात्कार होता ; केवल भेंट ही नहीं--घाट-बाटमें उनको देखते ही बालिका अत्यन्त आदर पूर्वक नम्र भावसे प्रणाम करके उनके पास आकर खड़ी हो जाती, मानो कबकी परिचिता हो, तथा घरकी ही बालिका हो। सैकड़ों बालिकाएँ गङ्गाके घाटपर स्नानके लिए आतीं, परन्तु और कोई तो इस प्रकार समीप नहीं आती और न इस प्रकार मनहरण कर सकी। इस बालिकाकी शची देवीके ऊपर इतनी प्रगाढ़ भक्ति क्यों हैं--यह सोचकर शची माताके हृदयमें बड़ा सुख होता, मन आनन्दित होता और कुछ आशाका भी सञ्चार होता।

● मिश्र दम्पतिकी चिन्ता

इधर तो शची देवीके मनकी अवस्था इस प्रकार हो रही थी और उधर श्रीपाद सनातन मिश्र कन्याको सयानी हो गई देखकर उसके शुभ विवाहके लिए उपयुक्त पात्र खोजनेमें व्यस्त थे। वैदिक ब्राह्मणोंकी संख्या उन दिनों नवद्वीपमें बहुत कम थी, इसलिए सुपात्र पाना बड़ा ही कठिन था। कन्या विवाहयोग्य हो गयी है, उपयुक्त पात्र मिल नहीं रहा है, इस चिन्तामें मिश्रजी और उनकी गृहिणी दिन-रात चिन्ताग्रस्त रहा करते हैं। कन्या बड़ी है,

---

* प्रथम पत्नीका देहान्त होनेपर विपत्नीक व्यक्तिकी पुनर्विवाहकी चर्चाके लिये उसकी 'दूजवर' संज्ञा होती है। द्वितीय पत्नीके देहान्त होनेपर ऐसी चर्चाके लिए उसकी 'तीजवर' संज्ञा होती है।

एकलौता बेटा यादव छोटा है। कन्या मिश्र-दम्पतिके प्राण है। वे पुत्रकी अपेक्षा कन्याको अधिक स्नेह किया करते। किस प्रकार विष्णुप्रियाको सुपात्रको दान करके मान-सम्मान बचा सकेंगे, कैसे कुलशीलकी रक्षा करेंगे—इसी चिन्तामें मिश्र-दम्पति आकुल हो उठे। एक बार स्त्री-पुरुष एकान्तमें बैठकर बातें करने लगे—

मिश्र—ठीक ही तो है। विष्णुप्रिया ग्यारहवें वर्षमें पदार्पण कर चुकी है। उसको अधिक समय तक अविवाहित रखना कदापि युक्ति सङ्गत नहीं है। समस्त नवद्वीपमें ढूंढ़नेपर विष्णुप्रियाके उपयुक्त पात्र नहीं दीख पड़ा। केवल एक निमाई पण्डितके सिवा दूसरा कोई सुपात्र नहीं। अहा! मेरे भाग्यसे क्या ऐसा पात्र प्राप्त होगा? वह मेरी पुत्री लक्ष्मीस्वरूपा विष्णुप्रियाके उपयुक्त भी है। क्या रूप-गुणमें, क्या कुल-शीलमें, सभी विषयोंमें जगन्नाथ मिश्रका पुत्र मेरी विष्णुप्रियाके लिये उपयुक्त पात्र है।

मिश्रगृहिणी—यही बात तुमको बतलानेके लिए आयी हूँ। निमाई पण्डितकी माताके साथ गङ्गाके घाटपर भी प्रतिदिन भेंट होती है। वे मेरी विष्णुप्रियासे बड़ा स्नेह करती हैं। देखते ही उसका मुंह पकड़कर प्यार करती हैं। और विष्णुप्रिया भी, न जाने क्यों, उस वृद्धाको देखते ही मन ही मन बड़ी आनन्दित होती है। ऐसा जान पड़ता है मानो दोनोंके बीचमें कोई विशेष प्रीति-बन्धन है। अब किस प्रकार, किसके द्वारा यह शुभ प्रस्ताव उपस्थित किया जाय, यही निश्चय करना है। यद्यपि निमाई पण्डित दूजवर है तथापि मैं विष्णुप्रियाको निमाई पण्डितके हाथमें सौंप सकूँ तो अपनेको कृतार्थ समझूंगी। वे महापण्डित हैं, जगन्मान्य हैं। क्या वे मेरी कन्याको पत्नीरूपमें ग्रहण करेंगे?

मिश्र—मेरे विचारसे तुम बात ही बातमें पहले यह शुभ प्रस्ताव जगन्नाथ-गृहिणी शची देवीके सामने उपस्थित करो। इसमें देर न हो। सुनते हैं निमाई पण्डित बड़े ही मातृभक्त हैं। माताके विचारका वे कदापि उल्लङ्घन नहीं करेंगे। कल ही गंगाके किनारे स्नानके समय यह शुभ प्रस्ताव तुम स्वयं रखना। इसमें कोई हर्ज नहीं।

मिश्रगृहिणी—यदि शची देवी अस्वीकार कर दें तो?

मिश्र—उसमें हानि क्या है? उपयुक्त अनूढ़ा कन्या जिसके घरमें हो, उसका मानापमानका भय करनेसे काम नहीं चलता। एक बार शची देवीके

मनका भाव जान लेनेपर मैं काशीनाथ घटक*के द्वारा सारी बात ठीक कर लूँगा।

मिश्रगृहिणी--अच्छा, ऐसा ही होगा।

● शची देवी और काशीनाथ पण्डित

श्रीभगवान्‌की कृपासे मिश्र-गृहिणीको अयाचित भावमें शची देवीसे यह शुभ प्रस्ताव नहीं करना पड़ा। शचीदेवी पुत्रके विवाहके लिए बहुत ही व्यग्र थीं। सनातन मिश्रकी कन्या कहीं हाथसे न चली जाय, इस भयसे उन्होंने काशीनाथ घटकको बुलाकर शुभ विवाहकी योजनाका भार उनके ऊपर दिया। चैतन्य भागवत्‌में लिखा है--

दैवे शची काशीनाथ पण्डितेर आनि।
बलिलेन ताँरे, बाप! सुन एक वाणी॥

दैवात् शचीदेवीने काशीनाथ पण्डितको बुलाकर उनसे कहा--बाबा! मेरी एक बात सुनो।

राज पण्डितेरे कह इच्छा थाके तान।
आमार पुत्रेर तबे करु कन्यादान॥
--चै० भा०

राज पण्डितसे जाकर कहना कि यदि उनकी इच्छा हो तो मेरे पुत्रको अपनी कन्या दान करें।

काशीनाथ पण्डित शची देवीके पड़ोसी थे, स्वभावसे अत्यन्त शान्त। विवाहकी योजना जुटाना उनका व्यवसाय था। शची देवी उनसे पुत्रवत् स्नेह किया करतीं; बाबा कहकर संबोधन करतीं। शची देवीके मनके भावको जानकर वे बोले--"माँ! इसके लिए क्या चिन्ता? इस शुभ कार्यका भार मेरे ऊपर देकर आप निश्चिन्त रहें। मैं जैसे भी बन पड़ेगा सनातन मिश्रकी कन्याको आपके घरमें ला दूँगा।" शची देवी बहुत प्रसन्न हुईं, और काशीनाथ पण्डितको सम्बोधन करके बोलीं--"बाबा! देखना जैसे भी हो यह शुभ कार्य सम्पन्न हो जाय, तुम्हारे ऊपर सब भार रहा। तुम अभी जाओ, राजपण्डितके दोनों हाथ पकड़कर मेरा नाम लेकर कहना कि मेरे निमाई चाँदको उन्हें प्रतिष्ठित करना ही होगा।

---

* बंगालमें वर-कन्याके संबंध जुटानेवालेको 'घटक' कहते हैं।

● सनातन मिश्रके घर काशीनाथ पण्डित

काशीनाथ पण्डितने श्री दुर्गा-दुर्गा, कृष्ण-कृष्ण स्मरण करके तुरन्त राज-पण्डित श्रीपाद सनातन मिश्रके निवासस्थानपर आकर शची देवीके शुभ प्रस्तावको उनके सामने रक्खा।
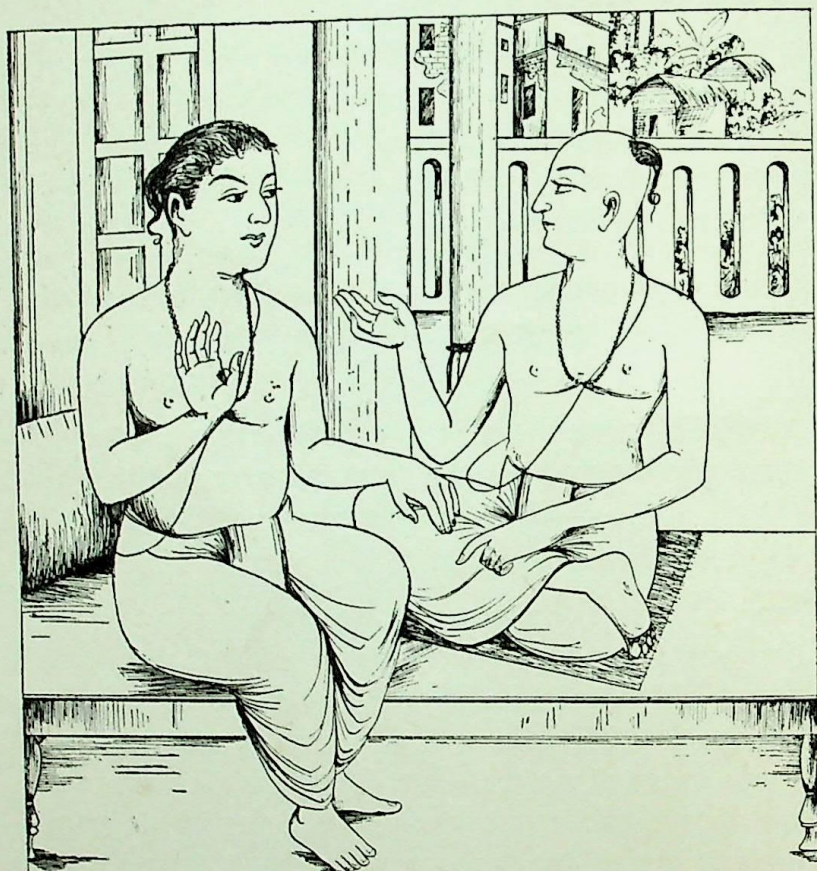
काशीनाथ पण्डित चलिला सेइ क्षणे।
दुर्गाकृष्ण बलि राजपण्डित भवने।।

काशीनाथ पण्डित उसी क्षण दुर्गा-कृष्ण नाम स्मरण करके राज पण्डितके घरको चल पड़े।

काशीनाथे देखि राजपण्डित आपने । बसिते आसन आनि दिलेन सम्भ्रमे ।।	काशीनाथको देखते ही राज पण्डितने स्वयं उठकर आदरपूर्वक आसन ला कर दिया ।
परम गौरवे विधि करे यथोचित । कि कार्य्ये आइला जिज्ञासिलेन पण्डित ।।	परम गौरव पूर्वक उनका यथोचित सम्मान किया और पूछा कि वे किस कार्यसे आये हैं ?
काशीनाथ बलेन आछये एक कथा । चित्ते लय यदि तबे करह सर्व्वथा ।।	काशीनाथने कहा--"एक बात है, यदि जँचे तो उसे पूरी कीजिए ।
विश्वम्भर पण्डितेरे तोमार दुहिता । दान कर ए सम्बन्ध उचित सर्व्वथा ।।	अपनी कन्याको विश्वम्भर(निमाई) पण्डितको दान कीजिए, यह सम्बन्ध मुझको सर्वथा उचित जान पड़ता है ।
तोमार कन्यार योग्य सेइ दिव्य पति । ताहान उचित पत्नी एइ महासती ।।	आपकी कन्याके योग्य वही दिव्य वर है और उनके लिए यह महा सती ही योग्य पत्नी है ।
जेन कृष्ण रुक्मणीते अन्योन्य उचित । सेइ मत विष्णुप्रिया निमाई पण्डित ।। --श्रीचैतन्य भागवत्	जिस प्रकार कृष्ण और रुक्मिणी परस्पर योग्य थे उसी प्रकार विष्णुप्रिया और निमाई पण्डित एक दूसरेके योग्य हैं ।"

काशीनाथ पण्डितके मुखसे यह संवाद सुनकर सनातन मिश्रको मानो आकाशका चाँद मिल गया। पूर्वरात्रिके स्त्री-पुरुषके कथोपकथन याद आ गये। मन ही मन श्रीविष्णुका नाम स्मरण कर उन्होंने अपने इष्ट देवको कोटि-कोटि प्रणाम किये। वे काशीनाथ पण्डितसे बोले--"पण्डित! तुमने आज मेरे मनकी बात कही है। अब तक साहस पूर्वक यह बात मैं किसीके सामने बोल न सका। मेरा परम सौभाग्य है कि शची देवीने स्वयं ही मेरे मनकी बात जानकर आपके द्वारा यह शुभ प्रस्ताव भेजा है।"

काशीनाथ पण्डितेरे कहे सनातन।
आपन अन्तर कहि शुन महाजन।।

काशीनाथ पण्डितसे सनातन बोले—"हे महाजन! अपने मनकी बात कहता हूँ, उसको सुनिये।

एइ मोर मनो-कथा रजनी-दिवस।
प्रकट वदने कहि नाहिक साहस।।

मेरे मनमें भी रातदिन यही बात उठती थी लेकिन मुँह खोलकर प्रकटमें कहनेका साहस नहीं होता था।

आजि शुभ दिन परसन्न भेल विधि।
जामाता हइवे गोराचाँद गुणनिधि।।

आज बड़ा शुभ दिन है, विधाता मुझपर प्रसन्न हुए हैं कि गुणनिधि गौरचन्द्र मेरे जामाता बनेंगे।

आपनार भाग्य तत्त्व जानिलाम तबे।
आपने जे शची देवी आज्ञा कैल जबे।।
——चै० मं०

अपने भाग्य तत्त्वको मैंने तभी समझ लिया जब शची माताने स्वयं ही यह आज्ञा की।"

काशीनाथ पण्डितसे अनुमति लेकर सनातन मिश्र घरके भीतर गृहिणीको यह शुभ संवाद देने चले। उनसे मतामत पूछनेकी आवश्यकता न थी। पहलेसे ही सब निश्चय हो चुका था, जिससे पाठकगण अवगत ही हैं। मिश्र-गृहिणी यह शुभ संवाद श्रवण करके आनन्दसे विह्वल हो उठीं, अनेकों देवी-देवताओंसे विनती करने लगीं कि यह शुभ कार्य शीघ्र सुसम्पन्न हो और मिश्रजीसे हँसती-हँसती कहने लगी—"जान पड़ता है, भगवान् मेरे इतने दिनोंकी अभिलाषा पूरी करेंगे। इतने दिनोंमें भगवान्ने मेरी विष्णुप्रियाके उपयुक्त वर मिला दिया। अहा! क्या मेरा ऐसा सौभाग्य होगा? तुम अभी जाकर घटक महाशयको भली भाँति बिदा करो और जितनी जल्दी हो सके इस शुभ कार्यके सम्पादनका प्रबंध करो।" मिश्रजी अन्तःपुरसे बाहर बैठक-खानेमें आकर अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक काशीनाथ पण्डितसे बोले——

विश्वम्भर पण्डितेर करे कन्या दान।
करिब सर्व्वथा विप्र इथे नाहिं आन।।

विश्वम्भर पण्डितके हाथमें सर्व भावेन कन्या दान करूँगा, इसमें अन्यथा नहीं होगा।

भाग्य थाके यदि सर्व्व वंशेर आमार।	यदि हमारे समस्त वंशका सौभाग्य
तबे हेन सम्बन्ध हइबे ए कन्यार॥	होगा तो इस कन्याको ऐसा सम्बन्ध मिलेगा।

चल तुमि तथा गिया कह सर्व्व कथा।	चलो, तुम वहाँ जाकर सब कथा
आमि पुनः दड़ाइलु करिब सर्व्वथा॥	सुनाओ। मैं फिर दृढ़तापूर्वक कहता
--चै० भा०	हूँ कि यह काम सर्व भावेन करूँगा।

● विवाह सम्बन्धके निश्चय पर आनन्द

काशीनाथ पण्डितने यह शुभ संवाद अति शीघ्र शची देवीके पास पहुँचा कर सारी बातें खोल कर समझा दीं। शची देवीके मुँहपर आज बहुत दिनोंके बाद हँसीकी रेखा दिखायी दी। उनके उस शोकाकुल मुखमण्डलपर आनन्दका आलोक दीख पड़ा। दोनों नत्रोंके प्रान्त-भागसे दो अश्रु बूंदें ढलक पड़ीं। उन्होंने काशीनाथ पण्डितके दोनों हाथ पकड़कर बहुत आशीर्वाद दिये। शची देवीने तब यह शुभ संवाद पड़ोसियोंसे कह सुनाया। एक-एक करके सबने निमाई पण्डितके शुभ विवाहका समाचार सुना, सुनकर अत्यन्त आनन्दित हुए। सभी इस शुभ-विवाहके उद्योगमें लग गये। निमाई पण्डितके समवयस्कगणके हृदय उत्सवानन्दसे भर गये।

श्रीपाद सनातन पण्डित पहलसे ही जानते थे कि उनके भावी जामाता सामान्य मनुष्य नहीं हैं। बीस वर्षके युवक निमाई पण्डितका यथार्थ परिचय उस समय अनेक नवद्वीपवासी पा चुके थे। केवल उनके असाधारण पाण्डित्यका परिचय पाकर ही लोग चकित हुए हों, ऐसी बात नहीं थी। उनके कार्य-कलाप तथा उनकी आकृति और प्रकृतिके स्वाभाविक सौन्दर्य और माधुर्यको देखकर बहुत लोगोंकी समझमें आ गया था कि वे साधारण मनुष्य नहीं हैं। श्रीपाद सनातन मिश्र भी उन लोगोंमें एक थे। इसका प्रमाण श्रीचैतन्य-मङ्गलमें ठाकुर श्रीलोचनदास दे गये हैं—

मोर भाग्य सम भाग्य काँहार हइब।	मेरे भाग्यके समान किसका भाग्य
परब्रह्म श्रीगोविन्दे कन्या समर्पिब॥	होगा जो मैं परब्रह्म श्रीगोविन्दको अपनी कन्या समर्पण करूँगा!

सदा जार पादपद्म पूजे ब्रह्माशिव।
से चरणे कन्या दिया आमिह अर्च्चिब।।
--चै० मं०

जिनके पादपद्मोंकी पूजा ब्रह्मा और शिव करते हैं, कन्या देकर उन चरणोंकी मैं भी अर्चना करूँगा।

श्रीपाद सनातन मिश्रने समझ लिया था कि उनके भावी जामाता परम-ब्रह्म, सनातन, साक्षात् श्रीगोविन्द हैं। सामान्य मनुष्य समझकर लोग उनको निमाई पण्डित कहा करते हैं। इसी कारण मिश्रजीके मनमें इतना भय और इतना सन्देह था कि कहीं कन्याको भगवान् अपनी अङ्कलक्ष्मी बनानेमें आना-कानी न करें। शची देवीकी आश्वासनकी बातोंसे सनातन मिश्रका वह सन्देह निर्मूल नहीं हुआ। मन बहुत कुछ शान्त तो हुआ, परन्तु भय था कि कहीं अन्तमें श्रीभगवान्की दयासे वञ्चित न हो जाँय। इस भयका अवश्य ही कारण था। श्रीभगवान्को कन्या समर्पण करके जीवन सार्थक करूँगा--यह आशा भी बड़ी महान आशा थी। भक्तवत्सल, वाञ्छा-कल्पतरु श्रीभगवान् भक्तकी सारी बातें सुनते हैं, सारी आशा पूर्ण करते हैं, परन्तु भक्तके मनमें पूर्ण भरोसा होना संभव नहीं। भक्त और भगवान्में प्रभु और दासका सम्बन्ध है। ऐसी अवस्थामें भय या सन्देह होना स्वाभाविक है। सनातन मिश्रका सन्देह निराधार नहीं था। श्रीभगवान् विशेष परीक्षा किये बिना भक्तपर कृपा नहीं करते। अतएव श्रीभगवान्ने अपने भावी श्वशुरको भी परीक्षा लिए बिना न छोड़ा।

तृतीय अध्याय

हर्षमें विषाद

ए बोल शुनिया निमाइ करिल उत्तर । **कह कोथा कार विभा केवा कन्या वर ।।** **--श्रीचैतन्य मङ्गल**	यह बात सुनकर निमाईने पूछा "किसका विवाह है और कौन कन्या और वर हैं ?"

● विवाह संबंधके लिये निमाई पण्डितका अज्ञान प्रदर्शन

सनातन मिश्रने ज्योतिषीको शुभ विवाहका दिन निश्चय करनेके लिए बुलवाया। ज्योतिषीजी अत्यन्त आनन्दपूर्वक मिश्रजीके घर जा रहे थे। रास्तेमें निमाई पण्डितसे साक्षात्कार हो गया। निमाई पण्डित उस समय छात्रोंको साथ लेकर गंगास्नान करने जा रहे थे। ज्योतिषीजीने निमाई पण्डितको लक्ष्य करके कहा--"पण्डित ! तुम्हारे शुभ विवाहका दिन स्थिर करने जा रहा हूँ। सनातन मिश्रकी परम रूपवती कन्याके साथ तुम्हारा शुभ विवाह होगा। बड़े आनन्दकी बात है। मिश्रजीका बड़ा सौभाग्य है !" यह बात सुनकर निमाई पण्डित एकबारगी विस्मित होकर ज्योतिषीकी ओर देखते हुए बोले--"क्या बात है ? मेरा विवाह? मैं तो कुछ भी नहीं जानता ? इस विवाहके संबंधमें मुझसे तो किसीने कुछ पूछा नहीं ?" ज्योतिषीजीने आश्चर्य करते हुए कहा--"नवद्वीपके सब लोग इस शुभ समाचारसे आनन्दित हो रहे हैं और पण्डित ! तुम अपने विवाहकी खबर भी नहीं रखते हो ? कहावत है कि 'जार बिये तार खोंज नेइ, पाड़ा-पड़शीर घूम नेइ' (जिसका विवाह उसको खबर नहीं, अड़ोस-पड़ोसको नींद नहीं)। वही तुम्हारा हाल है। बड़े आश्चर्यकी बात है ! तुम्हारी माताजीने यह विवाह स्थिर किया है।

क्या तुमको उन्होंने नहीं बतलाया ?" निमाई पण्डित ज्योतिषीकी बात सुनकर हँसते-हँसते केवल 'ना' कहकर गङ्गाके घाटकी ओर चल पड़े।

● सनातन मिश्रके घर विषाद

ज्योतिषी महाशयके मनमें एक बड़ा खटका उत्पन्न हो गया। वे यथा-समय सनातन मिश्रके घर पहुँचे। रास्तेमें निमाई पण्डितके साथ उनकी जो बातें हुई थीं उनमें नमक मिरच लगा सारी बातें मिश्रजीको कह सुनायीं। सुनकर सनातन मिश्रने सोचा कि निमाई पण्डितने उनकी कन्याकी उपेक्षा की है। उनका पूर्व सन्देह मनमें दृढ़ हो गया, हृदयको एक प्रबल चोट लगी और उनके मनमें मर्मान्तिक वेदना हुई।

ज्योतिषी महाशयकी बातें ठाकुर लोचन दासने अपने श्रीचैतन्य-मङ्गलमें इस प्रकार वर्णन की हैं--

गणक कहिल शुन शुन हे पण्डित। आसिते देखिनु विश्वम्भर आचम्बित।।	ज्योतिषीने कहा--"हे पण्डित ! आते समय सहसा मैंने विश्वम्भरको देखा।
तारे देखि आनन्दित भेल मोर मन। कौतुके ताहारे आमि बलिनु वचन।।	उनको देखकर मेरा मन आनन्दित हो गया और कौतुक पूर्वक मैंने उनसे कहा कि
कालि शुभ अधिवास हइबे तोमार। विवाह हइबे सुनो वचन आमार।।	कल तुम्हारा शुभ अधिवास* होगा, मेरी बात सुनो, तुम्हारा विवाह होनेवाला है।
ए बोल शुनिया तेंहो करिल उत्तर। कह कोथा्कार बिभा केवा कन्या वर।।	यह बात सुनकर उन्होंने उत्तर दिया--'किसका विवाह है ? कौन वर-कन्या हैं ?'
आमार साक्षाते कथा कहिल एमन। बूझिया कार्य्येर गति कर आचरण।। --चै० मं०	मेरे सामने उन्होंने ऐसी बात कही है। इसलिए आप कार्यकी गति समझ कर आचरण करें।"

---

* विवाहादि मङ्गलकार्यके पूर्व गन्ध-माल्यादि संस्कार।

ज्योतिषीजीकी बात सुनकर सनातन मिश्रके सिरपर मानो बज्रपात हो गया। वे कुछ देर तक निस्तब्ध हो गये। बीच-बीचमें दीर्घ साँस लेते रहे। सिर नीचा करके बैठे रहे। कुछ देर इस प्रकार रहनेके बाद उन्होंने अन्तःपुरमें प्रवेश किया। ज्योतिषी महाशय बाहर ही बैठे रहे।

मिश्रजीने सबसे पहले अपनी गृहिणीको यह समाचार सुनाया। मिश्र-गृहिणी घरमें आनन्दोत्सवका आयोजन कर रही थीं। स्वामीके मुखसे यह अशुभ समाचार सुनकर एकाबरगी उनका चेहरा उतर गया। सब लोगोंने एक-एक करके यह बात सुनी। सनातन मिश्रके घर हा-हाकार मच गया। सब उदास हो गये, सबके मुह पर विषादकी रेखा दौड़ गयी। राज पण्डित श्रीपाद सनातन मिश्रका धैर्य छूट गया। वे दुःख और अपमानसे हा-हाकार करके भूतल पर जा पड़े। जैसे श्रीचैतन्य-मङ्गलमें लिखा है--

गणकेर मुखे एत सुनिया वचन।
धैर्य्य हाराइल पण्डित सनातन॥

ज्योतिषीके मुखसे इतनी बात सुनकर पण्डित सनातन धैर्य खो बैठे।

नाना द्रव्य कैनु आमि नाना अलङ्कार।
काहारे वा दोष दिव करम आमार॥

"मैंने नाना प्रकारके द्रव्य और अलङ्कार तैयार कराये। दोष किसको दूँ? मेरे भाग्यकी बात है।

आमि कोन किछु अपराध नाहिं करि।
अकारणे आदर छाड़िला गौर हरि॥

मैंने तो कोई अपराध नहीं किया, विना कारण ही गौर हरिने मेरा अनादर किया।"

हा हा गोराचाँद बलि भूमेते पड़िला।
गौराङ्ग-सम्बन्ध-सुख धन हाराइला॥

"हा-हा गौरचन्द्र" कहते हुये भूमि पर गिर पड़े और गौराङ्गके संबंधका जो आनन्द था वह जाता रहा।

फुत्कार करिया कांदे बोले हरि हरि।
तोमा ना पाइया विश्वम्भर आमि मरि॥
--चै० मं०

चीत्कार मार कर रोते हुये हरि-हरि कहते हुये बोलने लगे--"हे विश्वंभर! तुम्हें प्राप्त न करनेसे मैं मर जाऊँगा।"

इतने बड़े राजपण्डित, इतने बड़े सन्मानी लोग, सबके सामने बालकके समान पृथ्वीपर पड़कर चीत्कार करके रोने लगे। भक्त श्रीभगवान्के

समीप उपेक्षित हुआ है, दास प्रभुके निकट अवज्ञात हुआ है इससे मनमें बड़ा दुःख हुआ, अभिमानसे उनका हृदय फटा जा रहा था। दास अब क्या करे? दासके लिए क्रन्दनके सिवा और उपाय ही क्या है? श्रीभगवान्के सामने भक्तका कातर रोदनके सिवा और क्या निवेदन है? इसी कारण आज मिश्रजी मानसिक दुःखके वश हो श्रीभगवान् श्रीश्रीगौराङ्ग सुन्दरका कातर स्वरसे स्तवन करने लगे--

जय पाण्डवेर परित्राण विश्वम्भरे। राखिले भीष्मक-वाञ्छा विदर्भ नगरे॥	हे पाण्डवोंका परित्राण करनेवाले विश्वम्भर! तुम्हारी जय हो। तुमने विदर्भ नगरमें राजा भीष्मककी मनोकामना पूरी की।
जय रुक्मिणीर वाञ्छा-रक्षक मुरारि। आनिलेन अकुमारी जतेक सुन्दरी॥	हे रुक्मिणीकी मनोकामनाकी रक्षा करनेवाले मुरारि! तुम्हारी जय हो। जितनी सुन्दरी बालाओंको तुम लाये,
ता सभारे करिल बिभा जानि तार मर्म्म। मोर कन्या विभा कर तुमि सत्य धर्म्म॥	उनके हृदयके मर्मको जानकर सबके साथ ब्याह किया। तुम सत्यधर्म हो, मेरी कन्यासे भी विवाह करो।
मोरे घृणा ना करिवे पतित वलिया। कत कत पतितेरे लैयाछ तारिया॥	हे प्रभो! मुझको पतित समझकर मुझसे घृणा न करो। तुमने अनेकों पतितोंका उद्धार किया है।
जय विश्वम्भर जगजन-त्राण-दाता। जय सर्वेश्वरेश्वर विधिर विधाता॥	हे जगतके लोगोंकी रक्षा करनेवाले विश्वम्भर! तुम्हारी जय हो। हे सर्वेश्वरके ईश्वर, विधिके विधाता! तुम्हारी जय हो।
मुञि से अधमाधम मति अति मन्द। कभू ना पाइल तोर भजनेर गन्ध॥ —चै० मं०	मैं अत्यन्त अधमाधम और मन्द मति हूँ। मुझे तुम्हारी भक्तिकी गन्ध भी कभी प्राप्त नहीं हुई।

इधर मिश्र-गृहिणी अपने मनके दुःखको रोककर, स्त्रीजन-सुलभ लज्जा

त्याग करके, पतिके समीप बैठकर नाना प्रकार सान्त्वना देने लगी। जब पुरुष अत्यन्त दुःख या विपदमें कातर हो उठता है, तब एकमात्र प्रेममयी स्त्री ही उसे सान्त्वना दे सकती है। पुरुषकी आँखोंसे सहज ही आँसू नहीं निकलते और निकलनेपर सहज ही बन्द नहीं होते। राजपण्डित मिश्रजी नवद्वीपमें सबके लिए सम्मानित व्यक्ति थे। निमाई पण्डितने उनकी कन्याको अस्वीकार किया है, इससे सनातन मिश्रके हृदयमें अपमानका-सा बोध हुआ। नवद्वीपका ब्राह्मण समाज उनको क्या कहेगा? मिश्र-गृहिणी धीरे-धीरे मृदु वचनोंसे अपने पतिको समझाने लगी--

कुलजा सलज्जा कुलवती पतिव्रता। सर्व्वगुणे शीले सेइ विष्णुर भकता॥	वह श्रेष्ठकुलकी लज्जाशीला, कुलवती पतिव्रता, सर्वगुण-शीलयुक्त, विष्णुभक्त मिश्र-गृहिणी।
स्वामी दुःख देखिया पाइल बड़ दुःख। लज्जा घुचाइया कहे स्वामीर सम्मुख।	पतिके दुःखको देखकर बहुत दुःखी हुई। लज्जा छोड़कर पतिके सम्मुख बोली—
आपने जे विश्वम्भर ना करिल काज। तोमारे कि दोष दिबे नदीया-समाज॥	"यदि विश्वम्भर स्वयं यह कार्य नहीं करते तो नदियाके लोग आपको क्या दोष देंगे?
आपने जे ना करिला विश्वम्भर हरि। तोमार शकति किवा करिवारे पारि॥	विश्वम्भर हरि स्वयं जो नहीं करना चाहते, उसको करनेकी शक्ति क्या आपमे है?
स्वतन्त्र पुरुष सेइ सबार ईश्वर। ब्रह्मा रुद्र इन्द्र आदि जाहार किङ्कर॥	वे स्वतन्त्र पुरुष हैं; सबके ईश्वर हैं। ब्रह्मा, रुद्र, इन्द्र आदि उनके सेवक हैं।
से जन केमने हइबे तोमार जामाता। शान्त कर मन, स्मर कृष्णेर वारता॥	वे भला, आपके जामाता कैसे हो सकते हैं? मन को शान्त कीजिए और कृष्ण-कथाका स्मरण कीजिए।

शकति सम्भवे नाहि, दुःख अकारण।
बलिते डराइ दुःख घुचाओ एखन ।।
—चै० मं०

जहाँ अपनी शक्ति काम नहीं करती, वहाँ दुःख करना व्यर्थ है। मैं कुछ कहनेमें डरती हूँ, अब दुःखका त्याग कीजिए।"

गृहिणीके सान्त्वना भरे वचन सुनकर सनातन मिश्रका दुःख कुछ शमन हुआ। श्रीभगवान् केवल परीक्षाके लिए अपने भक्तकी उपेक्षा या अनादर करते हैं। यह उसी चक्रीका चक्र है, उसी कौशलीका कौशल मात्र है। अज्ञानी जीव इसको समझ नहीं पाता, अथवा श्रीभगवान् उसे समझने नहीं देते। श्रीनिमाई चाँदने श्रीसनातन मिश्र तथा उनकी गोष्ठीके लोगोंको आज जो कष्ट दिया है, वह दुःख वे अनादिकालसे अपने भक्तोंको देते आ रहे हैं। इसको जो लोग श्रीभगवान्की दयाके रूपमें ग्रहण करते हैं, वे ही विजयी होते हैं। श्रीभगवान् ऐसा क्यों करते हैं, इसका एक सुन्दर उदाहरण रासके समय उन्होंने व्रज-गोपाङ्गनाओंको दिया है। उनके अन्तर्धान होनेपर व्रजवालाएँ कातर होकर उनको निष्ठुर-कपटी आदि सम्बोधन करके जब उनके ऊपर कुटिलताका दोषारोपण करती हैं, तब श्रीभगवान् उत्तरमें कहते हैं—"सखिवृन्द! मेरे जीवनका एक मात्र व्रत है अपने भक्तोंकी सुख-वृद्धि करना। अपने प्रति उनकी प्रीति बढ़ानेके लिए ही मैं उनकी उपेक्षा करता हूँ। विरहमें जैसे मिलन-सुखकी वृद्धि होती है, उसी प्रकार उपेक्षा और अनादरसे सच्चे प्रणयीके हृदयमें प्रेम-भक्तिकी प्रीति जड़ जमा लेती है।"

● बालिका विष्णुप्रियाकी विषादावस्था

सनातन मिश्र और उनकी गृहिणीको यहाँ ही छोड़कर कृपालु पाठक-पाठिकावृन्द एक बार बालिका विष्णुप्रियाके निकट चलें। विष्णुप्रिया अब नितान्त बालिका नहीं हैं। उनकी अवस्था ग्यारह वर्षकी है। उन्होंने सारी बातें सुनी हैं। नवद्वीपके निवासी मुकुन्द पण्डित-प्रणीत 'श्रीगौराङ्ग-उदय' नामक ग्रन्थमें लिखा है कि बाल्यावस्थामें विष्णुप्रियाने एक दिन गङ्गाके तट पर श्रीगौराङ्ग सुन्दरको देखा और श्रीगौराङ्गकी मूर्ति उनके हृदयमें प्रविष्ट हो गयी। यह बात स्वर्गीय प्रभुपाद श्रीनवद्वीप-चन्द्र गोस्वामीकी 'वैष्णवाचार' नामक पुस्तकमें भी लिखी है। इस दैवयोगसे विष्णुप्रियाके बालिका-

हृदयमें नव अनुरागका उदय हुआ। वह अब बालिका न थी। चारों ओर उनको गौरमय दिखलायी देने लगा। बालिका युवती-भावसे आक्रान्त होकर गौरगत-प्राणा बन गयी और उसने अपने हृदयमें वह सुवर्ण-वर्ण श्रीगौर-मूर्त्ति दृढ़रूपसे अङ्कित कर ली। उस सुरसरिके तटपर स्वप्नदृष्टवत् सर्वाङ्ग-सुन्दर युवकन विष्णुप्रियाके हृदयपर पूर्णतः अधिकार कर लिया। वे बालिकाके लिए इतने प्रिय हो गये कि उसके लिए माता-पिता, भाई-बहिन आदि कोई भी उतने प्रिय न रहे। विष्णुप्रिया स्वभावतः लज्जाशीला है; इस नव अनुरागके फल-स्वरूप उनकी लज्जा और भी बढ़ गयी है। लज्जासे अवनत मुखमण्डलपर नव अनुरागकी झलक दीख रही है। बालिकाको विशेष दुःख यह है कि इन सारी बातोंको खोलकर वह किसीके सामने कह भी नहीं पातीं। कहना तो दूर रहा, उनके इस गुप्त प्रेम और मनकी बातको दूसरा कोई सुन न ले, इस भयसे वह सदा सशङ्कित और त्रस्त रहतीं। साधारणतः बालिकाओंके मनमें इस प्रकारका नव अनुराग उत्पन्न होनेपर वे इस सम्बन्धमें किसीसे कुछ बोलती नहीं हैं, परन्तु अभीष्ट प्रियजनके संबंधमें जो चर्चा होती है उसे मनोयोगपूर्वक श्रवण करती हैं। बालिका विष्णुप्रिया भी यही किया करतीं। इसी कारण मैंने पहले लिखा है कि उन्होंने सारी बातें सुनी हैं। अपने हृदय-देवता श्रीश्रीगौर-सुन्दरके साथ अपने विवाहके प्रस्तावको सुन कर बालिका आनन्द-सिन्धुमें मग्न हो रही थीं। उनके अङ्ग-अङ्गसे उस आनन्दका आभास मिलता था। उसी समय उन्होंने यह दारुण संवाद सुना कि उनके प्राणवल्लभने उनकी उपेक्षा की है, उनकी इस विवाहमें सम्मति नहीं है। बालिकाकी लघु हृदय-नौका दुःख-तरङ्गसे एकवारगी भग्न हो गयी, उनका सारा आशा-भरोसा चला गया। परन्तु उन्होंने धैर्य न खोया, पाप-लज्जा न गयी। बालिकाने हृदयके तापको हृदयमें ही छिपाये रक्खा। मनमें बड़ा डर है कि गुप्त बात कोई जान न जाय। कवि वैष्णवदासने बालिका विष्णुप्रियाकी तात्कालिक मनकी अवस्थाका निम्नलिखित पदोंमें अति सुन्दरतापूर्वक वर्णन किया है—

हाय! हाय! विष्णुप्रिया कि यातना सहे रे।	हाय! हाय! विष्णुप्रिया कैसी
एकाकी एकाकी केन झूरे?	व्यथा सहन कर रही हैं। अकेली-अकेली
	क्यों रोती हैं?

एक दिके चेये थाके पलक ना फेलि रे।
कि जानि हृदये भावे कारे ?

एक ओर ताकती रहती हैं। पलक तक नहीं गिरते। न जाने हृदयमें किसका चिन्तन करती हैं ?

सुन्दर वदन-शोभा केमन हये छे रे।
क्षणे शुभ्र क्षणे रक्ताकार।

उनके मुखमण्डलकी सुन्दर शोभा कैसी हो गयी है ? क्षणमें शुभ्र और क्षणमें ही रक्तवर्णकी हो जाती हैं।

अवश अवश अङ्ग कखन नेहारि रे,
कभू वा चञ्चल आर बार।

कभी अवश हो होकर अपने अङ्गोंको निहारती हैं और कभी अस्थिर हो उठती हैं।

आपन अङ्गेर भार सहिते ना पारि रे,
शुये थाके बिछाना उपर।

अपने अङ्गके भारको सह नहीं पाती हैं, बिछौनेके ऊपर पड़ी रहती हैं।

क्षणेक बिछाना त्यजि उठिया से धाय रे,
आपन सङ्गिनी बराबर।

क्षणभरमें बिछौना छोड़कर अपनी सखीके पास दौड़ती हैं।

बालिकार दशा भावि श्रीवैष्णव दास रे,
बड़इ जातना पेल मने।

श्रीवैष्णवदास बालिकाकी दशा सोचकर मनमें बहुत व्यथित हुए।

एकटी कल्पना तार हृदये जागिछे रे,
शुन काने बलि सावधाने।

उसके हृदयमें एक कल्पना जागती है, उसे कानमें कहता हूँ सावधान होकर सुनो।

पीड़ार उछिला करि आपन शय्याय गो।
शुइया भावह निज जने।

पीड़ाके बहाने अपनी शय्या पर पड़े-पड़े अपने प्रिय जनका चिन्तन करो।

एरूप करिले तुमि काँदिते पारिबे गो,
पीड़ार जातना करि भाने॥

ऐसा करनेसे पीड़ाकी यातनाके भानमें तुम रो सकोगी।

सरला बालिका विष्णुप्रियाकी यह अवस्था है। अकेली निर्जनमें बैठकर मन ही मन रो रही है। ऐसा कोई नहीं है जिससे हृदयकी इस व्यथाको कह सकें। इस विषम व्याधिके चिकित्सक एक मात्र अभीष्ट प्रियजन हैं। यह व्याधि किसीसे कहनेकी नहीं हैं। बालिका विष्णुप्रियाकी विपद्की सीमा नहीं है।

तृतीय अध्याय--बालिका विष्णुप्रियाकी विषादावस्था

"अकथन व्याधि कहिते नारे। झूरिया झूरिया झूरिया मरे।।	यह अकथनीय व्याधि कह नहीं पाती है, मन ही मन रो रो कर मरती रहती है।

शयनगृहकी खिड़की पर बैठकर बालिका विष्णुप्रिया अकेली कुछ सोच-रही थीं, दोनों आँखोंसे दो एक जलकी बूँदें गिर रही थीं, ऐसे ही समय विष्णुप्रियाकी चाची विधुमुखी पास आकर बैठ गईं। बैठकर नाना प्रकारके प्रश्न पूछने लगीं--"बेटी विष्णुप्रिया! तुम अकेली चुपचाप क्यों बैठी हो? तुमको क्या हो गया है? किसने तुमको क्या कहा है? तुम्हारी आँखोंमें जल क्यों है?" बालिका इन सब प्रश्नोंका उत्तर क्या देतीं? अकेली थीं वही ठीक था। विधुमुखीके स्नेहपूर्ण सम्भाषणोंसे तथा प्रेमपूर्ण वचनोंसे बालिकाका दुःखसागर और उद्वेलित हो उठा। और वहाँ स्थिर न रह सकनेके कारण वह वहाँसे भाग खड़ी हुई। विधुमुखी विष्णुप्रियाको प्राणोंसे भी बढ़कर दुलार करतीं। बालिकाके मुखको उदास देखने पर उनको जगत् अन्धकारमय दीखता, आँखोंमें आँसू देखने पर उनका हृदय विदीर्ण हो जाता।

विधुमुखी सनातन मिश्रके छोटे भाई कालीदासकी विधवा पत्नी थीं। अवस्था अधिक नहीं थी। उनका एकलौता पुत्र माधव अवस्थामें विष्णुप्रियासे छोटा था। माधवकी अपेक्षा वह विष्णुप्रियाको अत्यधिक प्रेम और स्नेह करती थीं। विष्णुप्रियाकी हालत देखकर विधुमुखीके सरल हृदयमें बड़ी चोट लगी। वे विष्णुप्रियाके पास न जाकर, सीधी महामाया देवीके पास जाकर सब वृत्तान्त कहने लगीं। ज्योतिषीके मुखसे निमाई पण्डितकी विवाह-विषयमें असम्मतिकी बात सुनकर सारी मिश्रगोष्ठी दुःखित और मर्माहत हो रही थी। किसीके मनमें तनिक भी सुख नहीं था। विधु-मुखीके मुखसे सारा वृत्तान्त सुनकर महामाया देवीको समझनेमें अब कुछ बाकी न रहा। परन्तु खुलकर कुछ नहीं बोलीं। मनके दुःखको रोककर विधु-मुखीको सम्बोधन करके बोलीं—"मैंने आज प्रातः विष्णुप्रियाको डाँटा था, जान पड़ता है इसीसे वह रुष्ट हो रही है। तुम उसको यहाँ ले आओ।" सरला विधुमुखी सदासे सरल स्वभावा थीं, उन्होंने जो सुना उसीमें विश्वास कर लिया और फिर विष्णुप्रियाके पास आ उपस्थित हुईं। आकर देखा कि बालिका प्रकृतिस्थ हो गयी है। अब वह भाव नहीं है, आँखोंमें आँसू नहीं हैं,

मुख पर हँसी दिखलायी दे रही है। उसी समय मिश्रजीके घर यह समाचार पहुँचा था कि निमाई पण्डित इस शुभविवाहमें सहमत हैं, ज्योतिषीके साथ उन्होंने व्यंग किया था। बालिका विष्णुप्रियाके कानोंमें यह बात पहुँच चुकी थी। इसीसे उसके मुँह पर हँसी दिखलायी दी; परन्तु विधुमुखीको यह शुभ समाचार पहले नहीं मिला था। अतएव विष्णुप्रियाको पकड़ कर वे महामाया देवीके पास उसको खींच ले चलीं। विष्णुप्रिया लज्जासे अत्यन्त संकुचित हुई, किसी प्रकार जाना नहीं चाहती। विधुमुखी भी उसको किसी तरह छोड़ती नहीं थी, क्योंकि महामाया देवीका आदेश था कि विष्णु-प्रियाको ले आओ। दोनों जनी हाँफती-हाँफती महामाया देवीके पास पहुँचीं। बालिका विष्णुप्रिया लज्जासे आँख संकुचित किये सस्नेह माताके मुखकी ओर देखने लगीं। महामाया देवीने तत्काल कन्याको गोदमें उठाकर मुख चूम लिया और तब विधुमुखीसे सारी बातें खोलकर कह दीं। यह सुनकर उन्होंने आह्लादसे गद्‌गद होकर विष्णुप्रियाका मुख चूम लिया। मिश्रजीके घर पुनः आनन्दकी लहर उठी। बालिका विष्णुप्रियाके सब दुःख दूर हो गये।

● विषादका हर्षमें परिणत होना

भक्तका कातर क्रन्दन श्रीभगवान्‌के कानोंमें पहुँचा। क्या तब वे स्थिर रह सकते थे? श्रीनिमाई चाँदने ज्योतिषीसे हँसीमें कहा था कि वे इस विवाहके विषयमें कुछ नहीं जानते। वे जानते थे कि इस बातसे इतना काण्ड उपस्थित हो जायगा। जान-बूझकर ही उन्होंने हँसी की थी। अब भक्तके आकुल क्रन्दनसे वे व्याकुल हो उठे। निमाई पण्डितने एक प्रिय सखाके द्वारा श्रीपाद सनातन मिश्रको कहला भेजा था कि इस विवाहसे वे असम्मत नहीं हैं। उनकी माताने जो निश्चय किया है, वह अन्यथा नहीं हो सकता। श्रीचैतन्य मङ्गलमें लिखा है—

तबे त सकल कथा शुनि विश्वम्भर। केने हेन दिला दुःख भाविला अन्तर।।	तब यह सारी बातें सुनकर विश्वम्भरने हृदयमें सोचा कि मैंने क्यों यह दुःख दिया?
आमार भकत दोंहे दुःख पाय चित्ते। कौतुके कहिल कथा हासिते हासिते।।	मेरे दोनों भक्त चित्तमें दुःख पा रहे हैं। मैंने तो हँसते-हँसते कौतुकमें ही वह बात कही थी।

प्रिय एक जन छिल वयस्येर माझे। निभृते कहिल तारे जत मने आछे।।	साथियोंमें एक प्रियजन था, उससे अपने मनमे जो था चुपकेसे कहा।
कोन कथा छले जाह पण्डितेर घरे। आमि नाहि जानि हेन कहिओ उत्तरे।।	तुम किसी बातके बहाने सनातन पण्डितके घर जाओ और इस प्रकार उनसे बातें करना मानो मुझे कुछ ज्ञात नहीं और कहना कि—
कौतुक रभसे आमि गणकेरे बैल। ना बुझिया कार्य्य केने अवहेला कैल।।	मैंने तो ज्योतिषीसे हँसी मजाकमे कहा था। इस बातको न समझकर वे लोग कार्यमें ढिलाई क्यों कर रहे हैं?
कार्य्य अवहेला ताहे नाहिक अधिक। ता सभार चित्ते दुःख ए नहे उचित।।	अब कार्यमें अधिक उपेक्षा उचित नहीं। उन सब लोगोंके चित्तमें दुःख रहना उचित नहीं।
माये जे कहिल ताहे आछे कोन कथा। ताहार ऊपर केवा करये अन्यथा।।	माताजीने जो कुछ कहा उसमें क्या बात (सन्देह) है? उनसे ऊपर कौन है जो उनकी बात अन्यथा कर सके?
मिछा कार्य्य क्षति, मिछा दुःख पावो चिते। करह बिभार कार्य्य जे हय उचिते।।	व्यर्थ ही कार्यमें क्षति हो रही हैं आप लोग व्यर्थ ही चित्तमें दुःख मान रहे हैं। विवाहका कार्य जहाँ जो उचित हो करें।
एतेक शिखाये प्रभु ब्राह्मण पाठाइल।। सनातन पण्डितेरे सकल कहिल। --चै० मं०	इतना सिखलाकर प्रभुने ब्राह्मणको भेजा और उन्होंने सनातन पण्डितसे सारी बातें कहीं।

हे प्रभु! तुम इतनी प्रतारणा, इतनी चातुरी जानते हो। तुम्हारी परीक्षाकी सीमा नहीं है। विशेषरूपसे परीक्षा किये बिना किसीको तुम निज जन नहीं बनाते। तुम्हारी परीक्षामें उत्तीर्ण होना बड़ा दुष्कर है। हे प्रभु! तुम समय-समय पर बड़ी कठिन परीक्षा लेते हो। सांसारिक

जीवको विषम समस्यामें डालकर तमाशा देखते हो। यह तुम्हारा स्वभाव है। हम दुःख बिल्कुल ही नहीं चाहते। वह दुःख ही हमको देनेमें तुम व्यस्त रहते हो। दुःख हुए बिना सुख नहीं होता। दुःख होने पर ही सुख होता है। दुःख ही सुखमें माधुर्य प्रदान करता है—यह ध्रुव सत्य है। परन्तु हम अधम जीव इसको बिल्कुल ही नहीं समझते और समझनेकी चेष्टा भी नहीं करते। यह भ्रम तुमने ही जीवके हृदयमें प्रदान किया है। इसी-कारण वे इस दुःखके लिए तुमको ही दोष देते हैं। दुःखके नाशके लिए तुम्हारे ही सामने रोते हैं। दुःखका परिणाम सुख है और सुखका परिणाम है सच्चिदानन्दकी प्राप्ति। इससे समझना चाहिए कि दुःख जीवका बड़ा उपकारी है, अतएव श्रीभगवान्‌की प्राप्तिका प्रधान सहायक है। दुःख ही सुखका मूल कारण है। दुःख हुए बिना सुखका प्रकाश नहीं होता। सनातन मिश्रकी गोष्ठीके सब लोग दुःखके समुद्रमें डूब रहे थे। एक साधारण हँसीकी बातसे मिश्र परिवारके दुःखकी सीमा न थी। मानो उनके सुखके संसारमें एक विषादकी छाया पड़कर सबको म्लान कर रही थी। आनन्दपूर्ण संसारमें एक विषम दुःखके हाहाकारकी ध्वनि उठकर मानो सबको उत्क्षिप्त कर रही थी। उस दुःखका परिणाम क्या हुआ? सुख या आनन्द-प्राप्ति। यही श्रीभगवान्‌का चिरन्तन नियम है, यही उनकी लीला है। जिसने इस लीलाके मर्मको समझा है, जो दुःखके इस निगूढ़ रहस्यको हृदयङ्गम कर पाया है, उसको फिर दुःखजनित मनोव्यथाको प्राप्तकर और अशान्तिसे व्यग्र होकर हाय-हाय करते हुए भटकना नहीं पड़ता। उसके हृदयमें सदा ही शान्ति विराजती है। वह सदा आनन्दस्वरूप है। और जो दुःखका नाम सुनते ही चकित हो उठता है, दुःखमें पड़ने पर श्रीभगवान्‌का नाम भूल जाता है, विपद आने पर श्रीभगवान्‌के कार्य पर कटाक्ष करता है, उसका हृदय अशान्ति से पूर्ण हो जाता है, वह सदा आनन्दरहित रहता है, वह केवल हाय-हाय करके दिन व्यतीत करता है।

●

चतुर्थ अध्याय

शुभ विवाहका उद्योग और अधिवास

जय जय ध्वनि चौदिके शुनि, गौराङ्ग चाँदेर विवाह रे।	चारों ओर गौराङ्गचन्द्रके विवाहकी जय ध्वनि सुनाई पड़ रही है।
कुलबधू मेलि जय हुलाहुली, आनन्दे मङ्गल गाहि रे।। --श्रीचैतन्य मङ्गल	कुल बधुएँ मिलकर जय-जयकार और हुलु* ध्वनि कर रही हैं और आनन्दसे मङ्गलगीत गा रही हैं।

● आनन्दोत्सवकी तैयारियाँ

पुनः सनातन मिश्रके घर आनन्दका स्रोत बहने लगा और पुरवासी लोग शुभ विवाहोत्सवमें उन्मत्त हो उठे। सब लोगोंके मुखमण्डल पर हँसीकी रेखा दिखलायी दी। बड़े समारोहके साथ विष्णुप्रिया देवीके शुभ विवाहका आयोजन होने लगा। ज्योतिषीने आकर शुभ दिन और शुभ लग्न स्थिर किया।

तबेत पण्डित अति हरषित मने। आनन्दे करये शुभ दिन शुभक्षणे।। --चै० मं०	तब ज्योतिषी पण्डितने अत्यन्त हर्षित होकर शुभ दिन और शुभ घड़ी निश्चित की।

इधर निमाई पण्डितने अपने विवाहका दिन स्वयं ही निश्चय किया। माताके अनुरोधसे एक वार ज्योतिषीको बुलाकर शुभ दिन और शुभ लग्न स्थिर करवाया।

---

* बंगालमें आनन्द-मङ्गलके अवसर पर स्त्रियाँ गाल बजाकर मुँहसे एक प्रकारकी ध्वनि निकालती हैं जिसमें 'हुलु' की-सी ध्वनि आती है। वह बड़ी शुभ और प्रियकर मानी जाती है।

एथा प्रभु विश्वम्भर ऐछन जानिया।	यहाँ विश्वम्भर प्रभुने ऐसा जानकर
शुभ दिन करे घरे गणक आनिया॥	शुभ दिनको ज्योतिषी बुलाकर विचार
चर्च्चिया करिल दिन समय विचित्र।	विमर्ष करके एक विचित्र शुभकाल,
शुभकाल शुभलग्न तिथि सुनक्षत्र॥	शुभ लग्न, शुभ तिथि और शुभ नक्षत्रसे
—चै० मं०	युक्त दिन निश्चित किया।

सनातन मिश्रके घर विवाहकी धूमधाम पड़ गयी है। शची देवीके घरमें भी आनन्दोत्सव प्रारम्भ हो गया है। आज श्रीनिमाई चाँदका अधिवास है। शची देवीके मनमें आनन्द नहीं समा रहा है। बड़े चावसे बड़े प्रेमके साथ सोनेकी पुतली निमाई चाँदको सब मिलकर नानाप्रकारसे सजा रहे हैं; और नदियावासी लोग उस अपरूप रूपराशिको निर्निमेष नयनोंसे देखकर जीवनको सार्थक कर रहे हैं। उनका आज बड़ा सौभाग्य है। उनके भाग्यमें साक्षात् नर-नारायणका शुभ विवाह देखना बदा है।

ठाकुर श्रीवृन्दावन दास इसको इस प्रकार लिख गये हैं—

जाँहार श्रीमूर्त्तिमात्र देखिले नयने।	नयनोंसे जिनकी श्रीमूर्त्तिका दर्शन
सर्व्व पाप मुक्त, जाय वैकुण्ठ-भुवने॥	मात्र करनेसे सब पापोंसे मुक्त होकर
	वैकुण्ठ लोक जाया जाता है
से प्रभुर बिभा लोक देखये साक्षात्।	लोग उन प्रभुका साक्षात् विवाह
तेंह ताँर नाम दयामय दीननाथ॥	देख रहे हैं, इसीसे उनका नाम दयामय,
—चै० भा०	दीननाथ है।

नवद्वीप वासियोंके चरणोंमें कोटि-कोटि नमस्कार। उनके भाग्यमें श्रीश्रीगौराङ्ग सुन्दरका शुभ विवाह देखना बदा था। धन्य है उनकी सुकृति! धन्य है उनका नर-जन्म!

नवद्वीपवासीर चरणे नमस्कार।
ए सब आनन्द देखिबारे शक्ति जार॥
—चै० भा०

● बुद्धिमन्त खाँ और मुकुन्द सञ्जय द्वारा निमाई पण्डितके विवाहोत्सवका व्यय भार वहन

निमाई पण्डितके विवाहमें नवद्वीपके समस्त लोक उन्मत्त हो रहे थे। चारों ओर जय-जय ध्वनि उठ रही थी! आवाल-वृद्ध-वनिता आनन्दोत्सवमें

योगदान कर रहे थे। उन दिनों नवद्वीपमें एक महान बड़े आदमी, कायस्थ वास करते थे। उनका नाम था बुद्धिमन्त खाँ। 'बल्लाल चरित' नामक संस्कृत ग्रन्थके प्रणेता श्रीमत् आनन्दभट्ट इसी बुद्धिमन्त खाँके सभा-पण्डित थे। वे अपनी इस पुस्तकमें बुद्धिमन्त खाँको नदियाका राजा कहकर उल्लेख कर गये हैं। वे वास्तवमें एक बड़े जमीदार और धनी पुरुष थे। निमाई पण्डितके शुभ विवाहका भार ग्रहण करनेसे ही उनका परिचय मिला है। बुद्धिमन्त खाँ निमाई पण्डितके एक अनुरागी भक्त थे। श्रीनिमाई चाँदके शुभ विवाहकी बात सुनते ही उन्होंने कहा कि इस विवाहका सारा व्यय-भार वे स्वयं वहन करेंगे। यह सुनकर मुकुन्द सञ्जय नामक उनके एक धनी ब्राह्मण मित्र कह उठे कि वे भी इस शुभ कर्मके व्ययका कुछ भार वहन करेंगे। फलतः दोनोंने मिलकर परामर्श किया कि निमाई पण्डितका यह विवाह खूब धूम-धामसे होना चाहिए। ब्राह्मण-पण्डितोंके समान यह विवाह न होगा। राजकुमारके विवाहके समान खूब समारोहके साथ इसे सम्पन्न करना होगा।

प्रभुर विवाह शुनि सर्व्व शिष्यगण। सभेइ हइला अति परानन्द मन॥	प्रभुके विवाहकी बात सुनकर सभी शिष्यगण परम आनन्दित हुए।
प्रथमे बलिला बुद्धिमन्त महाशय। मोर भार ए विवाहे जत लागे व्यय॥	प्रथम महाशय बुद्धिमन्त बोले कि इस विवाहमें जितना व्यय हो उसका भार मेरे ऊपर।
मुकुन्द संजय बोले शुन सखा भाइ। तोमार सकल भार मोर किछु नाइ॥	मुकुन्द सञ्जय बोले—"हे सखा! सुनो, सभी भार तुम लोगे भाई? मेरे लिए कुछ नहीं?
बुद्धिमन्त खाँन बोले शुन सर्व्व भाइ। बामनिया मत किछु ए विवाहे नाइ॥	बुद्धिमन्त खाँ बोले—"सब भाई सुनो, यह विवाह ब्राह्मणों जैसा नहीं होगा।
ए विवाहे पण्डितेरे कराइब हेन। राजकुमारेर मत लोके देखे जेन॥ --चै० भा०	पण्डितका यह विवाह ऐसा कराऊँगा कि लोग देखेंगे मानो राजकुमारका विवाह है।

● निमाई चाँदका अधिवास

आज श्रीनिमाई चाँदका अधिवास (गंध-माल्यादि संस्कार) है। शची देवीके घरमें बहुत बड़ा जन-समागम हो रहा है। कुल-ललनाएँ वस्त्रालङ्कारसे सुशोभित होकर श्रीनिमाई चाँदका दर्शन करने आयी हैं, चारों ओर मानो आनन्दका स्रोत उमड़ रहा है। शची देवी मीठी-मीठी बातोंसे सबका आदर सत्कार कर रही हैं। ब्राह्मण पण्डितगण देव-पूजा और वेदमन्त्रका पाठ कर रहे हैं। तेल, हल्दी, सिन्दूर, धानका लावा, केला, पान और सन्देश लेकर आगत स्त्रियोंने श्रीनिमाइ चाँदका शुभ अधिवास कर्म सुसम्पन्न किया। प्रभुके अधिवासका सुन्दर चित्रण श्रीचैतन्य-मङ्गलमें इस प्रकार किया गया है——

अधिवास काले साधू ब्राह्मण सज्जन।
मिलिया करिल प्रभुर शुभ प्रयोजन।।

अधिवासके समय साधू, ब्राह्मण, सज्जन सब मिलकर प्रभुके लिये मङ्गल पाठ कर रहे हैं।

आनन्दिता शचीदेवी आइह-सुह लञा।
पुत्र महोत्सव करे नाना द्रव्य दिया।।

शची देवी आनन्दित हो सब महिलाओंके साथ नाना द्रव्यों द्वारा पुत्रका महोत्सव कर रही हैं।

तैल हरिद्रा आर ललाटे सिन्दूर।
खदि कदलक आर सन्देश ताम्बूल।।

(वदनमें)तेल, हरिद्रा और ललाटमें सिन्दूर लगाया और धानका लावा, केले, संदेश-मिठाई और ताम्बूल दिये।

आनन्दे मङ्गल गाय जत आइहगण।
प्रभु अधिवास करे यतेक ब्राह्मण।।

जितनी महिलागण हैं सब आनन्दसे मंगलगीत गा रही हैं। जितने ब्राह्मण हैं सब प्रभुका अधिवास कर रहे हैं।

धूप दीप पताका शोभित दिगन्तरे।
स्वस्ति वाचन पूर्व्व देव-पूजा करे।।

धूप, दीप और पताकाओंसे सब दिशाएँ सुशोभित हैं। आरम्भमें स्वस्ति वाचन करके देव पूजा हो रही है।

ब्राह्मणेते वेद पड़े बाजे शुभ शङ्ख। नाना विध वाद्य बाजे पटहि मृदङ्ग।।	ब्राह्मण वेद पाठ कर रहे हैं, शुभ शंख बज रहा है। नाना प्रकारके बाजे, मृदङ्गादि बज रहे हैं।
चौदिके कुलबधू देय जय जय। प्रभु अधिवास हैल उत्तम समय।।	चारों ओर कुलबधुएँ जय-जयकार कर रही हैं। प्रभुका अधिवासकार्य शुभकालमें हुआ।
गन्ध चन्दन माल्ये पूजिल ब्राह्मण।। कर्पूर ताम्बूल आर भूरि विभूषण।। **--चै० मं०**	गन्ध, चन्दन, पुष्पमाला, कर्पूर, ताम्बूल और अनेक भूषणों द्वारा ब्राह्मणोंकी पूजा की।

प्रभुके शुभ विवाहके अधिवासके आयोजनमें नवद्वीपके समस्त लोग व्यस्त हैं। बड़े-बड़े चँदोवे मँगाकर शची देवीके आङ्गनमें तथा बहिर्द्वार पर टाँगे गये। केलेके वृक्ष घरके सामने पंक्ति में रोपे गये। गृहके चारों ओर आलेपन सुशोभित हो रहे हैं। गङ्गाजलसे पूर्ण घटमें आम्र-पल्लव और धूप, दीप, धान्यादि जितने मङ्गल द्रव्य हैं सबसे गृह-प्राङ्गण सुशोभित हो रहा है। मृदङ्ग, शहनाई, जयढाक, करताल आदि नाना प्रकारके वाद्योंकी ध्वनिसे शची देवीका गृह पूर्ण है। ब्राह्मण वैष्णव तथा दूसरे सब लोग इस शुभ कार्यमें निमन्त्रित हुए हैं। सबको विशेषरूपसे कह दिया गया है--

अधिवासे गुया आसि खाइबा विकाले।	अधिवासके उपलक्ष्यमें अपराह्नमें भोजन करनेके लिए निमन्त्रण रूपमें सुपारी दी गई।

अपराह्न काल आया। दलके दल लोग आकर शची देवीके घरके प्राङ्गणमें भर गये। प्रभुका अधिवास देखनेके लिए समस्त नवद्वीपके लोग आकर उपस्थित हो गये। मङ्गल वाद्य बज उठा। भाटगण सुललित कण्ठसे स्तुति-मङ्गल पाठ करने लगे। सब पतिव्रता स्त्रियाँ मङ्गलसूचक हुलु ध्वनि करने लगीं। ब्राह्मण लोग वेदपाठ करने लगे। उसी समय उनके बीच द्विजेन्द्र-कुलमणि श्रीश्रीगौरचन्द्र आकर आसनके ऊपर विराजे। चारों ओर ब्राह्मणगण मण्डलाकार हो बैठ गये। सबके मनमें आज अपार आनन्द है। माल्य, चन्दन, ताम्बूल वितरण होने लगे। सबके गलेमें माला पहना

कर सारे अङ्ग चन्दनसे विभूषित किये गये। प्रत्येक व्यक्तिको एक-एक बट्टा भरकर पान दिया गया। कितने ब्राह्मण आते हैं और माल्य, चन्दन, ताम्बूल लेकर जाते हैं, इसकी गणना नहीं की जा सकती; क्योंकि नवद्वीपमें ब्राह्मणोंकी संख्या अत्यधिक थी। उनमें बहुतसे लोभी ब्राह्मण एक बारके माल्य, चन्दन और पानसे सन्तुष्ट न होकर फिर आकर लेते हैं और बार-बार ऐसा करते हैं।

तथि मध्ये लोभिष्ट अनेक जन आछे।	उनमें बहुतसे लोभी लोग हैं।
एकवार लैया पुन आर काच काचे।।	एक बार लेकर पुनः छल करते हैं।
आर बार आसि महा-लोकेर गहले।	बड़े जन-समारोहमें बार-बार आकर
चन्दन गुवाक माला निञा निञा चले।।	चन्दन, सुपारी और माला ले-लेकर
—चै० भा०	चल जाते हैं।

ब्राह्मण-मण्डलीमें बैठकर प्रभु सब कुछ देख रह थे। लोभी ब्राह्मणोंके कार्य देखकर हँसते-हँसते बोले—"सबको तीन-तीन बार माला और पान दिया जाय। किसी प्रकारकी चिन्ताकी बात नहीं है, जिसकी जो इच्छा हो, दिया जाय।" प्रभुके इस आदेश देनेका उद्देश्य यह था कि लोभी ब्राह्मणोंको यदि कोई कुछ बोलनेवाला हो तो न बोले। प्रभु विप्रप्रिय हैं। ब्राह्मण वैष्णवोंको उनके सामने कोई कुछ कहे, इसे वे सहन नहीं कर सकते। दयामय प्रभुकी ऐसी ही दया है, लोभी और पापीके प्रति भी प्रभुकी दयाका अभाव नहीं है।

सभाइ आनन्दे मत्त के काहारे चिने।
प्रभुओ हासिया आज्ञा करिला आपने।।

सभारे ताम्बूल माला देह तीन बार।
चिन्ता नाइ व्यय कर जे इच्छा जाहार।।

एक बार निञा जे जे लेइ आर बार।
ए आज्ञाय ताहर कैलेन प्रतिकार।।

पाछे केह चिनिया विप्रेरे मन्द बले।
परमार्थे दोष हय शाठ्य करि निले।।

विप्रप्रिय प्रभुर चित्तेर एइ कथा।
तीन बार दैवे पूर्ण हइब सर्व्वथा।।

--चै० भा०

सब लोग तीन-तीन बार माला, चन्दन और सुपारी पाकर अत्यन्त आनन्दित हुए, फिर किसीने शठता नहीं की। इस प्रकार माल्य, चन्दन और ताम्बूलकी लूट हुई। मनुष्योंको तो मिला ही, पृथ्वी पर कितनी मालाएँ, कितना चन्दन और कितनी सुपारी गिर गयी, उसका कोई हिसाब नहीं। पृथ्वी पर जो गिर गया, उसीसे साधारण लोगोंमें पाँच-सातके विवाह संस्कारका अधिवास सुसम्पन्न हो सकता था। सभी कहने लगे--"इस नवद्वीपके कितने ही धनी लोगोंके पुत्र और कन्याओंका विवाह हो चुका है, पर ऐसा खुले हाथ माला, चन्दन और सुपारीका दान कहीं देखनेमें नहीं आया।"

मनुष्य पाइल जत से थाकूक दूरे।
पृथ्वीते पड़िल जत दिते मनुष्येरे।।

सेह यदि प्राकृत लोकेर घरे हये।
ताहातेइ तार पाँच बिभा निर्बाहये।।

सकल लोकेर चित्ते हइल उल्लास।
सभे बोले धन्य धन्य धन्य अधिवास।।

लक्षेश्वरो देखियाछि एइ नवद्वीपे।
हेन अधिवास नाहि करे कारो बापे।।

--चै० भा०

इस प्रकार बड़े समारोहके साथ प्रभुका शुभ अधिवास कृत्य सुसम्पन्न हुआ। तब सनातन पण्डितने आत्मीय जनोंके साथ ब्राह्मण-मण्डलीसे परि-वेष्टित होकर बाजे-गाजेके साथ शुभ अधिवासकी सामग्री लेकर शची देवीके

गृह शुभागमन किया, तथा भावी जामाताके शुभ अधिवास कृत्यको सम्पन्न करके अपने घर जाकर कन्याके शुभ अधिवास कृत्यके आयोजनमें लग गये।

तबे राजपण्डित आनन्द चित्त हैया।
आइलेन अधिवास सामग्री लइया।।
विप्रवर्ग आप्तवर्ग करि निज सङ्गे।
बहु विध वाद्य गीत नृत्य महारङ्गे।।
वेदविधि पूर्व्वके परम हर्ष मने।
ईश्वरेर गन्धस्पर्श कैला शुभ क्षणे।।
—चै० भा०

● विष्णुप्रियाका अधिवास

सनातन मिश्रने अपने घरमें लौटकर श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके शुभ अधिवास कर्मको विधिपूर्वक सुसम्पन्न किया। मिश्रजीके घर भी आज महा आनन्दोत्सव हो रहा है। समस्त अड़ोस-पड़ोसकी कुलवधुएँ एकत्रित हुई हैं। घर वाद्यध्वनिसे भर गया है। सभी मङ्गलगीतके द्वारा विष्णुप्रियाको शुभाशीर्वाद दे रही हैं। नाना प्रकारके रत्नालङ्कारोंसे विभूषित होकर स्वर्ण-प्रतिमा विष्णुप्रिया कुल-ललनाओंकी मण्डलीमें नतमुख होकर बैठी हैं। घरका आङ्गन मानो श्रीश्रीलक्ष्मीस्वरूपा बालिकाके अपरूप रूप-राशिके सौन्दर्यसे मुखरित हो उठा है। यहाँ भी ब्राह्मणगण वेद पाठ कर रहे हैं। शङ्ख, घण्टा, मृदङ्ग, करताल आदिकी वाद्यध्वनिसे मिश्रजीका घर भर गया है। कुल-ललनाओंकी मङ्गलसूचक हुलु ध्वनिसे कर्णकुहर पवित्र हो रहे हैं। धान्य-दूर्वाके द्वारा विधिपूर्वक सभी बालिका विष्णुप्रियाको शुभाशीर्वाद दे रही हैं। महामाया देवी सबको आदर-सत्कार प्रदान कर सन्तुष्ट कर रही हैं। देव-पूजा और पितृ-पूजा करके सनातन मिश्रने विधिपूर्वक कन्याके शुभ अधिवास कृत्यको सुसम्पन्न किया।

आपने आपने कन्या अधिवास करे।
झलमल करे अङ्ग रत्न अलङ्कारे।।

सब लोग कन्याका अधिवास करने लगे। रत्नालङ्कारोंसे अङ्ग झलमल कर रहा था।

देव-पूजा पितृ-पूजा करे यथाविधि।
अधिवास काले जय जय निरवधि।।

देव-पूजा और पितृ-पूजा यथा विधि होने लगी। अधिवासके समय निरन्तर जय ध्वनि होने लगी।

ब्राह्मणेते वेद पड़े बाजे शुभ शङ्ख।
आनन्दे दुन्दुभि बाजे बाजये मृदङ्ग।।
--चै० मं०

ब्राह्मण वेद पढ़ रहे थे। शुभ शंख, दुन्दुभी और मृदङ्ग आनन्दसे बजने लगे।

इस प्रकार महासमारोहके साथ वर-कन्या दोनोंका शुभ अधिवास कृत्य सुसम्पन्न हो गया। श्रीनिमाई चाँदके शुभ विवाहके उत्सवमें नदियावासी नर-नारी, बालक-बालिका, सभी दिन-रात आनन्दोन्मत्त रहते। नवद्वीपके आबाल-वृद्ध-वनिता सभी इस शुभ विवाहोत्सवमें बड़े आनन्दसे योगदान करके अपने जीवनको सार्थक कर रहे थे। शची देवीके प्राणोंसे आनन्दका स्रोत उमड़ रहा था। वे सारा दुःख, सारा ताप भूलकर आज पुत्रके विवाहके आनन्दोत्सवमें मतवाली हो रही हैं। उनकी बहुत दिनोंकी परिपोषित हृदयकी आश आज पूर्ण हो गयी। श्रीश्रीमहालक्ष्मीरूपा बालिका विष्णुप्रियाको पुत्रवधूके रूपमें पानेकी आशासे शची देवीका हृदय आनन्दसे नाच रहा था। आनन्द कोलाहलमें तथा शुभ विवाहके उत्सवमें किस प्रकारसे अधिवासकी रात बीत गयी, इसको कोई न जान सका।

●

पञ्चम अध्याय

शुभ गात्र-हरिद्रा और वरकी सजावट

गन्ध चन्दन माल्ये कराइल वेश।
विनिवेशे अङ्गछटा आलो करे देश।।
—श्रीचैतन्य मङ्गल

गन्ध, चन्दन और पुष्पमालाओंसे वेश सुसज्जित किया गया जिससे अङ्गकी छटासे सब दिशाएँ प्रकाशमान दीखने लगीं।

● निमाई पण्डितका शुभ गात्र-हरिद्रा

प्रातःकाल श्रीनिमाई चाँदने शय्यासे उठकर जी भरकर गङ्गा-स्नान किया। गङ्गातीर पर बैठ कर मनस्तुष्टि पूर्वक विष्णुपूजा की। घर पर आकर विधिपूर्वक नान्दीमुख श्राद्धकर्मादि करने बैठे।

तबे सुप्रभाते प्रभु करि गङ्गास्नान।
आगे विष्णुपूजि गौरचन्द्र भगवान्।।
तबे शेषे सर्व्व आप्तगणेर सहिते।
बसिलेन नान्दी मुख कर्म्मादि करिते।।
—चै० भा०

यथा समय नान्दीमुख कार्य समाप्त होने पर प्रभुके शुभ गात्र-हरिद्राका उद्योग होने लगा। शची देवी पड़ोसिनोंको साथ लेकर जल-सओया लोकाचार करनेके लिए वाहर आयीं। उनके साथ वाजा वज रहा था। वस्त्रालङ्कारसे भूषित होकर कुल ललनाएँ हुलु ध्वनि देती चलीं। सबसे पहले शची देवी गंगाजीकी पूजा करने चलीं। उसके वाद उन्होंने षष्ठी पूजा की। पश्चात् एक-एक आत्मीय स्वजनके घर जाकर शुभ विवाहका जल-सओया कार्य सुसम्पन्न करके अपने घर लौट आयीं। उसके वाद पड़ोसिनी कुल-ललनाओंको तेल, हल्दी, खील, केला, पान, सिन्दूर आदि देकर वरण किया। इतना तेल दान किया कि उससे प्रत्येक स्नान कर सकती थीं।

तबे आइ पतिव्रतागण लइ सङ्गे।
लोकाचार करिते लागिल महारङ्गे।।
आगे गंगा पूजिया परम हर्ष मने।
तबे वाद्य बाजने गेलेन षष्ठी स्थाने।।
षष्ठौ पूजि तबे बन्धुमन्दिरे मन्दिरे।
लोकाचार करिया आइल निज घरे।।
तबे खइ, कला, तैल, ताम्बूल सिन्दूरे।
दिया दिया पूर्ण करिलेन स्त्रीगणेरे।।
ईश्वर प्रभावे द्रव्य हैल असंख्यात।
शची ओ सभारे देन बार पाँच सात।।
तैले स्नान करिलेन सर्व नारीगणे।
हेन नाहि परिपूर्ण नहिल जे मने।।
--चै० भा०

प्रभुके शुभ विवाहके जल-सम्रोयाका* वर्णन ठाकुर लोचनदासने बड़ी ही सुन्दर और मधुर भाषामें किया है। पाठक-पाठिकाओंके रसास्वादनके लिए उसे यहाँ उद्धृत किया जाता है। नदिया-नागरीगणकी आनन्दकी आज सीमा नहीं रही। वे अपने मनकी इच्छा अनुसार सजी हैं। सज-सज कर सारे नदियाके मार्गोंमें निकल पड़ी हैं। साथमें बाजा बजानेवाले मधुर वाद्यसे सब लोगोंका मन हर लेते हैं। नदियावासियोंके सौभाग्यकी सीमा नहीं है। आँखें भरकर, इस मधुर दृश्यको देखकर जीवन सार्थक कर रहे हैं। सभी मानो सुखके समुद्रमें डूब रहे हैं।

(नदिया-नागरीकी उक्ति)

पाट साड़ी पर नेतेर काँचुली — पाट की साड़ी और रेशमी चोली
कानड़ छान्दे बाँध खींपा। — पहने और कानके ऊपर कबरी बांधे,

---

* बंगालमें विवाहके मांगलिक अवसर पर परिवारकी तथा पड़ोसिन सम वयस्का पूजा सोहागिन स्त्रियाँ मिलकर जलाशयसे कलशमें जल संग्रह कर-कर लाकर विवाहित होने वाले व्यक्तिको स्नान करवाती हैं। उस मंगलकार्यको जल-सम्रोया कहते हैं।

मुकुता गाँथिया सोनाये बाँधिया पिठे फेल राङ्गा थोपा ।।	मोती गूंथकर, सोनेमें बांधकर लाल रंगका गुच्छ पीठ पर रक्खे,
धनि धनि धनि नदिया नागरी आनन्द सागर निति ।	नदिया नागरी नित्य आनन्द-सागर में डूब कर धन्य-धन्य हो रही हैं ।
गौराङ्गचाँदेर बिभा देखि गिया गाव सुमङ्गल गीति ।।	हमलोग यों जाकर गौराङ्गचाँदका विवाह देखेंगी और सुन्दर मङ्गल गीत गायेंगी ।
केह त कापड़ पाट साड़ी परे काने गन्धराज चाँपा ।	कोई पाटकी साड़ी और वस्त्र पहने हैं और कान पर गन्धराज चम्पाका फूल लगाये हैं ।
गजेन्द्र गमने चलिते ना जाने मृगी दिठे चाहे बाँका ।।	गजेन्द्रकी-सी चालसे चलती हुई किसीकी परवाह किये बिना मृगीके समान तिरछी आँखोंसे देखती हैं ।
अञ्जने रञ्जित खञ्जन नयान चञ्चल तारक जोर ।	उनके खञ्जनके-से नयन अञ्जनसे रंगे हैं, आँखोंके तारे बड़े चञ्चल हो रहे हैं ।
गोरारूप - पङ्के पङ्किल आलसे अबला चलिल भोर ।।	गौररूप-पङ्कमें फँसकर विभोर होकर अबलाएँ अलस गतिसे चल रही हैं ।
नगरे नगरे जतेक नागरी धाओल ध्वनि सुनिया ।	प्रत्येक नगर (मोहल्ले) की जितनी नागरी हैं सब ध्वनि सुनकर दौड़ चलीं ।
चिकुरे चिरुनि चलिला तरुणी चीर ना सम्वरे तुलिया ।।	बालोंमें कंघी देकर तरुणीगण चली जा रही हैं । वस्त्र सम्हाले नहीं सम्हल रहा है ।
नारी पुरुष धाय एक मुख केह काहो नाही माने ।	स्त्री और पुरुष एक ही ओर दौड़े जा रहे हैं । किसी को किसीका ख्याल नहीं है ।

ठेला ठेलि पथे धाय उन्मते देखिते गौर वयाने ।।	रास्तेमें ठेला-ठेली करते हुए उन्मत्त होकर गौरचन्द्रका मुख देखते भागे जा रहे हैं।
नवीन युवती छाड़ि सती मति पति-कुल बन्धु-जन।	नवयुवतियाँ अपने सतित्वके विचार को छोड़कर पतिके कुल तथा बन्धु-जनकी परवाह न करके चल पड़ी हैं।
वसन भूषन ना सम्बरे मेन सतत उन्मत्त हेन ।।	वस्त्र और आभूषण सम्हालमें नहीं आ रहे हैं, सतत उन्मत्त-सी हो रही हैं।
थीर बिजुरी जेमन एमन गमन मराल बधू।	वधूएँ इस प्रकार मरालगतिसे चल रही हैं मानो स्थिर विद्युत दीप्त हो रही हो।
केह सारि सारि करे कर धरि जेमन शारद बिधु ।। —चै० मं०	शरदचन्द्रके समान सुन्दर मुख-वाली सुन्दरियाँ हाथमें हाथ मिलाकर पंक्ति बांध कर जा रही हैं।

भगवान् श्रीगौरीशङ्करकी कृपासे शची देवीके गृहमें किसी वस्तुकी कमी नहीं है। कहाँसे इतनी वस्तुएँ आकर उनके भण्डारमें भर गयीं, और कौन इनको एकत्र कर रहा है, इसकी खबर निमाई पण्डित नहीं रखते, शची देवी तक नहीं जानतीं। 'दीयतां भोज्यतां' अनवरत चल रहा है, तब भी द्रव्यादिका अभाव नहीं है। सनातन मिश्रके घरमें भी किसी वस्तुकी कमी नहीं है।

श्रीराज पण्डित अति चित्तेर उल्लासे।
सर्व्वस्व निक्षेप करि महानन्दे भासे ।।
—चैं० भा०

मानो लक्ष्मीका अक्षय भण्डार हो। यह लक्ष्मी-नारायणका शुभ विवाह जो है। साधारण आदमीके घर ऐसा संभव नहीं है।

सेइ यदि प्राकृत लोकेर घरे हये।
ताहातेइ तार पाँच बिभा निर्व्वाचये ।।
—चैं० भा०

सनातन मिश्र और शची देवीके घर लक्ष्मी-नारायणका आविर्भाव हुआ है। वहाँ क्या कोई अभाव हो सकता है?

शचीदेवी निमाई चाँदके गात्रमें शुभ हरिद्रा लगानेके आयोजनमें व्यस्त हैं। वस्त्रालङ्कारसे आवृत आगत स्त्रियाँ निमाई चाँदको घेरे हुए हैं। मानो चाँदकी हाट लगी है। उस चाँदकी हाटमें श्रीश्रीगौरचन्द्रके अनावृत श्रीअङ्गकी छटासे शची देवीके आङ्गनकी आज अपूर्व ही शोभा हो रही है। निमाई चाँद पीढ़ेके ऊपर बैठे हैं। पीढ़ा अपूर्व रङ्गसे रञ्जित है। सामने तेल-हल्दीका पात्र है। परम सौभाग्यवती नवागत स्त्रियाँ निमाई चाँदके श्रीअङ्गकी मार्जना कर रही हैं। नारायणका अङ्गराग हो रहा है। प्रभुका मस्तक अवनत है। मनमें लज्जाका उद्रेक हो रहा है। श्रीमुखका भाव अति मधुर है। जो देखता है वही मग्न हो जाता है। उस सुन्दर सलज्ज मुखचन्द्रसे आँखें नहीं हटा पाता है। कोई विशेष भाग्यवती स्त्री दोनों श्रीपदोंको धोकर उनमें तेल-हल्दी लेप रही है। उनका भाग्य सुप्रसन्न है। इससे बहुतोंके मनमें ईर्ष्या हो रही है। कोई इर्ष्यासे रुष्ट होकर श्रीपद-सेवामें रत रमणीको हटा कर श्रीप्रभुके चरणयुगलको धारण करके तेल-हल्दी लेपन करने बैठी। जो इस महान कार्यमें रत थी, वह क्षुब्ध होकर पीछे हट गयी। मन ही मन उस ढीठ स्त्रीको सैकड़ों गालियाँ देने लगी। मुखसे भी कहनेमें न चूकी। उत्तम उत्तर भी उसे मिला। वह स्त्री बोली—"क्योंजी! तुम्हारी आकांक्षा तो कुछ कम नहीं है? केवल तुम अकेलीही इन शिव-विरञ्चि-वन्दित चरणोंकी सेवा करोगी? तुम्हारा इतना बड़ा भाग्य कहाँसे आया?" कोई निमाई चाँदका केश-विन्यास कर रही है। सुन्दर भ्रमर-कृष्ण और कुञ्चित केशपाशमें हाथ लगा कर अपने केशपाशकी अल्पता और विश्रृंखलताका विचार कर लज्जित हो रही है। कुछ रमणियाँ इकट्ठी होकर तेल, आँवला और हल्दी निमाई चाँदके सर्वाङ्गमें लेपन कर रही हैं। जो परम सौभाग्यवती स्त्रियाँ निमाई चाँदके श्रीअङ्गके स्पर्श सुखका अनुभव कर रही हैं, उनके अङ्ग-अङ्ग आनन्दसे पुलकित होकर नृत्य कर रहे हैं। उस आनन्दमें कामकी गन्धमात्र भी नहीं है। वह सुख काम-गन्धसे शून्य है। निमाई चाँदके समान अपूर्व सर्वाङ्ग सुन्दर युवककी इस प्रकार अङ्गसेवा करने पर साधारण युवतियोंका मन विचलित हो सकता है। परन्तु श्रीभगवान् नरदेह धारण करने पर

भी मायिक रूपधारी सामान्य पुरुष नहीं हैं। उनके अङ्गस्पर्श करने से जो-जो परम सौभाग्यवती कुल-ललनाएँ विमल सुख अनुभव कर रही हैं, उनका मन निर्मल हो गया है, तथा चित्तकी मलिनता दूर हो गयी है। निमाई चाँदका दर्शन करके जो उनकी अपरूप रूपराशिसे मुग्ध हो रही हैं, उनके मनकी मलिनता भी साथ ही साथ दूर हो गई है। यह श्रीभगवान्‌की महान् शक्तिका कार्य है। यह शक्ति साधारण मनुष्यमें नहीं होती इसलिये रमणियोंके लिए पुरुषसङ्ग निषिद्ध है।

नदिया-नागरीके इस आनन्दोत्सवका वर्णन श्रीचैतन्य मङ्गलमें अति-सुन्दररूपसे वर्णित है--

नापिते नापित-क्रिया करिल तखन।
अङ्ग उद्वर्त्तन करे कुलबधूगण॥

तब नाईने हजामत बनाई। कुलवधुएँ उनके श्रीअङ्गमें उबटन लगाने लगीं।

गन्ध आमलकी देइ तैल हरिद्रा।
श्रीअङ्ग परशे केह सुखे गेल निद्रा॥

कोई गन्ध, आँवला, तेल और हल्दीसे श्रीअङ्गका स्पर्श करते-करते सुखपूर्वक तन्द्रा-सी ले रही है।

केह पाद सम्मार्जना करे हरषिता।
बेकत वदने कारो लज्जा रहे कोथा॥

कोई हर्षित होकर उनके पैरोंका प्रक्षालन कर रही है। किसीके वदन खुले पड़े हैं, लज्जा नहीं आ रही है।

नयने झरये पुनः हरिषेर नीर।
अङ्गेर बातासे कार काँपये शरीर॥

आँखोंसे हर्षके आँसू बह रहे हैं, किसीका शरीर उनके अङ्गका वायु लगनेसे काँप रहा है।

उन्मत्त नारीगण करे अभिषेक।
पुरुवेर मनः कथा करे परतेख॥

स्त्रियाँ उन्मत्त होकर अभिषेक कर रही हैं, उनको सन्तोष हो रहा है कि उनकी मनोकामनाएँ पूरी होंगी।

अङ्ग ठेलि पड़े केहो गंगाजल ढाले।
जय जय हुलाहुली सुमङ्गल रोले॥
--चै० मं०

कोई अङ्गसे ठेलकर गिर पड़ती है, कोई वदन पर गङ्गाजल डालती है और जय-जयकार करती हुई मङ्गलात्मक हुलु ध्वनि करती है।

कुल-ललनाएँ ठेलाठेली करती हुई प्रभुके श्रीअङ्ग पर गङ्गाजल ढाल देती हैं। उनको वृन्दावनमें व्रजाङ्गनाओंके साथ श्रीश्रीश्यामसुन्दरकी जल-केलिकी कथा याद आती है। निमाई चाँद लजीली आँखोंसे बीच-बीचमें एक-एक बार नदिया-नागरीगणके प्रति प्रेमपूर्ण चपल दृष्टिसे देख लेते हैं। वह चपल दृष्टि जिसकी आँखोंमें पड़ती है, वह फिर उसे भूल नहीं सकती। उनके मर्म-मर्मको मानो वह सलज्ज चपल दृष्टि बींध जाती है। परन्तु यह सौभाग्य सबको नहीं प्राप्त हुआ क्योंकि निमाई चाँद बड़े लजीले हैं, मुँह नीचा करके बैठे हैं। कदाचित् ही कभी एक बार उनकी शुभ दृष्टि किसी-किसी सौभाग्यवतीके ऊपर पड़ती है।

● विष्णुप्रियाका शुभ गात्र-हरिद्रा

इस प्रकार निमाई चाँदकी शुभ गात्र-हरिद्रा बड़े आनन्दसे सुसम्पन्न हो गयी। शची देवीने शुभ तैल-हरिद्रा ब्राह्मण-द्वारा सनातन मिश्रके गृह तुरन्त भिजवायी। वहाँ भी बड़े समारोहके साथ विष्णुप्रिया देवीकी शुभ गात्र-हरिद्रा शुभ लग्नमें सुसम्पन्न हुई। वहाँ भी आगत स्त्रियोंने महालक्ष्मी-स्वरूपिणी विष्णुप्रिया देवीकी अङ्गमार्जना करके तैल-हरिद्रा लेपन किया। श्रीगौराङ्गकी प्रसादी तैल-हरिद्रा लेपनसे विष्णुप्रिया देवीकी रूपराशि मानो उमड़ पड़ी, कच्चे सोनेके समान वर्ण मानो और भी खिल उठा।

गन्ध चन्दन माल्ये कराइल वेश। विनिवेशे अङ्ग छटाय आलो करे देश।।	गन्ध-चन्दन और मालासे सजाये जाने पर अङ्ग-अङ्गकी छटासे वह स्थान आलोकित हो उठा।
विष्णुप्रियार अङ्ग जिनि लाख बान सोना। झलमल करे जेन तड़ित प्रतिमा।। —चै० मं०	विष्णुप्रियाजीके अङ्ग सोनेकी दीप्तिको भी फीका कर रहे हैं। वह तड़ितकी प्रतिमाके समान देदीप्यमान हो रही हैं।

● शुभ गात्र-हरिद्राका भोज

शची देवीके घर और सनातन मिश्रके घर नवद्वीपके समस्त लोगोंने शुभ गात्र-हरिद्राके दिन बड़े समारोहके साथ भोजन किया। ऐसा महा

भोज कभी किसीने नहीं देखा। कहाँसे इतनी सामग्री आ गयी, किसने इनको संग्रह किया, किसने इतनी भोजनकी सामग्री तैयार की, इतने परोसनेवाले कहाँसे आये, इसका निमाई पण्डित या उनकी माताको कुछ भी पता नहीं। तथापि सब काम अत्यन्त सुचारु रूपसे हो गया। श्रीभगवान्की अलौकिक शक्तिके प्रभावसे किसी वस्तुकी कमी न हुई। इसके बाद भोज्य और वस्त्र नवद्वीपके ब्राह्मण वैष्णवोंमें वितरित किया गया। यह शुभ दान-कर्म निमाई पण्डितकी रायसे उनके सामने ही सम्पन्न हुआ।

सर्व्वविधि कर्म्म करि श्रीगौर सुन्दर।
बसिलेन खानिक हइया अवसर।।

श्रीगौरसुन्दर सब कार्य विधि-पूर्वक करके अवसर पाकर थोड़ी देरके लिए बैठे।

तबे सब ब्राह्मणेरे भोज्य वस्त्र दिया।
करिलेन सन्तोष परम नम्र हइया।।

तब सब ब्राह्मणोंको परम नम्रता-पूर्वक भोज्य और वस्त्र देकर सन्तुष्ट किया।

जे जेमन पात्र जार योग्य जेन दान।
सेइ मते करिलेन सभार सम्मान।।
--चै० भा०

जो जैसा पात्र था, जिसके योग्य जो दान था उसी रीतिसे सबका सम्मान किया।

● वर शृङ्गार

उसी दिन अपराह्नमें निमाई पण्डितको सब मिलकर वरके रूपमें सजाने लगे। वरके सजानेमें कोई त्रुटि न हो, इसी पर सबका ध्यान था। नाईने आकर क्षौरकार्य कर दिया। निमाई पण्डितने फिर स्नान किया।

विवाह उचित प्रभु करे पुनः स्नान।
नापिते नापित क्रिया करिल तखन।।
--चै० भा०

निमाई पण्डितको उनके साथियोंने किस प्रकार सजाया, इसे सुनिये--

चन्दने लेपित करि सकल श्रीअङ्ग।
मध्ये मध्ये सर्वत्र दिलेन तथि गन्ध।।

अर्द्ध चन्द्राकृति करि ललाटे चन्दन।
तथि मध्ये गन्धेर तिलक सुशोभन।।
अद्भुत मुकुट शोभे श्रीशिर-उपर।
सुगन्धि मालाय पूर्ण हैल कलेवर।।
दिव्य सूक्ष्म पीतवस्त्र त्रिकच्छ विधाने।
पराइया कज्जल दिलेन श्रीनयने।।
धान दूर्व्वा सूत्र करे करिया बन्धन।
धरिते दिलेन रम्भा-मञ्जरी दर्पण।।
सुवर्ण कुण्डल दुइ श्रुति-मूले साजे।
नवरत्न हार बाँधिलेक बाहु माझे।।
—चै० भा०

ठाकुर लोचनदास कृत निमाई पण्डितकी वर-सज्जाका यह वर्णन अत्यन्त सुन्दर है। इसे पाठक-पाठिकाओंको उपहार दिये बिना नहीं रह सकता।

तबे सेइ महाप्रभु विश्वम्भर राय।
अङ्गेर सुवेश करे जतेक जुयाय।।

तब महाप्रभु श्रीगौराङ्गके अङ्गों को जितनी नवयुवतियाँ इकट्ठी हैं सुवेशित कर रही हैं।

दिव्यरत्न अलङ्कार रक्तप्रान्त वास।
मह मह करे गोरा अङ्गेर बातास।।

दिव्य रत्न, अलङ्कार और लाल पाड़के वस्त्र हैं। श्रीगौराङ्गके अङ्गकी स्पर्शित वायुसे महक आ रही है।

सहजे श्रीअंग-गन्ध आर दिव्यगन्ध।
चन्दन-चन्द्रक भाले श्रीमुखचन्द्र।।

सहज ही श्रीअङ्गगन्ध दिव्य गन्ध-सी लगती है। श्रीमुखचन्द्र भाल परके चन्दनके चन्द्रकसे सुशोभित हो रहा है।

नखचन्द्र शोभा करे अंगुले अंगुरी।
झलमल अङ्गतेज चाहिते ना पारि।।

अंगुलियोंमें अंगूठीके साथ नख-चन्द्र शोभा प्रदान कर रहे हैं। अङ्गका तेज इतना दीप्त हो रहा है कि उस पर आँखें नहीं टिकतीं।

अति सुकोमल राङ्गा अधर बन्धुक।
श्रवणे शोभये गण्ड कुसुम-कन्दुक॥

अत्यन्त सुकोमल अधर बन्धुक पुष्पके समान लाल है। श्रवणके पास कुसुम्भ पुष्पके गेंदके समान गण्डस्थल शोभा देता है।

अङ्गद-कङ्कण करे चरणे नूपुर।
देखिया नागरी हिया करे दुरदुर॥

बाहोंमें अङ्गद और कङ्कण तथा चरणोंमें नूपुर देखकर नागरी-जनका हृदय बेहाल हो रहा है।

कुंकुम चन्दने लिप्त गौर-कलेवर।
सुन्दर मस्तके शोभे सोलार टोपर॥

गौराङ्गका शरीर कुंकुम और चन्दनसे लिप्त है। सुन्दर मस्तक पर सोले सितारेका बड़ा मेहरा शोभित है।

सुवर्ण दर्पण करे जेन पूर्णचन्द्र।
हेरि लोक निज देह ना हय स्वतन्त्र॥

हाथमें सुवर्ण दर्पणमें मानों पूर्णचन्द्र सुशोभित होता है। उस शोभाको देख कर लोगोंकी अपनी देह वशमें नहीं है।

बेडिला गौराङ्गे जत नागरीर गण।
शशधर बेड़ि जेन तारार शोभन॥

जितनी नागरीगण हैं, वे गौराङ्गको घेर कर इस प्रकार सुशोभित हो रही हैं, जैसे चन्द्रमाको घेर कर तारागण शोभित होते हैं।

मदे मत्त मदने हइला सब नारी।
लज्जा भय त्यजिया रहिला मुख हेरि॥
——चै० मं०

सब स्त्रियाँ मदनसे उन्मत्त हो रही हैं, वे लज्जा-भय छोड़कर एक टक उनका मुँह देख रही हैं।

● वर-यात्राकी तैयारी

इधर बुद्धिमन्त खाँ बहुतसे लोगोंको साथ लेकर निमाई पण्डितके द्वार पर आकर वर सजानेके कार्यमें व्यस्त हैं। दिव्य साजसे सजी डोली शची देवीके द्वारपर आकर लगी। नाना प्रकारके वाद्य और गीतध्वनि चारों ओर होने लगी। सबके मुखसे जय-जयकार होने लगा। अभी एक पहर दिन था। निमाई पण्डितके मित्रोंने निश्चय किया कि एक पहर दिन रहते उनको वर सजाकर समस्त नवद्वीपमें प्रदक्षिणा करते हुए ठीक गोधूलि लग्नमें कन्याके द्वार पर ले चलेंगे।

प्रहरक बेला आछे हेनइ समय।
सभेइ बोलेन शुभ करह विजय।।
प्रहरेक सर्व्व नवद्वीप बेड़ाइया।
कन्या-घरे जाइबेन गोधूलि करिया।।

—चै० भा०

ऐसा ही हुआ निमाई चाँदने माताकी प्रदक्षिणा करके उनकी चरणधूलि सिर पर चढ़ाई। शची देवीने प्रेमाश्रु मोचन करते हुए आनन्दसे गद्गद होकर धान-दूर्वाके द्वारा पुत्रको आशीर्वाद दिया। निमाई चाँद ब्राह्मणोंको प्रणाम और नमस्कार करके शुभ लग्नमें डोली पर सवार हुए। कुल-ललनाएँ हुलु ध्वनि करने लगीं। सबके मुँहसे जय-जयकार होने लगा।

तबे प्रभू जननीरे प्रदक्षिण करि।
विप्रगणे नमस्करि बहु मान्य करि।।
दोलाय बसिला श्रीगौराङ्ग महाशय।
सर्व्व दिके उठिल मङ्गल जय जय।।
नारीगणे दिते लागिलेन जयकार।
शुभध्वनि बइ कोन दिगे नाहिं आर।।

—चै० भा०

बुद्धिमन्त खाँ पैदल सेनाके साथ निमाई चाँदकी डोली घेर कर चले। प्रायः सारा नवद्वीप साथ-साथ जा रहा है। मार्गमें दोनों ओर झरोखोंसे, घरकी छतोंसे कुलकामिनियाँ मङ्गलसूचक हुलु ध्वनि कर रही हैं और निमाई चाँदकी वर-सज्जा देखकर नयन सार्थक कर रही हैं। प्रभुके शुभ विवाहके वरकर्त्ता उनके मौसा महाशय श्रीचन्द्रशेखर आचार्यरत्न हैं। नीलाम्बर चक्रवर्तीकी द्वितीय कन्यासे उनका ब्याह हुआ था। नवद्वीपमें शची देवीके एक मात्र आत्मीय तथा प्रभुके अभिभावक चन्द्रशेखर आचार्य थे। चन्द्र-शेखर आचार्यका घर प्रभुके घरके समीप एक महल्लेमें था। प्रभुके पितृ-विहीन होने पर चन्द्रशेखर आचार्य प्रभुके पितृस्थानीय हुए। प्रभु उनका पितृवत् सम्मान करते। प्रभुके विवाहमें चन्द्रशेखर आचार्य वरकर्त्ता बनकर आगे-आगे चले।

षष्ठ अध्याय

वर-यात्रा और शुभ-विवाह

नवद्वीपवासीर चरणे नमस्कार । ए सब आनन्द देखिबारे शक्ति जार ।। —श्रीचैतन्य भागवत	नवद्वीपवासियोंके चरणोंमें नमस्कार है जिनकी यह सब आनन्द देखनेकी शक्ति है ।

● गङ्गाजीकी ओर

वह महान लोक समूह सर्व प्रथम गंगाजीके तीरकी ओर वरकी डोलीके साथ-साथ चला । नाना रंग-विरंगी पताकाएँ हाथमें लिए, सहस्र-सहस्र दीपावलियाँ लेकर, नाना प्रकारके बाजे बजाते-बजाते वह जन-समूह भागीरथीके तट पर आकर उपस्थित हुआ । साथमें विदूषक, नर्त्तक, सहस्रों बालक नाना प्रकारकी क्रीड़ा करते हुए महा कौतुकपूर्वक नाचते-नाचते साथ-साथ चले । निमाई पण्डितको गङ्गाके घाटसे बड़ा प्रेम था । दिनका अधिकांश समय वे गङ्गाके किनारे विताया करते थे । इसी कारण इस शुभविवाहके दिन भी अपने दल-बलके साथ वहाँ जाकर आमोद-प्रमोद किये विना उनसे नहीं रहा गया । श्रीचैतन्य भागवतमें प्रभुके शुभविवाहका यह वर्णन अति सुन्दरतापूर्वक चित्रित हुआ है—

प्रथमे विजय करिलेन गङ्गातीरे । पूर्णचन्द्र धरिलेन शिरेर ऊपरे ।।	पहले बारात गङ्गाके तट पर गयी । निमाई चाँदने सिर पर पूर्णचन्द्र धारण किया ।
सहस्र सहस्र दीप लागिल ज्वलिते । नानाविध बाजि सब लागिल करिते ।।	सहस्रों दीप जल गये और नाना प्रकारके बाजे सब बजाने लगे ।

नाना वर्णे पताका चलिल तार काछे ।
विदूषक सकल चलिला नाना काचे ।।

उनके साथ रंग-विरंगी पताकाएँ चलने लगीं। विदूषक लोग नाना प्रकारके कौतुक करते हुए चले ।

नर्त्तक वा ना जानि कतेक सम्प्रदाय ।
परम उल्लासे दिव्य नृत्य करि आय ।।

न जाने कितने नाना प्रकारके नर्तक सम्प्रदाय परम उल्लासपूर्वक दिव्य नृत्य करते हुए चले ।

जयढाक वीरढाक मृदङ्ग काहाल ।
पटह दगड़ शङ्ख वंशी करताल ।।

जयढाक, वीरढाक, मृदङ्ग, दुन्दुभी, ढोल, नगारा, शङ्ख, वंशी, करताल,

बरगाँ शिङ्गा पञ्चशब्दी वाद्य बाजे जत ।
के लिखिबे वाद्य-भाण्ड बाजि जाय कत ।।

बरगा, शिङ्गा, पंच, बजना आदि अनेक बाजे बजते हैं। जितने प्रकारके बाजे बज रहे थे, उन सबका वर्णन नहीं किया जा सकता ।

लक्ष लक्ष शिशु वाद्य-भाण्डेर भीतरे ।
रङ्गे नाचि जाय देखि हासेन ईश्वरे ।।

उन बाजोंके बीच-बीचमें अनेकों बालक नाचते जाते हैं, जिसे देखकर निमाई चाँद आनन्दित हो हँस रहे हैं ।

से महा-कौतुक देखि शिशुर कि दाय ।
ज्ञानवान सभे लज्जा छाड़ि नाचि जाय ।।

उस महा कौतुकको देखकर बड़े-बड़े ज्ञानवान् पुरुष भी लज्जा छोड़कर नाचने लगे फिर बालकोंका तो कहना ही क्या ?

प्रथमे आसिया गङ्गातीरे कथोक्षण ।
करिलेन नृत्य-गीत आनन्द-बाजन ।।
—चै० भा०

पहले गंगाजीके किनारे आकर कुछ देरतक नृत्य-गीतके साथ आनन्दके बाजे बजे ।

● नवद्वीप परिक्रमा

उसके बाद सब लोग मिल कर गंगाजी पर पुष्प वर्षा करने लगे और सब लोग भक्तिभावसे गंगाजीको प्रणाम करके नवद्वीपकी प्रदक्षिणा करनेके लिये निकले ।

तबे पुष्पवृष्टि करि गङ्गा नमस्करि।
भ्रमेण कौतुके सर्व्व नवद्वीपपुरी।।
--चै० भा०

जो इस विवाहके साज-बाजको देखता है, वही कहता है--"हमने बड़े-बड़े अनकों विवाह देखे हैं, परन्तु इतनी धूम-धामका विवाह तो कभी नहीं देखा। राजपुत्रके विवाहमें भी तो इतनी धूमधाम, इतना समारोह नहीं होता।" सुसज्जित डोली पर वरके साजमें सजे निमाई पण्डितकी मनमोहन, अपरूप, रूपमाधुरीको देखकर कुल-ललनाएँ कहती हैं--"अहा! ऐसा रूपवान् मनुष्य तो कभी देखा नहीं। यदि कन्या देनी हो तो ऐसे ही सर्वसुलक्षण-सम्पन्न वरको देनी चाहिए। सनातन मिश्र पर दैव बड़े सुप्रसन्न हैं जो उन्हें ऐसा सुपात्र मिल गया है।"

बड़ बड़ बिभा देखियाछि लोके बले।
एमत समृद्ध नाहि देखि कोन काले।।

लोग कहते हैं कि बड़े-बड़े विवाह हमने देखे हैं, परन्तु ऐसा समृद्ध ब्याह कभी नहीं देखा।

एइ मते स्त्री पुरुषे प्रभुरे देखिया।
आनन्दे भासये सब सुकृति नदीया।।

प्रभुको देखकर इस प्रकार स्त्री-पुरुष आनन्दसे भर रहे हैं। यह नदियावासी लोगोंका सौभाग्य है।

सभे जार रूपवती कन्या आछे घरे।
सेइ सब विप्र सबे विमरिष करे।।

जिनके घरमें रूपवती कन्या है, वे सब ब्राह्मण ईर्ष्यापूर्वक कहते हैं--

हेन वरे कन्या नाहि पारिलाम दिते।।
आपनार भाग्य नाहि हइबे केमते।।
--चै० भा०

"ऐसे वरको हम कन्या नहीं दे सके। हमारे भाग्यमें ही नहीं लिखा था तब यह कैसे होता।"

● कन्या-द्वार पर स्वागत

इस प्रकार समस्त नवद्वीप नगरी परिभ्रमण करके निमाई पण्डित अपने दल-बलके साथ गोधूलि लग्नमें सनातन मिश्रके घरके द्वार पर आ उपस्थित हुए। यहाँ भी बड़ी धूम-धाम है। आलोक-मालासे घर-द्वार और प्राङ्गण परिशोभित है। नाना प्रकारके बाजे बज रहे हैं। घरके आङ्गनमें और द्वार पर लोग खचाखच

भरे हैं। घरके द्वार पर वरके आते ही चारों ओरसे जय-जय ध्वनि होने लगी। नगरकी नारियोंकी हुलु-ध्वनिसे मिश्रजीका घर भर गया। राजपण्डित सनातन मिश्र स्वजनोंके साथ आगे आकर डोलीके समीप जामाताका स्वागत करनेके लिये उपस्थित हुए। बहुत सत्कारपूर्वक श्रीनिमाई चाँदको गोदमें लेकर डोलीसे नीचे उतारा।

गोधूलि समय आसि प्रवेश हइते।
आइलेन राजपण्डितेर मन्दिरेते।।
महा जय-जयकार लागिल हइते।
दुइ वाद्यभाण्ड वादे लागिल बाजिते।।
परम सम्भ्रमे राजपण्डित आसिया।
दोला हइते कोले करि बसाइला निया।।
—चै० भा०

प्रभुके श्रीअङ्गके स्पर्शसे सनातन मिश्रकी देह पवित्र हो गयी। सारे अङ्ग पुलकित हो उठे, दोनों नेत्रोंसे आनन्दाश्रु बह चले, उनका जीवन सार्थक हो गया। वे मन ही मन सोचने लगे कि शुभ क्षणमें विष्णुप्रियाका जन्म हुआ था। तत्काल एक बार स्वप्नवत् जन्म दिवसकी बात याद आगयी। परन्तु मायाका ऐसा प्रभाव है कि फिर सब कुछ भूलकर विवाहके आनन्दोत्सवमें मत्त हो उठे।

● विवाह-मण्डपमें

घरके आङ्गनमें स्थित एक बड़े चँदोवेके तले सुसज्जित वरासन पर निमाई पण्डित आसीन हुए। वह वरासन विस्तृत सभा-मण्डपके ठीक बीचों-बीचमें ऊँची वेदी पर था। सभा-मण्डप पत्र-पुष्प और आलोकमालासे सुशोभित हो रहा था। विचित्र कारीगरीसे युक्त पताकाओंकी श्रेणी, पत्र-पुष्पसे सजे सभा-मण्डपके स्तम्भोंके ऊपर सुन्दर शोभा पा रही थी। जब निमाई पण्डित उच्च वरासन पर आसीन हुए और उनके चारों ओर बराती लोग घेर कर बैठ गये, तब सभा मण्डपने एक अपूर्व ही शोभा धारण की। श्रीनिमाई चाँदकी अपरूप रूपराशिकी छटासे सभाके चारों ओर मानो सैकड़ों बिजलियोंकी आभा छूट पड़ी। सभामें सबकी दृष्टि श्रीनिमाई चाँदके ऊपर थी।

लाखों नर-नारियोंकी दृष्टि एक व्यक्तिके ऊपर पड़ रही थी। सभी एक-टकसे विवाह वेशमें सजे श्रीनिमाई चाँदकी अपरूप रूप-माधुरीका दर्शन करके अपने हृदय और मनको तृप्त कर रहे थे। निमाई पण्डित चञ्चल होते हुए भी इस समय अति गंभीर भाव धारण करके स्थिर होकर बैठे हैं। इससे उनके मनमें सुख नहीं हो रहा है, मानो चोरी करते समय पकड़े गये हों। यह ठीक भी है। राजपण्डित सनातन मिश्रके घर जाकर उनकी परम रूपवती कन्या श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके मन-प्राणको हरनेके लिए जो उद्यत हैं, अतएव इस सरला बालिकाके मन-प्राण हरण करनेके अपराधमें मानो हमारे नवीन नागर पकड़े गये हैं। इसी कारण मनचोर गम्भीर भावसे स्थिर बैठे हैं। ऐसी बात न होती तो अब तक वे अपनी स्वभाव-सुलभ चपलताके वश होकर सभा-मण्डपमें उछल-कूद मचाते, हाथ-पैर पटकते तथा वाक्-पटुतामें अपनी प्रकृतिका परिचय देकर, समस्त सभा-सदोंका एकमात्र लक्ष्य बनकर दूसरे ही रूपमें आनन्द वृद्धि करते। मन-चोरकी सजा ऐसी ही होती है। इसमें हमको कुछ भी दुःख या कष्ट नहीं है।

सनातन पण्डितने प्रचुर दान-सामग्रीसे विवाह मण्डपको सुसज्जित किया है। बहुत अर्थ-व्यय करके बहुमूल्य द्रव्य एकत्र किये गये हैं। सब लोग देख रहे हैं कि यह विवाह एक महान कृत्य है। किसीने कभी विवाहका ऐसा आयो-जन नहीं देखा था।

कुछ देरके बाद सनातन मिश्रने पाद्य, अर्घ्य, आचमनी, वस्त्र और अलङ्कार द्वारा विधिपूर्वक जामाताको वरण किया।

पाद्य अर्घ्य आचमनी वस्त्र अलङ्कार।	विधिपूर्वक पाद्य, अर्घ्य, आच-
यथाविधि दिया कैल वरण व्याभार ।।	मनी, वस्त्र और अलङ्कार देकर
--चै० भा०	जामाताके वरणका कार्य किया।

चारों ओर खील और पुष्पोंकी वर्षा होने लगी। पुरनारियोंकी शुभ हुलु-ध्वनिसे तथा मङ्गलसूचक शङ्ख-नादसे गृह-प्राङ्गण परिपूरित हो उठा। आगत स्त्रियोंके साथ मिश्रगृहिणी जामाताको आशीर्वाद देने आयीं। उस समय निमाई पण्डित वरासनसे उठकर घरके आँगनमें एक ओर आवरण-युक्त चंदोवाके नीचे खड़े हुए और चारों ओरसे उनकी मित्रमण्डलीने उन्हें घेर लिया। स्त्री-आचारका समय हो गया।

तबे पाद्य अर्घ्य दिया,
गौरचन्द्रे थुइल लैया,
दाण्डाइला छोड़ला भीतरे ।

तब पाद्य-अर्घ्य देकर गौरचन्द्रको लाकर बैठाया । सब लोग छालनाके भीतर खड़े हुए ।

सर्व्वजने हरि बोले,
शत शत दीप ज्वले,
ताहे जिनि गोरा-कलेवरे ।।

सब हरि-हरि बोलते थे । सैकड़ों दीप जल रहे थे जिनको पराजितकर गौर-चाँदका शरीर देदीप्यमान हो रहा था ।

उलसित सर्व्वजन,
हुलाहुली घने घन,
शङ्ख दुन्दुभि वाद्य बाजे ।

सब लोग आनन्दके उल्लासमें थे । स्त्रियाँ बारंबार हुलु-ध्वनि कर रही थीं । शङ्ख-दुन्दुभी बाजे बज रहे थे ।

एयोगण मेलि करि,
सभे पाटसाड़ी परि,
प्रदक्षिण करिबार साजे ।।

सुहागिन स्त्रियाँ पाटकी साड़ी पहने एक साथ प्रदक्षिणा करनेकी तैयारीमें थीं ।

निर्म्मञ्छन सज्ज करे,
आइहगण आगुसरे,
आगुसरे कन्यार जननी ।

परिछनका साज-सामान लेकर आगत स्त्रियाँ आगे बढ़ीं और कन्याकी माता भी अग्रसर हुई ।

भूमिते ना पड़े पा,
उलसित सर्व्व गा,
देखि विश्वम्भर गुणमणि ।।
—चै० भा०

उनके पैर भूमि पर नहीं पड़ रहे हैं, गुणमणि विश्वम्भरको देखकर उनका सारा अङ्ग पुलकायमान हो रहा है ।

मिश्रगृहिणीने निमाई चाँदके मस्तक पर धान-दूर्वा देकर शुभ आशीर्वाद दिया । अन्यान्य वयःज्येष्ठा कुलकामिनियोंने भी आशीर्वाद दिया । सात घृतके प्रदीपोंसे मिश्र-गृहिणीने जामाताको वरण किया । पुनः खील, कौड़ी और पुष्पोंकी वृष्टि हुई । घनी हुलु-ध्वनि और शङ्ख-नादसे फिर गृह-प्राङ्गण परिपूर्ण हो उठा ।

धान्य दूर्वा दिलेन प्रभुर श्रीमस्तके।
आरति करिया सप्त घृतेर प्रदीपे।।
खइ कड़ि फेलि करिलेन जयकार।
एइ मत जत किछु करि लोकाचार।।

--चै० भा०

● कन्याका आनयन

अब सनातन मिश्रने कन्याको लानेका आदेश दिया। घरके भीतर सखियोंसे परिवेष्टित, वस्त्रालङ्कारसे आभूषित नवबाला श्रीमती विष्णुप्रिया देवी लजीले मुँहसे बैठी हुई मन ही मन बड़ा आनन्द अनुभव कर रही हैं और कब प्राणवल्लभके चन्द्रमुखका दर्शन प्राप्त होगा, यही सोच रही हैं। समवयस्का सखियाँ उपहास कर रही हैं, कोई व्यग्रतापूर्वक बालिका विष्णु-प्रियाको खींचकर वर दिखाने ले जा रही है, परन्तु विष्णुप्रिया किसी प्रकार नहीं जाती। कोई प्रौढ़ा स्त्री यह देखकर विष्णुप्रिया देवीकी सखीको धमका कर कहती हैं--"अरी! क्या कर रही है? वरको क्या पहले देखा जाता है? शुभ क्षणमें, शुभ लग्नमें वरका शुभदर्शन किया जाता है। समय होने पर स्वयं उसको ले जायेंगे।" बालिका विष्णुप्रिया उसी शुभ क्षणकी प्रतीक्षा कर रही है। उसी समय समाचार आया कि कन्याके शुभदर्शनका समय हो गया है, अतः सनातन मिश्रने कन्याको लानेका आदेश दिया है।

तबे सेइ सनातन, मिश्र द्विजरतन,
कन्या आनिबारे आज्ञा दिल।

रत्न सिंहासने बसि, त्रैलोक्य रूपसी,
अङ्ग छटाय बिजुरी पड़िल।।

--चै० भा०

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी वस्त्रालङ्कारसे भूषित होकर विचित्र शिल्प-कौशलसे युक्त एक काष्ठासन पर बैठी हैं। उसी आसनके सहित वे सभा-मण्डपके एक पार्श्वमें लाई गयीं।

तबे सर्व्व अलङ्कारे भूषित करिया।
विष्णुप्रिया आनिलेन आसने धरिया।।
——चैं० भा०

सभाके लोग उस समय श्रीमतीको किस रूपमें देखते हैं; इसका ठाकुर लोचनदासने अति सुन्दर वर्णन किया है——

विष्णुप्रिया-अङ्ग जिनि लाखबान सोणा।
झलमल करे जेन तड़ित-प्रतिमा।।

विष्णुप्रियाके अङ्गोंने कुन्दन-सोनेको पराजित कर दिया है। वे तड़ितकी प्रतिमाके समान दीप्त हो रही हैं।

फणधर जिनि वेणी मुनि मन मोहे।
कपाले सिन्दूर से तुलना दिब काहे।।

फणधरको पराजित करनेवाली उनकी वेणी मुनियोंके मनको मोह लेती है। उनके कपालके सिन्दूरकी उपमा किससे दूँ?

भुरुभङ्ग अनङ्ग सारङ्ग मनोहर।
शुक-ओष्ठ जिनि नासा परम सुन्दर।।

टेढ़ी भौंहें मानो अनङ्गका मनोहर धनुष है। उनकी परम सुन्दर नासिका शुककी चोंचको पराजित करती है।

कुरङ्ग-नयन जिनि नयन-युगल।
गृधिनीर कर्ण जिनि कर्ण मनोहर।।

उनके युगल नयन हरिणके नेत्रोंको पराजित करते हैं। मनोहर कान गृधिनीके कानोंको जीत रहे हैं।

अधर बान्धुली जिनि अनुपाम शोभा।
दशन मोतिम जिनि झलमल आभा।।

अधरोंकी अनुपम शोभा बन्धूक पुष्पको पराजित करती है। दाँतोंकी झलमल ज्योति मोतीको जीत रही है।

कम्बु-कण्ठ जिनिया जगत मनोहारी।
सिंह-ग्रीव जिनिया सुन्दर गीमधारी।।

जगत्‌के मनको हरनेवाला उनका कण्ठ शङ्खको भी पराजित कर रहा है। सुन्दर ग्रीवा सिंहकी ग्रीवाको जीतती है।

बाहुयुग कनक-मृणाल शोभा जिनि।
करतल रातापद्म जिनि अनुमानि।।

दोनों बाहु कनक-मृणालकी शोभाको पराजित कर रहे हैं और करतल मानो लाल कमलको पराजित कर रहे हैं।

अंगुलि चम्पक-कलि जिनि मनोहर। नखचन्द्र जिनि शोभा अति झलमल।।	मनोहर अंगुलियाँ चम्पाकी कलीको जीतती हैं। चमकते हुए नख चन्द्रमाकी शोभाको हर रहे हैं।
त्रैलोक्य जिनिया पद गड़िला विधाता। डगमग करे पदतल-पद्म राता।।	विधाताने पैरोंको ऐसा सिरजा है जो त्रिलोकको अपनी शोभासे पराजित कर रहे हैं। पदतलरूपी लाल कमल डगमग कर रहे हैं।
नखचन्द्र पाँति जिनि अकलङ्क चाँदे। ताहार किरणे आँखि पाइल जन्म-आँधे।।	नख-चन्द्रकी पंक्तियाँ कलङ्कहीन चन्द्रमाको पराजित कर रही हैं। उनकी किरणोंसे जन्मान्धको आँखें मिलती हैं।
गन्ध-चन्दन माल्ये कराइला वेश। विनि वेशे अङ्गछटा आलो करे देश।।	गन्ध, चन्दन और मालासे उनका वेश सजाया जा रहा है। सजे हुए अङ्गोंकी छटा उस स्थानको आलोकित कर रही है।
त्रैलोक्य-मोहिनी कन्या रूपेते पार्व्वती। अङ्गेर छटाय झलमल करे क्षिति।।	वह त्रिलोकीको मोहनेवाली कन्या रूपमें पार्वती जैसी है, उसकी अङ्ग-छटासे पृथिवी झलमल कर रही है।

वस्त्रालङ्कारसे भूषित, अपूर्व लावण्यमयी, प्रेममयी नव वाला श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके अपरूप रूप-लावण्यको देखकर मण्डपके सब लोग मानो एक वारगी मन्त्रमुग्ध हो गये। सब लोग कहने लगे कि जैसा वर है, वैसी ही कन्या है। "योग्यं योग्येन योजयेत्" चरितार्थ हो रहा है। कोई कहता है श्रीश्रीलक्ष्मी-नारायणका सम्मिलन हुआ है, कोई कहता है—श्रीश्रीहर-पार्वती एकत्र मिले हैं। सभी श्रीगौर-विष्णुप्रियाकी अनिन्दित रूपराशिकी प्रशंसा कर रहे हैं। श्रीगौर-विष्णुप्रियाके युगल रूपसागरसे कोई अपने नेत्रोंको हटा नहीं पा रहा है। युगल रूपमाधुरीके महासमुद्रमें वे लोग उस समय डूब रहे थे।

अधम ग्रन्थकार द्वारा रचित श्रीश्रीगौर-विष्णुप्रियाके युगल मिलनका एक पद यहाँ दिया जाता है।

(युगल मिलन)

प्रेम अवतार गौर आमार प्रेममयी विष्णुप्रिया । मिलियाछे भाल मूरति युगल माखामाखि सुधा दिया ।।	प्रेमावतार हमारे गौराङ्ग और प्रेममयी विष्णुप्रिया अच्छे मिले हैं। मानो सुधारसमें बोरी युगल मूर्त्तियाँ हैं ।
युगल मिलन प्रेम आवाहन पीरितेर छड़ाछड़ि । कृपानिधि गोरा प्रेम-रसे गड़ा तनुखानि मनोहारि ।।	युगल-मिलन प्रेमका आवाहन है, प्रीतिका विस्तार है । कृपानिधि गौराङ्ग मानो प्रेम रससे गढ़े गये हैं, उनका शरीर अत्यन्त मनोहर है ।
प्रेममयी देवी पीरितेर छबि आँका जेन तुलि दिया । अमियार खनि हृदयेर मणि आछे जेन जड़ाइया ।।	विष्णुप्रिया देवी प्रेममयी हैं, मानो प्रीतिका चित्र तूलिकासे चित्रित किया हो । वे मानो अमृतकी खान हैं तथा हृदयकी जड़ी हुई मणि हैं ।
तरल तरङ्गे चलियाछे रङ्गे प्रेमधारा अविरत । मिलिया मिशिया चले उछलिया लहरी लीलार मत ।।	चञ्चल तरङ्गोंकी तरह मतवाली चालसे प्रेमधारा अविरत बहती है । परस्पर मिलकर उछलती हुई लीलाकी लहरके समान चल रही है ।
विश्व विधाता जगतेर माता मिलियाछे एक सङ्गे । भावना कि आर ? पापी दुराचार हास खेल सब रङ्गे ।।	विश्वके विधाता तथा जगन्माता एक साथ मिले हैं । अब क्या चिन्ता है ? पापी-दुराचारी ! सब आनन्दसे हँसो-खेलो ।
पिता दिबे कोल, बल हरिबोल माये दिबे चुमो मुखे । कि भय तोदेर ? मर जगतेर भूले जाओ शोक दुखे ।।	पिता तुम्हें गोदमें लेंगे । बोलो 'हरि बोल ।' माता तुम्हारा मुख चूमेगी । तुम्हें अब मृत्युलोकका डर क्या है ? दुःख-शोकको भूल जाओ ।

जगत-जननी विष्णुप्रिया धनि
पतितेर पिता गोरा।
पातकी तराते एसेछे धराते
आय सबे आय तोरा।।

जगत - जननी विष्णुप्रिया और पतितोंके पिता गौरचन्द्र धन्य हैं। ये लोग पातकी जनको तारनेके लिए पृथ्वी पर आये हैं। तुम सब आओ-आओ।

सङ्गे लये जास् पापी हरिदास
पतित-पावनी पाशे।
बलिस् तोदेर नदेर चाँदेरे
पदरज दिते दासे।।

इस पापी हरिदासको भी अपने साथ-साथ पतितपावनी के पास ले चलो। तुम लोग नदियाके चाँदको कहना कि इस दासको भी पद-रज प्रदान करें।

● परस्पर शुभ-दर्शन

श्रीनिमाई चाँद और श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी चार आँखें मिलीं। उस शुभ मिलनका दृश्य भाषाके द्वारा वर्णित नहीं हो सकता। वह अत्यन्त सुमधुर मनोरम स्वर्गीय दृश्य भाषामें वर्णनके अतीत है। वह शुभदृष्टि दर्शन जिनके भाग्यमें बदा था वे धन्य थे। उनके चरणोंमें कोटि-कोटि प्रणिपात। श्रीभगवान्ने क्षण भरमें जो लीला प्रकट की, शत-शत वर्षोंमें भी उसका वर्णन करनेकी शक्ति किसीमें नहीं है। इसी कारण ठाकुर श्रीवृन्दावन दास दुःखी मनसे लिख गये हैं--

दण्डेके ए सब लीला जत हइयाछे।
शत वर्षे ताहा के वर्णिबे हेन आछे।।

ठाकुर श्रीलोचनदासने भावमें गद्गद होकर श्रीगौर-विष्णुप्रियाके इस मधुमय प्रथम शुभ मिलन* के दृश्यका अत्यन्त सुन्दर वर्णन किया है--

---

* इसी प्रकार श्रीनरहरि सरकार ठाकुरने भी भावविभोर हो श्रीश्रीगौर-विष्णुप्रियाके इस प्रथम शुभ मिलनका सरस वर्णन किया है--

सनातन मिश्रेर घरणी।
करे लोकाचार कत
कहिते ना जानि।।

सनातन मिश्रकी गृहिणी कितने लोकाचार करती हैं उनका वर्णन नहीं हो सकता।

प्रभुर निकटे आनि
जग-मनमोहिनी
विष्णुप्रिया महालक्ष्मी नामा।

जगतके मनको मोहनेवाली महालक्ष्मी विष्णुप्रियाजी श्रीगौर प्रभुके पास लायी गयीं।

तेरछ नयान बङ्क,
हेरि मुख गौराङ्ग
मन्द मन्द हासि अनुपमा ।।

वे अनुपमा देवी तिरछे नयनोंसे श्रीगौराङ्गका मुख देखकर मन्द-मन्द हँस रही हैं।

साँतारे सुखेर पाथारे।
कन्याय भूषित करे
नाना अलङ्कारे ।।

वे सुखके सागरमें उतरा रही हैं और कन्याको नाना अलङ्कारोंसे भूषित कर रही हैं।

देखि विष्णुप्रियार सुवेश।
बाढ़ये सभार मने
उल्लास अशेष ।।

श्रीविष्णुप्रियाके सुन्दर वेशको देखकर सबके मनमें अत्यन्त उल्लास बढ़ता है।

मिश्र महाशय शुभ क्षणे।
कन्यार आनिते
निदेशिल प्रियजने ।।

मिश्र महाशयने शुभ क्षणमें प्रियजनोंको कन्याको लानेका आदेश दिया।

मिश्रेर भवन मनोहर।
झलमल करये
अङ्गन परिसर ।।

मिश्र-भवन मनोहर हो रहा है और सारा आंगन झलमल कर रहा है।

छोड़ला शोभये सेइ खाने।
आनिलेन कन्या
बसाइया सिंहासने ।।

जहाँ पर मण्डप शोभायमान है, वहाँ कन्याको सिंहासन पर बैठाकर लाये।

जा किछु आछये लोकाचार।
ताहाओ करेन ताहे
कौतुक अपार ।।

जो कुछ लोकाचार है सब किया जा रहा है और उसमें अपार कौतुक है।

प्रथमेइ देवी विष्णुप्रिया।
आत्म समर्पिल प्रभु
पदे माला दिया ।।

आरम्भमें ही देवी विष्णुप्रियाने प्रभुके चरणोंमें माला चढ़ाकर आत्म-समर्पण किया।

प्रभु प्रदक्षिण करि सातवार चौदिके घेरि कर जोड़े करे नमस्कार ।	सात बार प्रभुकी प्रदक्षिणा करके हाथ जोड़कर नमस्कार करती हैं ।
अन्तःपट घुचाइल चारि चक्षे देखा हैल दोंहे करे कुसुम-विहार ।।	अन्तःपटके हटते ही दोनोंकी चार आँखें हुईं, दोनों कुसुम-विहार (परस्पर पुष्प-वर्षण क्रीड़ा) कर रहे हैं ।
ईषत् हासिया गौरा राय । दिला पुष्पमाला विष्णुप्रियार गलाय ।।	श्रीगौराङ्गने मुस्कुराते हुए श्रीविष्णुप्रियाके गलेमें माला पहनाई ।
पुष्प फेलाफेलि दुइ जने । दोंहार मनेर कथा दोंहे भाल जाने ।।	दोनोंने एक दूसरेके ऊपर पुष्प फेंके । एक दूसरेके मनका भाव दोनों भली भाँति समझते हैं ।
तिले तिले बाड़ये आनन्द । विष्णुप्रिया सह विलसये गौरचन्द ।।	क्षण-क्षण आनन्दकी वृद्धि होती है, श्रीविष्णुप्रियाके संग श्रीगौराङ्ग विलास कर रहे हैं ।
कि नव शोभार नाहिं पार । चारि दिके नारीगण देइ जयकार ।।	कितनी नव शोभा है ? उसका पार नहीं है । चारों ओर नारीगण जय-जयकार दे रही हैं ।
करे कोलाहल सर्व्व जन । बाजे नाना वाद्य ध्वनि भेदये गगन ।।	सब लोग कोलाहल कर रहे हैं । नाना प्रकारके बाजे बज रहे हैं, जिनकी ध्वनि गगनको भेदती है ।
सनातन मिश्र भाग्यवान । बसिलेन उल्लासे करिते कन्यादान ।।	भाग्यवान सनातन मिश्र कन्यादान करनेको उल्लास पूर्वक बैठे ।
वेदादि विहित क्रिया करि । समर्पिल कन्या विश्वम्भर करे धरि ।।	वेद विहित क्रिया करके विश्वम्भर को हाथ पकड़कर कन्या समर्पण की ।

उठिल आनन्द रोल **सभे बोले हरिबोल** **छामुनि नाड़िल कन्या वर।**	आनन्दकी ध्वनि उठी। सभी लोग "हरि बोल" कहने लगे। वर-कन्या छालनाके नीचे खड़े हुए।
सबे बोले धनि धनि **जेन चाँद-रोहिणी** **केह बोले पार्व्वती-हर॥**	मानो चन्द्रके पास रोहिणी खड़ी हो। कोई कहता है कि पार्वती और शङ्कर खड़े हैं और सब धन्य-धन्य कहते हैं।

आसन पर बैठी श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको कन्या-पक्षके दो आदमियोंने उठाकर श्रीनिमाई चाँदके चारों ओर सात बार प्रदक्षिणा कराई। उसी समय चारों ओर शुभ वाद्यध्वनि हो उठी।

सैकड़ों शङ्खोंकी शुभ ध्वनिसे गृह-प्राङ्गण ध्वनित हो गया। पुर-नारियाँ मङ्गलसूचक हुलु-ध्वनि करने लगीं। सात प्रदक्षिणा पूरी होनेके बाद श्रीनिमाई चाँदके सम्मुख घूँघट काढ़े नव बाला श्रीविष्णुप्रियाके आसनको उठाकर अधरमें ठहराया जिससे यह शुभ-दर्शन कार्य सुसम्पन्न हो। इसी समय——वर बड़ा या कन्या बड़ी——इस विवादके निर्णयके लिये वर और कन्या दोनों पक्षोंके लोग प्राणपणसे चेष्टा करने लगे।

उच्च करि बर कन्या तोले हर्ष मने। **क्षणे जिने प्रभू-गणे क्षणे लक्ष्मी-गणे॥** **——चै० भा०**	वर और कन्याको ऊँचा कर-करके हर्षित मनसे तुलना करने लगे। कभी प्रभुका पक्ष और कभी लक्ष्मीका पक्ष जीतता था।

दिलेन जौतुक सुखे भासि। **दिव्य धेनु धन भूमि** **शय्या दास दासी॥**	और सुखपूर्वक कितने ही दिव्य धेनु, धन, भूमि, शैया और दास-दासी दिये।
सर्व्व शेषे होम कर्म्म करे। **विश्वम्भर बामे** **बसाइया दुहितारे॥**	सबके बाद होम-कर्म करके विश्वं-भरके वाम भागमें दुहिताको बैठाया।
कि अद्‌भुत दोंहार माधुरी। **कहिते कि दोंहार** **निछनि नरहरि॥**	दोनोंकी क्या अद्‌भुत अवर्णनीय माधुरी है? दोनोंपर नरहरि न्यौछावर है।

इस प्रचेष्टामें किस पक्षकी जीत हुई, इसे शास्त्रकार लोग नहीं बतलाते। जान पड़ता है कि श्रीलक्ष्मी देवीके गण ही जीते। इसका कारण; प्रभु भूतल पर चौकी पर खड़े हैं और देवी दो बलिष्ठ आत्मीय जनोंके हाथोंसे ऊँची उठाई हुई चौकी पर बैठी हैं। चार हाथोंसे ऊपर उठाई होनेके कारण प्रभुकी अपेक्षा देवीके बड़ी होनेकी बात ठीक ही है। परन्तु हमारे प्रभुका आकार भी तो साधारण मनुष्यके समान न था। इसीसे कुछ सन्देह होता है। जो हो, इस विषयको लेकर व्यर्थ तर्क करनेकी आवश्यकता नहीं है। पाठक-पाठिकागणके ऊपर ही इस निर्णयका भार रहा।

अब शुभ दर्शनका समय आया। बहुमूल्य पट्ट वस्त्रसे वर और कन्याके सिर ढक दिये गये, जिससे शुभ दृष्टिके समय दूसरे लोगोंकी कुदृष्टि न पड़े। फिर बाजे बजने लगे, शङ्खनादसे दिशाएँ पूर्ण हो गयीं और हुलु-ध्वनि से गृह-प्राङ्गण भर गया। अब शुभ लग्न उपस्थित हुआ। श्रीगौर और विष्णुप्रियाकी चार आँखोंका शुभ मिलन हुआ, नव बालाके मुख पर ईषत् हास्यकी रेखा दीख पड़ी; नवीन नागरशेखर नटवर श्रीनिमाई चाँदके चन्द्रवदन पर भी मुस्कानकी छटा दिखायी दी। श्रीमतीने हाथ जोड़कर पतिदेवताको प्रणाम किया। तिरछे नयनोंसे प्राणवल्लभका मुखचन्द्र अवलोकन कर कृतार्थ हुईं। श्रीनिमाई चाँदको हँसते देखकर श्रीमतीने समझा कि वे अपने प्राणवल्लभके मनोमत ही हैं। श्रीमतीकी सलज्ज दृष्टि और मन्द हास्यसे प्रकट होता है, मानो वे कहती हैं--"मैं तुम्हारी ही हूँ।" इस शुभ-दृष्टिका सुख बहुत देर तक न रहा। माला-परिवर्तनका समय आया। चारों ओर पुष्पवृष्टि होने लगी। पहले श्रीमतीने प्रभुके श्रीचरणोंमें माला समर्पण की। प्रभुने वही माला उठाकर श्रीमतीके गलेमें पहना दी। तब फिर एक दूसरी माला लेकर श्रीमतीने प्रभुके श्रीकण्ठमें पहना दी। उसके बाद वे परस्पर एक दूसरेके ऊपर पुष्पवृष्टि करने लगे। अन्तरिक्षमें देव-देवीगण यह आनन्दोत्सव देखनेके लिए आये हैं। वे भी पुष्पवृष्टि करने लगे। श्रीवृन्दावन दास ठाकुरने श्रीगौर-विष्णुप्रियाकी प्रथम शुभदृष्टि और मिलनका अति सुन्दर भावमें वर्णन किया है। कृपामय पाठक! अपने हृदयमें इस मधुमय सुन्दर दृश्यको एक बार अङ्कित कर लें। इससे उनको व्रजके निगूढ़ रसास्वादनका सुख प्राप्त होगा। व्रज-लीला-रससे हृदय परिप्लुत हो जायगा। व्रजरस और नवद्वीप-रसमें कोई अन्तर नहीं है, यह समझमें आ जायगा।

तबे हर्षे प्रभुर सकल आप्तगणे।
प्रभुरेओ तुलिलेन धरिया आसने ।।
तबे मध्ये अन्तःपट धरि लोकाचारे।
सप्त प्रदक्षिण कराइलेन कन्यारे ।।
तबे लक्ष्मी प्रदक्षिण करि सप्तवार।
रहिलेन सम्मुखे करिया नमस्कार ।।
तबे पुष्प फेला-फेलि लागिल हइते।
दुइ वाद्यभाण्ड महा लागिल बाजिते ।।
चतुर्द्दिके स्त्री पुरुषे करे जयध्वनि।
आनन्दे आसिया अवतरिला आपनि ।।
आगे लक्ष्मी जगन्माता प्रभुर चरणे।
माला दिया करिलेन आत्म-समर्पणे ।।
तबे गौरचन्द्र प्रभु ईषत् हासिया।
लक्ष्मीर गलाय माला दिलेन तुलिया ।।
तबे लक्ष्मी-नारायणे पुष्प फेला फेलि।
करिते लागिला हइ महा कुतुहलि ।।
ब्रह्मादि देवता सब अलक्षित रूपे।
पुष्पवृष्टि लागिलेन करिते कौतुके ।।
आनन्दे विवादे लक्ष्मी-गणे प्रभु-गणे।
उच्च करि वर-कन्या तोले हर्ष-मने ।।
क्षणे जिने प्रभु-गणे क्षणे लक्ष्मी-गणे।
हासि हासि प्रभुरे बोलये सर्व्वजने ।।
ईषत् हासिला प्रभु सुन्दर श्रीमुखे।
देखि सर्व्व-लोक भासे परानन्द-सुखे ।।

—चै० भा०

● कन्यादान

महा आनन्द और परम कौतुक पूर्वक श्रीगौर-विष्णुप्रियाके शुभ-दर्शन और अन्यान्य सारे लोकाचार कार्य सुसम्पन्न हुए। अब शुभ लग्नमें सनातन मिश्र

श्रीगौराङ्ग-विष्णुप्रिया-परिणय

N. P. CRAFTS

कन्या-दान करने बैठे। वर और कन्या दिव्य आसन पर उपविष्ट हुए। बहुमूल्य दान-सामग्रीसे विवाह-मण्डप परिपूर्ण है। दास, दासी, गौ, भूमि, शय्या, वस्त्र, अलङ्कार आदि सब कुछ सुसज्जित हैं। विधिपूर्वक पाद्य, अर्घ्य और आचमन देकर सङ्कल्प पढ़ कर सनातन मिश्रने कन्यादान किया। श्रीविष्णु-प्रीत्यर्थ सनातन मिश्रने श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको श्रीश्रीनिमाई चाँदके श्रीकर-कमलोंमें अर्पित कर दिया।

तबे राजपण्डित परम हर्ष मने।
बसिलेन करिबारे कन्या सम्प्रदाने।।
पाद्य-अर्घ्य आचमनी यथाविधि मते।
क्रिया करि लागिलेन सङ्कल्प करिते।।
विष्णु-प्रीति काम्य करि श्रीलक्ष्मीर पिता।
प्रभुर श्रीकरे समर्पिलेन दुहिता।।
तबे दिव्य धेनु भूमि शय्या दासी दास।
अनेक यौतुक दिया करिला उल्लास।।
--चै० भा०

विवाहके अन्तमें यथाविधि होम-कृत्यादि वेदाचार और जो कुछ लोकाचार कृत्य थे, सभी सुसम्पन्न हुए। इसके बाद मिश्रगृहिणी आकर परम समादरके साथ वर-कन्याको घरमें लिवा गयीं। फिर मङ्गल वाद्य बज उठे और पुर-नारियाँ हुलु-ध्वनि करते-करते वर-कन्याके मस्तक पर पुष्पवृष्टि करने लगीं और शङ्ख-दुन्दुभिके निनादसे गृह-प्राङ्गण भर उठा। देवी विष्णुप्रिया अब श्रीगौर-प्रिया हो गयीं। सनातन मिश्रकी कन्या अब हमारे प्राणगौरकी गृहिणी हो गयीं। उनका वासस्थान हो गया श्रीगौराङ्गका वक्षःस्थल। जिनके श्रीचरणकमलोंके कोनेमें तिल भर स्थान पाकर ब्रह्मादि देवगण अपनेको कृतार्थ मानते हैं, उनका हृदय श्रीमती विष्णुप्रिया देवीका वास-स्थान हो गया। श्रीगौर-वक्ष-विलासिनीकी जय ! श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीकी जय !

माँ ! अकृति अधम सन्तान पर कृपा करो। माँ ! तुम्हारी कृपाके बिना इस अधम संसार-कीटकी अन्य गति नहीं है। माँ ! अपनी लीला-कथा, तुम्हीं लिखा रही हो। तुम्हारी करुणाकी सीमा नहीं है। मैं

तुम्हारे श्रीचरणारविन्दकी धूलिके कणका प्रभाव प्रत्येक कार्यमें अनुभव करता हूँ और उसीकी आशामें तुम्हारे श्रीपादमूलमें मस्तक नत किये बैठा हूँ। दो माँ! अपने अधम और अकृति सन्तानके मस्तक पर श्रीचरणोंकी धूलि देकर कृतार्थ करो। तुमसे और कुछ मैं नहीं चाहता माँ! चाहता हूँ शिव-विरञ्चि-वन्दित इन रक्तकमलचरणोंमें एक स्थान! माँ! क्या तुम इस अधम सन्तानकी मनोकामना पूर्ण न करोगी? पतितोद्धारिणी! माँ! पतित अधम सन्तानको चरणोंसे दूर न करना।

●

सप्तम अध्याय

वासर-गृहमें* श्रीगौर-विष्णुप्रिया ।

विश्वम्भर विष्णुप्रिया, वासरे बसिला गिया, आइहगण करे अनुमान ।	श्रीगौराङ्ग और विष्णुप्रिया वासर-गृहमें जाकर बैठे तब समागत नारीवृन्द अनुमान करती हैं—
एइ लक्ष्मी विष्णुप्रिया विष्णु विश्वम्भर हआ, पृथिवीते कैल अवधान ।। —चै० मं०	श्रीविष्णु भगवान् निमाई चाँद बनकर और श्रीलक्ष्मीजी विष्णुप्रिया होकर पृथ्वी पर अवतीर्ण हुए हैं ।

● वर-वधूका वासर-गृह जाना ।

कन्यादानका कार्य समाप्त होने पर वर-कन्याको वासर-गृह (कौतुकगृह) में ले जानेकी तैयारी होने लगी। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी श्रीगौराङ्गके वाम भागमें खड़ी हैं। उनके सलज्ज मुख-मण्डल पर हास्यकी छटा है। बालिकाका सरल कोमल हृदय आज आनन्दसे उछल रहा है, उमड़ रहा है। थोड़े-से घूंघटसे मुँह ढँका हुआ है। विविध बहानोंसे कभी-कभी उस घूंघटकी ओटसे प्राणवल्लभके मुख-चन्द्रका दर्शन करके सुखके समुद्रमें निमज्जित हो जाती हैं। नेत्रोंके द्वारा मानो अमृतपान करती हैं और सोचती हैं कि न जाने पूर्वजन्मकी किस तपस्याके फलसे मेरे भाग्यमें इतना सुख लिखा है।

* विवाह संस्कारके उपरान्त वर-वधूको भीतर लेजाकर जिस घरमें बैठा कर कुल-ललनाएँ और वधूकी सखियाँ वरके साथ आमोद-प्रमोदकी कौतुक-पूर्ण बातें करती हैं उसको बंगालमें 'वासर-गृह' कहते हैं।

घोमटा आड़ाले	विष्णुप्रिया देवी ।	श्रीविष्णुप्रिया देवी घूंघटकी
आड़ चोखे हेरे	पति-मुख-छबि ।।	आड़से तिरछे नयनोंसे पतिके मुखकी शोभा देखती हैं ।
भाविछेन मने	कि सुन्दर मुख ।	मनमें सोचती हैं, कैसा सुन्दर
कि तपेते विधि	दिल एत सुख ।।	मुख है ! विधिने किस तपके फल-
	—बलराम दास	स्वरूप यह सुख प्रदान किया है ?

आज बालिकाको प्राण-प्रिय वस्तु प्राप्त हो गयी है ; उसकी साधनाका धन मिल गया है। जिनके लिए वे नित्य तीन बार गङ्गा-स्नान करती थीं, देव-मूर्ति देखते ही भक्ति भावसे प्रणाम करके जिनकी प्राप्तिकी आशासे हाथ जोड़कर प्रार्थना करती थीं, आज वही प्राण-प्रिय वस्तु, वही खोया धन उनके दाहिने खड़ा है, केवल खड़ा ही नहीं है, बल्कि वे उनके अङ्ग-स्पर्शका सुख अनुभव कर रही हैं। पतिका मुख देखने, पतिका अङ्ग-स्पर्श करनेमें कितना सुख होता है, इसको वे ही जानती हैं जिनके पति होते हैं। यह अपूर्व विमल आनन्द, यह सुख-राशि देवीके अन्दर समा नहीं रही है। सुखकी तरङ्गमें वह अपने आपको भूल रही हैं, उनको सुधि नहीं है। पुलकित होनेके कारण उनके अङ्ग अपने वशमें नहीं हैं। आँखोंसे प्रेमाश्रु बह रहे हैं, कुछ भी देख नहीं पा रही हैं। इसी अवस्थामें श्रीगौराङ्गके साथ कौतुक-गृहमें जा रही हैं। उनमें चलनेकी शक्ति नहीं है, इसलिये प्राणवल्लभके अङ्गका सहारा लेकर देवी धीरे-धीरे जा रही हैं। उनको मानो कोई खींचे लिए जा रहा है। उसी समय देवीके दाहिने पैरके अंगूठेमें एक भारी ठेस लगी। ठेसके दारुण आघातसे देवीको होश हुआ। बड़ी व्यथा हुई। देखा कि अंगूठेसे रक्तपात हो रहा है। इस दुर्दैवी घटनाका कारण देवीकी अन्यमनस्कता थी। वे आनन्दमें अधीर होकर चल रही थीं। उनकी वाह्यदृष्टि एकदम लुप्त हो गयी थी। इस कठोर आघातसे देवीको ज्ञान हुआ और साथ ही इसको अमङ्गल सूचक समझकर मनमें बड़ी व्यथा हुई। सशङ्कित होकर प्राणवल्लभके अङ्ग पर ढल पड़ीं। इस ठेस लगनेकी दुर्घटनाको और कोई न जान सका। केवल एक श्रीगौराङ्ग जान पाये। प्रियाको सशङ्कित और कातर देखकर प्रभु व्यथित हुए और क्या किया, सुनिए ! आघातकी औषधि दी। वह औषधि कभी किसीको नहीं

मिलती। प्रभुने अपने दाहिने पैरके अंगूठेसे प्रियाके घायल अंगूठेको दबा रक्खा। प्रभुके पदरजकी महौषधिसे तत्काल रक्त बहना बन्द हो गया, देवीकी सारी वेदना दूर हो गयी। प्रभुकी साङ्केतिक सहानुभूतिसे प्रियाजीका सारा दुःख दूर हो गया। अमङ्गल और सन्देहका कारण दूर हो कर देवीके हृदयमें फ़िर पूर्ववत् आनन्दकी तरङ्ग उठी और वे प्रेमानन्दमें डूबते-उतराते कौतुक-गृहकी ओर चलीं। गोलोकगत महात्मा शिशिर कुमार घोषने अपने 'श्रीअमिय-निमाई-चरित' श्रीग्रन्थमें श्रीगौर-विष्णुप्रियाके तात्कालिक मनके भावको अति सुन्दर भावमें लिपिवद्ध किया है। वह यहाँ उद्धृत किया जाता है।

देवीके मनमें ये भाव थे--

"हे वर! हे नव परिचित! हे आश्रय! मैं विपद्में पड़ी हूँ, मुझको आश्रय दो।"

प्रभुके मनके भाव ये थे--

"हे दुर्बले! हे प्रिये! मैं तो पास ही हूँ। भय क्या है?"

कौतुक गृहमें जाते समय यह ठेस लगनेकी बात श्रीलोचनदास ठाकुरने अपने 'श्रीचैतन्यमङ्गल' ग्रन्थमें नहीं लिखी। महात्मा शिशिर कुमार घोषने अपने 'श्रीअमिय-निमाई-चरित' श्रीग्रन्थमें लिखा है कि श्रीखण्डके गोस्वामी लोगोंका कथन है कि ठाकुर लोचनदासने अपने 'श्रीचैतन्यमङ्गल' ग्रन्थको श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके पास पढ़नेके लिए भेजा था और उस समय इस अति गोपनीय घटनाको जो अपने ग्रन्थमें नहीं लिखा उसके विषयमें दुःख प्रकट करते हुए देवीको एक पत्र लिखा था। श्रीश्रीविष्णुप्रिया-पत्रिका कार्यालयसे प्रकाशित 'श्रीचैतन्यमङ्गल' ग्रन्थकी भूमिकामें ग्रन्थकर्त्ताकी जो जीवनी लिखी हुई है, उससे निम्नलिखित अंश यहाँ उद्धृत किया जाता है। इससे पाठक-पाठिकागण देखेंगे कि यह दुर्दैवी घटना सत्य है तथा इसे प्रभु और देवीके सिवा और कोई नहीं जानता था। प्रभुके द्वारा आदिष्ट होकर ही इस गुह्य बातको श्रीठाकुर लोचनदासने देवीके कर्णगोचर की थी।

जब 'श्रीचैतन्यमङ्गल' लिखा गया था, उस समय श्रीविष्णुप्रिया देवी जीवित थीं। ग्रन्थके प्रचारमें देवीकी अनुमतिकी आवश्यकता समझकर ही उनके पास ग्रन्थ भेजा गया था। ग्रन्थके साथ लोचनदासने श्रीमतीको एक

पत्र भी दिया था। पत्रमें अन्यान्य बातोंके साथ यह भी लिखा था—"माँ! ग्रन्थमें आपके सम्बन्धमें बहुतसे वर्णन दिये गये हैं, परन्तु एक बात अति गुह्य समझकर उल्लेख न कर सका, इसके कारण मुझको अत्यन्त मनोवेदना हो रही है। विवाह करके जब प्रभु आपको कौतुक-गृहमें ले जा रहे थे, उस समय आपके पैरके अंगूठेमें ठेस लगी थी और उससे थोड़ा रक्तपात भी हुआ था। प्रभुने इससे अत्यन्त कातर होकर दक्षिण पदके अपने अंगूठे द्वारा उसे दबा दिया और आपका सारा दुःख तत्काल दूर हो गया। शुभ विवाहकी रात्रिमें ऐसी दुर्घटना हो जानेसे आप मानसिक कष्टसे निर्जीव हो उठीं। तब प्रभु आपको आनन्द सागरमें निमज्जित करते हुए कौतुक-गृहमें ले गये।" इस घटनाको केवल प्रभु और प्रियाजी जानते थे। जगतमें और किसीके जाननेकी संभावना न थी। लोचनदासका पत्र पढ़कर श्रीमतीको आश्चर्य हुआ। उन्होंने कहला भेजा कि जब लोचनदासको यह गुप्त घटना ज्ञात है तो उन्होंने प्रभुके द्वारा आदिष्ट होकर ही यह ग्रन्थ लिखा होगा। इस प्रकार श्रीमतीकी सम्मति प्राप्त कर लोचनदासका ग्रन्थ वैष्णव समाजमें बड़े आदरके साथ गृहीत हुआ।

● वासर-गृहमें सखियोंके साथ

सुसज्जित, पत्र-पुष्पसे परिशोभित, सुगन्धसे परिपूर्ण, दिव्यालोकसे आलोकित अति सुन्दर एक प्रकोष्ठमें वर-कन्याके रात्रि-वासके लिए वासर-शय्या तैयार की गयी थी। बहुमूल्य, मनोहर और सुकोमल विचित्र शिल्पकलासे सुरचित शय्या पर वर-कन्या बैठ गये। श्रीगौराङ्गके वाम-भागमें श्रीमती विष्णुप्रिया देवी बैठीं, मानो वैकुण्ठके श्रीश्रीलक्ष्मी-नारायण मिश्रगृहमें अवतीर्ण हुए हैं।

> बैकुण्ठ हइल राज-पण्डित आवासे।
>
> —चै० भा०

विकसित कमल-दलके समान सुन्दरी कुल-ललनाओंसे कौतुक-गृह भरा है। नदिया-नागरीगण दिव्य वस्त्रालङ्कारोंसे भूषित होकर आज जी भरकर

श्रीगौराङ्गके सङ्ग-सुखका उपभोग कर रही हैं। सबके मुँह पर हँसी है। आँखें भरकर श्रीगौर-विष्णुप्रिया युगल-रूपका दर्शन कर सभी प्रेमोन्मत्त हैं। रसिक-शेखर श्रीगौरसुन्दरके साथ सभी आज एक शय्या पर बैठी हैं। किसी-किसी भाग्यवतीके भाग्यमें श्रीगौराङ्गके श्रीअङ्गके स्पर्शका सुख भी प्राप्त है। देवी विष्णुप्रियाकी सखियाँ नव वर श्रीनिमाई चाँदके साथ नाना प्रकारके हास्य कर रही हैं। कोई देवीको खींच लाकर श्रीगौराङ्गकी गोदमें बैठा रही है। कोई देवीके सिरसे घूँघट उठाकर वेणी बँधे सुन्दर भ्रमरके समान कृष्ण केशपाशको प्रभुके दृष्टिगोचर कर रही है। कोई रसिका बाला प्रभुके श्रीमुखके प्रति देखकर पूछती है—"हाँ जी वर महाशय ! हमारी यह सखी तुम्हें पसन्द तो है ?" श्रीगौराङ्ग सुन्दर यह सुनकर कुछ हँस पड़े। हँसते ही मानो घरमें बिजली कौंध गयी। शत-शत कुल-ललनाओंकी हँसीके साथ श्रीगौराङ्गकी मृदु हँसीकी तुलना नहीं हो सकती। प्राणवल्लभके श्रीमुखपर हँसी देखकर देवीके बिम्बाधरोंपर भी हँसी दीख पड़ी। दोनोंकी दृष्टि एक-दूसरेके मुँहके ऊपर पड़ी। प्रभुकी हँसीमें देवीकी हँसी मिल गयी, मिलकर मणि-काञ्चन संयोग हुआ। जिसने देखा, वही मग्न हो गयी, उठ न सकी, उसी वासर-शय्या पर लेटकर हँसीकी तरङ्गमें गोते खाने लगी। नवद्वीप आज व्रजधाम है, नदिया-नागरियाँ व्रज-बालाएँ हैं। रसिक-शेखर श्रीश्यामसुन्दररूपी श्रीगौराङ्ग सुन्दरको घेर कर बैठी हुई प्रेमोन्मत्त भावसे नाना प्रकारके कौतुक कर रही हैं। श्रीश्रीगौराङ्गका कौतुक-गृह आज व्रज-लीला-स्थल श्रीधामवृन्दावनका रासमण्डल है। व्रजरस-लोलुप पाठक-पाठिकागण एक बार अपने हृदयमें इस नवद्वीप लीलाको अङ्कित कर लें। श्रीगौर-विष्णुप्रियाके लीलारहस्यको समझनेकी चेष्टा करें। श्रीश्रीरास-लीलाका प्रत्यक्ष दर्शन करके हृदयको निर्मल करें। नदिया-नागरीगणके मध्य स्थित श्रीश्रीगौर-विष्णुप्रियाके युगलरूपके दर्शन करके जीवनको सार्थक करें।

कौतुक-गृहमें वर-कन्याके रात्रि-भोजनका आयोजन किया गया। मिश्र-गृहिणी महामाया देवीने जामाताको महासमादर पूर्वक निकट बैठाकर भोजन कराया। श्रीश्रीनिमाई चाँद उपवासी थे, परम आनन्द पूर्वक भोजन करने लगे। भोजनके उपरान्त पुनः वासर-शय्या पर जा बैठे। श्रीमती विष्णु-प्रियादेवीको उनकी माताने जामाताके छोड़े हुये पात्रमें भोजन कराया।

देवी श्रीगौराङ्ग भगवान्‌का प्रसाद पाकर कृतार्थ हुईं। नववधू और नव-वर पुनः एक साथ वासर-शय्या पर बैठे।

भोजन करिया सुख-रात्रि सुमङ्गले।
लक्ष्मी कृष्ण एकत्र हइला कुतुहले॥
—चै० भा०

ठाकुर लोचनदासने लिखा है कि विवाहकी रातमें वर-कन्याने एक साथ भोजन किया था। यही बात ठीक है। ऐसा न होने पर श्रीश्रीरासलीला पूर्ण कैसे होगी? श्रीश्रीगौराङ्ग सुन्दरके लीला-रहस्यका यह प्रथम अङ्क है। श्रीश्रीगौर-विष्णुप्रियाके भोजनावशिष्ट प्रसादको पानेका सौभाग्य जिनको प्राप्त हुआ, उनके सौभाग्यकी सीमा नहीं। शिव-विरञ्चि वाञ्छित श्रीश्री-लक्ष्मीनारायणका भोजनावशेष अधरामृतका लाभ नदियावासियोंके भाग्यमें लिखा था। इसी कारण उनका इतना सम्मान है। नदियावासी और व्रजवासीमें कुछ भी भेद नहीं है। नदियावासीके चरणोंमें कोटि-कोटि प्रणिपात! आपका भाग्य देवताओंके लिए भी वाञ्छनीय है।

विवाह अन्तरे दोंहे,
सनातन द्विज गृहे,
एक काले करिला भोजन।
—चै० मं०

कौतुक-गृहमें विवाहकी रातमें वर-कन्याका एकत्र भोजन करना लोकाचारमें है, पर शास्त्र-विरुद्ध है। श्रीनिमाई पण्डित शास्त्रवेत्ता निष्ठावान् ब्राह्मण थे। उन्होंने शास्त्र-विरुद्ध कार्य क्यों किया? इस बातका उत्तर पहले ही दे चुका हूँ। यह रासलीला जो है। यहाँ भक्त और श्रीभगवान्‌का अबाध संमिश्रण होता है। रासलीलाके निगूढ़ रहस्यको जिन्होंने समझा है, वे ही श्रीश्रीगौर-विष्णुप्रियाके एकत्र भोजनमें व्रजरसका अनुभव करेंगे। पहले कह चुका हूँ कि नवद्वीप-रस और व्रज-रसमें कुछ भी पार्थक्य नहीं है। रसज्ञ पाठक-पाठिकागणको यह बात विस्तारपूर्वक समझानेकी जरूरत नहीं है।

नदिया-नागरीगण श्रीगौराङ्गको कौतुक-गृहमें पाकर प्राणभर और हृदय खोलकर आमोद-प्रमोद कर रही हैं। जिसके मनमें जो अभिलाषा

थी, उसने उसे पूर्ण कर ली। ठाकुर श्रीलोचनदासने नदिया-नागरीकी यह प्रमोद कहानी अति विशदरूपमें वर्णन की है।*

नाना विध जाने कला,
करे करि दिव्य माला,
तुलि देइ विश्वम्भर गले।
हियार हाइवास फेले,
जे आछिल अन्तरे,
मनः कथा घुचाइल तारे॥

नदिया-नागरियां नाना प्रकारकी कलाएँ जानती हैं, एकने हाथमें दिव्य माला लेकर गौराङ्गके गलेमें डाल दी। उसके हृदयके भीतरसे उच्छ्वास निकला और मनकी बात पूरी हो गयी।

केह बोले गोरा मोर,
हइये अन्तर चोर,
नाति जामाइ हस्रो तुमि।
इहार हस्रो भग्निपति,
तोमारे कहये सती,
कह कथा सभे शुनि आमि॥

कोई कहती हैं——"हे मेरे गौर! हृदयके चोर! तुम मेरे नाती जमाई होते हो। तुमको यह सती साध्वी स्त्री कह रही है कि इसके तुम बहनोई होते हो, तुम इससे बातें करो और हम लोग भी सुनें।"

---

*श्री नरहरि सरकार ठाकुरने भी वासर-गृहके आनन्द-विनोदका हृदयग्राही चित्रण इस प्रकार किया है——

नदिया-विनोद-गोरा।
प्रवेशे वासरघरे नवनव
तरुणीर पराण-चोरा॥

नदिया-विनोद-गोरा, नवतरुणीके प्राण-चोर वासर घरमें प्रवेश करते हैं।

कुलवधूगण मनेर उल्लासे
विश्वम्भर विष्णुप्रियारे लइया।
सुमधुर छान्दे, बसाय वासरे,
अनिमिष आखे ओ मुख चा'या॥

कुलवधूगण उल्लसित मनसे विश्वम्भर और विष्णुप्रियाको लेकर वासरघरमें मधुर चंदोयेके नीचे बैठाकर उनके मुखोंको निरखती हुई अधखुली आँखोंसे अनिमेष बनी रहीं अर्थात् आनन्दमें मस्त हो रहीं।

केहो बोले देवर हश्रो, सम्बन्धे शालाज कश्रो, दुइ तत्त्वे सम्बन्ध हैते पारि । तोमार प्रेमार वाणी, शुनिते मधुर ध्वनि, केहो बोले पाशरिते नारि ।।	कोई कहती हैं कि तुम मेरे देवर हो, अथवा सम्बन्धमें मुझे साली कहो, दोनों प्रकारसे हमारा तुम्हारा सम्बन्ध हो सकता है । कोई कहती हैं—तुम्हारी प्रेम-भरी वाणीकी मधुर ध्वनि सुननेके लिये हम यहाँसे हट नहीं पातीं ।
केहो गन्ध चन्दन, अङ्गे करे लेपन, परशिते बाड़े उन्माद । करि नाना पर-सङ्गे, लोलि पड़ये अङ्गे, पुराइल जनमेर साध ।।	कोई गन्ध, चन्दन श्रीअङ्गपर लेपन करती हैं जिसके स्पर्शसे उनका उन्माद बढ़ने लगता है । ऐसे नाना प्रकारके प्रसङ्गों द्वारा उनके अङ्ग पर ढुलक पड़ती हैं और अपने जन्म भरकी अभिलाषा पूर्ण करती हैं ।
परम सुन्दरी जत, सभे हैला उनुमत, बेकत मनेर नाहि कथा । रसेर आवेशे हासे, लोलि पड़े गोरा पाशे, गर गर काम उनमता ।।	जितनी परम सुन्दरी नारियाँ थीं, सभी उन्मत्त हो उठीं, अपने मनकी बात व्यक्त नहीं कर पातीं । रसके आवेशसे हँसती हुई चंचल हो गौरचन्द्रके पास गिर पड़ती हैं ; इस प्रकार कामकी उन्मत्ततामें अस्थिर हो रही हैं ।

केह परशेर साधे, हासि हासि, सुगन्धि चन्दन माखाय अङ्गे ।	कोई-कोई स्पर्शकी इच्छासे मुस्कुराती हुई सुगन्धित चन्दन उनके अङ्ग पर लगाती हैं ।
केह साजाइया ताम्बूल वाटिका, सम्पुट सम्मुखे राखये रङ्गे ।।	कोई ताम्बूल-वाटिका सजाकर रङ्गसे उनके सम्मुख रखती है ।
केह करे कत कौतुक छलेते ढलि पड़े गाय पुलक हिया ।	कोई कितने कौतुक करती हुई छलसे उनके अङ्ग पर ढुलक पड़ती है और हृदयमें पुलकित होती है ।
नरहरि नाथ आगे रहे केह, भङ्गिते कुसुम अंजलि दिया ।।	कोई नरहरिनाथके आगे भङ्गिमा सहित कुसुमाञ्जलि देकर खड़ी है ।

केह, बाटा भरि ताम्बूले,	कोई पानदानमें पान भरकर
देइ प्रभु-पद-मूले,	प्रभुके चरणोंमें समर्पण कर रही हैं,
करे देइ कुसुम अञ्जलि।	और हाथसे कुसुमाञ्जलि दे रही हैं।
तार मनः कथा एइ,	उसके मनका भाव यह है कि जन्म-
जन्म जन्म प्रभु तुजि,	जन्मान्तरमें तुम मेरे प्रभु होओ, आत्म-
आत्म समर्पये इहा बलि।।	समर्पण करके यह बात बोल रही हूँ।

इस प्रकार परम कौतुकपूर्वक तथा विमल प्रेमानन्दमें श्रीगौराङ्ग सुन्दरने श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके साथ नाना प्रकारके आमोद-प्रमोदोंमें लीला समाप्त की। रसिक-शेखर श्रीगौराङ्ग कौतुक-गृहमें भले मानसकी तरह बैठे रहे होंगे, ऐसा नहीं जान पड़ता। नटवर श्रीश्यामसुन्दरके समान वे भी रसिक चूड़ामणि हैं। उन्होंने अपने अक्षय प्रेमरसके भण्डारको एक बारगी खोल दिया। जिसमें जितनी शक्ति थी, उसने उतनी प्रेम-सुधा ले ली। प्रभुने उस दिन प्रेमके भण्डारका अबाधरूपसे वितरण किया था। प्रेमावतार श्रीगौराङ्गने उस दिन दोनों हाथोंसे प्रेम बाँटा था। मिश्र-गृहिणीने परम आनन्दपूर्वक श्रीगौराङ्गकी कौतुक-लीलाको देखकर अपना जीवन सार्थक किया। अपने सौभाग्यकी बात मिश्रजीको सुनाकर उनको भी सुखका भागी बनाया। श्रीवृन्दावनदासने यथार्थ ही कहा है--

सनातन पण्डितेर गोष्ठीर सहिते।	अपनी गोष्ठीके साथ सनातन
जे सुख हइल ताहा के पारे कहिते।।	पण्डितने जो सुख प्राप्त किया उसका वर्णन कौन कर सकता है ?
नग्नजित, जनक, भीष्मक, जाम्बुवन्त।	नग्नजित, जनक, भीष्मक और
पूर्व्वे ताना जे हेन हइला भाग्यवन्त।।	जाम्बवन्त आदि जो भाग्यशाली पुरुष पहले हो चुके हैं--
सेइ भाग्य एबे गोष्ठी सह सनातन।	उन्हींका-सा भाग्य पिछली विष्णु-
पाइलेन पूर्व्वे-विष्णुसेवारे कारण।।	भक्तिके फल-स्वरूप सनातन मिश्रने
--चै० भा०	अपनी गोष्ठीके साथ प्राप्त किया।

इस आनन्दोत्सवमें श्रीगौर-विष्णुप्रिया सारी रात कौतुक-गृहमें जागते रहे। किसीको भी निद्राका आवेश नहीं हुआ। किस प्रकार रात बीत गयी, किसीको पता न चला। सुखकी रात्रिका प्रभात हुआ। *

---

* श्रीनरहरि सरकार ठाकुरने वासरगृहके रात्रि-सुखका वर्णन यों किया है—

वासर घरेते गोराराय। विष्णुप्रिया सह सुखे रजनी गोड़ाय ।।	वासर - घरमें श्रीगौराङ्ग श्रीविष्णुप्रियाके साथ सुख पूर्वक रजनी बिता रहे हैं।
कहिते कौतुक नाहि ओर। गोष्ठी सह सनातन आनन्दे विभोर ।।	कौतुकके वर्णनका कोई अन्त नहीं, गोष्ठीके साथ सनातन आनन्दमें विभोर हैं।
रजनी प्रभाते गौरहरि। हैला हर्ष कुशुण्डिका आदि कर्म्म करि ।।	रातके अंतमें—प्रभातमें—गौरहरि कुशुण्डिका आदि कर्म सम्पादन कर हर्षित हुए।
गमन करिब निजालये। सनातन मिश्र महाशये निवेदये ।।	अपने घर जाने देनेके लिये श्रीगौराङ्गने सनातन मिश्र महाशयसे निवेदन किया।
सनातन जामाता रतने। करिते विदाय धैर्य्य धरये यतने ।।	जामाता-रत्नको विदा करनेको सनातन यत्न पूर्वक धैर्य रख रहे हैं।
कन्यार कत ना प्रबोधिया। दिला विश्वम्भर कर धरि सर्मपिया ।।	कन्याको अनेक प्रबोध देकर हाथ पकड़ कर विश्वम्भरको समर्पण किया।
गौरहरि गमन समये। मान्यगणे परम उल्लासे प्रणमये ।।	गौरहरि प्रस्थानके समय मान्यगणको परम उल्लास पूर्वक प्रणति करते हैं
करिते कि सभार साध। धान्य दुर्व्वा दिया शिरे करे आशीर्व्वाद ।।	और सब लोग अभिलाषा पूर्वक धान्य-दुर्वा सिर पर देकर आशीर्वाद करते हैं।

एइ मत रजनी,
गोड़ाइला गुणमनी,
आइहगण भाग्येर प्रकाशे।
—चै० भा०

आगत कुल-ललनाओंके भाग्यके उदयसे गुणमणि श्रीगौराङ्गने इस प्रकार रात्रि वितायी।

मिश्रप्रिया जामातेरे।
विदाय करिते धैर्य्य धरित ना पारे।।

मिश्रप्रिया जामाताको विदा करते समय धैर्य नहीं रख पा रही हैं।

गोरा गृहे गमन करिते।
विप्रगण वेदध्वनि करे चारि भिते।।

श्रीगौराङ्गके घरके लिये विदा होते समय विप्रगण चारों ओर वेद-ध्वनि करते हैं।

नारीगण देय जयकरे।
नाना वाद्य बाजे भाटे पड़े रायबार।।

नारीगण जयकार देती हैं, नाना प्रकारके बाजे बजते हैं और भाटगण विरुदावली पढ़ते हैं।

नरहरि नाथे निरखिया।
गमन उचित सभे करे शुभ क्रिया।।

नरहरिके नाथको निरख कर गमन समय सब लोग समयोचित शुभ क्रियाएँ करते हैं।

●

अष्टम अध्याय

वर-कन्याकी विदाई और नव वधूका श्वशुर-गृहमें आगमन

तबे देवी विष्णुप्रिया,
तरल हइल हिया,
मुख चाहे जनक जननी।

तब देवी विष्णुप्रियाका हृदय भर आया और माता-पिताके मुखकी ओर देखने लगीं।

सकरुण कण्ठस्वरे,
आत्म निवेदन करे,
अनुनय सविनय वाणी।।
—श्रीचैतन्य-मङ्गल

सकरुण कण्ठस्वरसे अनुनय और सविनय वाणीसे आत्म-निवेदन करने लगीं।

● विदाकी तैयारी

विवाहके दूसरे दिन प्रातःकाल श्रीगौराङ्गने श्वशुरके गृहमें शुभ कुशण्डिका (विवाहकालीन शुभ अग्नि-होत्रादि) कर्म सुसम्पन्न किया। उस दिन प्रभुने स्वजनोंको साथ लेकर श्वशुर-गृहमें मध्याह्न भोजन किया। मिश्र-गृहिणीने नाना प्रकारकी सामग्रीसे जामाताको भोजन कराकर अतुल सुखका अनुभव किया। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने पति-देवताका प्रसाद पाया। अपराह्नमें वर-कन्याकी विदाईका समय आया। शुभ लग्न स्थिर करके विदाईका उद्योग होने लगा। बाजे बजने लगे। नृत्य-गीत होने लगे। चारों ओर जयध्वनि होने लगी। नारियाँ हुलुध्वनि करने लगीं। ब्राह्मण लोग नव परिणीत वर-कन्याको शुभाशीर्वाद देने लगे। पण्डितोंकी मण्डली यात्राके योग्य पुण्य-श्लोक पाठ करने लगी।

तबे रात्रि प्रभाते जे छिल लोकाचार।
सकल करिला सर्व्व भुवनेर सार।।

तब शेष रात्रिके प्रभातकालमें जो लोकाचार थे, सब भुवनोंके पति (श्रीगौराङ्ग) ने वे सब सम्पन्न किये।

अपराह्ने गृहे आसिबार हैल काल । वाद्य नृत्य गीत हैते लागिल विशाल ।।	अपराह्नमें जब घर जानेका समय हुआ तब वाद्य, नृत्य, गीत, आदि विशाल रूपमें आरम्भ हुए ।
चतुर्द्दिके जयध्वनि लागिल हइते । नारीगणे जयकार लागिलेन दिते ।।	चारों ओर जय-ध्वनि होने लगी । नारीगण जय-जयकार देने लगीं ।
विप्रगणे आशीर्व्वाद लागिला करिते । यात्रा योग्य श्लोक सभे लागिला पड़िते ।।	विप्रगण आशीर्वाद देने लगे । यात्राकालके उपयुक्त श्लोक सब पढ़ने लगे ।
ढाक, पड़ा, सानाजि, बरगों, करताल । अन्योन्ये वाद्य करि बाजाय विशाल ।। --चै० भा०	ढाक, पड़ा, शहनाई, बरगा, करताल आदि एक दूसरेकी होड़कर जोरसे बजाये जाने लगे ।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी पितृगृह छोड़कर स्वामीके घर जा रही हैं। मन चञ्चल हो रहा है। बालिका सजल नयनोंसे माता-पिताके मुँहकी ओर ताकती रही। चाची विधुमुखी देवीको बहुत प्यार करती थीं। बालिका उनके मुखकी ओर देखकर रो पड़ी। विधुमुखीने प्यार करके आँचलसे देवीका मुँह पोंछ दिया। देवी फिर माता-पिताके मुखकी ओर सजल-नयनोंसे और स्नेह पूर्वक ताकने लगीं। उस करुण सलज्ज दृष्टिका भाव यह था कि आप सब लोग मिलकर आशीर्वाद दें कि मैं पतिके साथ सुखसे गृहस्थी चलाऊँ। मिश्रजी और उनकी धर्मपत्नी दोनों ही रो रहे हैं। माता-पिताकी आँखोंमें जल देखकर देवी धैर्य धारण न कर सकीं। बालिकाके दोनों नेत्रोंसे झर-झर आँसू बहने लगे। वे रोती हुई माता-पिताके हाथ पकड़ कर कहने लगीं कि शीघ्र ही श्वशुर-गृहसे उन्हें बुला लिया जाय। नव विवाहिता सरला बालिकाका यह समयोचित भाव था। यह भाव बड़ा मधुर है। देवीका भाई-बालक यादव समीप खड़ा रो रहा है। देवी अपने कर-कमलोंसे भाईके नेत्रोंसे आँसू पोंछ रही हैं। इतने शोरगुलमें भी छोटे भाईको उठाकर गोदमें ले लेती हैं। विधुमुखीका पुत्र माधव भी रो रहा है। देवी उसको भी आँसू पोंछ कर गोदमें उठा लेती हैं। दास-दासी सभी रो रहे हैं। सभी उदास मुख खड़े हैं। सबके ऊपर देवीकी

सकरुण दृष्टि पड़ रही है। जगज्जननी माँ आज पिताके घरसे पतिगृह जा रही हैं; पिताके गृहको आनन्दशून्य करके माँ जगदम्बा आज कैलास-धाममें चली हैं। सनातन मिश्र और उनकी गृहिणीने सजल नयनोंसे जामाता और कन्याको धान-दुर्वा देकर शुभाशीर्वाद दिया। मिश्रजी तथा उनकी गृहिणीने देवीको गोदमें लेकर प्रेमपूर्वक मुख चूम लिया।

शिरे देइ दुर्व्वा धान, **करे शुभ कल्याण,** **चिरजीवी आशीर्व्वाद वाणी।**	शिरपर दुर्वा और धान देकर, शुभ कल्याण कामना करते हुये—'चिरंजीवी होओ'—आशीर्वाद वाणी बोलने लगे।
परिजने पूजा करे, **जार जेइ मने सरे,** **जय जय हइल शङ्खध्वनि॥**	परिजनगण जिसके जैसे मनमें आया पूजा करने लगे और जय-ध्वनि एवं शंख-ध्वनि होने लगी।

—चै० मं०

सुसज्जित डोली द्वार पर खड़ी है। मिश्र-गृहमें लोगोंकी भीड़ समा नहीं रही है। सैकड़ों नर-नारियोंके कण्ठसे उत्थित जय-मङ्गल नादसे घरका आङ्गन भर गया। श्रीगौर-विष्णुप्रियाने युगल होकर गुरुजनको प्रणाम किया। अहो! सनातन मिश्रकी गोष्ठीका कैसा सौभाग्य है! जो श्रीश्रीलक्ष्मीनारायणको प्रेम-पाशमें बाँध लिया है। इस शुभ दृश्यको जिसने देखा, जिसके भाग्यमें यह शुभ दर्शन बदा था, उसका जन्म सार्थक हो गया। वे कृतार्थ हो गये। सनातन मिश्र और उनकी पत्नी आनन्दसे गद्-गद होकर टक-टकी लगाकर वर-कन्याकी ओर देख रहे हैं। दोनोंकी आँखोंसे प्रेमाश्रुधारा झर-झर बहने लगी। तब सनातन मिश्रने श्रीगौराङ्गको सम्बोधन करके कातर भावसे कहा—

सनातन द्विजवर, **बोले हिया कातर,** **तोरे आमि कि बलिते जानि।**	द्विजश्रेष्ठ सनातन मिश्रने कातर हृदयसे कहा—आपको कुछ कहना मैं क्या जानूं?
आपनार निजगुणे, **लैले मोर कन्या दाने,** **तोर जोग्य कि वा दिब आमि॥**	आपने अपनी कृपासे मेरी कन्याका दान लिया है, आपके योग्य मैं क्या दे सकता हूँ?

आर निवेदिये कथा, तुमि मोर जामाता, धन्य आमि आमार आलय।	केवल यही निवेदन करना है कि आपको जामाता पाकर मैं धन्य हो गया और मेरा घर धन्य हो गया।
धन्य मोर विष्णुप्रिया, तोर पादपद्म पाञा, इहा बलि गद गद हय ।।	मेरी विष्णुप्रिया आपके पादपद्मोंको पाकर धन्य हो गयी। इतना कहते-कहते उनकी वाणी गद्-गद हो गयी।
वाष्प छल छल आँखि, अरुण वदन देखि, गद गद आध आध बोले।	उनके अरुण वदनको देखकर आँखें आँसुओंसे छल-छला आयीं। स्वर गद्-गद और अस्फुट हो गया।
विष्णुप्रिया कर लञा, विश्वम्भर करे दिया, ढल ढल नयनेर जले ।।	विष्णुप्रियाका हाथ लेकर श्रीगौराङ्गके हाथमें दे देने पर उनकी आँखें जलसे छल-छल भर गयीं।

--चै० मं०

बोलते-बोलते राजपण्डित सनातन मिश्रकी दोनों आँखोंमें छल-छल जल भर आया, प्रेमानन्दमें वाक्-शक्ति अवरुद्ध होने लगी, वे अधिक कुछ बोल न सके। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीका हाथ पकड़कर प्रभुके हाथमें देकर प्रेमाश्रु बरसाने लगे। कुछ मनोवेग शान्त होने पर सनातन मिश्रने अपने पुत्र यादवको लाकर प्रभुके सामने उपस्थित किया। यादव उस समय नितान्त बालक थे। उम्र केवल ८-९ वर्ष की थी। मिश्रजी श्रीगौराङ्गका हाथ पकड़ कर अति विनीत भावसे बोले--"तात विश्वम्भर! मैंने अपने इस अयोग्य पुत्रको तुम्हारे हाथमें समर्पण किया। तुमको इसका सारा भार लेना पड़ेगा।" श्रीगौराङ्गने मुस्कुराते हुए उत्तर दिया--"अच्छा, वही होगा। आपके पुत्रका सारा भार मेरे ऊपर रहा।"

इन्हीं श्रीपाद यादव मिश्रकी सन्तान इस समय श्रीधाम नवद्वीपके गोस्वामी-गण हैं। श्रीश्रीगौराङ्ग-सुन्दरकी कृपासे इनमें प्रत्येककी सम्पन्न अवस्था है। इनके परिवार वर्गको कभी अन्न-वस्त्रका अभाव नहीं हुआ और न होगा। श्रीश्रीगौराङ्गके सालेके वंशज होनेके कारण आज तक ज्येष्ठ मासमें जमाई-षष्ठीके दिन ये लोग प्रभुको षष्ठी-वटक देते हैं। सालेके वंशजोंके ऊपर प्रभुकी अपार कृपा है। प्रभु अपने श्वशुरको दिये हुए अपने वचनका ठीक-ठीक

पालन करते ग्रा रहे हैं। श्रीपाद यादव मिश्रके वंशधरोंको कोई कष्ट नहीं है, किसी वस्तुका ग्रभाव नहीं है। इनके सारे ग्रपराधोंको प्रभु क्षमा करते हैं। इन श्रीपाद यादव मिश्रके वंशके परम भागवत श्रीयुत् शशिभूषण गोस्वामी भागवत-रत्नने स्वलिखित 'श्रीचैतन्य-तत्त्व-दीपिका' ग्रन्थमें ग्रपने वंशका परिचय इस प्रकार दिया है––

सर्व्वेषां पूर्वमस्माकं मिथिलायां निवासतः। मिश्रोपाधि यजुर्व्वेदः श्रेणीतु वैदिकी मता ।।	मेरे ग्रादि पूर्वपुरुष मिथिलाके निवासी थे, मिश्र उनकी उपाधि थी ग्रौर यजुर्वेद था , वैदिकी पद्धति थी,
सूत्रः कात्यायनः सम्यक्- कौथुमानामितीरितः। पाश्चात्य वैदिकास्तस्मात् विख्याता सर्व्वथा वयम् ।।	कात्यायन सूत्र था, कौथुमी शाखा थी। पाश्चात्य वैदिकके नामसे हम प्रख्यात हैं।
ग्रथ क्रमेण शृण्वन्तु तेषां वंशानुकीर्तनम्। तत प्रधान मनु द्यैव वक्तव्यं साम्प्रतं कुलम् ।।	ग्रब क्रमपूर्वक उनकी वंश परंपरा सुनिये। प्रधान पुरुषको लेकर ही इस समय परंपरा कथित होगी।
श्रीसनातन मिश्रस्य वंशं वक्ष्ये विधानतः। पवित्र कीर्तनं धन्यं यत् श्रुत्वा निर्म्मली भवेत् ।।	श्रीसनातन मिश्रके वंशका विधिपूर्वक वर्णन करता हूँ, जिसका नाम-कीर्तन पवित्र ग्रौर धन्य है, जिसे सुनकर मनुष्य निष्पाप हो जाता है।
पुत्रः श्रीयादवाचार्य्यः कन्या विष्णुप्रियास्य च। यामुपायं स्तविधिवत् श्रीशचीनन्दनो हरिः ।।	उनके पुत्र श्रीयादवाचार्य थे ग्रौर कन्या श्रीमती विष्णुप्रिया, जिनके साथ शचीनन्दन श्रीहरि (गौराङ्ग महाप्रभु) का विधिवत् विवाह हुग्रा।
तद् भ्रातृतनयः श्रीमन्- माधवाचार्य्य ईरितः। तत्सुताः पञ्च विख्याताः षष्ठी दासादयः स्मृताः ।।	उनके भतीजे श्रीमन्माधवाचार्य हुए। उनके षष्ठीदास ग्रादि पाँच प्रसिद्ध पुत्र हुए।

तत्र वै जगदीशस्तु- विद्वान् सर्व्व यशस्करः । न्याय शास्त्रार्थ कृत् योसौ किमन्यत् श्रोतुमिच्छथ ।।	उनमें जगदीश बड़े भारी यशस्वी विद्वान् हुए जिन्होंने न्यायशास्त्रमें प्रसिद्धि प्राप्त की और इनके विषयमें कुछ बतलाना व्यर्थ है ।
तद्वंश्यो रामचरण विद्यावाचस्पतिस्ततः । तद् भ्रातृवंशसम्भूतः श्रीयुक्तश्चन्द्रमोहनः ।।	उनके वंशमें रामचरण विद्या-वाचस्पति हुए, उनके भाईके कुलमें श्रीयुक्त चन्द्रमोहन हुए ।
लघीयस्तत्सुत श्रीमत् शशिभूषण शर्म्मणा । गोस्वामिना प्रणीतं वा एतत् संगृह्य यत्नतः ।।	उनके छोटे पुत्रका नाम शशिभूषण शर्मा है जिन्होंने यत्नपूर्वक संग्रह करके इस ग्रन्थको रचा ।

● विदाई और मार्ग-दृश्य

सजल नयनोंसे सनातन मिश्र और उनकी गृहिणी महामाया देवीने कन्याको विदा किया। माता-पिताके नेत्रोंमें जल देखकर देवीके मनमें बड़ा कष्ट हुआ। मनके लायक वर मिला है, पतिके सङ्ग पतिगृह जा रही हैं मनोनुकूल श्वशुरका घर बनायेंगी, यह सारी बातें भूल गयीं। माता-पिताके कातर मुखकी ओर देखकर बालिकाका हृदय आकुल हो गया। दोनों आँखोंसे झर-झर आँसूओंकी धारा बह चली। वक्षःस्थल भीग गया। प्रियाकी आँखोंमें जल देखकर श्रीगौराङ्ग भी व्यथित हुए। परन्तु प्रभुकी व्यथाको कोई ताड़ न सका। प्रभु सभी मान्यजनोंको नमस्कार करके देवीके साथ डोली पर सवार हुए।

तबे प्रभु नमस्करि सर्व्व मान्यगण । लक्ष्मी सङ्गे दोलाय करिला आरोहण ।। —चै० भा०	तब प्रभुने सर्वमान्यगणोंको नमस्कार किया और लक्ष्मी सहित पालकी पर सवार हुए ।

चारों ओर जयध्वनि होने लगी। बाजे बजने लगे। बड़े आनन्दके साथ सब लोग प्रभुकी डोलीके साथ-साथ चले। कुल-ललनाओंकी शुभ

हुलु-ध्वनि तथा शङ्ख-दुन्दुभि-निनादसे दिगन्त ध्वनित हो उठा। नदियाके मार्गके चारों ओर लाखों नर-नारी एकत्रित होकर श्रीगौर-विष्णुप्रियाकी युगल मूर्त्तिका दर्शन कर रहे हैं।*

तबे पँहु शुभक्षणे चढ़िला मनुष्य याने, सर्व्वजन हृदय उल्लास।	तब प्रभु श्रीगौराङ्ग शुभक्षणमें डोली पर चढ़े। सब लोगोंका हृदय उल्लसित हो उठा।
नानाविध वाद्य बाजे शङ्ख दुन्दुभि बाजे, हरिध्वनि परशे आकाश।।	नाना प्रकारके बाजे बजने लगे, शङ्ख-दुन्दुभि बज उठे और हरिध्वनि आकाशको स्पर्श करने लगी।

---

* इसी प्रसंगमें श्रीनरहरि सरकार ठाकुर द्वारा वर्णित शोभा यात्रा एवं गृह-प्रवेशका चित्रण भी मनोमुग्धकारी है—

गोराचाँद विवाह करिया। आइसेन घरे अति उल्लसित हैया।।	गौरचन्द्र विवाह करके अति उल्लसित हो घर आ रहे हैं।
अलखित हैया देवगण। करये सकल पथ पुष्प वर्षण।।	देवगण विना दिखाई दिये सब पथमें पुष्प-वर्षण कर रहे हैं।
सुखेर पाथार नदीयाय। विवाह प्रसङ्गे केह कहे शची माय।।	नदिया नगरी सुख-समुद्रमें मग्न है। कोई शची माँको विवाहके प्रसंग सुनाते हैं।
शुनि महावाद्य कोलाहल। शची देवी हइलेन आनन्दे विह्वल।।	महावाद्यका कोलाहल सुनकर शची देवी आनन्दसे विह्वल हो उठीं।
बाड़ीर बाहिरे शची आइ। पतिव्रतागण सह रहे पथ चाइ।।	शची माँ घरके बाहर आकर पतिव्रतागणको साथ लिये मार्गकी ओर देखती हैं।
सभा सह गोरा धीरे धीरे। आशिया चौदल हैते नामिल दुयारे।।	श्रीगौराङ्ग सबके साथ धीरे-धीरे आकर पालकीसे द्वार पर उतरे।

सम्मुखे नाटुया नाचे,
जार जेवा गुण आछे,
सेइ खाने सब परकाश।

सामने नट नाचने लगे, जिसमें जो कला थी वह वहाँ उसको प्रकट करने लगा।

प्रभु जाय चतुर्द्दोले
जय जय आनन्द रोले,
उतरिला आपन आवास।।
--चै० मं०

प्रभु डोली पर चले जा रहे हैं, जय-जयकारकी आनन्द ध्वनि हो रही है। अपने घर पर जाकर प्रभु डोलीसे उतरे।

नदियाके मार्गमें कुल-ललनाएँ श्रीगौर-विष्णुप्रियाके युगलरूपके दर्शन करके कह रही हैं--"मानो साक्षात् श्रीश्रीलक्ष्मी-नारायण चले जा रहे हैं।" कोई कहता है--"ये श्रीहर-पार्वती जाते हैं।" किसीके नेत्रोंमें श्रीश्रीसीतारामकी

पुत्र पुत्रवधू देखि आइ।
निछिया फेलये कत द्रव्य लेखा नाइ।।

पुत्रवधूको देखकर माता कितना ही द्रव्य न्यौछावर करके फेंकती हैं जिसका कोई लेखा नहीं।

स्नेहे चाँदवदन चुम्बिया।।
प्रवेशे भवने पुत्रवधू पुत्रे लैया।।

चन्द्रवदनको स्नेह पूर्वक चूमकर पुत्रवधू और पुत्रको लेकर भवनमें प्रवेश करती हैं।

विष्णुप्रिया सह विश्वम्भर।
बैसे सिंहासने देखे जत परिकर।।

विष्णुप्रियाके साथ विश्वम्भर सिंहासन पर बैठे हैं, जितने परिकर-वर्ग हैं उन्हें देख रहे हैं।

उलू उलू देइ नारीगण।।
हइला मङ्गलमय सकल भुवन।।

नारीगण हुलु-ध्वनि करती हैं। सम्पूर्ण भुवन मङ्गलमय हो रहा है।

भाट्गणे पड़े राय-बार।
विप्रगण वेद ध्वनि करे अनिवार।।

भाटगण विरुदावली पढ़ते हैं और विप्रगण निरन्तर वेदध्वनि कर रहे हैं।

नाना वाद्य बाजे सभे सुखे।
नरहरि कत ना कहिब एक मुखे।।

नाना प्रकारके बाजे वजते हैं, सब लोग प्रसन्न हैं। नरहरि एक मुखसे कितना वर्णन करे!

मूर्त्ति जागरूक हो रही है। सब कह रहे हैं—"राजपण्डित सनातन मिश्रकी प्रगाढ़ विष्णुभक्तिका फल है जो स्वयं श्रीविष्णु भगवान्ने आकर जामाताके रूपमें उनके ऊपर कृपा की है। मिश्र-गृहिणीको एकान्त मनसे श्रीविष्णुकी भक्ति करनेके फलस्वरूप यह श्रीश्रीविष्णुरूपी जामाता प्राप्त हुआ है। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीका नाम यथार्थ सार्थक हुआ है।"

स्त्रीगण देखिया बोले एइ भाग्यवती। कत जन्म सेविलेन कमला पार्व्वती॥	स्त्रियाँ देखकर कहने लगीं कि इस भाग्यवतीने कितने जन्मों लक्ष्मी और पार्वतीकी सेवाकी है?
केह बोले एइ हेन बुझि हर-गौरी। केह बोले हेन बुझि कमला-श्रीहरि॥	कोई बोली—ये हर-गौरी-से लगते हैं। कोई बोली—ये कमला-श्रीहरि-से लगते हैं।
केह बोले एइ दुइ कामदेव-रति। केह बोले इन्द्र-शची लय मोर मति॥	कोई कहती—ये दोनों कामदेव और रति हैं। कोई कहती कि मुझे तो इन्द्र और शची-से लगते हैं।
केह बोले हेन बुझि रामचन्द्र-सीता। एइ मत बोले सर्व्व सुकृति बणिता॥ —चै० भा०	कोई बोली—ये रामचन्द्र-सीता-से लगते हैं। इस प्रकार सब सुकृति स्त्रियाँ कहने लगीं।

● गृह-प्रवेश

नाना प्रकारकी बहुमूल्य दान-सामग्री, दास-दासी लेकर, स्वजनोंके सङ्ग श्रीगौराङ्ग श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके साथ अपने भवनमें आकर उपस्थित हुए। शची देवी आनन्दसे उत्फुल्ल होकर पड़ोसिनी नवागत स्त्रियोंको साथ लेकर आगे जाकर पुत्र और पुत्रवधूको हाथ पकड़ कर घर लायीं। कुल-नारियोंकी हुलु-ध्वनि तथा शुभ शङ्ख-नादसे शची देवीका गृह-प्राङ्गण ध्वनित हो उठा। इधर बाजा बजानेवाले नाना प्रकारके श्रुति-मधुर वाद्य-निनादसे उपस्थित नर-नारियोंका आनन्द-वर्द्धन करने लगे। सबके ही मुखसे शुभ जय-ध्वनि निकलने लगी। शची देवीके गृहके प्राङ्गणमें मङ्गल-घट स्थापित है। आगन्तुक स्त्रियाँ वरणका डाला और सज्जा लेकर वर-कन्याका शुभ वरण करनेके लिए प्रस्तुत हैं।

शची उल्लसित हञा निर्म्मंच्छन सज्ज लञा ग्राइहगण संहति करिया।	शची देवी उल्लसित होकर, ग्रारतीका सामान लेकर, सब नवागत सोहागिनोंको साथ लेकर--
जय जय मङ्गल पड़े सर्व्वलोके हरि बोले, नाना द्रव्य फेलाय निछिया।।	जय-ध्वनिका मङ्गल-गान कर रही हैं, सब लोग 'हरि-बोल' बोल रहे हैं। नाना द्रव्य न्योछावर कर फेंके जा रहे हैं।
सम्मुखे मङ्गल घट राय-बार पड़े भाट्, वेदध्वनि करये ब्राह्मणे।	सामने मङ्गल-घट है। भाट स्तुति-पाठ करते हैं तथा ब्राह्मणगण वेद-पाठ कर रहे हैं।
विष्णुप्रियार कर धरि श्रीविश्वम्भर हरि गृहे प्रवेशिला शुभक्षणे।।	उसी समय श्रीगौराङ्ग हरिने श्रीविष्णुप्रिया देवीका हाथ पकड़कर शुभ क्षणमें घरमें प्रवेश किया।

--चै० मं०

उस समय शची देवी महान ग्रानन्दमें उन्मत्त हो रही थीं। प्रेमानन्दमें श्रीशची देवीके दोनों नयनोंसे ग्रजस्र प्रेमाश्रुधारा बह रही थी। उन्होंने मानसिक ग्रानन्दसे गद्‌गद होकर नववधूको गोदमें लेकर स्नेहपूर्वक शत-शत वार मुख-चुम्बन किया। श्रीनिमाई चाँदके चन्द्रमुखको पकड़ कर कितनी बार प्यार किया। उससे भी उनके उन्मत्त हृदयको तृप्ति न मिली। शची देवी ग्रानन्दमें ग्रपने ग्रापको भूल गयीं ग्रौर नववधूको गोदमें लेकर उस समय सबके सामने दिल खोलकर नृत्य करने लगीं।

प्रेमानन्दे गरगर कोले करि विश्वम्भर चुम्ब देइ से चाँद वदन।	प्रेमानन्दमें डूबकर विश्वम्भरको गोदीमें लेकर उनके चन्द्रवदन पर चुम्बन प्रदान कर रही हैं।
ग्रानन्दे विभोर हञा ग्राइहगण माझे गिया वधू कोले शचीर नाचन।।	ग्रानन्द-विभोर हो, स्त्रियोंके बीच जाकर वधूको गोदीमें ले शची नाचने लगीं।

--चै० मं०

नववधूको गोदमें लेकर शची देवीको नृत्य करते देखकर सब लोग

चकित हो गये। आनन्द-उत्सवमें महाप्रेमका स्रोत उमड़ पड़ा है। सबको ही नृत्य करनेकी इच्छा हो रही है। जब हृदयमें आनन्द भरपूर हो जाता है, तब वह उछल उठता है और लज्जाका बाँध टूट जाता है। शची देवीकी भी यही दशा हुई। जो हो, कुछ देरके बाद शची देवी प्रकृतिस्थ हुईं। श्रीगौराङ्ग-विष्णुप्रिया एक साथ गृह-प्राङ्गणमें खड़े हुए। युगल-रूप-माधुरीसे चतुर्दिक मानो बिजली कौंध गयी। उपस्थित नर-नारीवृन्द युगल-रूपका दर्शन करके मन्त्र-मुग्धके समान खड़े रहे। शची देवीके गृह-प्राङ्गणमें आज श्रीलक्ष्मी-नारायणका आविर्भाव हुआ है। ग्रन्थकार-रचित यह समयोचित निम्न-लिखित पद्य यहाँ पाठक-पाठिकाओंको उपहार-स्वरूप सर्मापित है——

गौर विष्णुप्रिया, युगल मुरति **अपरूप-रूप-माधुरी।** **नटवर वेशे प्रेमेर आवेशे,** **हासिछे किशोर किशोरी।।**	श्रीश्रीगौर-विष्णुप्रिया युगल-मूर्त्तिकी अपरूप रूप-माधुरी हैं। दोनों किशोर-किशोरी नटवर वेशमें तथा प्रेमके आवेशमें हँस रहे हैं।
गौर-गले माला प्रिया मनोलोभा **पट्टवस्त्र परिधान।** **उत्तरीय दोले मृदुल हिल्लोले,** **हासितेछेन भगवान्।।**	गौरके गलेमें माला है, प्रियाजी मनोहर रेश्मी वस्त्र पहने हैं। मृदुल हिल्लोलसे चादर डोलती है। श्रीभगवान् गौरचन्द्र हँस रहे हैं।
भालेते तिलक कण्ठे मालिका, **चिकनिया चाँचर केश।** **वामे विष्णुप्रिया कनक प्रतिमा,** **प्रभुर नाट्या वेश।।**	भाल पर तिलक है, कण्ठमें माला है, चिकने घुँघराले बाल हैं। वाम भागमें कनककी प्रतिमा-सी श्रीविष्णुप्रिया हैं। प्रभुका नटवर वेश है।
चन्द्रमुखी बाला रूपेर माधुरी, **उजल करिया धरणी।** **वामेते दाँडाये सलाज नयाने,** **हासिछे गौर-घरणी।।**	चन्द्रमुखी बाला विष्णुप्रिया अपने रूपकी माधुरीसे पृथ्वीको सुशोभित कर रही हैं। वाम भागमें खड़ी लजीले नेत्रोंसे गौर-गृहिणी मुस्कुरा रही हैं।

अङ्ग ढल ढल नवीना किशोरी, **परिधाने पीताम्बर ।।**	उस नवीना किशोरीके अङ्ग-अङ्ग दीप्त हो रहे हैं और उसने पीताम्बर पहना है ।
भूषणे भूषिता हसित वदने, **आलो करियाछे घर ।।**	भूषणोंसे आभूषित हो हँसते हुए मुखसे घरको आलोकित कर रही हैं ।
गौर-चरणे दुलिछे नुपुर, **प्रियार चरणे मल ।**	गौरके चरणोंमें नूपुर और प्रियाके चरणोंमें पायजेब सुशोभित है ।
अलक्तक रागे रञ्जित श्रीपाद, **लहरी खेले ढल ढल ।।**	श्रीगौराङ्गके श्रीचरण अलक्तक रङ्गसे रँगे देदीप्यमान हो रहे हैं ।

शची देवी वर-कन्याको वरण करके घरमें ले गयीं । श्रीगौर-विष्णुप्रिया युगलमूर्ति अपने घरमें बैठीं । चारों ओर मङ्गल-सूचक हरि-ध्वनि उठी तथा पुर-नारियोंकी हुलु-ध्वनिसे शची देवीका घर भर गया । घरकी लक्ष्मी घरमें बैठीं । श्रीश्रीलक्ष्मी-नारायणका मिलन पूर्ण हुआ ।

गृहे आसि वसिलेन लक्ष्मी-नारायण ।
जयध्वनि मय हइल सकल भुवन ।।
--चै० भा०

उस समय भाट, बाजेवाले, नटों और ब्राह्मणोंकी विदाई आरम्भ हुई । प्रभुने स्वयं सबको यथायोग्य धन और वस्त्र दान करके परितोष किया ।

तबे जत नट भाट् भिक्षुकगणेरे । **तूषिलेन वस्त्र-धन-वचने सभारे ।।**	तब जितने नट, भाट और भिक्षुक-गण थे सबको वस्त्र, धन और मीठे वचनोंसे तुष्ट किया ।
विप्रगण आप्तगण सभारे प्रत्येके । **आपने ईश्वर वस्त्र दिलेन कौतुके ।।** **--चै० भा०**	जितने विप्रगण और आप्तगण थे सबको--प्रत्येकको--स्वयं गौर भगवान्ने प्रसन्नता पूर्वक वस्त्र दिये ।

महाभाग्यवान बुद्धिमन्त खाँको प्रभुने आलिङ्गन प्रदान कर कृतार्थ किया । उनके आनन्दका पारावार न रहा । वे प्रभुकी कृपा प्राप्त कर आनन्दमें अपने आपको भूल गये और प्रभुके श्रीमुखचन्द्रकी ओर अनिमेष दृष्टिसे देखते रह गये । मनमें यह भाव था--"प्रभो ! आप इस दासको भूल न जाना ।"

प्रभु मन्द-मन्द मुस्कुरा उठे। उस मधुर हँसीका मर्म यह था—"ऐसा भी क्या होता है? क्या मैं तुम्हें सहज ही भूल सकता हूँ? तुम तो मेरे विवाहके पण्डा हो।" बुद्धिमन्त खाँ रोते-रोते प्रभुके चरणोंमें गिर पड़े। आनन्दाश्रुओंसे उनके दोनों नेत्र प्लावित हो उठे।

बुद्धिमन्त खाने प्रभु दिला आलिङ्गन।
ताहार आनन्द अति अकथ्य कथन॥
—चै० भा०

प्रभुके इस विवाहमें नवद्वीप वासियोंको जो आनन्द हुआ, वह वर्णनातीत है। इस शुभ विवाहको जिन्होंने देखा, वे सर्व पापोंसे मुक्त हो गये। श्रीगौर-विष्णुप्रियाके शुभ विवाहोत्सवके वर्णनकी कथा जो भक्ति पूर्वक श्रवण अथवा पाठ करते हैं, वे श्रीप्रभुके सङ्ग विहार करते हैं—यह ठाकुर श्रीवृन्दावन दासकी उक्ति है—

कि आनन्द हइल से अकथ्य कथन।
से महिमा कोन जने करिबे वर्णन॥

जो आनन्द हुआ, वह वर्णनातीत है। उसकी महिमाका वर्णन कौन जन कर सकेगा?

जाँहार मूर्त्तिर बिभा देखिले नयने।
सर्व्व पाप युक्त जाय वैकुण्ठ भुवने॥

जिनकी मूर्तिका विवाह आँखोंसे देखने पर सब पापोंसे युक्त मनुष्य भी पाप-रहित होकर वैकुण्ठ लोकमें जाता है—

से प्रभुर बिभा लोक देखये साक्षाते।
तेञि तान् नाम दयामय दीननाथे॥

उन प्रभुका विवाह लोगोंने साक्षात् देखा। इसीसे उनका नाम दयामय दीनानाथ पड़ा।

ए सब ईश्वरलीला जे पड़े जे शुने।
से अवश्य विहरये गौरचन्द्र सने॥
—चै० भा०

श्रीप्रभुकी यह लीला जो पढ़ता-सुनता है, वह निश्चय ही श्रीगौरचन्द्रके साथ विहार करता है।

●

नवम अध्याय

विवाहके बाद श्रीश्रीगौर-विष्णुप्रिया

सचन्द्रिमा रजनी चन्द्रमुखी बाला।	चाँदनी खिली रात है। हे
सुस्वर सङ्गीते सइ गाव गौरलीला ।।	चन्द्रमुखी सजनी! मधुर स्वरसे
--चैतन्य मङ्गल।	गौर-लीला-सङ्गीत गाओ।

● शची मांके घरकी शोभा

शची देवीके घर आज महान आनन्दोत्सव है। कुल-कामिनीगण दल बाँध-बाँध कर नववधूको देखने आ रही हैं। घूँघट काढ़े श्रीमती विष्णुप्रिया देवी नये-नये वस्त्रालङ्कारोंसे विभूषित होकर नित्य नवीन मनोहर शोभा धारण करके सबके मनको हर रही हैं। सदा ही उनका सुन्दर मुखमण्डल लज्जासे अवनत रहता है और दृष्टि नीचेकी ओर रहती है। उनके श्रीअङ्गोंकी शोभासे शची देवीका गृह आलोकित हो रहा है। इस अनिन्दित लज्जासे अवनत मुख-चन्द्रको जो एक बार देख लेती हैं, वे उसे फिर भूल नहीं सकतीं। देवीके सर्वाङ्गकी लावण्य-छटासे दसों दिशाएँ सुशोभित हो रही हैं। पड़ोसकी समान वयसकी बालिकाओंके साथ देवी दो-चार बातें कर लेती हैं। उनके स्वरको जो सुनती हैं, उनके श्रवणोंमें मानो मधु-वृष्टि हो जाती है। विवाहके बाद देवीकी लज्जाशीलता और भी बढ़ गयी है। इससे उनकी स्वाभाविक सौन्दर्य-छटा सौ गुनी हो गयी है। स्वाभाविक नम्रता और धीर प्रकृतिके साथ पतिके सङ्गके सुखसे उत्पन्न नवोढ़ा बालाकी लज्जाशीलताने मिश्रित होकर एक अपरूप शोभा धारण कर रक्खी है। देवी अब गृह-वधू हो गयी हैं, अब पिताके घरकी कन्या नहीं हैं। इस बातको उन्होंने समझ लिया है। शची देवीके प्रेम और दुलारसे श्रीविष्णुप्रिया देवी अपने पितृगृहकी बातें भूल गई हैं। प्राणवल्लभको सर्वदा सामने देख पाती हैं, समय-समय पर आँखें चार भी हो जाती हैं इस मिलनके सुखसे प्रभु और देवीके हृदयमें सुखका स्रोत फूट पड़ा है, प्राण आनन्दसे नाच रहे हैं। दोनों

ही एक दूसरेको देखकर मृदु-मृदु मुस्कान करते हैं। देवीकी मुस्कानका मर्म यह है––"प्राण-वल्लभ! हृदय-धन! आपको मैंने पाया है। मैं आपकी हूँ। देखिए कहीं भूल न जाइयेगा।" प्रभुकी मुस्कानका मर्म यह है––"प्रिये! हृदयेश्वरी! तुमको छोड़कर मैं अन्य किसीको नहीं जानता। मैं तुम्हारा-ही हूँ।" श्रीगौराङ्ग प्रियाके मुखचन्द्रकी ओरसे दृष्टि नहीं हटा पा रहे हैं। मधुमक्षिका जैसे मधुचक्रसे हटना नहीं चाहती, वैसे प्रियाके वदन-सुधा-लोलुप श्रीगौराङ्गके नयनद्वय श्रीमतीके मुखचन्द्रके दर्शनके सुखको छोड़कर दूसरी ओर जाना नहीं चाहते। देवीके विषयमें भी यही बात है। परन्तु वे नवोढ़ा वधू हैं, उनको बहुत संकोच पूर्वक चलना पड़ता है। परन्तु प्रभु घूम फिर कर सैकड़ों बार घरमें आते हैं। जिस घरमें देवी बैठी हैं, नाना प्रकारके बहाने उस घरमें बारम्बार प्रवेश करके प्रियाके मुखचन्द्रके दर्शन करके आनन्दमें डूबे रहते हैं। प्रभु और प्रियाजीकी तात्कालिक अवस्थाका बलरामदासजीने अपने एक पद्यमें अति सुन्दरतापूर्वक वर्णन किया है। वह यहाँ उद्धृत किया जाता है––

नवीना प्रियाजी केवल यौवन उदय।
लज्जाय मुगध धनी अधोमुखे रय॥
चञ्चल चरणे गृह-कोणेते लुकाय।
श्रीगौराङ्ग गृह माझे खूँजिया बेड़ाय॥

प्रभुके मुखपर आज हँसी समाती नहीं है। प्रगाढ़ उत्साह पूर्वक आज उन्होंने गृह-कार्यमें मन लगाया हैं।

● पुष्प-शय्या

आज प्रभुके घर शत-शत नदिया-नागरियोंका समागम हुआ है। कारण यह है कि आज रात्रिमें प्रभुकी फूल-सज्जा होगी। श्रीगौराङ्गका शयन-गृह नाना प्रकारके पत्र-पुष्पोंसे परिशोभित है। प्रभुके शयनके लिए दुग्ध-फेन-सदृश शय्या प्रस्तुत हुई है। प्रभुके सखागणने शत-शत फूलोंके हार भेंटमें भेजे हैं। श्रीमतीके लिए उनकी सखियोंने फूलोंकी मालाएँ, फूलोंके हार, फूलोंकी सींथी, फूलोंके बाजूवन्द, फूलोंके कङ्गन, फूलोंकी वालियाँ आदि राशि-राशि फूलोंकी डालिया भेजी हैं। काञ्चना प्रभृति श्रीमतीकी अन्त-रङ्गा सखियोंने देवीको फूलोंके साजसे सजाकर श्रीगौराङ्गके वामभागमें बैठाया

श्रीगौराङ्ग-विष्णुप्रियाकी पुष्प-शय्या

है। उन्होंने श्रीगौराङ्गको भी फूलोंके साजसे सज्जित किया है। सुगन्धित चन्दन, केशर और कस्तूरिकाकी गन्धसे फूल-शय्याका गृह आमोदित हो रहा है। फूलोंके साजसे सज्जित श्रीगौर-विष्णुप्रियाका युगलरूप देखकर नदिया-वासी आनन्दसे विह्वल हो रहे हैं। सौभाग्यवती नदिया नागरीवृन्द श्रीगौर-विष्णुप्रियाके ऊपर पुष्प फेंक रही हैं, उनके साथ प्रेमाविष्ट होकर हास्य-कौतुक कर रही हैं। आँखें भर कर नदियावासी फूल-साजसे सज्जित श्रीगौर-विष्णुप्रियाके नयनानन्दकर अपरूप युगल-रूपको देखकर अपने मनुष्य-जीवनको सफल कर रहे हैं। ग्रन्थकार-रचित समयोचित एक पद्य यहाँ उद्धृत किया जाता है--

गौर हे !

(तुमि) फूल-साजे आजि
साजियाछ भाल,
नयन भरिया देखि।

हे गौराङ्ग! तुम आज फूलोंके साजमें खूब सजे हो, मैं आँखें भर कर तुम्हें देख रहा हूँ।

युगले बसेछ
फुलसाजे साजि,
(आमि) कि बले तोमाय डाकि ।।

तुम युगलमूर्त्ति फूलोंके साजमें सजकर बैठे हो, क्या कह कर मैं तुमको पुकारूँ ?

जगत - जननी
वामेते तोमार,
फुलेर मुकुट माथे।

तुम्हारे बाम भागमें फूलोंका मुकुट सिर पर पहने जगज्जननी श्रीविष्णुप्रिया विराज रही हैं।

युगल - मिलन
मिलियाछे भाल,
मधुर चाँदिनी राते ।।

इस मधुर चाँदनी रातमें सुन्दर युगल-मिलन हुआ है।

(तुमि) वृन्दावन-धन
शची-नन्दन,
ए तव रासेर लीला।

हे शचीनन्दन तुम श्रीवृन्दावनके धन श्रीकृष्ण हो और यह तुम्हारी रास-लीला है।

चक्षु नाहि जार
से देखे केवल,
भव-संसारेर खेला ।।

जिसके आँखें नहीं हैं वह केवल तुम्हारी सांसारिक क्रीड़ाको देखता है (तुम्हें नहीं पहचानता)।

गन्थकार-रचित नदिया-नागरीकी उक्तिका एक और पद यहाँ सन्निविष्ट है—

सखि !	
(आजि) फुल-साजे साजाइब विष्णुप्रिया-गोरा । (ताइ) एनेछि कुसुम-डालि मन-साधे मोरा ।।	हे सखि ! आज श्रीविष्णुप्रिया-गौराङ्गको मैं फूलोंके साजसे सजाऊँगी, इसी हेतु अपने मन चाहे पुष्पोंके उपहार लायी हूँ ।
गले दे मालती माला, हाते दे फुलेर बाला, काने दे कदम्ब फुल, माथे कृष्ण-चूड़ा । साजा लो फुलेर साजे नदीयार गोरा ।।	गलेमें मालती फूलोंकी माला, हाथोंमें फूलोंका बलय, कानोंमें कदम्बके फूल, सिर पर कृष्णचूड़ा देकर, फूलोंके साजसे नदियाके गौर चन्द्रको सजाया है ।
अशोकेर कलि गाँथि करेछि नुपुर । ताहाते बाँधिया दिछि चम्पक झुमुर ।।	अशोककी कली गूंथकर नूपुर बनाए हैं, उनमें चम्पकके फूलका झूमर बाँध दिया है ।
कटितटे गाँदा हार, बाहुते बकुल ताड़, पद्म पुष्प पदतले दाओ लो प्रचुर । सर्व्व अङ्ग क'र सखि ! पुष्पे भरपूर ।।	कमरमें गेंदेका हार, बाहुमें बकुल पुष्पोंका ताटङ्क और पदतलमें वहुतसे पद्मपुष्प सजा दो । हे सखि! इस प्रकार सब अङ्गोंको पुष्पोंसे भरपूर कर दो ।
साजा लो शयनगृह पुष्प थरे थरे । बसाब ताहार माझे शची-दुलालेरे ।।	जगह-जगह पर पुष्प लगाकर शयन-गृहको सजाया है और उसके बीचमें शचीके दुलाल गौरचन्द्रको बैठाऊँगी ।
गोलाप टगर चाँपा, तुलि' लइ ह'ते खोंपा, छुड़िया मारिव सखि! गोरा-देह'परे ! नदीया-नागरे भज कुसुमेर-शरे ।।	गुलाब, तगर और चम्पा पुष्पोंको उनके सिरके केशपाशमें सजा दो । हे सखि ! मैं गौर-चन्द्रकी देह पर फूल फेंक-फेंक कर मारूँगी । इस तरह नदिया-नागरको कुसुमशरसे भजो ।

सतदल पद्म दिये साजाब चरण। **जेखाने जा' साजे दिब फुल आभरण।।**	मैं शतदल पद्मसे उनके चरणोंका शृंगार करूँगी। जहाँ जो सजेंगे वहाँ वैसे ही पुष्पोंके आभूषण दूँगी।
सुगन्धि चन्दन दिया, **फुल डालि साजाइया,** **गोरार चरणे दिव करिया जतन।** **पराणेर धन गोरा परम रतन।।**	सुगन्धित चन्दन देकर, फूलोंके उपहार सजाकर यत्नपूर्वक गौरचन्द्रके चरणोंमें भेंट करूँगी। गौरचन्द्र हमारे प्राणोंके प्रिय परम धन हैं।

● शची देवीके घर भोज

शची देवीके घर बड़े समारोहके साथ दूसरे दिन पाक-स्पर्शका भोज हुआ। नवद्वीपके सब लोगोंको निमन्त्रण दिया गया। प्रचुर परिमाणमें भोजनके लिए पदार्थ तैयार किये गये। कहाँसे भारके भार दही, दूध, घी, मिष्टान्न आदि आ रहे हैं, किसीको कुछ ज्ञात नहीं। शची देवीका भण्डार भोज्य सामग्रीसे परिपूर्ण हो गया है। आत्मीय परिवारके लोगोंसे घर भरा है। कुलकी स्त्रियाँ पाकशालामें भोजन तैयार कर रही हैं। शची देवी स्वयं पाकशालामें हैं। केवल हैं ही नहीं, वे स्वयं भी भोजन बनानेमें रत हैं। यह कार्य उनको बहुत प्रिय है। भोजन बनाना उनको बहुत अच्छा लगता है। श्रीनिमाई चाँदका आज "बहू-भात" है। आज उनके घर ब्राह्मण, वैष्णव लोग भोजन करेंगे। श्रीशची देवीके आनन्दकी सीमा नहीं है। श्रीनिमाई चाँदने स्वयं अतिथि अभ्यागतोंके सत्कारका भार ग्रहण किया है। अपने हाथों भोजन परोस रहे हैं। सारा काम अत्यन्त सुचारु-रूपेण तथा विधि-पूर्वक सम्पन्न हो रहा है। आत्मीय---कुटुम्बके लोग जब यथा समय भोजन करने बैठे तो श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने बहुमूल्य वस्त्रालङ्कारोंसे भूषित होकर मृदु पद-विक्षेप करते हुए अपने श्रीहाथोंमें अन्न-व्यञ्जनकी थाली लेकर कुछ विशिष्ट आत्मीय कुटुम्बीजनोंके पात्रोंमें अन्न-व्यञ्जन परोस कर शुभ पाक-स्पर्श लोकाचारको सुसम्पन्न किया। जिनके पात्रमें देवीके हाथसे अन्न-व्यञ्जन परोसा गया, वे अमृत भोजन करके कृतार्थ हुए। यह सौभाग्य सबको प्राप्त न हुआ, अतएव बहुत-से लोगोंको इसका दुःख रहा।

● श्वशुर-गृहमें श्रीविष्णुप्रिया और सखी काञ्चना

श्रीगौर-विष्णुप्रियाका शुभ परिणय-कार्य सुसम्पन्न हो गया। दूर देशसे आये हुए आत्मीय स्वजन लोग अपने-अपने घर गये। श्रीश्रीअद्वैत प्रभु और सीता देवी श्रीगौराङ्गके शुभ विवाहमें नवद्वीप आये थे। वे भी शान्तिपुर लौट गये। श्वशुरके घर कुछ दिनों निवासकालमें श्रीमती विष्णु-प्रियाको दो-एक मर्मी सखियाँ मिलीं। उनमें श्रीमती काञ्चना नामकी सखी विष्णुप्रिया देवीकी बड़ी अनुरागिणी हुई। काञ्चना शची देवीकी किसी पड़ोसिनकी कन्या थी, जातिकी ब्राह्मण थी और आयु देवीके अनुरूप थी तथा बड़ी चतुरा थी, सदा ही हास्यमुख रहती। उसके मुँहको कभी किसीने म्लान नहीं देखा। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी काञ्चनाको अपने मनकी बात कहती थीं। काञ्चना भी देवीसे कोई बात नहीं छिपाती थी। एकान्तमें बैठकर दोनों सखियाँ बहुत बातें करती थीं। श्रीगौराङ्ग कभी-कभी छिपकर दोनों सखियोंके कथोपकथनको सुना करते थे और सुनकर उच्च-स्वरसे हँस पड़ते थे, जिससे सखियाँ लज्जासे उस स्थानको छोड़कर दूसरी जगह भाग जातीं। श्रीशची देवी देखकर हँसती और कभी-कभी निमाई चाँदको कुछ धमकाती हुई कहतीं––"बेटा निमाई! तुम उनको क्यों परेशान करते हो? दोनों मिलकर खूब खेल रही थीं, तुमने क्यों उनका खेल भङ्ग कर दिया?" प्रभु इस बातका उत्तर न देकर हँसते हुए भाग जाते।

● सनातन मिश्रका विष्णुप्रिया और निमाईको अपने घर ले जाना

विवाहके कुछ दिनों बाद राजपण्डित सनातन मिश्र कन्या और जामाताको अपने घर लानेके लिए शची देवीके घर गये। जाते समय श्रीमती विष्णुप्रिया देवी, शची देवीको प्रणाम करते हुए, कुछ रो पड़ीं। यह दृश्य साधारण लोगोंकी आँखोंमें अस्वाभाविक जंचेगा, परन्तु यह यथार्थ घटना है। कारण यह है कि शची देवीके प्रति श्रीमतीका पहलेसे ही एक स्वाभाविक स्नेहाकर्षण था, जिससे पाठक-पाठिकागण अवश्य अवगत हैं। पुत्रवधूको विदा करते समय शची देवी व्याकुल होकर रो पड़ीं और श्रीमतीको गोदमें लेकर सैकड़ों वार मुख-चुम्बन किया और आशीर्वाद देती हुई बोलीं––"बेटी! तुम मेरे घरको अँधेरा करके जा रही हो। मैं अति शीघ्र ही तुमको बुला लाऊँगी। तुमको छोड़कर मैं रह नहीं सकती।" देवीका मन सुस्थिर हो गया।

निमाई पण्डित सपत्नीक श्वशुरालय गये। कुछ दिनों वहाँ श्वशुरके घर सुखोपभोग करके अपने घर लौट आये। सनातन मिश्रने बड़े सत्कारके साथ तथा परम आदर पूर्वक जामाताके साथ कई दिनों तक नाना प्रकारकी शास्त्रालोचनामें सुखसे समय व्यतीत किया। श्वशुर और जामाता जब एकत्र बैठकर शास्त्रालाप करते, तो नवद्वीपकी विशिष्ट पण्डित-मण्डली और पुराने विष्णुभक्तजन वहाँ उपस्थित होते। प्रभुके श्रीमुखसे शास्त्रोंकी व्याख्या सुनकर सभी महा आनन्दमें मग्न हो जाते। प्रभु जब कृष्णकथा कहते थे तो उपस्थित श्रोतृवर्ग आनन्दसे विह्वल हो टक टकी लगा प्रभुके मुखचन्द्रकी ओर ताकते रहते। सनातन मिश्रके आनन्दकी सीमा नहीं रहती। इधर मिश्र-गृहिणी महामाया देवी जामाताके लिए चर्व्य-चोष्य-लेह्य-पेय नाना प्रकारके व्यञ्जन अपने हाथोंसे तैयार करके प्रभुको अपने सामने बैठाकर अपने मनकी साधसे भोजन करातीं। भोजन करते समय प्रभु कुछ भी लज्जा नहीं करते और परम सुखसे तृप्तिपूर्वक भोजन करते। मिश्रगृहिणी इससे वहुत सुखी होतीं। अन्तःपुरमें भी प्रभु कुछ समय बिताते थे और श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी बाल्य-सखियोंके साथ कौतुक और आमोद करनेमें भी कमी नहीं करते थे। इससे श्रीमतीके मनमें बड़ा सुख होता था। छिपकर आड़से महामाया देवी और विधुमुखी श्रीगौर-विष्णुप्रियाके कौतुक रहस्यको देखकर अपने नेत्रोंको सफल करती थीं। श्रीमती सखियोंके साथ एकत्र बैठकर प्राण-वल्लभके सङ्ग नाना प्रकारके कौतुक करती थीं। उस प्रेम-कौतुककी लहर प्रभुके हृदयमें उठती थी। श्रीमतीकी सखियाँ बीच-बीचमें प्रभुका हाथ पकड़कर उनको अपने बीचमें बैठाती थीं। उस समय श्रीगौराङ्ग बाल-सखियोंकी उस सभाके उज्ज्वल तारागणसे आवेष्टित चन्द्र-मण्डलके समान सुशोभित होते थे। प्रभुके श्रीअङ्गकी छटासे दिनकर मानो साधारण दीपके समान निष्प्रभ जान पड़ता था। उनकी वह दिव्य लावण्य-मयी सुवलित देह मानो कोटि कन्दर्पोंकी अपेक्षा भी मनोहर थी। श्रीअङ्गकी विनोद-छटामें मानो लक्ष-लक्ष चन्द्रोंका विकास हो रहा था।

अङ्गेर छटाय जेन,	उनके श्रीअङ्गकी छटाके सामने
दिनकर प्रदीप हेन,	दिनकर मानो प्रदीप जैसा लगता है, उसी
ताहे लीला रसेर विलास।	अङ्गसे वे लीला-रसका विलास करते हैं।

कोटि कुसुम धनु,	उनके आनन्द-दायक शरीरकी कान्ति
जिनिञा विनोद तनु,	कोटि-कोटि कन्दर्पोंको लज्जित करती है,
ताहे करे प्रेमेर विकाश ।।	जिसके द्वारा वे प्रेमका विकास करते हैं।
कामिनी - मोहन - वेश,	कामिनियोंको मुग्ध करनेवाले
हेरिते भूलिल देश,	उनके वेशको देखकर कामदेव चकित-
मदन वेदन हेरि पाय।	भ्रमित हो अपने स्थानको भूल जाता है। उसे वेदना होने लगती है।
कि दिब उपमा तार	मैं उनकी उपमा किससे दूँ? ऐसे
करुणा - विग्रह - सार,	रूपवान मेरे गौरचन्द्र करुणाकी मूर्त्ति
हेन रूप मोर गोराराय ।।	हैं।
--चै० मं०	

प्रेमानन्दमें प्रसन्न चित्तसे श्रीगौर-विष्णुप्रियाने कुछ दिन इस प्रकार सनातन मिश्रके घर नित्य रास-लीला करते हुए उसे पवित्र किया। मिश्रजी और उनकी गृहिणीके मनकी साध पूरी करके श्रीगौराङ्ग अपने घर आये। भक्त-वाञ्छा-कल्पतरु श्रीभगवान्ने भक्तकी मनोकामना पूरी की। श्वशुरके घरसे विदा होते समय प्रभुके मुखचन्द्र पर विषादकी छाया दीख पड़ी। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी आखोंमें जल आ गया। बालिकाका हृदय व्याकुल हो उठा। मिश्र महोदय और उनकी गृहिणी जामाताको विदा करके उस दिन घरसे बाहर नहीं निकले, दारुण मनःकष्टसे वह दिन बिताया। श्रीमतीकी सखियाँ म्लानमुखी होकर श्रीगौराङ्गकी ओर एक दृष्टिसे देखती रहीं। श्रीगौराङ्गने एक बार सकरुण दृष्टिसे सबकी ओर देखकर अपने घरको प्रस्थान किया। इसमें उनका हृदय भी व्याकुल हुआ, क्योंकि प्रियाको छोड़कर उन्हें आना पड़ा।

●

दशम अध्याय

स्वामीके घर श्रीमती विष्णुप्रिया

'सर्व्व-सुखमय हइल शचीर आवास । —श्रीचैतन्य मङ्गल ।	शची देवीका घर सब सुखोंसे परिपूर्ण हो गया ।

● निमाईके पाण्डित्यकी प्रख्याति

विवाहके वाद श्रीनिमाई पण्डितने अध्यापन कार्यमें मन लगाया। उस समय वे नवद्वीपमें सर्वश्रेष्ठ अध्यापक माने जाते थे। अध्यापन ही उनका सर्व-प्रधान कार्य था। उनकी पाठशालामें छात्र ठसाठस भरे थे। श्रीनिमाई पण्डितकी अवस्था उस समय केवल बीस वर्षकी थी। इतनी अल्प अवस्थामें इतना ऊँचा पाण्डित्य कभी किसीके भाग्यमें नहीं हुआ। उनके प्रगाढ़ पाण्डित्य और यश-गौरवसे समस्त नवद्वीपवासी मुग्ध थे। इस अल्पावस्थामें ही वे जगद्विख्यात पण्डितके रूपमें सबमें मान्य थे। उनके अगाध पाण्डित्यका परिचय प्राप्त कर दूर देशसे छात्रवृन्द आकर उनकी पाठशालामें एकत्र हुए थे। सभी प्रभुकी कृपाके भिखारी थे। सभी छात्र उनके अनुग्रहकी कामना करते थे। सभी चाहते थे कि उनकी पाठशालामें पढ़ें।

कत वा प्रभुर शिष्य तार अन्त नाइ । कत वा मण्डली हइ पड़े ठाँइ ठाँइ ।।	प्रभुके कितने शिष्य थे, इसकी गणना नहीं। कितने ही छात्र मण्डलियाँ बनाकर स्थान-स्थान पर पढ़ते थे ।
प्रतिदिन दश-विश ब्राह्मण-कुमार । आसिया प्रभुर पाये करे नमस्कार ।।	प्रति-दिन दस-बीस ब्राह्मण कुमार आकर प्रभुके चरणोंमें नमस्कार करते ।
पण्डित ! आमरा पड़िव तोमा स्थाने । किछु जानि हेन कृपा करिबे आपने ।। —चै० भा०	वे कहते—"पण्डितजी ! हम लोग आपके यहाँ पढेंगे । हम समझते हैं कि आप हम लोगों पर इतनी कृपा तो करेंगे ।

केशव काश्मीरी एक दिग्विजयी पण्डित थे। उसी समय वे नवद्वीपमें आये और निमाई पण्डितसे उन्होंने अपनी पराजय स्वीकार की। इससे श्रीनिमाई पण्डितका नाम और यश और भी बढ़ गये। साथ ही साथ शिष्यों और छात्रोंकी संख्या भी दिन-दिन बढ़ने लगी।

दिग्विजयी हारिया चलिल जाँर ठाइ। एत बड़ पण्डित आर कोन शुनि नाइ।।	दिग्विजयी केशव काश्मीरी जिनसे हारकर चले गये उन निमाई पण्डित जितना बड़ा और कोई पण्डित सुननेमें नहीं आया।
एइ मते सर्व्व नवद्वीपे हइल ध्वनि। निमाइ पण्डित अध्यापक शिरोमणि।। —चै० भा०	नवद्वीपमें इस प्रकारकी हर्षध्वनि गूँज गयी कि निमाई पण्डित अध्यापकोंके शिरोमणि हैं।

विवाहके बाद श्रीनिमाई पण्डित कुछ दिनों तक मन लगाकर अध्यापन कार्य करने लगे। वे उस समय नवद्वीपमें एक उच्च पदस्थ पुरुष थे। रघुनाथ और वे उस समय नवद्वीपमें सर्वोच्च पण्डित थे। बड़े-बड़े सम्पन्न लोग रास्तेमें श्रीनिमाई पण्डितको देखते ही सिर झुकाकर नमस्कार किया करते थे। किसीके घरमें जब कोई विशेष कर्म होता तब वह भोज्य, वस्त्र, मिष्टान्न पहल श्रीनिमाई पण्डितके घर भेजता।

बड़ बड़ विषयी सकल दोला हइते। नामिया करेन नमस्कार बहु मते।।	बड़े-बड़े सम्पन्न लोग सब पालकीसे उतर कर बहुत प्रकारसे नमस्कार करते।
नवद्वीपे जारा जत धर्म्म कर्म्म करे। भोज्य वस्त्र अवश्य पाठाय प्रभु घरे।। —चै० भा०	नवद्वीपमें जो भी जितने धर्म-कर्म करते वे सभी भोज्य सामग्री और वस्त्र प्रभुके घर अवश्य भेजते।

अतएव प्रभुके घरमें किसी वस्तुका अभाव नहीं था। शची देवी प्रसन्न-मनसे दिन-रात देव-सेवा, ब्राह्मण-वैष्णव-सेवा आदि सत्कार्योंमें लगी रहती थीं। श्रीनिमाई पण्डितका घर मानो एक अतिथिशाला था। शिष्य, सेवक, दीन, दुखी, आर्त्त और पीड़ितोंके लिए शची देवीका गृह-द्वार खुला रहता था। शची देवी अपना भण्डार लुटाकर उनकी सेवा करती थीं। परन्तु प्रभुको इसकी कोई खबर नहीं रहती थी। इतने महान जगद्विख्यात पण्डित

होने पर भी श्रीनिमाई पण्डितकी चपलता और औधत्य अभी गया नहीं था। गङ्गाके घाटपर स्नान करने जाते तो शिष्यों और छात्रोंके साथ तैरकर प्रातः-सायं दोनों समय गङ्गाको पार किया करते थे। किन्तु जब वे पाठशालामें बैठकर छात्रोंको पढ़ाते थे; तब जान पड़ता था, मानो वे दूसरे ही निमाई पण्डित हैं। गम्भीरतापूर्वक बैठकर छात्रोंको पढ़ाते थे, किसकी मजाल जो प्रभुके सामने चपलता करे।

● शचीके लिये विष्णुप्रियाका वियोग असह्य

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी पिताके घर थीं। शची देवी गङ्गास्नानको जाते समय प्रायः मिश्रजीके गृहके द्वार होकर जातीं। यह गङ्गाके घाटका सीधा रास्ता नहीं था। तथापि वे निमाई चाँदके विवाहके बादसे इसी रास्ते होकर गङ्गा-स्नान करने जातीं। उद्देश्य होता एक बार पुत्रवधूका मुँह देखते जाना। शची देवी वह सुन्दर मुखड़ा देखे विना रह नहीं सकती थीं। इसीलिए इतना परिश्रम करके मिश्र महोदयके घरके द्वार होकर नित्य गङ्गा-स्नान करने जातीं। द्वार पर खड़े होकर श्रीमतीजीके साथ दो बातें करतीं। महामाया देवीके साथ घर-गृहस्थीकी बातें भी होतीं। देवी विष्णुप्रिया सासको देखकर बड़ी आनन्दित होतीं, अत्यन्त नम्रभावसे प्रणाम करके एक ओर खड़ी रहतीं। कभी-कभी सासका आँचल पकड़ कर घरमें ले जानेके लिए जिद्द करतीं। इस प्रकार गङ्गा-स्नान करके घर लौटनेमें शची देवीको किसी-किसी दिन बहुत देर हो जाती। घरके काममें बाधा भी पड़ती। निमाई चाँदके सामने देर होनेकी कैफियत देनी पड़ती। एक दिन प्रभुने मातासे कहा--"माँ! तुम नित्य अपनी वधूको देखनेके लिए संबंधीके घर जाती हो, यह अच्छा नहीं लगता। अपनी वधूको अपने घर क्यों नहीं बुला लेतीं?" शची देवी तो यह चाहती ही थीं, पुत्रसे कहा--"वही होगा। एक शुभ दिन देखलो।" निमाई पण्डितने द्विरागमनका शुभ दिन ठीक कर दिया। शची देवीने काशीनाथ घटकके द्वारा यह समाचार सनातन मिश्रके यहाँ भेजा। स्वयं भी मिश्रजीकी गृहिणी महामाया देवीसे यह बात कही। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने भी यह समाचार सुना। आनन्दसे उनके प्राण नाच उठे। वे अपने प्राण-वल्लभके दिगन्तव्यापी सुयश और सम्मानकी बात लोगोंके मुखसे सुनकर आनन्दसे प्रफुल्लित हो जातीं। कभी-कभी

सनातन मिश्र अपनी गृहिणीके पास जामाताकी सारी गुणावली, उनका असाधारण पाण्डित्य, दिगन्तव्यापी यश-सौरभ, अलौकिक विद्या-बुद्धि वर्णन करके अपनेको परम सौभाग्यशाली समझते। श्रीमती इन सारी बातोंको अत्यन्त मनोयोगके साथ सुनती थीं। सुनकर पति-सोहागिनी सरला बालिकाके मनमें मानो सुख नहीं समाता था। परन्तु उस सुखकी बात और कोई नहीं जान पाता था।

एक शुभ दिनको पुत्र-वधूको शची देवीने अपने घर बुला लिया। सनातन मिश्रने वस्त्र, अलङ्कार, शय्या, आसन, भोजन-पात्र, आदि नाना प्रकारकी सामग्रियां देकर दास-दासीके साथ श्रीमतीजीको उनके श्वशुरके घर भेजा। श्रीगौराङ्ग स्वयं जाकर श्रीमतीको घर लिवा लाये। शची देवी पुत्र और पुत्र-वधूको लेकर महा आनन्द और परम सुखपूर्वक अपनी गृहस्थी चलाने लगीं। श्रीनिमाई चाँदके विवाहको हुए एक वर्ष व्यतीत हो गया। शची देवी लक्ष्मी-स्वरूपिणी प्रेममयी पुत्र-वधूको लेकर आनन्दसे संसार-सुखमें निमग्न हो गयीं। श्रीमतीजी सासकी सेवा करके अपनेको परम सुखी समझती हैं और कृतार्थ होती हैं। वे शची देवीके पीछे-पीछे सर्वदा छायाके समान रहतीं, एक क्षणके लिए भी सासका सङ्ग नहीं छोड़तीं। पति-देवताकी सेवा करके देवी कृतार्थ होतीं। वे अब बालिका नहीं हैं, देवीकी अवस्था पूरी तेरह वर्षकी हो गई है। वे इस समय परम रूपवती, परम लावण्य-मयी किशोरी बाला हैं। नव यौवनका अंकुर अङ्ग-अङ्गमें दिखलायी दे रहा है। देवीके श्रीअङ्गमें इस समय बाल्य और यौवनका द्वन्द्व चल रहा है। वे इन दोनोंके सन्धिस्थलमें विद्यमान हैं, उनकी रूपमाधुरीकी सीमा नहीं है, अङ्ग-अङ्गमें असीम लावण्य है। कवि विद्यापतिने लिखा है—

शैशव यौवन दरशन भेल। दुहुँ दल बले धनी द्वन्द्व पड़ि गेल।।	शैशव और यौवन एक संग दिखलायी दिये। दोनों ही प्रबल थे, अतएव उनमें द्वन्द्व मच गया।
कबहुँ बाँधेये कच कबहुँ विथारि। कबहुँ झापये अङ्ग कबहुँ उघारि।।	कभी केश बाँधती हैं, कभी विखेर देती हैं। कभी अङ्गको ढँकती हैं, कभी उघाड़ लेती हैं।

थिर नयान अथिर कछु भेल। उरज-उदय-थल नालिम देल॥	स्थिर नेत्रोंमें कुछ चञ्चलता आ गयी। स्तनोंके उभरे हुए स्थल रक्तिम आभायुक्त हो गये हैं।
चरण-चञ्चल, चित्त-चञ्चल भान। जागल मन-सिज मुदित नयान॥	चरणोंमें चपलता आयी, चित्त चञ्चल होने लगा। मदन जागने लगा और नयन प्रमुदित हुए।

इस समय श्रीमतीजीका ठीक यही भाव है। सारे अङ्ग सौन्दर्यसे परिपूर्ण हैं। अङ्ग-अङ्गकी शोभामें मानो विजली कौंध जाती है। रूपके आलोकसे शची देवीका घर आलोकित हो गया है। यौवनके उद्गमसे श्रीमतीजीकी अपरूप रूपराशि मानो उछली पड़ती है। ऐसी अनिन्दित रूपराशि, ऐसा लावण्यमय अङ्ग-सौष्ठव, ऐसी देव-दुर्लभ माधुरी-मिश्रित सुस्निग्ध अङ्ग-ज्योति, ऐसा मधुमय कोकिलकी काकलीको लज्जित करनेवाला सुललित कण्ठस्वर, ऐसा मरालको भी तिरस्कृत करनेवाला मृदु-मृदु पाद-विक्षेप न कभी किसीने देखा था और न सुना था। शची देवी इस प्रकार घरको आलोकित करनेवाली बड़े चावकी पुत्र-वधू पाकर बहुत ही आनन्दित हो रही हैं। क्षणभरके लिए भी उनको आँखोंसे ओझल नहीं कर सकतीं। बीच-बीचमें पुत्र-वधूको शची देवी गङ्गा-स्नानके लिये लेकर जाती हैं। श्रीमतीके दोनों नेत्रोंका लक्ष्य सासके श्रीचरणोंके सिवा अन्यत्र नहीं रहता है। वे सासका अञ्चल पकड़कर गङ्गास्नानके लिए जातीं, अञ्चल पकड़कर स्नान करतीं और अञ्चल पकड़े फिर घर लौट आतीं। श्रीमतीजी शची देवीके अञ्चलकी निधि हैं। शची देवीके घरसे श्रीमतीजीके पिताका घर कुछ दूर है। बीच-बीचमें शची देवी पुत्र-वधूको पिताके घर भेज देतीं, पर दो-तीन दिन बीतते न बीतते फिर बुला लेतीं, कारण यह है कि पुत्र-वधूको छोड़कर वे एक दण्ड भी नहीं रह सकतीं।

● निमाईकी गया-यात्रा

श्रीनिमाई चाँदको इस समय अध्यापनके सिवा और कोई काम नहीं है। सारे दिन तथा रात्रिको एक पहर तक केवल शिष्य और छात्रोंको शिक्षा देनेमें लगे रहते हैं। सन्ध्याकाल गङ्गाके तीर बैठकर शास्त्रालोचना

करते हैं। सैकड़ों लोग उनके मुखसे मधुमय शास्त्र-व्याख्या सुनकर आनन्दित होते हैं।

अध्ययन बिना आर नाहि कोन काज।
—चै० भा०

वे भोजनके समय केवल घर आते। शची देवी अपने हाथसे रसोई बनाकर निमाई चाँदको परम सन्तोषपूर्वक भोजन कराकर बड़ा सुख पातीं। पुत्रके पास बैठकर भोजन करातीं। श्रीमतीजी आड़से छिपकर पतिदेवका भोजन करना देखतीं। माता-पुत्रमें जो बात-चीत होती उसे ध्यान देकर सुनतीं। एक दिन श्रीगौराङ्गने इसी प्रकार भोजनके लिए बैठे-बैठे बात-चीतके सिलसिलेमें मातासे कहा कि वह पितृश्राद्ध करने गयाधाम जायँगे। शची देवी यह सुनकर चिन्तित हुईं, एक लम्बा साँस लेकर देरतक चुप रहीं। मानो उनके हृदयमें शूल चुभ गया। आँखोंसे अश्रु प्रवाहित होने लगे। गद्गद-भावसे पुत्रको सम्बोधन करती हुई बोलीं—"बेटा निमाई! तुम मुझ अन्धीकी लाठी हो, आँखोंकी पुतली हो। एक क्षण यदि तुमको नहीं देखती हूँ तो सारा संसार सूना लगता है। पितृश्राद्ध करने तुम गयाधाम जाओगे तो तुमको मैं और क्या कहूँ? परन्तु तुम जब गयाधाम जाते ही हो तो अपनी जीवित जननीके लिए भी एक पिण्ड दे आना।" शची देवीके मुँहसे बड़े दुःखसे ये शब्द निकले।

प्रवासे जाइबे तुमि शुन विश्वम्भर। तुमि ना थाकिले अन्धकार मोर घर॥	हे विश्वम्भर! सुनो, तुम विदेश जाना चाहते हो। तुम्हारे न रहने पर घर अंधेरा हो जायगा।
आन्धलेर लड़ि तुमि नयानेर तारा। ए देहेर आत्मा तोमा बहि नाहि मोरा॥	तुम मुझ अन्धीकी लाठी हो, आँखोंके तारे हो, मेरे इस शरीरकी आत्मा हो, तुम्हारे सिवा मेरा और कोई नहीं है।
पितृगण निस्तार करिते जाबे तुमि। आपना लागिया तोरे कि बलिब आमि॥	पितरोंका उद्धार करने तुम जाओगे तो मैं अपने लिए तुमसे क्या कहूँ?

गया यदि जाबे बाप् शुनरे निमाइ।	बेटा निमाई! यदि तुम गयाधाम
मोर नामे एक पिण्ड दिस्‌रे तथाइ॥	जाते हो तो मेरे नामसे भी एक पिण्ड
--चै० मं०	वहाँ देते आना।

प्रभुने माताको समझाया कि वह पितृश्राद्धके लिए गयाधाम जा रहा है, इसमें उनका बाधा डालना उचित नहीं है। पितरोंको पिण्ड देनेके लिए ही पुत्रकी आवश्यकता होती है, यह सभी जानते हैं। शची देवी भी जानती हैं। गयाधाम बहुत दूर है। माताके प्राण घबड़ा रहे हैं, इसी कारण वे दुःखी हो रही हैं। प्रभुके मधुर वचनोंसे सन्तुष्ट होकर शची देवीने पुत्रको अन्तमें गयाधाम जानेकी आज्ञा दे दी।

जननीर आज्ञा लइ महा हर्ष मने।
चलिलेन महाप्रभु गया दरशने॥
--चै० भा०

आश्विन मासके पितृपक्षमें श्रीगौराङ्गने गया-धामकी यात्रा की। शची देवीने अपने बहनोई श्रीचन्द्रशेखर आचार्यको निमाई चाँदके साथ भेजा, कारण निमाई अभी बालक थे, अकेले दूरदेश कैसे जाते? चन्द्रशेखर आचार्यने दो-चार प्रिय शिष्योंको साथ ले लिया। अब शीतका प्रारम्भ हो गया था। शची देवीने निमाई चाँदके लिए शीतकालीन वस्त्र दिये। निमाई चाँदको बिदा करके शची देवीका घर अँधेरा हो गया। पुत्र-वधूके मुँहकी ओर देखकर वे अत्यन्त उद्विग्नता पूर्वक दिन बिताने लगीं। पुत्रके विरहमें अत्यन्त कातर होकर वे पथ निहारने लगीं। रातमें उनको नींद नहीं आती थी। तन्द्रा आते ही निमाई चाँदका सपना देखने लगती थीं।

●

एकादश अध्याय

श्रीमतीका प्रथम विरह

तुमि परदेशे जाबे एइ बड़ दुःख ।
—श्री चैतन्य मङ्गल

तुम परदेश जाओगे यही बड़ा दुःख है ।

● प्राणवल्लभकी विदाई—

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने घरके भीतरसे खड़े-खड़े प्रभुके गयाधाम जानेकी सारी बातें सुन लीं । प्राणवल्लभके साथ वियोग होनेकी आशङ्कासे वे अधीर हो उठीं । सरला बालिकाका दिल टूट गया । देवीके बाल-हृदयको प्रथम वियोगकी यह सूचना मिली । बालिका विरहके तापको क्या जाने ? स्वामीके साथ सुखसे गृहस्थी चला रही थीं । विरह-वियोगकी बात किसी दिन मनमें नहीं आयी थी । मिलनके बाद विरह नामकी भी कोई वस्तु होती है, देवीको ऐसा विश्वास न था । प्राण-वल्लभके गयाधाम जानेकी बात सुननेके बादसे ही उस महा विपदजनक विरहकी बात मनमें सदा उठने लगी । श्रीमती मन ही मन सोच रही हैं कि प्राणवल्लभको एक बार कहकर तो देखूं, जिससे अभी उनका जाना रुक जाय । फिर सोचती हैं—"ना, क्या ऐसा हो सकता है ? मैं किस प्रकार बोलूंगी ? माँ कुछ बोल न सकीं, मैं भी कुछ न बोलूंगी ।" गयाधाम जानेके समय प्रभु श्रीमतीसे बिदा लेना भूले नहीं । एकान्तमें बुलाकर प्रभुने प्रियासे कहा—"मैं पितृश्राद्ध करने गयाधाम जा रहा हूँ । इसी जाड़ेके भीतर लौट आऊँगा । तुम सदा माँके पास रहना और उनकी सेवा करना ।" श्रीमतीने एक बार प्रभुके मुँहकी ओर देखा, कोई बात बोल न सकीं । सिर अवनत करके पति-देवताके दोनों श्रीचरणोंकी ओर देखती रहीं । अलक्षित भावसे श्रीमतीके दोनों नेत्रोंसे आँसुओंकी कुछ बूंदें ढलक पड़ीं । श्रीगौराङ्ग उनको देखकर व्यथित हुए, प्रियाको हृदयसे लगाकर स्नेह प्रदर्शित किया । श्रीगौर-वक्ष-विलासिनी स्वामीके स्नेहसे

सारे दुःख भूल गयीं। कैसा सुन्दर युगल-मिलन था! कैसी अपरूप शोभा थी! दुःखकी बात यह है कि युगल-माधुरीकी मधुमय सौन्दर्य-छटाके अपरूप दृश्यका दर्शन किसी जीवके भाग्यमें बदा न था। केवल अन्तरिक्षमें देवगणने इस दिव्य दृश्यको देखा और आनन्दसे पुष्प-वर्षा की। ग्रन्थकारने अपने हृदयके आवेगमें एक दिन लिखा था--

माधुरी माखा युगल रूप **हेरिया नयन मातिल गो।**	माधुरीसे सने युगल-रूपको देखकर नयन मतवाले हो गये।
प्राण माताल सङ्गीत-सुधा **मरमे मरमे पशिल गो॥**	प्राण मत्त हो उठे और सङ्गीत-सुधा मर्म-मर्ममें प्रविष्ट हो गयी।
गौर-विष्णुप्रिया युगल-मिलन **अतुल रूपेर माधुरी।**	गौर-विष्णुप्रियाके युगल-मिलनमें अनुपम रूपकी माधुरी थी।
युगल रूप हेरिया नयने **छुटिल आनन्द-लहरी॥**	उस युगल रूपको नेत्रोंसे देखकर आनन्दकी लहरें उठने लगीं।

तब प्रभु श्रीमतीको मधुर वचनोंसे प्रबोधित करते हुए बोले--"प्राणाधिके! प्रिये! तुमको छोड़कर मैं अधिक दिन विदेशमें नहीं रह सकता। मैं शीघ्र ही घर लौटूँगा। तुम धैर्यपूर्वक माताकी सेवा करना।" श्रीमती किसी प्रकार शान्त हुईं। छल-छल आँसू भरे नयनोंसे प्राणवल्लभके मुखकी ओर देखकर मृदु मधुर वचनोंसे बोलीं--"हृदयेश्वर! यह दासी तुम्हारे सिवाय और कुछ नहीं जानती। क्या दोष देखकर इस अधीनाको छोड़कर आप जा रहे हैं?" प्रभुका हृदय व्याकुल हो गया। उन्होंने हृदयावेगसे प्रियाको प्रेमालिङ्गन प्रदान किया। श्रीमतीने अपने नेत्रोंके जलसे वक्षःस्थलको आर्द्र करते हुए प्राण-वल्लभको विदा किया। विदाके समय श्रीमतीके मनके भाव इस प्रकारके थे--

कोथा जाओ हे प्राण बन्धु मोर **आमाय छलना करि।**	हे मेरे प्राण-बन्धु! मुझसे छल करके कहाँ जा रहे हो?
ना देखिले मुख फाटे मोर बुक **धैरय धरिते नारि॥**	तुम्हारा मुख बिना देखे मेरा हृदय विदीर्ण होने लगता है, मैं अपने को सँभाल नहीं पाती।

बाल्यकाल हते ए देह सँपिनु **मने आन् नाहि जानि।**	मैंने बचपनसे ही यह शरीर तुम्हें सौंपा है। मेरा मन किसी औरको नहीं जानता।
कि दोष पाइया त्यजिले दासीरे **बल सेइ कथा शुनि॥** **—पद-समुद्र**	तुमने क्या दोष देखकर इस दासी को त्याग दिया ? बतलाओ तो जरा सुनूँ।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको पति-वियोग-जनित यह प्रथम विरह-यन्त्रणा बड़ी ही कष्टप्रद जान पड़ी। श्रीमती धैर्य धारण नहीं कर पा रही हैं। प्रभुके द्वारा परित्यक्त शय्याके ऊपर शयन करके तकियेमें मुँह छिपाकर जी भरकर क्रन्दन करने लगीं। उनका वह क्रन्दन किसीने नहीं देखा, क्योंकि शची देवी पुत्रके साथ गङ्गाके घाट तक गयी थीं। घर पर दास-दासीके सिवा और कोई न था। वे अपने-अपने कार्यमें व्यस्त थे। कुछ देरके बाद शय्यासे उठ कर एक बार ठाकुरजीके घरकी तरफ गयीं। वहाँ गलेमें वस्त्र डाल गृह-देवताको प्रणाम किया। हाथ जोड़कर विपत्तिहारी मधुसूदन नारायणसे प्रार्थना की—"हे सर्व-विपदहारी विपद-भञ्जन ठाकुरजी ! मेरे प्राणवल्लभ विदेश जा रहे हैं। उनका कोई अमङ्गल न हो। वे स्वस्थ शरीरसे शीघ्र घर लौट आवें।" धर्मप्राणा, पति-परायणा बालिकाकी कातर क्रन्दन-ध्वनि श्रीभगवान्‌के कानोंमें प्रवेश कर गयी। देवी आश्वासित होकर शान्त मनसे घरके द्वार पर बैठी थीं, उसी समय उनकी प्रिय सखी काञ्चना आकर वहाँ उपस्थित हो गयीं। सखीको देखकर श्रीमतीजीका हृदय फिर व्याकुल हो उठा। फिर उनकी आँखोंमें आँसुओंकी धारा दीख पड़ी। वे घरके द्वारसे उठकर पुनः जाकर शय्या पर सो गयीं। काञ्चना श्रीमतीजीके दुःखसे दुखी और सुखसे सुखी होती हैं। उन्होंने श्रीमतीजीको स्नेहपूर्वक अपने हृदयमें जकड़ लिया और दोनों सखियाँ मिलकर कुछ देर तक साथ-साथ रोती रहीं। रोनेसे दुःखका शमन होता है, नेत्रोंके जलसे हृदयकी वेदना दूर होती है, यह बात ठीक है। कुछ देर तक रोनेके बाद दोनों अपने आप शान्त हो गयीं। तब काञ्चनाने श्रीमतीसे कहा—"सखी ! रोओ मत। तुम्हारे धर्म-प्राण पतिदेव धर्मकार्य करने गये हैं। तुम उनकी धर्मपत्नी हो, सहधर्मिणी हो। तुम्हारे रोनेसे उनका वह कार्य सुसिद्ध न

हो पायगा। चलो हम आज फूल चुनकर सुन्दर माला गूँथकर श्रीश्रीलक्ष्मी-नारायणको सजावें।" सखीके युक्तियुक्त मधुर वचन सुनकर श्रीमतीजीने अपनी आँखें पोंछ लीं, किसी प्रकार प्रकृतिस्थ हुई तथा गृहकार्यमें मन लगाया। यथा समय शची देवी घर लौटीं। निमाई चाँदको विदा करके उनका मन घर आनेको नहीं कर रहा था। केवल पुत्र-वधूके लिए व्याकुल होकर वे दौड़ी-दौड़ी घर आईं। श्रीमतीके कातर और म्लान मुँहको हाथसे पकड़ कर बहुत लाड़-प्यार किया। पुत्र-विरह-जनित मनके दुःखको मनमें ही दबा कर रक्खा। श्रीमतीजीके मुँहकी ओर देखकर सब दुःख भूल गयीं। सास पुत्रवधूके साथ एक प्राण होकर देव-सेवा, अतिथि-सेवा आदि धर्मकार्योंमें दिन बिताने लगीं और दोनों ही उत्कण्ठित चित्तसे निमाई चाँदके गयाधामसे लौटनेकी प्रतीक्षा करतीं हुई दिन गिनने लगीं।

● गयाधामसे लौटने पर

प्रभु पितृ-श्राद्ध करके यथा समय गयाधामसे नवद्वीप लौट आये। घरके द्वार पर आकर जब 'माँ' कहकर शची देवीको पुकारा तो मानो किसीने उनके कानोंमें अमृतका घट उँडेल दिया। वे दौड़कर आयीं और घरके द्वार पर खड़ी हो गयीं। श्रीगौराङ्गने माताके चरणोंमें प्रणाम करके पदधूलि ली। शची देवीने पुत्रको गोदमें लेकर शत-शत बार मुख-चुम्बन किया। प्रेमाश्रु-जलसे उनका वक्षःस्थल तर हो गया।

पुत्र कोले करि शची आनन्दित मने।
हरिषे प्रेमार नीर झरे दुनयाने।।
--चै० मं०

पुत्रको गोदीमें लेकर शची माँ मनमें बड़ी आनन्दित हुई और हर्षके मारे दोनों नयनोंसे प्रेमाश्रु झरने लगे।

प्रभुके आगमनकी बात सुनकर सनातन मिश्रकी गोष्ठीके आनन्दकी सीमा न रही। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी बहुत दिनोंके बाद पतिके मुखके दर्शन कर आनन्दके समुद्रमें डूब गयीं। उनका सब दुःख दूर हो गया।

लक्ष्मीर जनक-कुले आनन्द उठिल।
पतिमुख देखिया लक्ष्मीर दुःख गेल।।
--चै० भा०

श्रीविष्णुप्रिया देवीका पितृकुल आनन्दित हो उठा और पतिके श्रीमुखको देखकर श्रीमतीजीका सारा दुःख चला गया।

श्रीमतीके हृदयमें आनन्दकी तरङ्ग उठी। उस तरङ्गसे देवीके सारे अङ्ग प्रफुल्लित हो उठे। वे मानो सुखके समुद्रमें डूबने लगीं।

विष्णुप्रिया हिया माझे आनन्द हिल्लोल।
धरिते ना पारे अङ्ग सुखे नाहिं ओर।।
—चै० मं०

विष्णुप्रियाके हृदयमें आनन्दके हिल्लोल उठने लगे। वे अङ्गोंको सम्हाल नहीं पा रही थीं। उनके सुखकी सीमा नहीं थी।

आतमीय बन्धु, कुटुम्ब, परिवार, सभी श्रीनिमाई चाँदको देखकर अत्यन्त उल्लसित हुए। प्रभुने यथा योग्य सबसे आदर पूर्वक बातें कीं। उनके विनीत और नम्र वचनोंसे सभी परम सन्तुष्ट हुए। बड़े-बूढ़े ब्राह्मण-पण्डितोंने प्रभुके मस्तक पर हाथ देकर "चिरंजीवि होवो" कहकर शुभाशीर्वाद दिया। बड़ी-बूढ़ी स्त्रियोंने प्रभुके सब अङ्गों पर हाथ फेरकर मङ्गलसूचक मन्त्र-पाठ किया। किसीने प्रभुके वक्षःस्थल पर हाथ फेरकर आशीर्वाद दिया कि गोविन्द तुम्हारा कल्याण करें।

परम सुनम्र हइ प्रभु कथा कहे।
सभे तुष्ट हइला देखि प्रभुर विनये।।
शिरे हात दिला केह चिरजीवी करे।
सर्व्व-अङ्ग हात दिया केह मन्त्र पड़े।।
केह वक्षे हात दिया करे आशीर्व्वाद।
गोविन्द शीतलानन्द करुन् प्रसाद।।
—चै० भा०

सभी देख रहे हैं कि प्रभुमें अपूर्व परिवर्तन हो गया है। वे गयाधाम जानेके पूर्व जैसे थे, वहाँसे लौटने पर उससे एकदम बदले हुए-से हैं। मानो वे निमाई चाँद ही नहीं हैं। माताके साथ उन्होंने झुकाये हुए मुँहसे धीरे-धीरे दो बातें कीं। मुखमें वह हँसी नहीं है, हृदयमें वह उत्साह नहीं है और प्राणोंमें वह आनन्द नहीं है। शची देवी कुछ भी समझ न सकीं। सोचा कि पुत्र दूरदेश गया था, नाना प्रकारके शारीरिक और मानसिक कष्ट हुए होंगे, पैदल ही तीर्थ-भ्रमण करना पड़ा है। बच्चेका शरीर बहुत क्लान्त हो गया है, इसीसे उसके मनमें आनन्द नहीं है, मुँह पर हँसी नहीं है।

माताके प्राण पुत्रके मलिन मुख-मण्डलको देखकर व्याकुल हो उठे। शीघ्रता-पूर्वक स्नान और आहार आदिका प्रबन्ध किया। भोजन करनके बाद प्रभु कुछ अन्तरङ्ग भक्तोंको लेकर गयाधामकी कहानी वर्णन करने लगे।

विष्णुभक्त गुटी दुइ चारिजन लैया। केवल दो चार विष्णुभक्तोंको
रहः कथा कहिवारे बसिलेन गिया।। साथ लेकर रहस्यकी बात कहनेके
--चैं० भा० लिये एकान्तमें बैठे।

कृष्ण-कथा कहते-कहते प्रभुके दोनों नेत्रोंमें जल भर आया। सारा शरीर पुलकायमान और कम्पित हो उठा। वे और कुछ नहीं बोल सके।

पुलकित सर्व्व अङ्ग कम्प कलेवर।
नयने गलये अश्रुधारा निरन्तर।।
--चैं० भा०

प्रभु अपने घरमें बैठकर कृष्ण-कथा कह रहे हैं। गयाधामके माहात्म्यकी व्याख्या कर रहे हैं और अजस्र आँसू बहा रहे हैं। कृष्ण-प्रेमसे प्रभुका हृदय उन्मत्त हो रहा है। व प्रेमसे डगमगा रहे हैं। कभी-कभी उन्मत्त भावसे हुङ्कार और गर्जन करते हैं।

प्रेमे टलमल तनु हुङ्कार गर्ज्जन।

शची देवी और श्रीमतीजी सब कुछ देख रही हैं। प्राणवल्लभके इस प्रकारके प्रेमोन्मत्त भाव श्रीमतीने पहले कभी नहीं देखे थे। उनके हृदयमें भय उत्पन्न हो रहा है। क्यों उसके प्राणवल्लभ ऐसा कर रहे हैं? उनको यह क्या हो गया है? धर्म-कर्म, तीर्थ-दर्शन तो बहुत लोग करते हैं, उनको तो ऐसा नहीं होता? इन चिन्ताओंसे श्रीमतीजीका बाल-हृदय आकुल हो रहा है। किसीसे कुछ बोल नहीं सकती हैं, इस कारण उनको और भी दुःख है।

शची देवीको पुत्रका यह प्रेमोन्मत्त भाव बिल्कुल ही अच्छा नहीं लगता। वे जडवत स्थिर होकर बैठी-बैठी जाने क्या सोचती हैं?

●

द्वादश अध्याय

प्रभुका प्रेमोन्माद और शची-विष्णुप्रियाका उद्वेग

जे प्रभु आछिला अति परम गम्भीर । **से प्रभु हइला प्रेमे परम अस्थिर ।।** **—श्रीचैतन्य-भागवत ।**	जो प्रभु पहले अत्यन्त गम्भीर थे, वे अब प्रेमके वश होकर परम चञ्चल हो गये ।

● प्रेमोन्माद

पुत्रके ये सारे भाव शची देवीको बिल्कुल ही अच्छे नहीं लगते थे । दूसरे लोगोंमें कोई तो प्रभुके प्रेम-भावको देखकर मुग्ध और कोई आश्चर्य-चकित हो रहा था । श्रीनिमाई चाँदमें अब वह चञ्चलता, वह उद्धत स्वभाव, वह बाल-चपलता, वह व्यङ्गय-प्रियता नहीं रही । मुख-मण्डल कुछ मलिन हो गया है, किन्तु बड़ा ही सुन्दर और कमनीय जान पड़ता है । लोगोंके साथ व्यर्थके वार्तालाप करनेमें वे बड़े ही अनिच्छुक हैं, सदा ही मानो कुछ चिन्तन-सा करते रहते हैं । दोनों नेत्रोंसे निरन्तर अश्रुप्रवाह होता रहता है, उसको रोकनेकी चेष्टा करते हैं, परन्तु रोक नहीं सकते ।

अधम ग्रन्थकार रचित निम्नलिखित पद प्रभुके इस भावके कथञ्चित् परिचायक होनेके कारण यहाँ उद्धृत किये जाते हैं—

पँहु मोर गौर-किशोर । **आजु कि भावे विभोर ।।**	मेरे प्रभु गौर-किशोर आज किस भावमें तल्लीन हैं ?
आँखि दुटी झर झर । **काँपे अङ्ग थर थर ।।**	दोनों आखोंसे झर-झर नीर बह रहा है । अङ्ग थर-थर काँप रहे हैं ।
विनत आनने चाहे । **दु'नयने धारा बहे ।।**	मुँह झुकाकर नीचे देख रहे हैं और दोनों नेत्रोंसे अश्रुधारा बह रही है ।

बियाकुल निज जन । ना बुझल कि साधन ।।	निज जन उनको देखकर व्याकुल हो रहे हैं, समझमें नहीं आता कि क्या उपाय करें ?
अधिक उदास मन । बहे श्वास घने घन ।।	प्रभुका मन बहुत उदास है और दीर्घ साँस बार-बार चल रहे हैं ।
कार लागि केवा जाने । कि शेल वा बुके हाने ।।	कौन जानता है कि इसका क्या कारण है ? कौन-सा वज्राघात हृदय पर हुआ है ?
कि भावे विभोर गोरा । पँहु मोर चित-चोरा ।।	गौर प्रभु किस भावमें विभोर हैं जो प्रभु मेरे चित्तचोर हैं ?
केह ना बुझिते पारे । कि महिमा आखि लोरे ।।	कोई नहीं समझ सकता कि उनकी आँखोंके आंसुओंका कितना महत्व है ?
त्रिभुवन पति गोरा । कार प्रेमे ज्ञानहारा ।।	त्रिलोकीके स्वामी गौराङ्ग न जाने किसके प्रेममें ज्ञान-शून्य हो गये हैं ।
आचरिछे किवा योग । छाड़ि गृह-सुख भोग ।।	गृहके सुख-भोगको छोड़कर कौन-सा योग साधन कर रहे हैं ।
मु अधम हरिदास । कि बुझिब योगाभास ।।	मैं अधम हरिदास उस योगाभ्यास को क्या समझूंगा ?

● शची देवी और विष्णुप्रियाकी चिन्ता

प्रभुके नेत्रोंमें जल देखकर शची देवी स्थिर नहीं रह सकीं । उन्होंने पास जाकर अञ्चलसे पुत्रके मुँहको पोंछकर कहा—"बेटा निमाई ! तुम रोते क्यों हो ? तुमको क्या दुःख हो गया है—मुझको बताओ ।"

विस्मित हइया शची विश्वम्भरे पुछे ।
कि लागि कान्दह बाप ! दुःख तोमार किसे ।।
—चै० भा०

प्रभुने कोई उत्तर नहीं दिया। कृष्णप्रेमके आनन्दमें विह्वल होकर रुदन करने लगे। प्रेमोन्मत्त भावसे व्याकुल हो उठे।

जे प्रभु आछिल अति परम गम्भीर।
से प्रभु हइला प्रेमे परम अस्थिर।।
--चै० भा०।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी प्राण-वल्लभके इस प्रकारके भावको देखकर बड़ी व्यथित हुई। बहुत दिनोंके बाद विदेशसे स्वामी घर पर आये हैं, हृदय खोलकर दो घड़ी उनसे हृदयकी बात करूँगी, उनके हृदयकी बात सुनूंगी--कितनी ही बातें मनमें रक्खी हैं, कितनी ही आशाएँ हृदयमें पोषण कर रक्खी हैं--वे कुछ भी नहीं कही जा सकीं और न कुछ सुनी जा सकीं। इससे श्रीमतीके मनमें बड़ा दुःख है, हृदयमें बड़ी चोट लगी है। श्रीमती उस समय भी बालिका हैं, भीतरकी बात कुछ नहीं जानती हैं। न समझ पाती हैं। देवी मन ही मन सोच रही हैं कि यह कौन रोग हो गया? उस सरला बालिकाने एक दिन मुँह नीचे करके बड़े कष्टसे एक हाथसे दूसरे हाथके नख नोचते हुए साससे कह डाला--"माँ! इनको कोई रोग हो गया है। वैद्य बुलाकर औषधकी व्यवस्था कीजिए।" शची देवी बालिका पुत्रवधूकी बात सुनकर रो पड़ीं और अपने मनके भावको छिपाकर उस समय श्रीमतीके चिबुक पर हाथ देकर प्यार करती हुई बोलीं--"माँ लक्ष्मी! कुछ चिन्ता न करो। वत्सके सारे रोग नारायण ठीक कर देंगे। आज तुम भली भाँति पूजाका आयोजन करो। पुरोहितजी स्वस्त्ययन करेंगे।"

पुत्रेर चरित शची किछुइ ना बुझे।
पुत्रेर मङ्गल लागि गङ्गा-विष्णु पूजे।।
--चै० भा।

शची माँ पुत्रके व्यवहारको कुछ भी न समझ पाईं और पुत्रके मङ्गलके लिये गङ्गा, विष्णु आदि पूजने लगीं।

सासके प्यार और स्नेहपूर्ण मधुर वचनोंसे श्रीमती सब दुःख भूल गयीं। मनके उत्साहसे उस दिन उन्होंने नारायण-पूजाका आयोजन किया। दुर्वा, पुष्प, तुलसी, चन्दनसे पूजाकी थाली सजा दी। यथा समय कुल-पुरोहितने आकर गृह-देवता श्रीश्रीलक्ष्मीनारायणकी विधि पूर्वक पूजा और अभिषेक करके श्रीगौराङ्गके नामसे महा स्वस्त्ययन आरम्भ किया।
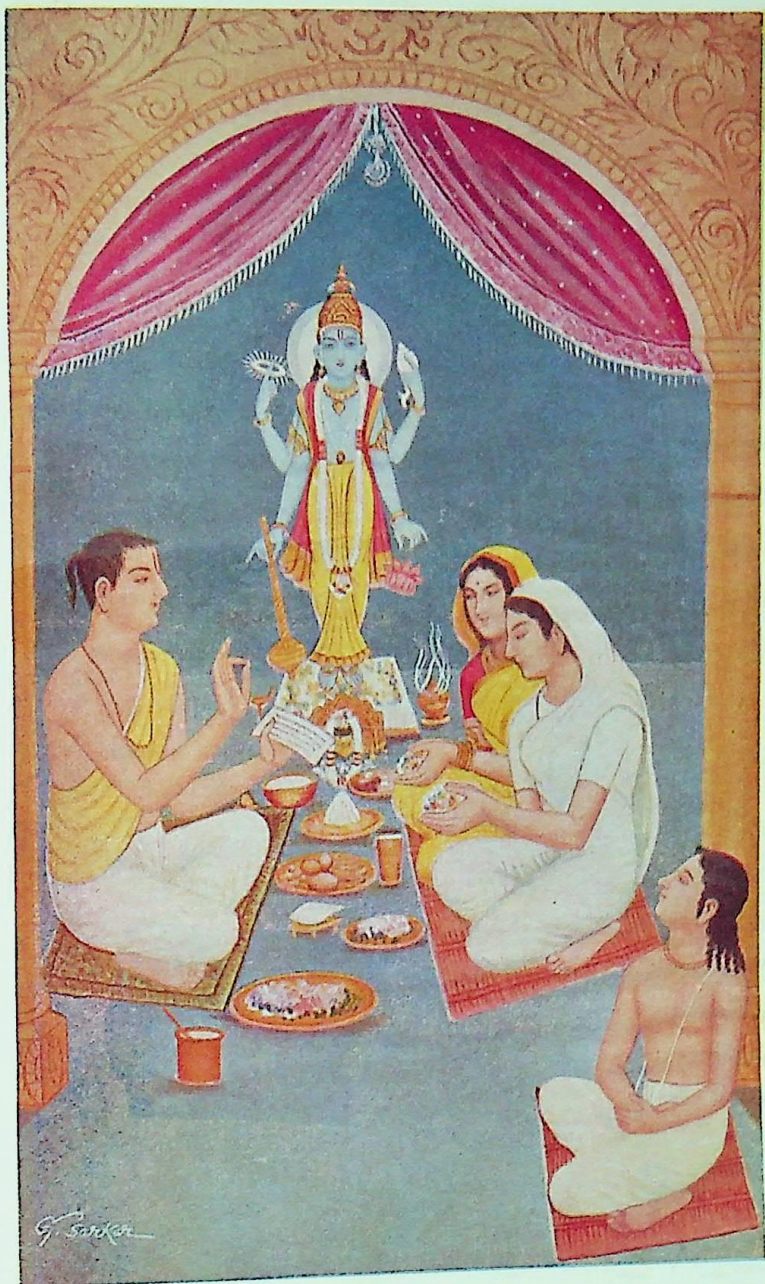
शची माता द्वारा विष्णु भगवान्की पूजा

N. P. Crafts

श्रीमती विष्णुप्रिया और शची देवी ठाकुर-मन्दिरके द्वार पर हाथ जोड़े बैठी-बैठी नारायणसे न जाने क्या-क्या मनौती कर गयीं। पूजाके अन्तमें शची देवीने ठाकुरजीका चरणामृत और प्रसाद लेकर निमाई चाँदको दिया। पुरोहितजीने श्रीगौराङ्गके सिरपर शान्तिका जल छिड़क दिया। प्रभु वहाँ निस्तब्ध होकर बैठे हैं। अन्यमनस्क होकर न जाने क्या देख रहे हैं। एक टक गृह-देवताकी ओर ताक रहे हैं और दोनों नेत्रोंसे झर-झर आँसू बह रहे हैं। वे कृष्णप्रेममें मानो तल्लीन हो रहे हैं। बीच-बीचमें 'हा कृष्ण! हा कृष्ण!' कहकर लम्बे साँस छोड़ते हैं। स्वस्त्ययन समाप्त होने पर सबने मिलकर नारायणके चरणोंमें--गलेमें वस्त्र डाले--प्रणाम किया। पुत्र-दुःखसे कातर, मोहसे आक्रान्त शची देवीने भगवान्के सामने मन ही मन प्रार्थना की--"हे मधुसूदन! हे विपद्-भञ्जन नारायण! हे लक्ष्मीकान्त! मेरे निमाई चाँदका मन ठीक कर दो। वत्सको सारे रोग-बला दूर करके चिरंजीवी करो।"

स्वामी-सोहागिनी विष्णुप्रिया देवीने माँगा--"हे विपद्-भञ्जन मधुसूदन! हे सर्वदुःखहारी! हे सर्वमङ्गलमय! मेरे प्राणवल्लभकी मति स्थिर कर दो। मेरे प्राणनाथको पहलेके समान कर दो।"

प्रभु नारायणको साष्टाङ्ग प्रणाम करके मन ही मन कहते हैं--"हे दीनबन्धु! हे राधाकान्त! हे कृष्ण! इस दासको एक बार दर्शन दो। तुम्हारे विरह-तापको अब मैं सहन नहीं कर पा रहा हूँ। मेरे प्राण निकल रहे हैं। तुम्हीं मेरे जीवन-सर्वस्व हो। तुमको छोड़कर मुझे और कुछ नहीं चाहिए। तुम मुझको जन्म-जन्म अहैतुकी भक्ति प्रदान करो।"

न धनं न जनं न सुन्दरीं
कवितां वा जगदीश कामये।
मम जन्मनि जन्मनीश्वरे
भवताद्भक्तिरहैतुकी त्वयि॥

प्रभुने स्वरचित उक्त श्लोकको कुछ उच्च स्वरसे दोहराया। उसे सबने सुना। श्रीमती कुछ अनमना हुईं। शची देवीके मनमें एक विषम सन्देह उत्पन्न हुआ। परन्तु पूर्ववत् अपने मनके भावको छिपाकर वे श्रीमतीसे धीरे-धीरे कहने लगीं--"माँ! नारायण सब मङ्गल करेंगे, इस समय चलो,

भगवान्‌के भोगका प्रबन्ध करें। पुरोहितजी आज यहाँ नारायणका प्रसाद पायेंगे।"

प्रभु ठाकुरजीके घरके द्वार पर ही बैठे रहे। एक टक गृह-देवताकी ओर देखते रहे।

बुझिते ना पारे आइ पुत्रेर चरित।	शची माँ पुत्रके चरित्रको कुछ
तथापिह पुत्र देखि महा आनन्दित॥	समझ नहीं पा रही हैं। तो भी पुत्रको
--चै० भा०	देख महा आनन्दित हैं।

●

त्रयोदश अध्याय

जननीके प्रति प्रभुका उपदेश

शुन शुन माता कृष्ण-भक्तिर प्रभाव ।	हे माता ! कृष्ण-भक्तिका प्रभाव
सर्व्व भावे कर माता कृष्णे अनुराग ।।	सुनो । हे माता ! सब प्रकारसे
—श्रीचैतन्य भागवत	श्रीकृष्णमें अनुराग करो ।

● प्रभुकी स्थिति

शची देवीके मनमें सुख नहीं है, श्रीमतीजीके मुखपर हँसी नहीं है, हृदयमें आनन्द नहीं है। शची देवी सदा ही चिन्तित रहती हैं, पुत्रके लिए क्या करें? कुछ निश्चय नहीं कर पातीं। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी निरानन्दमयी हैं। उनके सुन्दर मुखमण्डल पर एक विषादकी छाप पड़ गयी है। वे सर्वदा मलिन मुख रहती हैं। किसीके साथ भली भाँति बातें नहीं करतीं। श्रीनिमाई चाँदका प्रेम-विह्वल-भाव दिन-दिन बढ़ता जा रहा है। जैसे-जैसे दिन बीतते हैं, वैसे-वैसे प्रभुका संसारमें वैराग्य-भाव बढ़ता जाता है। कभी-कभी वे महा विरक्तिका भाव प्रकट करते हैं।

निरवधि कृष्णावेशे प्रभुर शरीरे ।	प्रभुके शरीरमें सर्वदा कृष्णावेश
महा विरक्तेर न्याय व्यवहार करे ।।	बना रहता है। महा विरक्तके समान
—चै० भा०	व्यवहार करते हैं।

जबसे श्रीनिमाई चाँदने श्रीपाद ईश्वरपुरीसे गयाधाममें मन्त्र ग्रहण किया है, तबसे उनके मनमें वैराग्य-भाव उदय हो गया है। तबसे प्रभु पागलके समान हो गये हैं। शची देवी बड़े दुःखसे बीच-बीचमें कहती हैं—

गयाधामे ईश्वरपुरी किवा मन्त्र दिल ।
सेइ हइते निमाइ आमार पागल हइल ।।

श्रीकृष्ण-प्रेममें श्रीनिमाई चाँद अत्यन्त विह्वल हो गये हैं, अपने आपको भूले रहते हैं। इतना रुचिकर अध्यापन-कार्य उन्होंने बिल्कुल छोड़ दिया है। पाठशालामें केवल मात्र जाते हैं, छात्रोंको अब पढ़ा नहीं पाते।

जे प्रभु आछिला भोला महाविद्या रसे।
एबे कृष्ण बिनु आर किछु नाहि वासे।।
——चै० भा०

जो प्रभु विद्याके रसमें अपने आपको भूले रहते थे, उनको अब कृष्णके बिना और कुछ नहीं रुचता।

प्रभुके मुख पर हरिनाम——कृष्णनामके सिवा और कुछ नहीं आता। वे चारों ओर कृष्ण ही कृष्ण देखते हैं। सामने देखते हैं:——

कृष्णवर्ण एक शिशु मुरली बाजाय।
——चै० भा०

पहले प्रभु पाठशालामें बैठकर परम गम्भीर भावसे छात्रोंको पढ़ाया करते थे। अब वे ही कृष्ण-प्रेममें उन्मत्त होकर, व्याकुल चित्त हो, इधर-उधर भटकते हैं।

जे प्रभु आछिला अति परम गम्भीर।
से प्रभु हइला प्रेमे परम अस्थिर।।
——चै० भा०

प्रभु बीच-बीचमें प्रेमसे आविष्ट होकर मूर्च्छित हो जाते हैं, सबके सामने अपराधीकी तरह अत्यन्त दीन-हीन भावसे रहते हैं, शची देवीको यह सब जरा भी अच्छा नहीं लगता। लोग तरह-तरहकी बातें करते हैं, शची देवीको वे विषवत् लगती हैं। उनका चित्त बड़ा व्याकुल है। पुत्रको संसारसे विरक्त देखकर वे अत्यन्त भयभीत हो गयी हैं, नाना प्रकारके देवी-देवता पूजती हैं, अनेक मनौतियाँ करती हैं, गृह-देवता नारायणके पास प्रतिदिन दोनों बेला सिर पटकती हैं और हाथ जोड़कर निवेदन करती हैं——

स्वामी निला कृष्ण, मोर निला पुत्रगण।
अवशिष्ट सकले आछये एक जन।।

हे भगवान्! तुमने मेरे पतिको उठा लिया, मेरे पुत्रोंको ले लिया। अब उनमें केवल एक पुत्र बचा है।

अनाथिनी मोरे कृष्ण एइ देह वर।	हे कृष्ण! मुझ अनाथिनीको
सुस्थ चित्ते गृहे मोर रहु विश्वम्भर।।	अब यही वर दो, जिससे मेरा निमाई
--चै० भा०	घर पर स्वस्थ चित्तसे रहे।

श्रीनिमाई चाँद जब घर पर आते हैं, तब शची देवी पुत्रवधूका शृंगार कर कर उसको पुत्रके पास लाकर सामने बैठाती हैं और वही करती हैं जिससे पुत्रका मन संसारमें आकृष्ट हो। प्रभु मानो श्रीमतीजीको देखकर भी नहीं देखते हैं।

लक्ष्मीरे आनिया पुत्र समीपे बसाय।
दृष्टिपात करियाओ प्रभु नाहि चाय।।
--चै० भा०

प्रभु केवल क्रन्दन करते हैं और निरन्तर-कृष्ण-प्रेम-विषयक श्लोक बोलते-दोहराते रहते हैं। "हा कृष्ण! हा कृष्ण! कहाँ हो मेरे प्राणधन? कहाँ जानेसे तुम्हारे दर्शन प्राप्त होंगे?"--कहकर कभी-कभी चीत्कार करते और कभी-कभी हुँकार भरते हैं। उस प्रेमोन्मत्त विराट-शरीर श्रीनिमाई चाँदके चीत्कार और हुँकारको सुनकर बालिका श्रीमती विष्णुप्रिया देवी भयसे भाग खड़ी होती हैं। शची देवी भी शङ्कित हो जाती हैं। रातमें प्रभुको नींद नहीं आती। कभी उठते हैं, कभी बैठते हैं। उनका हृदय मानो एक महान उत्कण्ठासे--झंझावातके आघातसे--आलोडित हो रहा है और अशान्तिके स्रोतमें बहा जा रहा है।

निरवधि श्लोक पड़ि करये क्रन्दन।	निरन्तर श्लोक पढ़कर क्रन्दन
कोथा कृष्ण! कोथा कृष्ण!	करते हैं। क्षण-क्षण--'कृष्ण कहाँ?
बोले अनुक्षण।।	कृष्ण कहाँ?'--की रट लगाते हैं।
कखनो कखनो जेवा हुङ्कार करये।	कभी-कभी ऐसा हुंकार करते हैं
डरे पलायेन लक्ष्मी, शची पाय भये।।	जिसे सुनकर श्रीमती भाग जाती हैं
	और शची देवी भयभीत हो जाती हैं।
रात्रे निद्रा नाहि जान प्रभु कृष्ण-रसे।	प्रभुको कृष्ण-रसमें रातको नींद
विरहे ना पाय स्वास्थ्य उठे पड़े वैसे।।	नहीं आती। कृष्ण-विरहमें चैन नहीं
--चै० भा०	है, कभी उठते हैं, कभी लेटते हैं, कभी
	बैठते हैं।

प्रातः उठकर प्रभु गङ्गा-स्नान करने जाते हैं। प्रभुके दर्शन करके देवी जाह्नवी मानो आनन्दसे नाच उठती हैं। तरङ्गके बहाने भव-विरिञ्चि-वन्दित दो रक्तवर्णके चरण-कमलोंको आदर पूर्वक धोती हैं। प्रभु जब गङ्गाजीमें उतरते हैं तब भागीरथी देवी उनको चारों ओरसे घेरकर आनन्दोच्छ्वाससे अपनी तरङ्ग-भङ्गिमा प्रदर्शित करती हैं——

तरङ्गेर छले नृत्य करये जाह्नवी।
अनन्त ब्रह्माण्ड जाँर पदयुग सेवि॥
चतुर्द्दिके प्रभुरे बेड़िया जाह्नुसुता।
तरङ्गेर छले जल देइ अलक्षिता॥

गङ्गाजी अलक्षित भावसे प्रभुके श्रीअङ्गमें जल छींटकर क्रीड़ा करती हैं। गङ्गाके घाट पर जितने लोग स्नान कर रहे हैं, सभी एक टक होकर श्रीगौराङ्गके मुखचन्द्रकी ओर देखकर उनकी रूप-सुधा पान कर रहे हैं। प्रभु गङ्गाजलमें क्रीड़ा कर रहे हैं, मानो समुद्रके भीतर पूर्णचन्द्र सुशोभित हो रहा है। परम सौभाग्यशाली नदिया-निवासीगण वड़े आनन्दसे प्रभुकी जलक्रीड़ा देख रहे हैं।

गङ्गाजले केलि करे प्रभु विश्वम्भर।
समुद्रेर माझे जेन पूर्ण शशधर॥
——चै० भा०

प्रभु गङ्गा-स्नान करके घर लौटे। यथाविधि दैनिक पूजा आदि समाप्त करके भोजनके लिए बैठे। माताजी और श्रीमतीजीके मनकी सारी अवस्था वे खूब समझते हैं। वे अन्तर्यामी श्रीभगवान् हैं। उनके लिए कुछ भी अगम्य नहीं है। मायामयकी मायासे जननी अभिभूता हैं। सब लीला-मयकी लीला है। कौशलीके कौशल-जालमें सभी फँसे हैं। महाचक्रीके चक्रमें पड़कर शची देवी और श्रीमतीजी व्याकुल हैं, त्रस्त हैं। प्रभु भोजन करने बैठे हैं। जगन्माता शची देवी पुत्रके सामने बैठी हैं। श्रीमतीजी गृहके भीतरसे छिपकर पतिदेवका भोग-दर्शन कर रही हैं।

विश्वक्सेनेरे प्रभु करि निवेदन।
अनन्त ब्रह्माण्ड नाथ करेन भोजन।।

श्रीगौराङ्ग प्रभुने श्रीविश्वक्सेन भगवान्‌को भोग लगाया। पीछे अनन्त ब्रह्माण्डोंके नाथने स्वयं भोजन किया। यह प्रभुकी लीला है।

सम्मुखे बसिला शची जगतेर माता।
गृहेर भितरे देखे लक्ष्मी पतिव्रता।।

जगन्माता शची सामने बैठी हैं, घरके भीतरसे पतिव्रता लक्ष्मी श्रीविष्णुप्रिया देखती हैं।

● माता और पत्नीको ज्ञान

पुत्रका मन कुछ ठीक देखकर शची देवीने पुत्रसे पूछा--"बेटा निमाई! आज कौन-सी पुस्तक पढ़ी? किससे विवाद किया?"

माये बोले आजि बाप् कि पुँथि पड़िला।
काहार सहित किवा कन्दल करिला।। --चै० भा०

प्रभुके मनमें जननीको लक्ष्य करके कुछ तत्त्वकी बातें करनेकी इच्छा है। जननीका दु:ख, गृहिणीकी मनोवेदना, सबको वे जान गये हैं। जीवके दु:खको निवारण करनेके लिए ही प्रभुका अवतार हुआ है। जननी और गृहिणीके दु:खको निवारण करनेका उपाय बतलानेके लिए आज प्रभु कृष्ण-कथा कहने लगे। कपिलदेवके समान वे जननीको आज उपदेश देने लगे। शची देवीका दु:ख दूर हो गया। मनको सुख मिला।

कपिलेर भावे प्रभु मायेरे शिखाय।
शुनि सेइ वाक्य शची आनन्दे मिलाय।। --चै० भा०

जननीके प्रश्नका प्रभुने उत्तर दिया--

प्रभु बोले आज पड़िलाम कृष्णनाम।
सत्य कृष्ण-चरण-कमल गुणधाम।।
सत्य कृष्णनाम गुण श्रवण कीर्त्तन।
सत्य कृष्णचन्द्रेर सेवक जे जन।।
सेइ शास्त्र सत्य कृष्णभक्ति कहे जाय।
अन्यथा हइले शास्त्र पाण्डित्य पलाय।।
--चै० भा०

श्रीभगवान् कपिलदेवने जैसे जननी देवहूतिके सामने भक्ति-शास्त्रकी व्याख्या की थी, उसी प्रकार श्रीगौर भगवान् शची माताके सामने भक्ति-तत्त्वकी व्याख्या करने लगे। श्रीमती ग्राड़में बैठकर मनोयोग सहित सुनने लगीं। प्रभु वक्ता हैं, जननी ग्रौर गृहिणी श्रोता हैं।
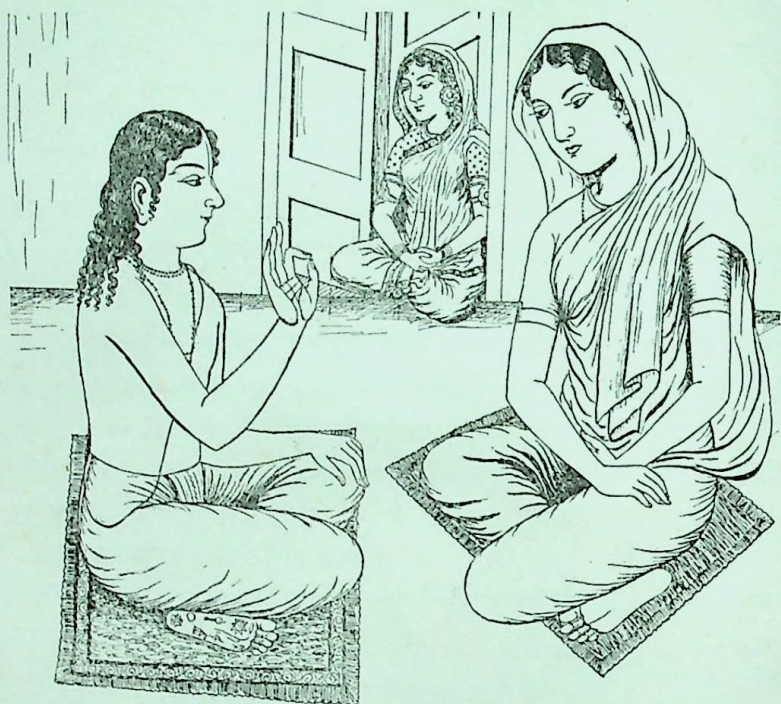
प्रभु कहते हैं—

यस्मिन् शास्त्रे पुराणे वा हरिभक्तिर्न दृष्यते।
श्रोतव्यं नैव तत् शास्त्रं यदि ब्रह्मा स्वयं वदेत्॥

जिस शास्त्र या पुराणमें हरिभक्तिका उल्लेख न हो, भगवद्भक्तिकी बात न लिखी हो, यदि विधाता स्वयं ग्राकर बोलें तो भी उस शास्त्रका श्रवण कर्तव्य नहीं। प्रभु हरिभक्तिकी बात कहते-कहते उत्तेजित होकर कहते हैं—

चण्डाल चण्डाल नहे यदि कृष्ण बोले।
विप्र नहे विप्र यदि असत् पथे चले।।

चाण्डाल यदि कृष्ण-नाम बोलता है, तो वह चाण्डाल नहीं। विप्र यदि असत् पथ पर चलता है, तो वह विप्र नहीं।

कृष्णभक्ति और कृष्ण-दासका प्रभाव कैसा होता है; इस बातको प्रभुने माताको अति विशदभावसे समझा दिया। जैसे श्रीचैतन्य-भागवतमें लिखा है--

शुन शुन माता कृष्ण-भक्तिर प्रभाव।
सर्व्वभावे कर माता कृष्णे अनुराग।।

हे माता! कृष्ण-भक्तिका प्रभाव सुनो। हे माता! सब प्रकारसे कृष्णमें अनुराग करो।

कृष्णेर सेवक माता कभु नहे नाश।
काल चक्र डरायेन देखि कृष्णदास।।

हे माता! कृष्ण-सेवकका कभी नाश नहीं होता। कृष्णके दासको देखकर काल-चक्र भी डरता है।

गर्भवासे जत दुःख जन्मे वा मरणे।
कृष्णेर सेवक माता किछुइ ना जाने।।

गर्भवासमें, जन्ममें और मरणमें जितना दुःख है, हे माता! कृष्णके सेवकको वह दुःख नहीं व्यापता।

जगतेर पिता कृष्ण जे ना भजे बाप्।
पितृद्रोही नारकीर जन्म जन्म ताप।।

श्रीकृष्ण जगतके पिता हैं। जो पिताको नहीं भजता, उस पितृद्रोही नारकीको जन्म-जन्ममें कष्ट होता है।

भाग्यवती शची देवी पुत्रसे कृष्ण-कथा सुनकर प्रेमानन्दमें मत्त होकर निमाई चाँदसे मधुर वाणीमें कहने लगीं--"बेटा निमाई! मेरे सोनेके पुत्र! तुम जहाँ जो उत्तम वस्तु पाते हो, पहिले मुझको लाकर देते हो। गयाधामसे तुम देव-दुर्लभ कृष्ण-प्रेम-धन लाये हो। मुझे माँगनेमें भय हो रहा है। यदि कृपाकर इस अभागिनी जननीको भी कुछ दो, तो यह कृतार्थ हो जाय।"

यथा यथा जाओ तुमि पाओ जेवा धन।
देवता-दुर्ल्लभ वस्तु अमूल्य रतन।।
मायेर करुणा यदि थाके तोर चित्ते।
देह कृष्ण-प्रेमधन डराइ चाहिते।।
--चै० मं०

प्रभु जननीकी बात सुनकर बहुत ही ग्रानन्दित हुए। हृदय प्रेमानन्दमें नृत्य करने लगा। मृदु मन्द मुस्कानके साथ जननीसे बोले—

वैष्णव प्रसादे प्रेम पाइबे जे तुमि।
निश्चय जानिह कथा कहिलाम ग्रामि।।

वैष्णव-कृपासे तुम भगवत्प्रेम पावोगी, मैं जो कह रहा हूँ, इसको निश्चित समझना।

वैष्णव गोसाञि प्रेम दिते निते पारे।
ताहा बिना प्रेम केह दिबारे ना पारे।।
—चै० मं०

गोस्वामी वैष्णव लोग प्रेमका ग्रादान-प्रदान कर सकते हैं, उनके बिना कोई प्रदान नहीं कर सकता।

शची माता पुत्रकी ग्राश्वास वाणीसे बहुत ही प्रसन्न हुई। उनका सारा ग्रङ्ग पुलकसे सिहर उठा। दोनों नयनोंसे झर-झर प्रेमाश्रुधारा बह निकली। हृदयके उल्लाससे 'कृष्ण-कृष्ण' कहकर उच्च स्वरसे पुकार उठीं। प्रभुकी कृपासे उनको सहसा जगत-दुर्लभ प्रेमभक्ति प्राप्त हुई। उनके सारे दुःख दूर हो गये। उस समय वे सारी बातें भूल गयीं। पुत्र-बधू, पुत्रका संसारसे वैराग्य—ये सब कुछ भी उनको याद न रहे।

ए बोल शुनिया शची ग्रति हृष्टचित।
तखन पाइल प्रेम-भक्ति ग्राचम्बित।।

ये बातें सुन शची बहुत प्रसन्न हुईं ग्रौर तभी सहसा उनको प्रेम-भक्ति प्राप्त हो गई।

पुलकित सब ग्रङ्ग कम्प कलेवर।
नयने गलये ग्रश्रु धारा निरन्तर।।

सारे ग्रङ्ग पुलकित हो गये, शरीर कांपने लगा ग्रौर ग्राँखोंसे लगातार ग्राँसुग्रोंकी धारा बहने लगी।

कृष्ण कृष्ण बलि डाके हृदय उल्लास।
कहये लोचन गोरा प्रथम प्रकाश।।
—चै० मं०

कृष्ण! कृष्ण! बोलकर पुकारने लगीं। हृदय ग्रानन्दसे भर गया। लोचनदास कहते हैं—श्रीगौराङ्गका यह प्रथम लीला-प्रभाव-प्रकाश है।

श्रीगौराङ्ग पुनः जननीको तत्त्वकी बाते सुनाने लगे। शची देवीका ग्रन्तःकरण प्रेमानन्दसे उत्फुल्ल हो गया। ग्रत्यन्त ग्राग्रहपूर्वक पुत्रके पास धर्म-तत्त्व सुनने लगीं। उस समय प्रभु जीव-तत्त्व ग्रौर जीव-प्रकृति माताको समझाने लगे।

चित्त दिया शुन माता जीवेर जे गति । कृष्ण ना भजिले पाय जतेक दुर्गति ।।	हे माता ! ध्यान देकर जीवकी गति सुनो । कृष्णकी भक्ति जो नहीं करता, उसकी दुर्गति होती है ।
मरिया मरिया पुन पाय गर्भवास । सर्व्व अङ्गे अमेध्य पङ्केर परकाश ।।	वह बारंबार मरता है और गर्भमें वास करता है, उसका सारा अङ्ग अपवित्र पङ्कसे लिप्त होता है ।
कटु - अम्ल - लवण जननी जत खाय । अङ्गे गिया लागे तार महा मोह पाय ।।	उसकी माता कटु, अम्ल, लवण जो वस्तु खाती है उसका रस उसके अङ्गमें लगता है और वह महा मोहको प्राप्त होता है ।
मांसमय अङ्ग कृमि-कुले बेड़ि खाय । घुचाइते नाहि शक्ति मरये ज्वालाय ।।	उसके मांसमय पिण्डको कृमि चारों ओरसे काटते हैं, वह उनको हटानेकी शक्ति नहीं रखता और सन्तापसे मरता रहता है ।
नड़िते ना पारे तप्त पञ्जरेर माझे । तबे प्राण रहे भवितव्यतार काजे ।।	अपने सन्तप्त पञ्जरको हिला नहीं सकता । केवल भवितव्यताके वश उसके प्राण बचते हैं ।
कोन अति पातकीर जन्म नाहि हय । गर्भे गर्भे हय पुन उत्पत्ति प्रलय ।।	किसी-किसी अत्यन्त पातकी जीवका जन्म नहीं होता, वह गर्भमें ही जन्मता है और गर्भमें ही मरता है ।
शुन शुन माता जीवतत्त्वेर संस्थान । सात मासे जीवेर गर्भेते हय ज्ञान ।।	हे माता ! जीवतत्त्वके संस्थानके विषयमें सुनो । सात मासके बाद गर्भमें जीवको ज्ञान होता है ।
तखन से स्मङरिया करे अनुताप ! स्तुति करे कृष्णेरे छाड़िया घन श्वास ।। --चै० भा०	तब वह अपने कर्मोंका स्मरण करके पश्चात्ताप करता है और लम्बे साँस ले-लेकर कृष्णकी स्तुति करता है ।

गर्भस्थ जीवका आत्मज्ञान, पूर्वजन्मके अपने पापोंके क्षयके लिए अनुताप, गर्भावस्थामें रहते समय जीवका ईश्वर-ज्ञान, तथा गर्भ-यन्त्रणा निवारण

करनेके लिए कृष्णकी ग्राराधना ग्रौर स्तुति—ये सारे ग्रति सूक्ष्म तत्त्व प्रभुने उत्तम रीतिसे माताको समझा दिये। गर्भस्थ जीवके द्वारा श्रीभगवान्की स्तुतिकी बात सुनकर शची देवी विस्मित हो उठीं। प्रभु पुनः कहने लगे—

एइ मत गर्भवासे पोड़े ग्रनुक्षण।
ताहो भालवासे कृष्ण स्मृतिर कारण।।

इस प्रकार गर्भवासमें क्षण-क्षण जलता रहता है। परन्तु कृष्णस्मृतिके कारण उस ग्रवस्थाको भी चाहता है।

स्तवेर प्रभावे गर्भे दुःख नाहि पाय।
काले पड़े भूमिते ग्रापन ग्रनिच्छाय।।

स्तुति प्रार्थनाके प्रभावसे गर्भमें दुःख नहीं पाता है। इच्छा न होनेपर भी समय ग्रानेपर पृथिवीपर गिरता है।

शुन शुन माता जीव-तत्त्वेर संस्थान।
भूमिते पड़िले मात्र हय ग्रगेयान।।

हे माता! जीव-तत्त्वका संस्थान सुनो। पृथ्वी पर गिरते ही उसका ज्ञान नष्ट हो जाता है।

मूर्च्छागत हय क्षणे क्षणे कान्दे हासे।
कहिते ना पारे दुःख सागरेते भासे।।

मूर्च्छित होता है, कभी हँसता है, कभी रोता है। वह दुःखके समुद्रमें डूबता रहता है, पर कह नहीं सकता।

कृष्णेर सेवक जीव कृष्णेर मायाय।
कृष्ण ना भजिले एइ मत दुःख पाय।।

जीव कृष्णका सेवक है, कृष्णकी मायामें पड़कर कृष्णकी भक्ति न करके इस प्रकारसे दुःख भोगता है।

कतो दिने कालवशे हय बुद्धि ज्ञान।
इथे जे भजये कृष्ण सेइ भाग्यवान।।

कुछ दिनोंमें समय पाकर बुद्धि ग्रौर ज्ञानको प्राप्त करता है, इस ग्रवस्थामें जो कृष्णको भजता है, वही भाग्यवान है।

ग्रन्यथा ना भजे कृष्ण दुष्ट सङ्ग करे।
पुन सेइ मत माया पापे डुबि मरे।।
—चै० भा०

जो कृष्णको नहीं भजता, कुसंगतिमें रहता है, वह फिर उसी प्रकार माया ग्रौर पापमें डूबता-मरता है।

त्रयोदश अध्याय——माता और पत्नीको ज्ञान

प्रभु माताको जीव-तत्त्व समझाकर अब साधु-सङ्गका प्रभाव और नाम-माहात्म्यके सम्बन्धमें दो-एक बात कह रहे हैं। जैसा चैतन्य-भागवतमें वर्णन है——

एतेके भजह कृष्ण साधु-सङ्ग करि।
मने चिन्त कृष्ण, माता मुखे बोल हरि।।

इसलिए साधु-सङ्ग करके कृष्णकी भक्ति करो। हे माता! मनमें कृष्णका चिन्तन करो और मुखसे हरि बोलो।

भक्तिहीन कर्म्मे कोन फल नाहि पाय।
सेइ कर्म्म भक्तिहीन परहिंसा जाय।।

भक्ति-विहीन कर्मसे किसी फलकी प्राप्ति नहीं होती। भक्तिहीन कर्म वही है जिसमें परहिंसा होती है।

अन्तमें प्रभुने श्रीमद्भागवतके निम्न-लिखित श्लोककी आवृत्ति करके जननीको भली-भाँति व्याख्या करके सुनाया——

न यत्र वैकुण्ठ-कथा-सुधापगा
न साधवो भागवतास्तदाश्रयाः।
न यत्र यज्ञेशमखा महोत्सवाः
सुरेशलोकोऽपि न वै स सेव्यताम्।।
श्री म० भा० ५।१९।२४

जिस स्थानमें वैकुण्ठकी——भगवान्‌की कथारूपी सुधा नहीं बहती, जिस स्थान पर भागवत-कथामृत-कल्लोलिनीके एकान्त आश्रित भगवद्भक्त साधुजन नहीं रहते तथा जिस स्थानमें यज्ञेश्वर श्रीहरिके नृत्य-गीत आदि महोत्सवपूर्ण यज्ञ या अर्चना नहीं होती, साक्षात् ब्रह्मलोक होने पर भी उस लोकका सेवन न करना——वहाँ न रहना।

श्रीगौराङ्गने जननीको उद्देश्य करके श्रीमतीजीको भी तत्त्व-शिक्षा दे दी। आड़में बैठकर एकाग्रचित्तसे स्वामीके मुखसे निकली सुधामयी तत्त्वकी बातें सुनकर श्रीमतीजीके हृदयमें बड़ा आनन्द हुआ। प्रभुकी मनोकामना सिद्ध हुई। यह सारी तत्त्वकथा जननी और गृहिणीको सुनानेके लिए वे सुयोग खोज रहे थे। पति-देवताके मुखसे मधुमय कृष्ण-कथा श्रीमतीजीको बहुत अच्छी लगी। हृदय आनन्दसे उत्फुल्ल हो उठा। सारे दुःख भूलकर श्रीमतीजी प्राण-वल्लभके मुख-चन्द्रकी ओर एक टकसे देख रही थीं। कोई देख नहीं पा रहा था। श्रीमतीजी देखती हैं कि उनके पति-देवताके

सार अङ्ग परम ज्योतिर्मय हैं। प्रशान्त मुखमण्डल पर दिव्य आभा विकसित हो रही है। दोनों सुन्दर नेत्रोंसे दिव्य ज्योति विकसित हो रही है। उनके ज्योतिर्मय पुरुष-रत्नके प्रत्येक अङ्गसे मानो बिजली छूट रही है। उनके अङ्गकी शोभासे तथा ज्योतिसे घर आलोकित हो रहा है। श्रीमतीजी मन-ही-मन सोचती हैं—"क्या ये मनुष्य हैं? इतनी ज्योति, इतनी शोभा, इतना रूप तो मनुष्यमें संभव नहीं! ऐसी सरस मधुमयी वाणी, ऐसा माधुर्यमय वाक्य-विन्यास तो साधारण मनुष्यमें संभव नहीं। तो ये हैं कौन?"

मधुर मधुर तुया रूप।
जग-जन-लोचन अमिया स्वरूप॥

यही भाव देवीके मनमें आता है। श्रीमती प्रभुके पास पहले-पहल कृष्ण-कथा सुन रही हैं। प्रभुने श्रीमतीजीको पहले ही भक्ति-तत्त्वकी शिक्षा दी। श्रीगौर-विष्णुप्रियाका यह प्रथम धर्म-परिचय है। श्रीगौराङ्ग धर्म-शिक्षाके लिए नदियामें अवतीर्ण हुए थे। सबको ही धर्म-शिक्षा देकर कृतार्थ कर गये हैं। प्रेम-धर्मराज, प्रेमावतार श्रीगौराङ्गने सहधर्मिणी श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको प्रेम-धर्मका मूल-तत्त्व समझाया। जननीको उपलक्ष्य करके श्रीमतीको समयोपयोगी धर्म-शिक्षा दी। शची देवीको अब वैसा मानसिक दुःख न रहा। श्रीमतीजीका भी मनःक्लेश दूर हो गया।

प्रभु भोजन करके शयनगृहमें सोने चले गये। श्रीमती पद-प्रान्तमें बैठकर प्रभुकी पद-सेवा करने लगीं।

भोजन करिया सर्व्व भुवनेर नाथ। **योग निद्रा प्रति करिलेन दृष्टिपात॥** **—चै० भा०**	भोजन करनेके बाद त्रिभुवनके स्वामी श्रीगौराङ्ग प्रभुने अपनी योग-निद्रापर दृष्टिपात किया।

●

चतुर्दश अध्याय

शची देवीका स्वप्न और प्रभुकी लीला

तोमार बधुरे मोर सन्देह आछिल। **आजि से आमार मने सन्देह घुचिल॥** **--चै० मं०**	तुम्हारी वधूके प्रति मुझे सन्देह था, आज मेरे मनसे वह संदेह दूर हो गया।

● भोजनके समय माता द्वारा स्वप्न-वृत्तान्त वर्णन

प्रभु जब भोजन करनेके लिए बैठते, उस समय शची देवी दो-एक सांसारिक बात पुत्रसे पूछा करतीं। दूसरे समयमें प्रभुके साथ माताकी सांसारिक बातें करनेकी संभावना न थी। श्रीनिमाई चाँदके मनमें आनन्द पैदा करने के लिए वधूके द्वारा कभी भोजन परोसवाती थीं तथा स्वयं शची देवी पुत्रके पास बैठकर भोजन कराती थीं। घूँघट काढ़े लज्जाशीला श्रीमती विष्णुप्रिया सासके सामने डरती-डरती प्राण-वल्लभके भोजन-पात्रमें अन्न-व्यञ्जन परोसती थीं। श्रीमतीके चरणोंके नूपुरोंकी ध्वनिसे प्रभुका हृदय कम्पित हो उठता था। श्रीमतीके सामने आने पर प्रभुका भोजन करना रुक जाता, उनके हाथका ग्रास हाथमें ही रह जाता। प्रभुके इस मधुर भावको कोई समझ नहीं पाता। शची देवी पुत्रको अन्यमनस्क देखकर कहतीं--"बेटा! खाते समय क्या सोचते हो? जो कुछ सोचना हो, भोजनके बाद सोचना। इस समय मन लगाकर भोजन करो।" प्रभु जननीकी बात सुनकर अप्रतिभ (लज्जित) होकर भोजन करने लगते। पुत्रके मुखसे संसारकी बातें सुनकर शची देवीके हृदयमें आनन्द नहीं समाता। विशेषतः श्रीनिमाई चाँद जब वधूके सम्बन्धमें कोई बात बोलते, तब शची देवी आनन्दसे गद्‌गद हो जातीं। एक दिन प्रभु भोजनपर बैठे थे। शची देवी पास ही बैठी थीं। उस दिन प्रभुका मन कुछ प्रफुल्ल था। जननीके साथ वे हँस-हँस कर बातें करते थे और आड़में घूंघट काढ़े बैठी प्रियतमाके मुख-चन्द्रकी ओर बार-बार चञ्चल कटाक्षपात करते थे। पुत्रके मुखपर हँसी देखकर शची देवीके

आनन्दकी सीमा न रही। शची देवी पुत्रको सम्बोधन करके कहने लगीं--बेटा निमाई ! गत रात्रिके अवसानमें मैंने एक अति सुन्दर स्वप्न देखा है, तुमसे कहती हूँ, सुनो !

निशि अवशेषे मुइ देखिलुँ स्वपन। तुमि आर नित्यानन्द एइ दुइ जन ।।	रात्रिके अवसानमें मैंने तुम और नित्यानन्द दोनों जनोंको स्वप्नमें देखा है ।
बत्सर पाँचेर दुइ छाओयाल हइया । मारामारि करि दोँहे बेड़ाओ धाइया ।।	पाँच वर्षके बालक होकर मार-पीट करके दोनों दौड़ लगा रहे हो।
दुइ जने सान्धाइला गोसाञिर घरे । राम-कृष्ण लइ दोहे आइला बाहिरे ।।	दोनों आदमी जाकर ठाकुरजीके घरमें इकट्ठे हो गये। तुम दोनों बलराम-कृष्णको लेकर बाहर निकले।
ताँर हाते कृष्ण, तुइ लइ बलराम । चारि जने मारामारि मोर विद्यमान ।।	उसके हाथमें कृष्ण थे और तुमने बलरामको ले लिया था। तुम चारों जनें मेरे सामने मारपीट करने लगे।
राम-कृष्ण ठाकुर बोलये क्रुद्ध हैया । के तोरा ढाङ्गाति दुइ बाहिराओ गिया ।।	बलराम और कृष्ण क्रुद्ध होकर बोले--"तुम लोग दोनों कौन हो ? बाहर जाओ।
ए बाड़ी ए घर सब आमा दोँहाकार । ए सन्देश दधि दुग्ध जत उपहार ।।	यह घर, यह मन्दिर हम दोनों के हैं। यह सन्देश मिष्टान्न, दधि, दुग्ध--सारे उपहार हमारे हैं।"
नित्यानन्द बोलये से काल गेल वैया । जे काले खाइला दधि नवनी लुटिया ।।	नित्यानन्द बोले--"वे दिन बीत गये, जब तुम लोग दही, नवनीत लूट-लूट कर खाते थे।
घूचिल गोयाला, हैल विप्र अधिकार । आपना चिनिञा छाड़ सब उपहार ।।	गोप लोग हट गये, अब ब्राह्मणोंका अधिकार हो गया। अब स्वयं अपनेको पहचान कर सारे उपहार छोड़ दो।

प्रीते यदि ना छाड़िबा खाइब मारण ।
लुटिया खाइले वा राखिबे कोन जन ।।

यदि प्रेमपूर्वक नहीं छोड़ोगे, तो मार खाअोगे । लूटकर खाअोगे तो कौन रक्षा करेगा ?"

राम-कृष्ण बोले आजि मोर दोष नाञि ।
बान्धिया एड़िमु दुइ ढङ्ग एइ ठाञि ।।

बलराम और कृष्णने उत्तर दिया–"अब हमारा दोष नहीं है । दोनों जनोंको यहाँ बाँधकर पटक देंगे ।"

दोहाइ कृष्णेर यदि करों आजि आन ।
नित्यानन्द प्रति तर्ज्ज-गर्ज्ज करे राम ।।

"यदि आज अन्यथा करूँ तो कृष्णकी दुहाई है ।" इस प्रकार नित्यानन्दके प्रति गर्जकर बलराम बोले ।

नित्यानन्द बोले तोर कृष्णेर कि डर ।
गौरचन्द्र विश्वम्भर आमार ईश्वर ।।

नित्यानन्द बोले--"तुम्हारे कृष्णका हमें क्या डर है ? गौरचन्द्र विश्वम्भर हमारे ईश्वर हैं ।"

एइ मत कलह करह चारिजन ।
काड़ाकाड़ि करि सब करह भोजन ।।

इस प्रकार तुम चारों जने आपसमें झगड़ा कर रहे थे । उसके बाद सब छीना-झपटी करके भोजन करने लगे ।

काहारो हातेर केह काड़ि लइ जाय ।
काहारो मुखेते केहो मुख दिया खाय ।।

कोई किसीके हाथसे छीनकर, कोई किसीके मुखका अपने मुखमें लेकर खाता है ।

जननी बलिया नित्यानन्द डाके मोरे ।
अन्न देह माता मोरे क्षुधा बड़ करे ।।

नित्यानन्द मुझको माँ कहकर पुकारता है और कहता है--"माँ ! मुझे भोजन दे, बड़ी भूख लगी है ।"

एतेक बलिते मुञि चैतन्य पाइलुँ ।
किछु ना बुझिलुँ मुञि तोमारे कहिलुँ ।।
--चै० भा०

यह सुनते ही मेरी नींद उचट गयी । मैं कुछ नहीं समझी, इसीसे तुमको मैंने कह सुनाया है ।

प्रभुने माताके स्वप्नकी कहानी बहुत मनोयोगपूर्वक सुनी। उनके मुखचन्द्र पर मन्द-मन्द मुस्कुराहटकी रेखा दीख पड़ी। उस मधुर हास्यका मर्म शची देवीकी समझमें न ग्राया। श्रीभगवान् श्रीगौराङ्गकी उस भुवन-मोहिनी हँसीमें सारे तत्त्व निहित हैं। दु:ख यही है कि उसको समझनेकी शक्ति किसीमें नहीं है। प्रभुने हँसते हुए सुमधुर वचनोंसे माताको सम्बोधन करके कहा—"माँ! तुमने बहुत सुन्दर स्वप्न देखा है। इस स्वप्नकी बात किसीसे न कहना। तुम्हारे घरके देवता बड़े जाग्रत ग्रौर प्रत्यक्ष हैं। तुम्हारे स्वप्न-वृत्तान्तको सुनकर मेरा विश्वास ग्रौर भी दृढ़ हुग्रा है। ग्रनेक बार मैंने देखा है कि ठाकुरजीके घरकी नैवेद्यकी सामग्री ग्राधा-ग्राधी गायब है। मुझको तुम्हारी बहूके ऊपर सन्देह था। ग्रब देखता हूँ कि प्रत्यक्ष ठाकुरजी नैवेद्य खाते हैं। तुम्हारी बहूके ऊपरका मिथ्या सन्देह मेरा ग्रब दूर हो गया। लज्जासे मैंने यह बात तुमसे कभी नहीं कही।" प्रभुको व्यङ्ग्य सदा प्रिय था। परन्तु गयाधामसे ग्रानेके बाद वे बड़े गम्भीर हो गये हैं। वे कृष्ण-कथाके सिवा ग्रौर कोई बात नहीं कहते। किसीके साथ परिहास नहीं करते। तब माताके सामने प्रियाजीको लक्ष्य करके यह लीला क्यों की गई? इसमें एक तात्पर्य है। प्रभु ग्रत्यन्त मातृ-भक्त हैं। प्रभु जानते हैं कि प्रियाजीको लेकर ग्रादर करनेसे, उनके सम्बन्धमें कोई बात करनेसे माताजीको बड़ा सुख मिलता है, वे मनमें ग्रपार ग्रानन्द ग्रनुभव करती हैं। भक्त-वत्सल श्रीभगवान् भक्तकी मनोकामना क्यों नहीं पूरी करेंगे? जननीके सन्तोषके लिए वे समय-समय पर प्रियाजीको लेकर घरमें बैठे-बैठे हास्य-कौतुक ग्रादि करके दोनोंका मन हरण करते थे।

जखन थाकये लक्ष्मी सङ्गे विश्वम्भर।
शचीर चित्तेते हय ग्रानन्द विस्तर।।
मायेर चित्तेर सुख ठाकुर जानिया।
लक्ष्मीर सङ्गेते प्रभु थाकये वसिया।।
—चै० भा०

इसी कारण प्रभुने ग्रपनी जननी ग्रौर प्रियाजीको लेकर स्वप्नवृत्तान्तके

सम्बन्धमें एक उपहास करके माताके मनको सुख प्रदान किया। द्वारकी आड़में खड़ी प्रियाजीने सासके स्वप्न-वृत्तान्त और प्रभुके व्यङ्ग और रसिकताको सुना। सुनकर उनको बड़ी हँसी आयी।

हासे लक्ष्मी जगन्माता स्वामीर वचने।
अन्तरे थाकिया सब स्वप्नकथा शुने।।
––चै० भा०

पतिके वचनोंको सुनकर जगन्माता श्रीविष्णुप्रियाजी हँसती हैं और आड़में खड़ी होकर सारी स्वप्नकी बातें सुनती हैं।

हमको ऐसा लगता है कि देवीको हँसीके साथ-साथ मन ही मन कुछ लज्जाका भी उद्रेक हुआ था और साथ ही कुछ अभिमान भी हुआ था। यह बात किसी ग्रन्थमें नहीं है। श्रीमतीके हास्यका पर्याप्त कारण है, लज्जाका भी पर्याप्त कारण है। सासके सामने प्रभुने उनपर नैवेद्य चुराकर खानेका दोषारोपण किया था, कुलवधूके लिए यह एक भयानक लज्जाकी बात थी। इस मिथ्या अपवादसे उनके मनमें कष्ट हुआ था, यही अभिमानका कारण था। पतिके मुखसे स्त्री पर दोषारोपण, विशेषत: गुरुजनके सामने तथा देवताकी सामग्रीमें लोभकी बात लेकर। इसमें श्रीमतीको अभिमान होनेका विशेष कारण है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि श्रीमतीके सामने प्रभुको उस रातमें इस सम्बन्धमें एक बड़ी कैफियत देनी पड़ी थी। बड़े दु:खकी बात है कि इस अति सुन्दर मधुर रसपूर्ण घटनाका शास्त्रकारोंने अपने ग्रन्थोंमें उल्लेख नहीं किया।

शची देवीने पुत्रके मुखसे बहूके सम्बन्धमें इस मिथ्या अपवादकी बात सुनकर क्या कहा? यह भी ग्रन्थमें नहीं है। गोलोक गत महात्मा शिशिर-कुमारने लिखा है, जान पड़ता है शची देवीने मुँह पर कपड़ा देकर हँसते-हँसते उत्तर दिया होगा––"अरे निमाई! तू क्या कह रहा है? मेरी बहू लक्ष्मी है, उसको किस वस्तुका अभाव है, जो चोरी करके खायगी?" यही यथार्थ बात है। ऐसा उत्तर दिये बिना क्या शची देवी चुप रह सकती थीं?

● श्रीनित्यानन्दजीका शची मांके यहाँ निमन्त्रण—

शची देवीसे स्वप्नमें नित्यानन्दने कहा था—"माँ! मुझे बड़ी भूख लगी है। भात दो।" इसी कारण प्रभुने मातासे कहा—"माँ! आज नित्यानन्दको निमन्त्रण दो, उनको भली भाँति भोजन कराओ क्योंकि स्वप्नमें उन्होंने तुमसे भिक्षा माँगी है।" पुत्रकी बात सुनकर शची देवी बहुत आनन्दपूर्वक भोजनका आयोजन करने लगीं। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी सासके पास रहकर यथासाध्य सहायता करने लगीं। प्रभु स्वयं जाकर नित्यानन्दको निमन्त्रित कर आये। श्रीगौराङ्गने नित्यानन्दसे कहा—

आमार बाड़ीते आजि गोसाञिर भिक्षा।
चञ्चलता ना करिवा कराइल शिक्षा।।
—चै० भा०

प्रभुकी बात सुनकर नित्यानन्द अपने दोनों कानों पर हाथ रखकर 'विष्णु! विष्णु!' उच्चारण करन लगे। प्रभुको उत्तर देते हुए उन्होंने कहा—"पागल ही चञ्चलता करते हैं। तुम मुझको पागल समझकर चञ्चल कहते हो। तुम सबको अपने समान समझते हो?"

कर्ण धरि नित्यानन्द "विष्णु विष्णु" बोले।
चञ्चलता करे जत पागल सकले।।
ए बुझिये मोरे तुमि भावह चञ्चल।
आपनार मत तुमि देखह सकल।।
—चै० भा०

प्रभु सुनकर हँसे। घर लौटकर उस दिन माताके पास बैठकर रन्धनके कार्योंका परिदर्शन करने लगे। प्राणप्रिय भाई नित्यानन्दको आज निमन्त्रित किया है, एक जगह बैठकर दोनों भाई प्रसाद पायेंगे, यह सोचकर प्रभुके मनमें अत्यन्त आनन्द हो रहा है। इसी कारण रसोई घरमें वे माताके पास बैठे हैं। श्रीमतीजी घरके भीतर ही घूम रही हैं, अनेक कार्योंमें व्यस्त हैं। बीच-बीचमें प्रभुके नयनद्वय अलक्षित रूपसे प्रियाजीके मुख-मण्डल पर पड़ते हैं, श्रीमतीके नयनद्वय श्रीगौराङ्गके श्रीचरण-कमलोंपर पड़ रहे हैं। कभी-कभी चार आँखें मिल जाती हैं। वह मिलन बड़ा ही मधुमय होता है,

किन्तु क्षणमात्रके लिए ही होता है। तथापि उससे दोनोंका प्रीतिवर्द्धन होता है। शची देवी प्रसन्न चित्त होकर रसोई बना रही हैं।

यथा समय नित्यानन्द नृत्य करते-करते प्रभुके घरपर आकर उपस्थित हुए। प्रभुके भृत्य ईशानने नित्यानन्दके श्रीचरणोंको धो दिया। श्रीगौराङ्गने नित्यानन्दको सादर सम्भाषण कर भोजनके लिए बैठाया।

शची देवी देख रही हैं--

कौशल्यार घरे जेन श्रीराम लक्ष्मण।
एइ मत दुइ प्रभु करये भोजन।।
--चैं० भा०

मानो कौशल्याके घरमें राम-लक्ष्मण हों--इस प्रकार दोनों प्रभु भोजन कर रहे हैं।

● शची देवीको ऐश्वर्य-दर्शन

शची देवी भोजन परोस रही हैं और देख रही हैं कि दोनों जनोंका भोजन तीन भागोंमें विभक्त हो गया और एक पाँच वर्षकी अवस्थाका अति सुन्दर दिगम्बर बालक मानो प्रत्यक्ष आ गया है और निमाई-निताई दोनों जने उसे देखकर हँस रहे हैं। यथा--

आइ परिवेशन करे परम सन्तोषे।
त्रिभाग हइल भिक्षा दुइजन हासे।।

शची देवी परम सन्तोषपूर्वक भोजन परोसती हैं। उनकी भिक्षा तीन भागोंमें बँट गई, दोनों आदमी (निमाई-निताई) हँसते हैं।

आर बार आसि आइ दुइजन देखे।
वत्सर पाँचेर शिशु जेन परतेखे।।
—चैं० भा०

पुनः आकर माता दोनोंकी ओर देखती हैं, मानो वह पाँच वर्षका शिशु भी प्रत्यक्ष दीख रहा है।

शची देवी दोनों जनोंको किस रूपमें देखती हैं?

कृष्ण शुक्ल वर्ण देखे दुइ मनोहर।
दुइजन चतुर्भुज, दुइ दिगम्बर।।

देखती हैं कि कृष्ण और शुक्ल वर्णके दो मनोहर बालक हैं; दोनों ही चार भुजावाले हैं, दोनों ही दिगम्बर हैं।

शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म, श्रीहल मुसल । श्रीवत्स कौस्तुभ देखे मकर कुण्डल ।। —चैं० भा०	देखती हैं कि वे शङ्ख, चक्र, गदा, पद्म, हल, मूसल, श्रीवत्स, कौस्तुभ तथा मकर-कुण्डल धारण किये हैं।

शची देवी और क्या देखती हैं ?

आपनार वधू देखे पुत्रेर हृदये । सकृत् देखिया आर देखिते ना पाये ।। —चैं० भा०	अपनी बहूको पुत्रके हृदयमें देखा, उसे एक बार देख कर फिर नहीं देख पायीं ।

शची देवीका परम सौभाग्य है कि उनको श्रीश्रीनारायणके वक्षःस्थल पर विराजित श्रीलक्ष्मी देवीके दर्शन करनेका सौभाग्य प्राप्त हुआ। लोग कहते हैं कि निमाई भगवान् हैं। आज शची देवीने उसे प्रत्यक्ष देख लिया और श्रीमती विष्णुप्रिया देवी साक्षात् श्रीश्रीलक्ष्मी-स्वरूपिणी हैं, यह समझ सकीं। अपने भाग्यकी बात सोचकर आनन्दमें तल्लीन होकर वे भूतल पर मूर्छित होकर गिर पड़ी। झर-झर आँसुओंकी धारासे शची देवीका वक्षःस्थल तर हो गया, उनके परिधानका वस्त्र भीग गया। वाह्य ज्ञानसे शून्य होकर वे अजस्र अश्रु बहाती हुई रुदन करने लगीं। सारा गृह अन्नमय हो रहा था। श्रीगौराङ्ग तब घबराकर भोजनसे उठे और आचमन करके जननीको हाथ पकड़कर उठाया।

आथे व्यथे महाप्रभु आचमन करि । गाये हात दिया जननीरे तोले धरि ।। —चैं० भा०	महाप्रभुने झटपट आचमन करके माताको हाथसे पकड़ कर उठाया।

तब प्रभु जननीके शरीर पर हाथ फेरते हुए बोले—

उठ उठ माता तुमि स्थिर कर चित । केन वा पड़िले पृथिवीते आचम्बित ।। —चैं० भा०	हे माता ! उठो, चित्तको स्थिर करो। पृथ्वी पर अचानक कैसे गिर पड़ीं ?

प्रभुके श्रीहस्तके स्पर्शसे शची देवीको बाह्य ज्ञान हुआ। झट-पट उठकर उन्होंने अपने केश बाँधे और कपड़े सँभाले। परन्तु मुखसे कोई

बात नहीं निकल रही है केवल रो रही हैं और सारा अङ्ग थर-थर काँप रहा है। सारा शरीर प्रेमसे पुलकित हो रहा है। बीच-बीचमें लम्बे साँस छोड़ती हैं।

बाह्य पाइ आइ आथे व्यथे केश बान्धे।
ना बोलये आइ किछु, गृहमध्ये कान्दे।।
महा दीर्घश्वास छाड़े, कम्प सर्व्व गाय।
प्रेमे परिपूर्ण हइला, किछु नाहि भाय।।
--चै० भा०

प्रभुके पुराने विश्वस्त नौकर ईशानने सारा घर झाड़ा-बुहारा। नित्यानन्दने घरको अन्नमय कर दिया था। वह प्रसाद पाकर कृतार्थ हुआ। ईशानके भाग्यको देवता लोग भी तरसते हैं। प्रभु और प्रभुके गणोंकी सेवा ही उसका भजन-साधन है। शची देवीकी सेवा वह बहुत दिनोंसे करता आ रहा है। अब वह वृद्ध हो गया है। प्रभु उसको बहुत मानते-जानते हैं और आदर-सत्कार करते हैं। चौदहों भुवनोंमें ईशानके समान भाग्यशाली दूसरा कौन होगा?

ईशान करिल सब गृह उपस्कार।
जत छिल अवशेषे सकल ताहार।।
सेविलेन सर्व्वकाल आइरे ईशान।
चतुर्द्दश लोक मध्ये महा भाग्यवान।।
--चै० भा०

ये सारी घटनाएँ, श्रीश्रीगौर-भगवान्के ऐश्वर्यका विकाश श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने देखा या नहीं, यह ग्रन्थमें नहीं लिखा है। परन्तु प्रभुके मर्मी भृत्य ईशानने सब कुछ देखा--यह ग्रन्थमें मिलता है।

एइ मत अनेक कौतुक प्रति दिने।	इस प्रकार प्रतिदिन अनेक
मर्म्म भृत्य बइ इहा केहो नाहि जाने।।	कौतुक होते थे। उनको मर्मी भृत्य
--चै० भा०	ईशानके अतिरिक्त कोई नहीं जानता।

श्रीमती उस समय उसी घरमें थीं। आड़में खड़ी होकर प्रभुद्वयके भोगके दर्शन कर रही थीं। इतनी बड़ी एक घटना उनकी दृष्टिमें न पड़ी। श्रीभगवान्‌की लीलाके रहस्यको समझना कठिन है। समझाना तो और भी कठिन है। जान पड़ता है, अभी श्रीमतीजीको ऐश्वर्य-भाव दिखलानेका समय नहीं आया था। क्योंकि वे बालिका थीं, पति-देवताके सिवा दूसरे किसी देवताको नहीं जानती थीं। इसी बालिका मूर्त्तिको वक्षःस्थल पर धारण करके श्रीगौराङ्गने माताको दिखलाया। परन्तु श्रीमतीजीको इसका ज्ञान न होने दिया। इसके अर्थ और अभिप्रायको पाठक-पाठिकागण हृदयङ्गम करें।

● शची मांका वात्सल्य-भाव

इस प्रकार प्रभु बीच-बीचमें माताको ऐश्वर्य-भाव दिखलाकर भुलानेकी चेष्टा करते थे। परन्तु शची देवी ऐश्वर्य-भावमें भूलनेवाली न थीं। वे श्रीनिमाई चाँदको निमाईके सिवा और कुछ नहीं जानती थीं। इन सब अद्‌भुत और अलौकिक कार्योंसे शची देवीके मनमें नाना प्रकारकी उत्कण्ठाका उद्रेक होता था। इससे वे निमाई चाँदके अमङ्गलकी आशङ्का करके गृह-देवताके पास जाकर, गलेमें वस्त्र डालकर, हाथ जोड़कर निवेदन करतीं—"हे ठाकुरजी! हे नारायण! मेरे निमाई चाँदका कोई अमङ्गल न हो। यह सब मैं क्या देखती हूँ? मेरा निमाई बालक है और पागल भी है। उसके सब अपराधोंको क्षमा करके इस दासी पर दया करो।"

इसको ही यथार्थ वात्सल्य-भाव कहते हैं। यही वात्सल्य-रस है। शची देवीका श्रीगौराङ्गके प्रति जो वात्सल्य-भाव है उसमें और यशोदाका श्रीकृष्णके प्रति जो वात्सल्य-भाव है उसमें कोई अन्तर नहीं है। श्रीभगवान्‌की यह चिरन्तन प्रथा है कि अपने भक्तको ऐश्वर्य-भावमें भुलाकर वे स्नेहके बन्धनसे मुक्त हो जाँय। परन्तु उनके यथार्थ भक्त कभी भूलनेवाले नहीं हैं। श्रीभगवान्‌के इस कौशलको वे समझ जाते हैं। उनके ऐश्वर्यकी मायासे मुग्ध न होकर श्रीभगवान्‌को वे अपना जन समझकर उनको स्नेह और प्रेमके पाशमें बाँधे रखते हैं। शची देवी श्रीनिमाई चाँदको निमाई ही समझती हैं। श्रीगौराङ्गके महाप्रकाशके समय श्रीवासके आँगनमें भक्तगण शची देवीको लेकर गये थे, इसमें प्रभुकी सम्मति थी। उनके आदेशसे ही

उनकी वृद्धा जननीको उनका ऐश्वर्य-भाव दिखलाया गया था। उनकी माता उनके भक्तसे द्वेष करती थीं, इसको लेकर श्रीगौरभगवान् जननीके प्रति कटाक्ष करनेसे चूके नहीं थे। परन्तु फिर भी शची देवी श्रीभगवान्के ऐश्वर्यमें भूली नहीं। श्रीभगवान्में पुत्र-ज्ञान उनका बना ही रहता था। अपने निमाई चाँदको भगवान् कहना उन्हें अच्छा नहीं लगता था। वे सोचती थीं कि इससे उनके वत्सका अमङ्गल होगा। श्रीश्रीयशोदानन्दन और श्रीश्रीशचीनन्दन एक ही हैं।

यशोदा नन्दन जेइ, शची सुत हइल सेइ,
बलराम हइल निताइ।

श्रीकृष्णलीलाकी माँ यशोदा हैं और श्रीगौरलीलाकी शची माता। इसमें कुछ भी सन्देह नहीं है।

यशोदार भावे आइ परम विह्वल।
निरवधि नयने बहये प्रेम जल॥
—चै० भा०

श्रीगौर-भगवान् शची माताके घरमें बँधे हैं। श्रीकृष्ण भी माँ यशोदाके घरमें बँधे थे। श्रीभगवान्ने अनेक वार माताके स्नेहपाशको छिन्न-भिन्न करनेका प्रयास किया, पर वे समर्थ नहीं हुए। बाहरी रूपसे माताके स्नेह-बन्धनको काटा तो था, परन्तु भीतरसे उसको नहीं काट सके; वे भक्तोंके पूर्ण अधीन जो हैं। इस बातको उन्होंने वारंवार अपने श्रीमुखसे स्वीकार किया है।

अहं भक्तपराधीनो	हे द्विज! मैं सर्वथा भक्तोंके
ह्यस्वतन्त्र इव द्विज।	आधीन हूँ, मुझमें तनिक भी स्वतन्त्रता
साधुभिर्ग्रस्तहृदयो	नहीं है। मेरा हृदय साधुओंके द्वारा
भक्तैर्भक्तजनप्रियः॥	ग्रस्त रहता है, भक्तजन मुझको प्यार
श्रीमद्भागवत ९।४।६३	करते हैं और मैं भक्तजन को।

●

पञ्चदश अध्याय

प्रभुका प्रेमोन्माद और नित्यानन्दका युगलरूप-दर्शन

गौर हे !

युगल रूपे दाँड़ाओ तुमि । पराण भरे देखि हे आमि ।।	हे गौराङ्ग ! तुम युगल रूपमें खड़े रहो, मैं तुमको हृदय भरकर देख लूँ ।
प्रियाजिके लइया वामे । दाँड़ाओ देखि सुठाम ठामे ।।	प्रियाजीको वामभागमें लेकर खड़े हो जाओ, मैं भली भाँति दर्शन कर लूँ ।
वासना चित्ते नयन भरि । युगल रूप माधुरी हेरि ।।	मेरे चित्तमें बड़ी अभिलाषा है कि नयन भरकर तुम्हारे युगल रूपके माधुर्यको देखूँ ।
राइ-विष्णुप्रिया गौर-कानु । रूपे हार माने चन्द्र-भानु ।।	श्रीराधा श्रीविष्णुप्रिया हैं और श्रीकृष्ण श्रीगौराङ्ग हैं ; इनके रूपके सामने चन्द्र-सूर्य हतप्रभ हैं ।
बड़ दुःख पाइ नदीया धामे । ना देखि प्रियाजि तोमार बामे ।।	मैं नदियामें तुम्हारे वाम भागमें प्रियाजीको न देखकर बड़ा दुःख पाता हूँ ।
देखाओ मोरे युगलरूप । ओहे गौरचन्द्र नदीया-भूप ।।	हे नदियाके अधीश्वर गौरचन्द्र ! मुझे युगलरूप दिखाओ ।

—ग्रन्थकार

● शयन-गृहमें प्रभुका प्रेमोन्माद

शची देवी पुत्र और पुत्रबधूको लेकर इस प्रकार कभी आमोदमें, कभी विषादमें अपना संसार चला रही हैं। जिस समय निमाई चाँद माताके पास बैठकर श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको लेकर सांसारिक बातें करते हैं, आमोद-प्रमोद करते हैं, तब शची देवीके मनमें बड़ा आनन्द होता है। और जब प्रभु कृष्णप्रेममें तल्लीन होकर "हा कृष्ण ! हा कृष्ण !" कहकर अजस्र अश्रु

बहाते हैं, माताको 'माँ यशोदा' सम्बोधन करके बालकके समान कभी हँसते हैं, कभी रुदन करते हैं और कहते हैं--"माँ! मुझको छोड़ दो, मैं कृष्णकी खोजमें वृन्दावन जाऊँ।" तब शची देवी अत्यन्त व्याकुल होती हैं, पुत्रकी अवस्था सोचकर दुःखित होती हैं। इसी प्रकार शची देवीके दिन कट रहे हैं।

एक दिन भोजनोपरान्त रात्रिमें प्रभु शयन-गृहमें गये और शय्याके एक भागमें बैठ गये। श्रीमतीजी पानका डब्बा हाथमें लेकर घरमें आयीं तो

देखा कि उनके प्राणवल्लभ मुँह लटकाये शय्याके एक ओर बैठे हुए हैं। मुखचन्द्र मलिन है, मानो गम्भीर विषादकी छायासे अनुलिप्त है। करुणासे पूरित दोनों सुन्दर नेत्रोंसे टपाटप आँसू गिर रहे हैं। प्रभुने एक बार श्रीमतीजीको देखकर फिर मुँह लटका लिया। मानो श्रीमतीजीसे कुछ कहना चाहते थे, पर कह नहीं सके। हृदयके आवेगसे गला रुँध गया। दोनों नेत्रोंकी प्रबल अश्रुधारासे प्रभुका वक्ष:स्थल निमज्जित हो रहा था और शय्या भीज रही थी। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी प्राणवल्लभकी यह अवस्था देखकर सशङ्कित हुई। निश्चल होकर कुछ देर तक प्राण-वल्लभके अश्रुमय मुख-चन्द्रको देखती रहीं। वह अपरूप करुण दृश्य बड़ा ही हृदयस्पर्शी था, बड़ा ही माधुर्य-मय था। यदि मैं चित्रकार होता तो श्रीगौर-विष्णुप्रियाके इस चित्रको अङ्कित कर पाठक-पाठिकाओंको उपहार देकर कृतार्थ हो जाता। यदि कोई भाग्यवान कृती चित्रकार श्रीगौर-विष्णुप्रियाके उस समयके चित्रको अङ्कित करके वैष्णव समाजको उपहार दे, तो सारी गौड़ीय वैष्णव-मण्डली सदाके लिए उसकी ऋणी हो जाय।

श्रीमतीजी प्रभुके इस भावको देखकर भीत और त्रस्त होकर सासको बुलानेके लिए चलीं। वे दौड़कर सासके घरके द्वार पर खड़ी हो गयीं। श्रीमतीके भयका पर्याप्त कारण था। उनके प्राण-वल्लभ युवापुरुष हैं, बलवान हैं फिर दुर्बलके समान, स्त्रीके समान रो क्यों रहे हैं? श्रीमतीजी यही समझती थीं कि रोना-पीटना तो केवल स्त्रियोंका ही एकाधिकार है। परन्तु अपने प्राण-वल्लभको इसी अवस्थामें अनेक बार क्रन्दन करते उन्होंने देखा है तथा गयाधामसे लौटनेके बाद वे बीच-बीचमें बहुत रोते हैं, यह बात भी उन्होंने सुनी है। परन्तु आजके क्रन्दनके समान विषम क्रन्दन, प्राणवल्लभका इस प्रकारका विषम विमर्षभाव उन्होंने पहले कभी नहीं देखा। इसी कारण श्रीमतीजीके मनमें बड़ा भय हो गया है। पतिदेवको सान्त्वना देनेका साहस श्रीमतीजी नहीं कर सकीं। लज्जा छोड़कर इसी कारण देवी तत्काल दौड़कर सोयी हुई सासके घरके द्वार पर किवाड़ पीटती हुई बोलीं—"माँ! माँ! शीघ्र उठो!" शची देवी त्रस्त होकर अर्द्धनग्न अवस्थामें पागलके समान बहुत घबराती हुई शय्यासे उठीं और दरवाजा खोलकर डरते-डरते पुत्रवधूसे पूछा—"बेटी! क्या बात है? मेरा निमाई

ठीक तो है? उसका कोई अमङ्गल तो नहीं हुआ।" श्रीमतीजीने लज्जासे अवनत सिर होकर कहा--"नहीं, नहीं, वे केवल रो रहे हैं। एक बार आओ माँ! वहाँ चलकर देखो।" शची देवी झटपट चलीं। श्रीमती भी सासके पीछे-पीछे चलीं। शची देवीने पुत्रके गृहमें प्रवेश करके देखा कि निमाई चाँद शय्याके एक प्रान्तमें बैठकर चुपचाप सिर नीचा करके अविराम-गतिसे रुदन कर रहा है। नेत्रोंके अश्रु-जलसे वक्षःस्थल निमज्जित हो रहा है। जननी घरके भीतर आयी हैं, इस ओर उनका ध्यान नहीं है। शची देवी पुत्रके पास बैठ गयीं, निमाई चाँदके सिर पर हाथ रखकर अत्यन्त कातर स्वरमें बोलीं--'बेटा निमाई! क्या हो गया है? तुम रोते क्यों हो?"

विस्मित हइया शची विश्वम्भरे पूछे।
कि लागिया कान्द बापू तोर दुःख किसे।।

आश्चर्य-चकित होकर शची देवीने विश्वम्भरसे पूछा--"बेटा निमाई! तुम क्यों रोते हो? तुम्हें दुःख किस बातका है?"

मायेर वचन शुनि ना दिल उत्तर।
रोदन करये प्रभु आनन्दे विह्वल।।
--चै० भा०

माँकी बात सुनकर प्रभुने उत्तर नहीं दिया। वे आनन्दमें विह्वल हो रुदन करते रहे।

माताकी बात प्रभुके कानोंमें न पहुँची। उन्होंने कोई उत्तर नहीं दिया। शची माता अधिक व्यग्रतापूर्वक अपने वस्त्रके अञ्चलसे पुत्रके मुख-चन्द्रको पोंछकर उन्हें गोदमें लेकर बैठ गयीं। प्रेमपूर्वक उनका मुख चूम लिया। शची देवी समझ गयीं कि उनका पुत्र कृष्ण-प्रेममें विह्वल हो रहा है। ऐसे समयमें उसके कानोंमें कृष्ण-कथाके सिवा और कोई बात प्रवेश न करेगी। अतएव शची देवीने पुत्रको संबोधन करके कहा--"बेटा! निमाई! तुम कुछ कृष्ण-कथा कहो, तुम्हारे मुँहसे कृष्ण-कथा सुनकर मेरे प्राण जुड़ा जाते हैं।" माताके मुखसे अपने प्राण-धन कृष्णका नाम सुनकर प्रभुको वाह्यज्ञान हुआ। कृष्णका नाम सुनते ही वे मानो सिहर उठे। वहुत कष्टसे मनके आवेगको संवरण करके प्रभुने कहा--"माँ! मेरा रोना देखकर तुम लोग मनमें दुःख न मानना। मेरे मनमें कृष्णप्रेमका उदय होने पर ही मेरे नेत्रोंसे प्रेमाश्रु प्रवाहित होते हैं। मैं अब तक वड़े आनन्दमें था। मैं सामने देखता था--

कृष्णवर्ण एक शिशु मुरली बाजाय।

अहा! मेरे प्राणधन कृष्णकी कैसी अपरूप रूपराशि है! उस भुवन-मोहन रूपको देखकर मेरी आँखें चौंधिया गयीं और आँखोंसे अश्रुधारा बह चली।" इतना कहकर प्रभु हाथ जोड़कर श्रीकृष्णका स्तोत्र पाठ करने लगे—

नवीन नीरदश्यामं नीलेन्दीवर-लोचनम्। बल्लवीनन्दनं बन्दे कृष्णं गोपालरूपिणम्॥	नवीन जलधरके समान श्याम-वर्ण वाले, श्रेष्ठ नीलोत्पलके समान नेत्रवाले बल्लवी-नन्दन गोपाल-स्वरूप श्रीकृष्णकी मैं वन्दना करता हूँ।
स्फुरद्वर्हदलोद्बद्ध- वनमाला-विभूषितम्। गण्डमण्डल-संसर्गि चलत्काञ्चनकुण्डलम्॥	वे सुन्दर मोर-पंख धारण किये हैं तथा वनमालासे विभूषित हैं। उनके दोनों कानोंके चञ्चल स्वर्ण-कुण्डल गण्डमण्डलको स्पर्श कर रहे हैं।
स्थूलमुक्ता-फलोदार- हार-द्योतित वक्षसम्। हेमाङ्गद-तुला-कोटी- किरीटोज्ज्वल विग्रहम्॥	बड़े-बड़े मोतियोंके सुन्दर हारसे उनका वक्षःस्थल प्रकाशित हो रहा है। बाहुओंके बड़े-बड़े स्वर्णके अङ्गादि आभूषणोंसे तथा माथे पर सुन्दर किरीटसे उनका शरीर सुशोभित हो रहा है।
मन्दमारुत-संक्षोभ- कम्पिताम्बर-सञ्चयम्। रुचिरौष्ठपुटेन्यस्त- वंशी-मधुर-निःस्वनैः। लसद्गोपालिकाचेतो- मोहयन्तं मुहुर्मुहुः॥	मन्द-मन्द मारुतके आघातसे पीताम्बर कम्पायमान है। सुन्दर अधरों पर न्यस्त बाँसुरीसे मधुर ध्वनि हो रही है। इस प्रकार सर्वथा मनोहर रूप धारण करके बारंबार गोपाङ्गनाओंके चित्तको मोह रहे हैं।
वल्लवी-वदनाम्भोज- मधुपान-मधुव्रतम्। क्षोभयन्तं मनस्तासां सस्मेरापाङ्ग-वीक्षणैः॥	गोपियोंके मुख-कमलोंका मधु पान करनेवाले मधुकर, मुस्कुराते हुए अपने कटाक्षोंसे उनके मनको संक्षुब्ध कर रहे हैं।

वेणुवाद्य-महोल्लास-
कृतहुङ्कार-निःस्वनैः ।
सवत्सैरुन्मुखैः शश्वद्-
गोकुलैरभिवीक्षितम् ।।

उनकी बाँसुरीकी धुनि सुनकर गौएँ अपने बछड़ोंके साथ महा उल्लासपूर्वक हुँकार करती हुई उनकी ओर एक टक देख रही हैं।

प्रभु इस प्रकार कृष्णप्रेममें उन्मत्त होकर श्रीकृष्णकी रूपमाधुरीका वर्णन करने लगे एवं शची देवी और श्रीमती विष्णुप्रिया सुनने लगीं। तीनोंने कृष्ण-कथामें वह सारी रात अत्यन्त आनन्दसे बिता दी। श्रीमती विष्णुप्रियाके सारे अङ्गोंमें यौवनका पूर्ण विकास हो गया था। प्रभुके सङ्ग श्रीमतीजी किस प्रकार सुखपूर्वक घर-गृहस्थी चला रही थीं, यह उपर्युक्त घटनासे पाठक-पाठिकागण भली भाँति अनुभव कर सकते हैं। पतिके सङ्ग रात्रि-सहवास श्रीमतीजीके भाग्यमें बदा न था, क्योंकि प्रभु अपने घरमें, श्रीवासके आङ्गनमें तथा चन्द्रशेखर आचार्यके घर पर कीर्तनमें सारी रात बिता देते थे। श्रीमतीजीके साथ प्रभुका रात्रिके समय कदाचित् ही साक्षात्कार होता था। यदि कभी होता भी था तो सारी रात इसी प्रकार कृष्ण-कथामें बीत जाती थी।

● श्रीनित्यानन्दजीका युगल-रूप-दर्शन और उन्मत्तता

प्रभु कभी-कभी दिनमें भी घर पर शयन करते थे। उस समय शची देवी पुत्रवधूको सजाकर पनबट्टा हाथमें देकर पुत्रके पास भेज देती थीं। उस समय माताके सन्तोषके लिए प्रभु प्रियाजीके साथ एकत्र बैठकर कभी-कभी रसालाप करते थे। एक दिन अपराह्नमें श्रीगौर-विष्णुप्रिया इसी प्रकार युगल-रूप बैठे थे, उसी समय श्रीनित्यानन्द बाल्यभावमें तन्मय होकर नग्नावस्थामें प्रभु और देवीके सामने आ खड़े हुए।

एक दिन निज गृहे प्रभु विश्वम्भर ।
बसि आछे लक्ष्मी सङ्गे परम सुन्दर ।।

एक दिन विश्वम्भर प्रभु श्रीविष्णुप्रियाजीके साथ अपने घरमें परम सुख पूर्वक बैठे थे।

जोगाय ताम्बुल लक्ष्मी परम हरिषे ।
प्रभुर आनन्द ना जानाय रात्रि-दिशे ।।

प्रियाजी परम हर्षपूर्वक प्रभुको पान दे रही हैं। प्रभुको आनन्दमें रात्रि-दिवसका भान नहीं है।

जखन थाकये लक्ष्मी सङ्गे विश्वम्भर। **शचीर चित्तेते हय ग्रानन्द विस्तर॥**	जब विश्वम्भर प्रभुके साथ प्रियाजी रहती थीं तो शची माताके मनमें बड़ा ग्रानन्द होता था।
मायेर चित्तेर सुख ठाकुर जानिया। **लक्ष्मीर सङ्गेते प्रभु थाकेन बसिया॥**	माताके चित्तके सुखका ग्रनुमान करके प्रभु प्रियाजीके पास बैठा करते थे।
हेन काले नित्यानन्द ग्रानन्दे विह्वल। **ग्राइला प्रभुर बाड़ी परम चञ्चल॥**	उसी समय नित्यानन्द ग्रानन्द-विह्वल होकर ग्रत्यन्त चञ्चलतापूर्वक प्रभुके घर ग्राये।
बाल्यभावे दिगम्बर हैला दाँड़ाइया। **काहारे ना करे लाज प्रेमाविष्ट हैया॥** **--चै० भा०**	वे बाल्यभावमें दिगम्बर-रूपमें ग्राकर खड़े हो गये। प्रेमाविष्ट होनेके कारण वे किसीके सामने लज्जा नहीं कर रहे थे।

श्रीगौर-विष्णुप्रियाके युगलरूपके दर्शन करते ही नित्यानन्द प्रेमोन्मत्त हो वाह्यज्ञान भूल गये। उनके पहननेका वस्त्र सरक कर गिर गया, इसका भी उनको भान नहीं है। वे नग्न होकर सारे ग्राङ्गनमें प्रेमोल्लसित होकर नृत्य करने लगे। श्रीमतीजी लज्जासे सिर झुकाए घरके भीतर छिप गयीं। प्रभुने देखा कि नित्यानन्द प्रेमोन्मत्त है, प्रेमानन्दमें विह्वल है। इसलिए श्रीगौराङ्गने स्वयं उठकर उनके पास जाकर ग्रपनी चादर उनको पहना दी।

ग्रापने उठिया प्रभु परान वसन। **बाह्य नाहि, हासे पद्मावतीर नन्दन॥** **--चै० भा०**	स्वयं उठकर प्रभुने उनको वस्त्र पहनाया। वे पद्मावतीके नन्दन हँस रहे हैं, उनको वाह्यज्ञान नहीं है।

प्रभुके साथ नित्यानन्दका तात्कालिक वार्तालाप वड़ा ही कौतुकप्रद है। ठाकुर श्रीवृन्दावन दास ग्रपनी स्वभाव-सिद्ध मधुमय भाषामें जो लिख गये हैं वह यहाँ उद्धृत किया जाता है--

प्रभु बोले—"नित्यानन्द केने दिगम्बर।"
प्रभुने कहा—"नित्यानन्द ! तुम दिगम्बर क्यों बन गये ?"

नित्यानन्द 'हय हय' करये उत्तर ।।
नित्यानन्दने केवल 'हय हय' कहकर उत्तर दिया।

प्रभु बोले—"नित्यानन्द ! परह वसन।"
प्रभुने कहा—"नित्यानन्द ! वस्त्र पहनो।"

नित्यानन्द बोले—"आजि आमार गमन।"
नित्यानन्दने कहा—"आज मैं जाने वाला हूँ।"

प्रभु बोले—"नित्यानन्द! इहा केने करि।"
प्रभुने पूछा—"नित्यानन्द ! ऐसा क्यों करते हो ?"

नित्यानन्द बोले—"आर खाइते ना पारि ।।"
नित्यानन्दने कहा—"और नहीं खा सकता।"

प्रभु बोले—"एक एड़ि कह केने आर।"
प्रभुने कहा—"एक छोड़ कर दूसरी बात क्यों कहते हो ?"

नित्यानन्द बोले—"आमि गेनू दशवार ।।"
नित्यानन्दने कहा—"मैं दस बार गया हूँ।"

क्रुद्ध हई बोले प्रभु—"मोर दोष नाइ।"
प्रभुने क्रुद्ध होकर कहा—"अब मेरा दोष नहीं है।"

नित्यानन्द बोले—"प्रभु ! एथा नाहि आइ ।।"
नित्यानन्दने कहा—"प्रभु ! मैं यहाँ नहीं आया।"

प्रभु कहे—"कृपा करि परह वसन।"
नित्यानन्द बोले—"आमि करिब भोजन ।।"
—चै० भा०
प्रभु बोले—"कृपा करके वस्त्र पहनो।" नित्यानन्दने कहा—"मैं भोजन करूँगा।"

नित्यानन्द भावमें तल्लीन, प्रेममें उन्मत्त होकर मधुर नृत्य करते-करते सारे आङ्गनमें घूम रहे हैं। सुनते हैं कुछ और उत्तर देते हैं कुछ।

चैतन्येर भावे मत्त नित्यानन्द राय।
एक शुने आर कहे हासिया बेड़ाय ।।
—चै० भा०
श्रीनित्यानन्द चैतन्यके भावमें उन्मत्त हो रहे हैं। सुनते हैं एक बात, उत्तर देते हैं कुछ और। एवं हँसते हुए घूम रहे हैं।

नित्यानन्दके चरितको देखकर शची देवी अपनी हँसी नहीं रोक पा रही हैं। वे नित्यानन्दको बहुत प्यार करती हैं। नित्यानन्दको देखते ही उनको अपना विश्वरूप याद आ जाता था। वे नित्यानन्दके शरीर पर विश्वरूपका आविर्भाव देखती थीं।

नित्यानन्देर चरित देखिया आइ हासे।
विश्वरूप पुत्र हेन मने मने वासे।।
——चै० भा०

नित्यानन्दने जब बाह्यज्ञानको प्राप्त होकर वस्त्र धारण किया, तब शची देवीने घरसे बाहर आकर नित्यानन्दको पाँच बढ़िया सन्देश (मिठाई) खानेके लिए दिये।

बाह्य पाइ नित्यानन्द परिला वसन।
सन्देश दिलेन आई करिते भोजन।।
——चै० भा०

और नित्यानन्दने क्या किया? एक सन्देश खा कर चारको चारों ओर छींट दिया। शची देवी दुःखसे हाय-हाय करने लगीं और नित्यानन्दसे बोलीं—"बेटा निताई! वत्स! सन्देशोंको व्यर्थ क्यों नष्ट किया? मेरे घरमें अब और तो नहीं है जो तुमको खानेके लिए दे सकूँ।" नित्यानन्दने हँसते हुए उत्तर दिया—"एक साथ मुझको क्यों दे दिये? मुझको और सन्देश दो।" शची देवीने कुछ उदास मनसे घरकी ओर देखा तो वे चारों सन्देश घरमें जिस स्थान पर थे, ठीक उसी स्थान पर पड़े पाये। देखकर उनको बड़ा अचम्भा हुआ। उन्होंने फिर उन सन्देशोंको नित्यानन्दके हाथमें देकर कहा, "बेटा! ये सन्देश घरके भीतर कहाँसे आये? तुमने तो उन्हें बाहर छींट दिया था। मेरे घरमें तो और सन्देश थे नहीं।" नित्यानन्द परम सन्तोष पूर्वक शची देवीके दिये हुए सन्देशोंको खाकर हँसते-हँसते बोले—"जो मैंने फेंक दिये थे, तुम्हारा दुःख देखकर उनको मैंने बटोरकर तुम्हारे घरमें रख दिये। क्योंकि तुम्हारे घरमें और सन्देश तो थे नहीं।" नित्यानन्दकी महिमा समझकर—

आइ बोले—"नित्यानन्द केन मोरे भाँड़ ।
जानिलुँ ईश्वर तुमि मोरे माया छाड़ ।।"
—चै० भा०

नित्यानन्द शची देवीके मुखसे यह बात सुनकर बालकके समान उनके चरण पकड़नेके लिए चले और शची देवी दौड़कर भाग गयीं ।

बाल्य भावे नित्यानन्द आइर चरण ।
धरिबारे जाय, आइ करे पलायन ।।
—चै० भा०

नित्यानन्द छोड़नेवाले न थे । शची देवीके साथ-साथ दौड़ते हैं । सारे आङ्गन दौड़कर शची देवी नित्यानन्दके भयसे जब घरमें पैठकर द्वार बन्द करने लगीं, तब नित्यानन्द लौटे । प्रभु आङ्गनमें खड़े होकर सब देख रहे थे और देखकर हँस रहे थे । श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने भी अन्तरालमें खड़े होकर नित्यानन्दकी सारी कार्यवाही देखी । देखकर श्रीमतीजी मुखको आँचलसे ढक कर हँस पड़ीं । नित्यानन्दके चरित अद्भुत और अगाध हैं । साधारण लोगोंकी क्या बिसात जो समझे ? नित्यानन्दके चरित्रकी जो निन्दा करते हैं, उनका मुँह नहीं देखे, क्योंकि उनके समान पापी संसारमें दूसरा नहीं है । ठाकुर वृन्दावन दासने लिखा है—

नित्यानन्दे निन्दा करे जे पापिष्ठ जन ।
गङ्गाओ ताहाके देखि करे पलायन ।।
—चै० भा०

उन्होंने और भी लिखा है—

नित्यानन्दे जाहार तिलेक द्वेष रहे ।
भक्त हइलेओ से कृष्णेर प्रिय नहे ।।

नित्यानन्दमें जिसका तिलमात्र भी द्वेष है, वह भक्त हो तो भी कृष्णका प्रिय नहीं है ।

प्रभुने एक दिन स्वयं राघव पण्डितसे कहा था—

एइ नित्यानन्द जेइ कराय आमारे ।
सेइ करि आमि एइ बलिल तोमारे ।।

ये नित्यानन्द मुझसे जो कराते हैं, मैं वही करता हूँ—यह तुमको बताता हूँ ।

आमार सकल कर्म्म नित्यानन्द द्वारे । अकपट एइ आमि कहिल तोमारे ।।	मेरे सारे कर्म नित्यानन्दके द्वारा होते हैं, मैं यह बात निष्कपट भावसे तुमको कहता हूँ ।
जेइ आमि सेइ नित्यानन्द भेद नाइ । तोमार घरेइ सब जानिबा एथाइ ।।	जो मैं हूँ, वही नित्यानन्द है, दोनोंमें अन्तर नहीं है । यह जानलो कि तुम्हारे घरमें ही सब कुछ है ।
महा योगेश्वरे जेहो पाइते दुर्लभ । नित्यानन्द हइते ताहा पाइबा सुलभ ।।	महा योगेश्वरसे भी जो प्राप्त करना दुर्लभ है, नित्यानन्दसे वह वस्तु सहज ही प्राप्त हो सकती है ।

प्रभुने एक दिन और भक्तगणको सम्बोधन करके कहा था—

प्रभु बले शुनह सकल भक्तगण । नित्यानन्द पादोदक करह ग्रहण ।।	प्रभु बोले—हे सब भक्तगण ! सुनो, नित्यानन्दका पादोदक ग्रहण करो।
करिले इँहार पादोदक रसपान । कृष्णे दृढ़ भक्ति हय इथे नाहि आन ।। —चै० भा०	इनका पादोदक रस-पान करनेसे श्रीकृष्णमें दृढ़ भक्ति होती है—इसमें संदेह नहीं ।

श्रीगौर-विष्णुप्रियाके युगलरूपके दर्शन करके नित्यानन्दका प्रेमोन्माद सौगुना बढ़ गया था। वे प्रेमानन्दमें मत्त होकर उद्दण्ड नृत्य करते रहे। उनके तत्कालीन भावका वर्णन महाजन लोगोंने इस प्रकार किया है—

मत्त सिंह सम घन घन गरजन, चञ्चल पदनख-शशिया ।	उन्मत्त सिंहके समान बार-बार गर्जते हैं, चरण-नख रूपी शशि चलायमान हैं ।
कटि तटे अरुण वरण वर अम्बर, खेने खेने उड़त पड़त खसि खसिया ।।	कटि-प्रदेशमें सुन्दर रक्त वर्णका वस्त्र क्षण-क्षण उड़ता है और गिर-गिर पड़ता है ।

नित्यानन्दके साथ कुछ देर आमोद-प्रमोद करके प्रभु उनके साथ कीर्त्तनमें बाहर निकले । शची देवी और श्रीमतीजी अपने-अपने गृहकार्यमें लग गयीं । उस दिनकी घटनासे शची देवीके मनमें नित्यानन्दकी महिमाने जड़ जमा ली ।

समय-समय पर पुत्रके अद्भुतकार्य देखकर वे चकित हो जातीं और सोचने लगतीं--"निमाई क्या आदमी है?" इस बार फिर निमाईके क्रिया-कलापको देखकर शची देवीके मनमें ठीक वही सन्देह उत्पन्न हुआ। वे निताई और निमाईको भिन्न नहीं मानती थीं। निमाई चाँदने स्वयं यह बात माताको बतलायी थी।

जेइ आमि सेइ नित्यानन्द भेद नाइ।

नित्यानन्द भी शची देवीकी माताके समान श्रद्धा-भक्ति करते थे।

तोर पुत्र बटे मुञि जानिह सर्व्वथा। मैं तुम्हारा पुत्र हूँ--इसको यथार्थ समझना।

शची देवी इस प्रकार दो पुत्रोंको लेकर बीच-बीचमें आनन्द करती थीं। वे नित्यानन्दको देखकर विश्वरूपका शोक भूल जाती थीं। शची देवी देखती थीं कि नित्यानन्दके पास रहनेसे निमाई चाँद बहुत प्रसन्न रहते हैं, हास्य-कौतुक करते हैं। यह देखकर शची देवीके मनमें बड़ा सुख होता था। इसलिए नित्यानन्दको वे प्रतिदिन अपने घर आनेके लिए कहती थीं, नित्यानन्द भी शची देवीका आदेश पालन करनेमें त्रुटि नहीं करते थे। इस प्रकार निमाई और निताईको लेकर शची देवी इतने दुःखके बीच भी समय-समय पर आनन्दित होती थीं।

एइ मते स्नेह रसे सभे गर गर।
दुइ पुत्र देखि शचीर जुड़ाय अन्तर।।
--चै० भा०

इस प्रकार स्नेह-रसमें सभी सराबोर रहते हैं, दोनों पुत्रोंको देखकर शचीका अन्तःकरण शीतल हो जाता है।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी नित्यानन्दको देखते ही घरमें छिप जाती थीं। नित्यानन्दके कार्य-कलापको देखकर श्रीमतीजी अपनी हँसी नहीं रोक सकती थीं।

● महासंकीर्त्तन

श्रीगौर-विष्णुप्रियाको युगलरूपमें देखनेकी नित्यानन्दको बड़ी साध थी। वह साध आज पूरी हो गयी। इसी कारण वे आनन्दसे नृत्य करते-करते प्रभुके साथ कीर्त्तनमें निकल पड़े। श्रीश्रीनित्यानन्द सदानन्द थे, परन्तु श्रीगौर-विष्णुप्रियाके दर्शन करके आज पूर्णानन्द हो गये। आज उनके आनन्दकी सीमा नहीं है। वे उद्दण्ड नृत्य करते-करते नदियाके रास्तेमें प्रभुके साथ निकल पड़े। समस्त नदियाके लोगोंने महासंकीर्त्तनमें योग दिया।

सभी प्रेममें उन्मत्त हैं। दोनों भाई दोनों बाहु ऊपर उठाकर सबके बीचमें मधुर नृत्य कर रहे हैं। श्रीश्रीगौरहरिके मुखकी मधुर हरिनामकी ध्वनिसे सबके मन मत्त हो रहे हैं। दोनों भाई दोनों हाथोंसे नदियाके मार्गमें प्रत्येक जनको प्रेम बाँट रहे हैं। कैसा मधुर कण्ठस्वर है! कैसी सुन्दर मनको मोहनेवाली नृत्य-भङ्गी है! जगत्‌को मुग्ध करनेवाली कैसी रूपराशि है! लाखों नर-नारी उन्मत्तभावसे दर्शन कर रहे हैं। अधम ग्रन्थकार-रचित महासंकीर्त्तनमें श्रीगौर-निताई नृत्य विषयक एक पद यहाँ उद्धृत किया जाता है —

दु बाहु तुले, ताले ताले, **ऐ नेंचे चले, गोरा राय!**	दोनों भुजाएँ उठाकर, ताले-ताल नाचते हुए ये गौरचन्द्र जा रहे हैं।
गौर-हरि, बल्‌चे हरि, **वदन भरि, कि शोभा हाय ।।**	गौर-हरि मुँह भरकर 'हरि हरि' बोल रहे हैं, कैसी शोभा हो रही है!
डाक्‌चे सबे, मधुर रवे, **नाम के लबे, आय रे आय।**	सभी मधुर स्वरसे भगवान्‌का नाम पुकार रहे हैं। अरे! जिनको नाम संकीर्तन करना हो, वे आते जायें।
नदेर पथे, निताइ साथे, **हाते हाते, प्रेम विलाय ।।**	नदियाके रास्तेमें निताईके साथ हाथों-हाथ प्रेम वितरण हो रहा है।
गलाय माला, शचीर बाला, **नाचिछे भाला, निताइ सने।**	शचीके पुत्र गौरहरि गलेमें माला पहन निताईके साथ खूब नाच रह हैं।
सङ्गे जत, पारिषद्, **उनुमत, नामेर गाने ।।**	साथमें जितने पारषद हैं, सब नाम संकीर्त्तनमें उन्मत्त हो रहे हैं।
निमाइ नाचे, निताइ याचे, **सबार काछे, प्रेमरतन।**	निमाई नाचते हैं और निताई सबसे प्रेम-रत्नकी याचना करते हैं।
प्रेम-भिखारी, गौरहरि, **कोले धरि, चुम्बे वदन ।।**	प्रेम-भिखारी गौरहरि उनको गोदमें लेकर मुख-चुम्बन करते हैं।
धूलि-भूषण, राङ्गा चरण, **दुटि नयन, करुणा भरा।**	धूलिसे भूषित हैं, रक्त कमलके समान चरण हैं तथा दोनों नेत्र करुणासे भरे हैं।

वदनचन्द्र, नयनानन्द, प्रेम-कन्द, नयने धारा ।।	चन्द्रवदन नेत्रोंको आनन्द प्रदान करनेवाला हैं, प्रेमावतार गौर-हरिके नेत्रोंसे अश्रुओंकी धारा बह रही है;
भासिछे वक्ष, नाहिक लक्ष्य, साधन मुख्य, सेरूप हेरे ।	उससे वक्षःस्थल निमज्जित हो रहा है जिसकी ओर उनका कोई लक्ष्य नहीं है। उस रूपको देखकर ऐसा लगता है कि संसारमें केवल साधन ही मुख्य वस्तु है।
रसेर सिन्धु, धरम बिन्दु, वदन-इन्दु, रयेछे घिरे ।।	रसके समुद्र गौरहरिके मुखचन्द्र पर पसीनेकी बूंदें झलक रहीं हैं।
नित्यानन्द, गौरचन्द्र, मन्द मन्द, नाचेन सुखे ।	नित्यानन्द और गौरचन्द सुखपूर्वक मन्द-मन्द नृत्य कर रहे हैं।
शिथिल अङ्ग, बाजे मृदङ्ग, हा गौराङ्ग, सबार मुखे ।।	अङ्ग शिथिल हो रहे हैं, मृदङ्ग वज रहे हैं और सबके मुखसे केवल 'हा गौराङ्ग' शब्द निकल रहा है।
बाल वृद्ध, युवती-वृन्द, प्रेम मुग्ध, नृत्य हेरि ।	बाल, वृद्ध और युवतीगण सभी उस नृत्यको देखकर प्रेममुग्ध हैं।
सबाइ बले, शचीर छेले, कि खेला खेले, बुझिते नारि	सब कह रहे हैं--कुछ समझमें नहीं आता कि यह शचीका पुत्र कौनसी क्रीड़ा कर रहा है!
नदीया राजे, धूलिर साजे, हृदय - माझे, सबाइ पूजे ।	धूलि-सज्जित नदियाके राजाकी सभी हृदयके अन्तस्तलसे पूजा कर रहे हैं।
जतेक सती, छाड़िया पति, नदीया - पति, हरिषे भजे ।।	जितनी सती-साध्वी स्त्रियाँ हैं, अपने-अपने पतियोंको छोड़कर नदियाके अधीश्वर श्रीगौराङ्गकी हर्षसे भक्ति करती हैं।

भजन शुधु,	गौर - बिधु,	केवल नदियाके चन्द्र प्राण-प्रिय गौर-चन्द्रका भजन हो रहा है।
पराण - बन्धु,	नदेर चाँद।	
से रूप हेरे,	जाइते नारे,	उस रूपको देखकर लोग घर लौटना नहीं चाहते। विषम प्रेम-फन्देमें फँसे हैं।
गृहे फिरे,	विषम फाँद।।	
दु'भाई मिले,	सकल भुले,	दोनों भाई मिलकर, सब कुछ भूलकर, क्या चमत्कार खेल खेल रहे हैं।
कि खेला खेले,	चमत्कार ।	
प्रेमोन्मत्त,	गौर - नृत्य,	प्रेमोन्मत्त गौराङ्गका नृत्य एक परम तत्व है, जिसको समझ पाना बड़ा कठिन है।
परम-तत्त्व,	बुझान भार।।	
सबाइ देखे,	मनेर सुखे,	सभी देखकर मन ही मन ग्रानन्दित हो रहे हैं, परन्तु यह दास दुःखसे मरा जाता है;
ए दास दुःखे,	म'रे जे गेल।	
करम फेरे,	ग्राँधार घरे,	कर्मके फेरसे ग्रंधेरे घरमें केवल नयनाश्रुधारामें प्रवाहित होता है।
नयन नीरे,	भासे के ल।।	

●

षोडश अध्याय

श्रीमतीका मान-भञ्जन

● विष्णुप्रियाका दुखःजनित मान

जाश्रो गौर तुया सने किसेर पीरिति ।	हे गौराङ्ग । जाश्रो, तुम्हारे
——वृन्दावन दास ।	साथ कैसी प्रीति ?

पहले लिख चुका हूँ कि श्रीनिमाई चाँद कभी-कभी रात-रात भर जागकर कीर्त्तन करते थे। महीनेमें श्राधेसे श्रधिक दिन वे घर पर नहीं रहते थे। रात ही भजनके लिए उपयुक्त समय है। उसको वे व्यर्थ बिताना पसन्द नहीं करते थे। प्रभुने श्रपने श्रीमुखसे श्रपने भक्तोंको कहा था—

प्रभु बोले——भाइ सब सुनो मन्त्र सार । रात्रि केने मिथ्या जाय श्रामा सबाकार ।।	प्रभु बोले—हे भाई ! सब मन्त्रोंका सार सुनो । हम सबोंकी रात बेकार क्यों नष्ट हो ?
श्राजि हते निर्व्वन्धित करह सकल । निशाय करिब सभे कीर्त्तन मङ्गल ।।	श्राजसे सब लोग संकल्प कर लो कि हम लोग रातमें कीर्त्तन-मङ्गल करेंगे ।
संकीर्त्तन करिया सकल-गण-सने । भक्ति-स्वरूपिणी गङ्गा करिब मज्जने ।।	हम सब लोग साथ-साथ संकीर्त्तन करके भक्तिकी गंगामें डुबकी लगायेंगे ।
जगत उद्धार हउ शुनि कृष्णनाम । परार्थे से तोमार सभार धन-प्राण ।। ——चै० भा०	कृष्ण-नाम सुनकर जगतके जीवोंका उद्धार हो श्रौर तुम सब लोगोंके धन श्रौर प्राण परोपकारमें लगें ।

जिस दिन श्रपने घर संकीर्त्तन होता, उसी दिन प्रभु श्रपने घर शयन करते थे। श्रीनिमाई चाँद रात्रिको श्रपने घर शयन नहीं करते, इससे शची देवीको बड़ा दुःख होता था। श्रीमतीजी दुःखी होती थीं। परन्तु करतीं क्या ? पुत्रके भाव श्रौर गतिको देखकर शची देवी उसको कुछ कह नहीं सकती

थीं। एक दिन भोजनके समय शची देवीने पुत्रसे कहा—"बेटा निमाई! तुम अपने घर पर ही कीर्त्तन किया करो। मैं देखूँगी, बहू भी देखेगी।" श्रीगौराङ्ग माताकी बात सुनकर कुछ हँसे। उस हँसीका मर्म रसज्ञ पाठक-पाठिकागण समझ लें। श्रीमतीजी इस सम्बन्धमें अपने प्राण-वल्लभको कुछ कहनेका साहस नहीं करतीं। मन ही मन बहुत दुःख पाती थीं। श्रीमती अब बालिका नहीं हैं। यौवनके उद्गमसे उनकी अपरूप रूपराशि सारे अंगमें छिटक रही है।* उनके मनमें स्वामीके सङ्गके सुखकी लालसा उदय हो

---

*श्रीश्रीपाद विश्वनाथ चक्रवर्ती कृत 'श्रीगौराङ्ग-लीलामृत' काव्यका पयार छन्दमें श्रीकृष्णदास कविराज द्वारा अनुदित श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीके इस समयके रूपका वर्णन अत्यन्त ही मनोहर और चित्ताकर्षक है। गौर-भक्त-वृन्दके चित्त-विनोदार्थ देवीके अपरूप-रूपका चित्रण यहाँ अविकल उद्धृत किया जाता है—

कनक दामिनी जिनि अङ्गेर वरण। **कत कोटि चाँद शोभा सुचारु वदन॥**	शरीरका वर्ण स्वर्ण और विद्युतको हराने वाला है और सुन्दर मुख-मण्डल कोटि-कोटि चन्द्रकी शोभा जैसा है।
वेणी भुजङ्गिनी शोभे नितम्ब उपरे। **ग्रन्थित कनक झाँप बकुलेर हारे॥**	नितम्बके ऊपर भुजङ्गिनी-सी वेणी शोभती है। कनककी झँपोली बकुल पुष्पके हारसे ग्रथित है।
कुटिल कुण्डल जेन भ्रमरेर पाति। **दुइ गण्ड झलमल मुकुरेर भाँति॥**	कुटिल केश-पाश भ्रमरकी पंक्तिके समान शोभते हैं। दोनों गाल दर्पणके समान झिल-मिल करते हैं।
कर्णे साजे मणिमय कर्णिका भूषण। **निम्ने दोले क्षुद्र-झाँपा मुकुता खिचन॥**	कानों पर मणिमय कर्णिका आभूषण सुसज्जित हैं मानो मुक्ताकी नक्काशी की हुई क्षुद्र झँपोली डोल रही है।
कर्णभूषा भार भये सुवर्ण शिकले। **शलाका सहिते बद्ध करि श्रुतिमूले॥**	कानोंके आभूषणोंके भारके भयसे स्वर्णकी साँकल शलाकाके साथ कानोंके मूलमें बँधी है।

गयी है। एक दण्ड भी प्राण-बल्लभको बिना देखे नहीं रह पातीं। उनके प्राण-बल्लभ रसिक-शेखर नटवर-वेशमें हँसते-हँसते जब उनको प्यार करते, उनके साथ एकत्र बैठकर कौतुक करके उनका मन हरण करते, उस समय

स्वर्णसूत्रे सूक्ष्म मुक्ता करिया रचन। पद्मराग मणि माझे सिंथार बन्धन।।	सोनके धागेमें नन्हे-नन्हे मोती पिरोकर पद्मराग मणिके बीचमें सीमन्तकी रचना हुई है।
कपाले सिन्दुर बिन्दु प्रभाते अरुण। कस्तुरी चित्रित तार पाशे सुशोभन।।	कपालमें सिन्दूरका टीका प्रभातमें अरुणोदयके समान सुशोभित है। उसके पास कस्तूरीका चित्रण शोभा देता है।
मृगमद बिन्दु शोभे चिबुक उपरे। सुरङ्ग अधरे मृदु हास मनोहरे।	चिबुकके ऊपर कस्तूरीका बिन्दु शोभित है। सुरङ्ग अधरों पर मृदुहास्य मनको हर लेता है।
चकित चाहनि जेन चञ्चल खञ्जन। भूरुर भङ्गिमा देखि काँपये मदन।।	चकित चञ्चल दृष्टि खञ्जनके समान शोभती है। दोनों भौहोंकी भङ्गिम देखकर मदन प्रकम्पित हो जाता है।
तिल फूल जिनि नासा गजमुक्ता दोले।। गले चन्द्रहार तहि मालतीर माले।।	तिलके फूलको पराजित करती हुई मानो गजमुक्ता नाकमें लटक रही है। गलेमें चन्द्रहार तथा मालतीकी माला सुशोभित है।
छोट बड़ क्रम करि सुवर्णेर हारे। कण्ठ देशे शोभा करियाछे थरे थरे।।	छोटी बड़ी क्रमसे सोनेकी मणि-मालाएं पंक्तिशः कण्ठदेशको सुशोभित कर रही हैं।
कुचयुग शोभा स्वर्ण-कलस जिनिया। कनक चम्पक कलि उपरे बेड़िया।।	कुच-युगलकी शोभा स्वर्णकलशको पराजित करती है। स्वर्ण चम्पाकी कली ऊपरसे घेरे हुए है।
चन्दनेर पत्रावली ताहाते लिखन। गजमति हारे मणि चतुष्कि शोभन।।	उसके ऊपर चन्दनकी पत्रावली लिखी हैं। गजमुक्ताके हारमें चतुर्दिक मणि शोभा देती हैं।

पति-प्रिया श्रीमती विष्णुप्रिया देवीका हृदय प्राण-बल्लभके आदर और प्रेमसे एकवारगी द्रवित हो उठता। श्रीमती सोचती थीं कि उनके प्रति प्रभुकी बड़ी दया है, बड़ा अनुग्रह है, बड़ी प्रीति और बड़ा स्नेह है। अपने अमूल्य समयको नष्ट करके प्रभु श्रीमतीके साथ दो दण्ड रसालाप करेंगे,

---

सुवर्ण मृणाल - भुजयुगेर वलन। शङ्खमणि कङ्कणादि ताहे विभूषण।।	सुनहले कमल दण्डके समान दोनों भुजाओंकी गोलाइयाँ हैं, जिनमें शङ्ख-मणि, कङ्कण आदि विभूषित हैं।
बाजु बन्ध वलिया बन्धन भुजमूले। ताहि बद्ध पट्ट आदि स्वर्ण-झाँपा दोले।।	बाजूबन्दसे भुजमूल बँधा हुआ ऐसा लगता है मानो पट्टस्वर्णकी झँपोली डोलती है।
राङ्गा करतलांगुलि मुद्रिका मण्डित। तर्ज्जनीते शोभे हेम मुकुरे जड़ित।।	लाल-लाल हाथोंकी अंगुलियोंमें अंगूठियाँ शोभा दे रही हैं, तर्जनीमें मुकुर जड़ित स्वर्ण शोभित है।
परिधान शोभे दिव्य पट्ट मेघाम्बरे। अञ्चल निर्म्माण मणि मुकुता झालरे।।	दिव्य रेशमी मेघाम्बर परिधान किये हैं, जिसका अञ्चल-मणि-मुक्ताकी झालरसे निर्मित है।
गुरुया नितम्ब आर क्षीण मध्यदेशे। किङ्किणी रसनामणि ताहाते विलासे।।	नितम्ब गुरु हैं और कटि क्षीण है—इसमें किङ्किणी तथा रसनामणि विराजती हैं।
रातुल चरण युग जावक मण्डित। बन्धराज रतन नूपुर विभूषित।।	दोनों रक्त चरण-कमलोंमें यावक शोभा देता है, जिनमें बँधे नूपुर रत्नोंसे विभूषित हैं।
मधुर गमन गति, हंसराज जिनि। चटक गुञ्जये जेन नूपुरेर ध्वनि।।	राजहंसको भी पराजित करनेवाली मधुर, मन्द गमनकी गति है। नूपुरकी ध्वनि मानो चटक पक्षीकी गुञ्जार है।
नवनीत जिनिया कोमल तनु खानि। हास परिहासे रत दिवस-रजनी।।	उनके शरीरकी कोमलता मानो नवनीतको मात करती है। दिन-रात हास-परिहासमें रत रहती हैं।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको ऐसी आशा न थी। परन्तु एक तो नारीका मन, दूसरे यौवन भारसे आक्रान्त--बीच-बीचमें सब बातें सोचकर श्रीमतीजीको बड़ा दुःख होता था। कभी-कभी प्राणबल्लभके प्रति अभिमान करके सारी रात शय्या पर जागकर बिता देतीं। घरका द्वार बन्द कर देतीं। मन ही मन सोचती थीं कि प्राण-बल्लभ आकर पुकारेंगे, तो भी न खोलूंगी। यदि द्वार खोल भी दूंगी तो घरके भीतर न आने दूंगी। यदि घरके भीतर आनें भी दूंगी, तो शय्या पर स्थान न दूंगी। यदि शय्या पर एक ओर स्थान भी दूंगी तो उनके साथ बात न करूँगी। यदि कदाचित् बात भी कर लूंगी तो उनको अङ्गस्पर्श न करने दूंगी। इस तरह नाना प्रकारके चिन्तन करते-करते श्रीमतीजीको रातको नींद नहीं आती, शय्या कण्टक बन जाती। कभी उठती थीं, कभी बैठती थीं और प्राण-बल्लभके आगमनकी प्रतीक्षा करती रहती थीं। इस प्रकार रात बीत जाती थी। किसी-किसी दिन विरक्त होकर दुःख और क्षोभसे श्रीमतीजी सासके घरमें जाकर सो जातीं। शची देवीको किसी दिन पता चलता, किसी दिन पता नहीं चलता। क्योंकि श्रीमतीजी अधिक रात तक प्रभुके आगमनकी प्रतीक्षा करके, उनका दर्शन न मिलने पर सासके गृहमें आती थीं। उस समय शची देवी घोर निद्रामें रहती थीं। प्रातःकालमें उठकर बहूको अपनी शय्या पर सोयी देखकर समझ जातीं कि रातको निमाई चाँद घर नहीं आया। सोई हुई पुत्रबधूको देखकर शची देवी सिर पीटकर बोलतीं--"हा दैव! सोनेकी पुतली इस बहूके दुःखको अब अधिक सहन नहीं कर सकती। हा विधाता! इस अभागिनीके भाग्यमें इतना दुःख लिख दिया!" श्रीमतीजी निद्रित हैं। सासकी इन बातोंको वे सुन नहीं पातीं।

कीर्तनमें सारी रात जागरण करके जब श्रीगौराङ्ग प्रातःकाल घर लौटते थे तो श्रीमतीजी देखती थीं कि प्राण-बल्लभकी दोनों आँखें रातके जागरणसे रक्तवर्ण हो रही हैं, शरीरमें आलस्य है और मुख मलिन हो रहा है। यह देखकर श्रीमतीजीके मनमें नाना प्रकारके भाव उत्पन्न होते थे। उस समयकी श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी उक्ति विषयक, ठाकुर वृन्दा-वनदास रचित, विरल प्रचारित, एक अति सुन्दर रसमय गीत यहाँ रसज्ञ-पाठक-पाठिकाओंको प्रेमोपहार देता हूँ। श्रीमतीजी युवती हैं, स्वभाव-

सुलभ चपलताके वश होकर अभिमान पूर्वक अपने प्राण-बल्लभको कहती हैं—

धनाश्री राग

अलसे अरुण आँखि, कह पँहु किना देखि, रजनी बञ्चिले कोन स्थाने।	प्रभु! कहिये, आपकी अरुण आँखें अलसाई हुई-सी क्यों दीखती हैं? रात कहाँ गँवाई है?
(तोमार) वदन-सरसीरुह मलिन जे हइयाछे, रजनी करिया जागरणे।।	तुम्हारा कमल-वदन मलिन हो रहा है, रात भर जागरण किया है।
जाओ गौर! तुया सने किसेर पिरीति।ध्रु०।	हे गौर! जाओ तुमसे कैसी प्रीति?
एमन सोणार देह, परश करिल केह, ना जानि से कोन रसवती।।	ऐसी स्वर्णदेहको किसने स्पर्श किया है? न जाने वह कौन रसवती है?
नदीया नागरी सने, रसिक हयेछ ओहे, एबे कि हे पार छाड़िवारे।	नदिया-नागरीके साथ तुम रसिक बने हो। अब क्या उसको छोड़ सकते हो?
सुरधनी तीरे गिया, मार्ज्जना करगे हिया, तबे से आसिते दिब घरे।।	गंगा किनारे जाकर हृदयका मार्जन करो तब घरमें आने दूंगी।

● प्रभुका उत्तर

प्रभु प्रियाजीकी सप्रेम भर्त्सना सुनकर मुस्कुराते हुए बोले—"प्राणाधिके! रुष्ट होकर कटु भाषण क्यों करती हो? मैं हरिनाम-संकीर्त्तनमें रात-जागरण करके अमृतके समुद्रमें डुबकी लगा रहा था।"

गौराङ्ग करुणभाषी, कहे मृदु मृदु हासि,
काहे प्रिये कह कटु भाष।
हरिनामे जागि निशि, अमिय सागरे भासि,
गुन गाय वृन्दावन दास।।

श्रीगौराङ्गने हरिनामसे श्रीमतीजीका मान भञ्जन किया। प्रभुका आधार हरिनाम है। सब कामोंमें प्रभुने हरिनामका सहारा लिया है। प्रियाजीने मान करके कटु भाषण किया, प्रभुने हरिनामके द्वारा उनके मानको दूर किया, उनका मान-भञ्जन किया। श्रीमतीके अभिमानका पर्याप्त कारण था। आज साधारण पुरुष रसकी बात तथा प्रिय संभाषणके द्वारा प्रियाका मान भञ्जन करते हैं। परन्तु श्रीगौराङ्गने भक्ति-रसकी अवतारणा करके प्रियाके मनमें प्रेम-भक्तिका उन्मेष किया। श्रीमतीजीका अभिमान और क्रोध शान्त हो गया। उनकी फिर कोई बात कहनेकी क्षमता न रही। "हरिनामे जागि निशि, अमिय सागरे भासि" कहकर प्रभुने जब हँसते-हँसते प्रियाजीके सामने रातका सारा वृत्तान्त खोल दिया तब देवीका मान तुरन्त दूर हो गया। वे प्राण-बल्लभके कातर और मलिन मुखकी ओर देखकर सारे दुःख भूल गयीं। प्रभु भी प्रियाजीकी भर्त्सनाको वेद-स्तुति मानकर उनके साथ रस-विलासमें मग्न हो गये। भक्तका क्रोध, भक्तका तिरस्कार, भक्तकी भर्त्सना प्रभुको बड़ी प्रिय लगती है। वे स्वयं कहते हैं —

प्रिया यदि मान करि करये भर्त्सन।
वेद-स्तुति हैते सेइ हरे मोर मन।।
--चं० भा०

श्रीमतीका मान भङ्ग होने पर श्रीगौराङ्गने हँसकर प्रियाजीसे कहा— "आज चन्द्रशेखर आचार्यके घर कृष्ण-लीला होगी। तुम देखने चलना। हम सब मिलकर लीला करेंगे। उस समय तुम मुझको पहचान न सकोगी।" श्रीमतीने मुस्कुरा कर उत्तर दिया—"तुमको पहचान न सकूँगी? तुम जो लम्बे आदमी हो! सैकड़ों आदमियोंके बीचमें भी तुम पहचाने जा सकते हो। तुम क्या बनोगे?" प्रभु बोले —"यह अभी तुमको नहीं बतलाऊँगा। रातमें देखना।" श्रीमतीजीने और अनुरोध नहीं किया। प्रभुके श्रीमुखकी ओर देखकर मृदु मुस्कानके साथ बोलीं—"तुम स्त्री पात्रका अभिनय करोगे तो अच्छे लगोगे। परन्तु तुम बहुत लम्बे हो।" प्रभु मुस्कुराकर श्रीमतीसे बिदा लेकर कृष्ण-लीलाके उद्योगमें घरसे बाहर हुए।

●

सप्तदश अध्याय

चन्द्रशेखर आचार्यके घर श्रीकृष्ण-लीला। प्रभुका मोहिनी-वेशमें नृत्य।

आइ चलिलेन निज बधुर सहिते।
लक्ष्मीरूपे नृत्य बड़ अद्भुत देखिते॥
——श्री चैतन्य भागवत

शची माता लक्ष्मी-रूपका बड़ा अद्भुत नृत्य देखने वधूको साथ लेकर चलीं।

● श्रीकृष्णलीला-अभिनय

प्रभुने सब भक्तोंके सामने प्रकट कर दिया कि चन्द्रशेखर आचार्यके घर जो कृष्ण-लीला होगी, उसमें वे लक्ष्मी बनकर नृत्य करेंगे।

यह समाचार सुनकर प्रभुके भक्तगण आनन्दमें उतमत्त हो उठे। नवद्वीपमें यह पहली कृष्ण-लीला थी। प्रभुने बुद्धिमन्त खाँ और सदाशिव कविराजको बुलाकर आदेश दिया कि कृष्ण-लीलाके लिए सब साज-सामान तैयार किये जायँ। लीलाका स्थान है चन्द्रशेखरका घर। वे प्रभुके मौसे हैं, उनका घर प्रभुके घरके समीप है। लीलाका स्थान चन्द्रशेखर आचार्यका घर निश्चय करनेमें एक गुह्य रहस्य है। प्रभुका अपना घर उतना विस्तृत नहीं है। दूसरे मर्मी भक्तोंके घर प्रभुके घरसे बहुत दूर हैं। प्रियाजी चन्द्रशेखरके घरके सिवा और कहीं जा नहीं सकतीं। प्रभुने मन ही मन सङ्कल्प किया है कि वे अपनी मोहिनी मूर्ति श्रीमतीजी को दिखायेंगे। माताको भी उस अपरूप-दृश्यके दर्शनसे वञ्चित करनेकी इच्छा नहीं है। इसी कारण कौशलपूर्वक चन्द्रशेखर आचार्यके घरको कृष्णलीलाका स्थान निर्दिष्ट करके उन्होंने अपनी अभिलाषा पूरी की। जो अन्तरङ्ग भक्त थे, वे प्रभुकी लीलाको समझ कर कुछ हँसे।

रातमें चन्द्रशेखर आचार्यके घर बड़े समारोहसे कृष्णलीला प्रारम्भ हुई। शची देवी बहूको साथ लेकर अपने बहनोईके घर लीला देखने गयीं। नदियावासी बहुत-सी स्त्रियाँ लीला देखनेके लिए वहाँ एकत्रित हुईं। प्रभु बने श्रीराधा, गदाधर बने ललिता, नित्यानन्द बने बूढ़ी-बड़ाई, हरिदास बने कोतवाल, श्रीवास बने नारद—इत्यादि-इत्यादि। शची देवी श्रीमती विष्णु-प्रिया देवीके साथ सबके बीचमें बैठी हैं। श्रीमतीकी प्रधान सखी काञ्चना उनके पास ही बैठी हैं। श्रीवास पण्डितकी स्त्री मालिनी, मुरारीकी स्त्री आदि सब लोग वहाँ हैं। प्रभुके सभी भक्तोंने इस कृष्णलीलामें योग दिया है। गायक और वादक लोगोंने आकर पहले सङ्गीत प्रारम्भ किया। संगीत समाप्त होने पर मुकुन्दने मधुर कण्ठसे कीर्त्तन प्रारम्भ किया। सब भक्त लोग मुकुन्दके कीर्त्तनसे आनन्द-विह्वल हो उठे। चन्द्रशेखर आचार्यके घर बड़ी भीड़ लग गयी, चारों ओर आनन्द और कोलाहल व्याप्त हो गया। बारम्बार हरिध्वनिसे दिगन्त पूर्ण हो गया।

महा कृष्ण कोलाहल उठिल सकल।	चारों ओर 'कृष्ण' ध्वनिका
आनन्दे वैष्णव सब हइला विह्वल॥	महा कोलाहल होने लगा। आनन्दसे
--चै० भा०	सब वैष्णव विभोर हो उठे।

पहले हरिदास कोतवाल बनकर रङ्ग-भूमिमें अवतीर्ण हुए। उनके सिरपर एक बड़ी पगड़ी, हाथमें दण्ड, बड़ी-बड़ी मूँछें और पहनावा धोती थी। वे प्राङ्गणमें चारों ओर घूमने लगे। प्रेमसे सारा अङ्ग पुलकित है, प्रेमाश्रुधारामें वदन निमज्जित हो रहा है। वे हाथमें दण्ड लेकर सबको सावधान करते हुए कहते हैं—

आरे आरे भाइ सब ! हओ सावधान।	अरे भाइयो! सब सावधान
नाचिबे लक्ष्मीर वेशे जगतेर प्राण॥	हो जाओ। जगत्के प्राण गौर-प्रभु
—चै० भा०	लक्ष्मीके वेशमें नाचेंगे।

हरिदासकी वेश-भूषा देखकर सब लोग हँसते-हँसते लोट-पोट हो गये। किसी-किसीने कौतुकपूर्वक उनसे पूछा—"तुम कौन हो? यहाँ क्यों आये?" हरिदासने उत्तर दिया—"मैं वैकुण्ठका कोतवाल हूँ। प्रभु वैकुण्ठ छोड़कर

यहाँ आये हैं । वे आज लक्ष्मीभावमें नृत्य करके प्रेमभक्ति वितरण करेंगे, सब लोग सावधान होकर प्रेमभक्ति लूट लो।" इतना कहकर हरिदास अपनी दोनों मूँछों पर हाथ फेरते हुए दण्ड हाथमें लेकर चारों ओर घूमने लगे।

उसके बाद नारदके वेशमें श्रीवास पण्डितने रङ्ग-भूमिमें पदार्पण किया। उनके कन्धे पर वीणा थी और हाथमें कुश था । साथमें रामाई पण्डित थे जिनके कन्धे पर कुशासन और हाथमें कमण्डल था । नारद रङ्ग-भूमिमें चारों ओर दृष्टिपात कर रहे हैं । उनकी वेश-भूषा और रूपको देखकर सब लोग हँसने लगे। रामाई पण्डितने सभा-स्थलमें नारदको बैठनके लिए आसन दिया। नारद कुशासन पर बैठकर वीणा बजाने लगे। श्रीअद्वैत प्रभुने आकर नारदसे पूछा—"तुम कौन हो? यहाँ किस प्रयोजन से आये हो?" नारदजीने उत्तर दिया—"मेरा नाम नारद है। श्रीकृष्णके दर्शनकी लालसासे वैकुण्ठमें गया था । देखा वैकुण्ठ सूना पड़ा है । श्रीकृष्ण नहीं हैं, लक्ष्मी नहीं हैं, परिवार वर्गका कोई भी नहीं है । वैकुण्ठ सूना देखकर यहाँ प्रभुके दर्शन करने आया हूँ। प्रभु आज लक्ष्मीके वेशमें नृत्य करेंगे, इसी हेतु इस सभामें मेरा प्रवेश हुआ है।"

वैकुण्ठे गेलाम कृष्ण देखिवार तरे।
शुनिलाम कृष्ण गेल नदीया नगरे।।
शून्य देखिलाम वैकुण्ठेर घर द्वार।
गृहिणी गृहस्थ नाहि, नाहि परिवार।।
ना पारि रहिते शून्य वैकुण्ठ देखिया।
आइलाम आपन ठाकुर स्मङरिया।।
प्रभु आजि नाचिबेन धरि लक्ष्मी वेश।
अतएव ए सभाय आमार प्रवेश।।

—चै० भा०

शची देवीने नारदके रूप और गानसे मुग्ध होकर मालिनीसे पूछा—"क्या यही श्रीवास पण्डित हैं?" मालिनीने हँसकर उत्तर दिया—"यही पण्डित हैं।"

मालिनीरे बोले आइ--इनिइ पण्डित ।
मालिनी बोलये-आइ अइ सुनिश्चित ।।
--चैं० भा०

इस प्रकार क्रमशः गदाधर आदि सब लोग अपने-अपने वेशमें रङ्गभूमिमे अवतीर्ण हुए। ललितावेशधारी गदाधरके मनमोहिनी रूप तथा मन-मुग्धकारी नृत्य तथा हाव-भावसे दर्शकवृन्द आनन्द-विह्वल हो उठे। गदाधरके नेत्रोंसे प्रेमाश्रुधारा बहने लगी। उनके अनुचर लोग अमृतसे सना हुआ कृष्ण-सङ्गीत गान करने लगे और गदाधर अपने मधुर नृत्यसे सबके मनको हरने लगे।

गदाधरेर नृत्य देखि आछे कोन जन ।
विह्वल हइया नाहि करये क्रन्दन ।।
—चैं० भा०

ऐसा कौन आदमी है, जो गदाधरके नृत्यको देखकर आनन्द-विह्वल होकर क्रन्दन नहीं करता ?

● प्रभुका लक्ष्मी-वेश

इसके बाद जब सबके अन्तमें प्रभुने भुवन-मोहिनी वेशमें लक्ष्मीका रूप धारण कर बूढ़ी-बड़ाईके साथ रङ्गभूमिमें प्रवेश किया, उस समय सब लोग उठकर जय-ध्वनि करने लगे। रमणीवृन्द हुलु-ध्वनि देने लगीं। प्रभु मोहिनी-वेशमें अच्छे सजे हैं। ठाकुर लोचनदासने प्रभुके भुवनमोहिनी वेशका इस प्रकार वर्णन किया है--

एखाने कहिये शुन,
सावधाने सर्व्वजन ।
गोपिका आवेश वेश प्रभु ।

सब लोग सावधान होकर सुनो, यहाँ गोपिकाके आवेशमें अवतरित प्रभुके वेशका वर्णन करता हूँ।

हृदये काँचलि परे,
शंख कङ्कण करे,
दुटी आँखि रसे डुबु डुबु ।।

वक्षःस्थल पर चोली पहने हैं। हाथमें शङ्ख और कङ्कण हैं, दोनों आँखें रसमें सराबोर हैं।

पट्ट-वसन परे,
नूपुर चरण तले,
मुठे पाइ क्षीण माझा खानि ।

रेशमी वस्त्र पहने हैं, चरणोंमें नूपुर हैं, क्षीण कटिमें करधनी है।

रूपे त्रिजगत मोहे, उपमा वा दिब काहे, गोपी वेश ठाकुर आपनि ।।	रूप तीनों लोकोंको मोहित करने वाला है, किसकी उपमा दी जाय? प्रभु स्वयं गोपी-वेशमें हैं।
आलोक अङ्गेर तेजे, वायु बहे मलयजे, ताहे नव मालतीर माला।	अङ्गके तेजसे आलोक फैल रहा है, मलयज पवन बह रहा है, उस पर नयी मालतीकी माला पहने हैं।
सुमेरु शेखरे जेन, सुरनदी धारा हेन, गौर अङ्गे बहे दुइ धारा ।।	जान पड़ता है, जैसे सुमेरुके शिखरसे सुरसरिकी धारा बह रही हो, इस प्रकार उनके गौर अङ्गपर दो धाराएँ बहती हैं।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी भी प्रभुको पहचान नहीं रही हैं। परन्तु उन्होंने पहले ही कह दिया था कि प्रभुके लम्बे शरीरको देखकर वे उनको पहचान लेंगी। परन्तु मनोहर वेशभूषामें तथा नाना प्रकारके अलङ्कारोंमें सजे उनके प्राण-बल्लभ रङ्गभूमिमें कुछ छोटे जान पड़े। श्रीमतीजीके मनमें सन्देह होने लगा कि, क्या यही मेरे प्राण-बल्लभ हैं? साहसपूर्वक नहीं कह पा रही हैं कि 'यही वे हैं।' परन्तु श्रीमतीजीने तथा दूसरे लोगोंने सुन रक्खा था कि वे श्रीराधिका बनेंगे। अतः वृद्धा रूपी नित्यानन्दको साथ देखकर सभीने अनुमान किया कि ये ही प्रभु हैं। निताईने वृद्धाका सुन्दर साज सजा है। वे प्रेममग्न हो, कमर टेढ़ी करके प्रभुका हाथ पकड़कर नाच रहे हैं।

आगे नित्यानन्द बुड़ी-बड़ाइएर वेशे।
बङ्क बङ्क करि हाँटे प्रेम-रसे भासे ।।
——चै० भा०

प्रभु मन-मोहिनी महालक्ष्मीके वेशमें प्रेमावेशमें नृत्य करने लगे। नृत्य करते-करते कभी बड़ाईको सम्बोधन करके कहते हैं—"चलो बड़ाई! वृन्दावन चलें।" तब फिर उत्कण्ठापूर्वक आवेगसे भरकर पूछते हैं—"क्या कृष्ण आ रहे हैं?" बड़ाई वेशधारी श्रीनित्यानन्दके साथ श्रीराधिका-वेशधारी श्रीगौराङ्ग मधुर नृत्य कर रहे हैं। उस नृत्यके अपूर्व हाव-भाव हैं।

मुखमें हरिनाम और आँखोंमें अश्रुधारा है, दोनों आदमी हाथ पकड़कर नाच रहे हैं। उस मधुर नृत्यसे लाखों नर-नारियोंके मनको हर ले रहे हैं। सब लोग एक टक होकर प्रभुकी भुवन-मोहिनी मूर्तिकी ओर ताक रहे हैं। मुकुन्द, गदाधर आदि अनुचरवर्ग समयोचित गान गाते हैं। आनन्दमय कोलाहलसे रङ्गभूमि परिपूर्ण हो रही है। उसी समय नाचते-नाचते नित्यानन्द मूर्च्छित हो गये। प्रेमावेशमें वे भूतल पर गिर पड़े।

हेनइ समये नित्यानन्द हलधर।	उसी समय बलरामजीके अवतार
पड़िला मूर्च्छित होइ पृथिवी उपर।।	नित्यानन्द मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़े।
कोथाय वा गेला बुड़ि बड़ायेर साज।	उनका बूढ़ी-बड़ाईका साज बिखर
कृष्णरसे विह्वल हइला नागराज।।	गया। वे शेषनागके अवतार नित्या-
—चैं० भा०	नन्द कृष्ण-प्रेम-रसमें विह्वल हो गये।

प्रेमावेशमें नित्यानन्दको रङ्गभूमिमें मूर्च्छित होकर गिरते देखकर चारों ओर वैष्णव लोग आनन्द-विह्वल होकर क्रन्दन करने लगे। वह क्रन्दन किसी दु:खके कारण न था। वह तो कृष्ण-प्रेमोन्मादी भक्तोंके आनन्दाश्रु थे। प्रेमाश्रुकी झर-झर धारमें उनके वक्ष:स्थल निमज्जित हो रहे थे। कोई किसीका गला पकड़ कर क्रन्दन कर रहा है, कोई किसीके चरण पकड़कर क्रन्दन कर रहा है, कोई रोते-धोते धूलिमें लोट रहा है। इस प्रकार समस्त भक्तमण्डलीकी रेल-पेलसे रङ्गभूमिमें एक हल-चल मच गयी। उसी समय प्रभु नृत्य करते-करते लक्ष्मीके आवेशमें देवगृहमें प्रवेश करके जो कुछ करने लगे, उसे ठाकुर लोचनदासकी अपूर्व भाषामें श्रवण कीजिए—

सकल वैष्णव माझे,	सब वैष्णवोंके बीच महा नटराज
नाचे महा नटराजे,	गौराङ्ग रसके आवेशमें भाव धारण
रसेर आवेशे भाव धरे।	करके नाचते हैं।
एइ मन करिते,	ऐसा सोचते-सोचते लक्ष्मीजी याद
लखिमी पड़िल चिते	आ गयीं, उसी वेशमें प्रभु घरमें
सेइ बेशे गेला प्रभु घरे।।	गये।
घरे साम्भाइया आर्त्ये,	घरमें आर्त्तभावसे सँभल कर
दिव्य चतुर्भुज मूर्त्ये	दिव्य चतुर्भुज मूर्त्तिके सामने जाकर
देखि दाण्डाइला तार काछे।	खड़े हो गये।

आध नयाने चाहे,	तिरछे नयनोंसे देखते हुए, चुपके-
आध पदे चलि जाये,	चुपके पैर रखते हुए, पीछे जाकर
वसने ढाकिल आँखि पाछे ।।	वस्त्रसे उनकी आँखें मूंद दीं ।

प्रभु लक्ष्मीभावमें चतुर्भुज नारायणके पार्श्वमें खड़े होकर प्राण-वल्लभका मुख ताक रहे हैं। कुछ देरके बाद प्रभु देवताके आसन पर बैठकर मृदु मन्द हँसते हुए बोले---

देवता आसने बसि, कहे लहु लहु हासि,	देवताके आसन पर बैठकर
देखिबारे आइलुँ प्रेम भक्ति ।	थोड़े-थोड़े हास्यके सहित बोले--मैं
--चै० मं०	प्रेम-भक्ति देखनेके लिए आयी हूँ ।

प्रभुको देवासन पर बैठते देखकर सब लोग आनन्दध्वनि करने लगे। श्रीश्रीलक्ष्मी रूपी श्रीगौराङ्ग-प्रभुको सब लोग हाथ जोड़कर भगवतीके भावसे स्तवन करने लगे। भक्तगण ऊर्ध्वबाहु होकर कीर्त्तन करते-करते प्रेमाकुल भावसे क्रन्दन करने लगे। घरके भीतर बैठकर पुरकी नारियाँ चुप-चाप क्रन्दन कर रही हैं। उनकी क्रन्दन-ध्वनि कोई नहीं सुन रहा है, परन्तु सर्वदर्शी प्रभु उसे देख रहे हैं। चन्द्रशेखरका घर आज आनन्दसे परिपूर्ण है। सब लोग प्रेम-विह्वल चित्तसे एक टक होकर प्रभुके कार्य देख रहे हैं।

● प्रभुकी जगज्जननी-भावकी लीला

कुछ देरके बाद महालक्ष्मीके रूपमें प्रभु श्रीहरिदासको गोदमें लेकर बैठ गये। हरिदास शिशुके समान प्रभुकी गोदमें सोये हुए हैं और प्रेमानन्दमें निश्चेष्ट और निःस्पन्द भावमें पड़े हैं। सब भक्तवृन्द प्रभुको घेरकर वह आनन्दमयी जगज्जननी-रूप देख रहे हैं। उस समय सभी प्रेममें आत्म-विस्मृत हो रहे थे, सभी अपनेको अति शिशु और प्रभुको गर्भधारिणी जननी समझ रहे थे। मातृभाव मनमें उठते-उठते सब मातृस्तनके दुग्धके लिए लालायित हो उठे। हरिदास निश्चेष्ट हैं, परन्तु प्रेमावेशमें शिशुभावापन्न होकर प्रभुके वक्षःस्थल पर हाथ रखकर मातृस्तन अन्वेषण कर रहे हैं। स्तन पाकर महान आनन्दपूर्वक पान करने लगे। अन्यान्य भक्तगण भी हरिदासके समान शिशुभावापन्न होकर जननीको घेरकर बठ गये। कोई प्रभुका अञ्चल पकड़कर खींचते हैं, कोई हाथ-पैर पकड़कर 'माँ गोदमें ले' कहकर क्रन्दन करते हैं, कोई दूसरेको जननीकी गोदमें चढ़ते देखकर उसको दूर खींच

फेंकते हैं, कोई प्रेममें भरकर जननीका मुख चुम्बन करते हैं। प्रभुने तब एक-एक करके सबको बड़े दुलारसे अपना स्तन पान कराया।

मातृभावे विश्वम्भर सभारे धरिया।
स्तन पान कराय परम स्निग्ध हैया।। —च० भा०

इस प्रकार प्रभुने जगज्जननी भावसे सब सन्तानोंको सन्तुष्ट किया। सबका दुःख दूर हो गया। सब प्रेमोन्मत्त होकर प्रभुके स्तन पान करने लगे।

इधर जहाँ शची देवी और श्रीमतीजी बैठी हैं, वहाँ एक अभिनव दृश्य हो गया। सब मिलकर शची देवीके पैरों पर गिरने लगे। शची देवी बड़ी विपदमें पड़ीं। वे घबड़ाकर और त्रस्त होकर वहाँसे उठकर भागनेके लिए तैयार हो गयीं।

सभेइ धरेन शचीदेवीर चरण।
—चै० भा०

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको दूरसे ही सब आदरपूर्वक प्रणाम करने लगे। वे घूँघट काढ़े लज्जासे सिर झुकाए रहीं। शची देवी परमा वैष्णवी हैं। भक्तलोग उनके चरण स्पर्श कर रहे हैं, इससे वे काँप उठती हैं और बहुत मना करती हैं, परन्तु कोई कुछ नहीं सुनता। साथमें युवती पुत्रवधू है और चारों ओर लोगोंकी भीड़ लगी है। इतनी बड़ी भीड़में पुत्रवधूको लेकर कैसे घरसे बाहर निकलें, इसी चिन्तामें अस्थिर हो रही हैं। उसी समय मालिनी देवी उनकी सहायताके लिए वहाँ आकर उपस्थित हो गयीं। मालिनीको देखकर शची देवीको साहस हुआ। मालिनी देवीने मधुर वचन कहकर सबको हटा दिया और शची देवीको पुनः वहाँ बैठाया। श्रीमती भी सुस्थिर होकर शची देवी और मालिनी देवीके बीचमें बैठीं। इधर रात बीतनेको आयी। ऐसी सुखकी रातको भोर होते देखकर सब लोग विशेष दुःखित हुए। दुःखसे बहुत लोग रोने लगे।

चमकित हइ सभे चारिदिके चाय।
पोहाइल निशि करि कान्दे उभराय।।
—चै० भा०

सबने आश्चर्य-चकित होकर चारों ओर देखा। रात बीतती देखकर सब चीत्कार कर रो पड़े।

● श्रीमतीजीका भाव

शची देवी प्रातःकाल श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको साथ लेकर घर आयीं। श्रीमती प्रभुकी लीला देखकर अवाक् हो गयी हैं। प्राण-वल्लभका मनमोहिनी

स्त्रीका वेश देखकर श्रीमतीके मनमें बड़ा सुख हुआ है। मनमें कुछ ईर्ष्या भी हुई जान पड़ती है। शची देवी प्रभुकी मनमोहिनी मूर्त्ति देखकर मूर्च्छिता हो गयी थीं। परन्तु श्रीमतीने स्थिर भावसे प्रभुकी नारी-मूर्त्ति देखकर मनमें अपार आनन्द अनुभव किया था। श्रीमतीजीके मनमें उस समय हो रहा था—"यदि मैं पुरुष होती, तो उनको दिखला देती कि स्त्रीको किस प्रकार दुलार किया जाता है। एक क्षण भरके लिए भी उनको छोड़कर नहीं रहती।"

श्रीमतीजीके निकट उनकी मार्मिक सखी काञ्चना बैठी हैं। दोनों ही एक दूसरेका शरीर दबा रही हैं। सामने सास, बगलमें मालिनी देवी और कुछ दूर पर चन्द्रशेखर आचार्यकी स्त्री बैठी हुई हैं। अतः सखीके साथ श्रीमतीजीकी कोई बात नहीं हो रही है। परन्तु दोनों ही इशारेसे, भाव-भङ्गीसे मनके भावको प्रकट करके मृदु-मृदु हँस रही हैं। श्रीमतीजी कभी-कभी काञ्चनाके गलेमें हाथ डाल देती हैं। कभी दोनों सखियाँ हाथ मिला-कर अंगुलीके सङ्केतसे मनके भावोंको प्रकट करती हैं। इसके सिवा यहाँ और कुछ सम्भव नहीं है। श्रीमती साधारणतः बड़ी लज्जाशीला हैं, इसके सिवा उनके प्राण-बल्लभ कृष्णलीलामें मनमोहिनी नारीके वेशमें नृत्य कर रहे हैं, इससे उनकी लज्जा और बढ़ गयी है। घूंघटकी ओटसे श्रीमतीजी कभी-कभी प्रिय सखी काञ्चनाकी ओर लाज भरे नयनोंसे ताकती हैं। इससे उनके मनमें सुख होता है, काञ्चना भी सुखी हैं। दोनों आपसमें एक दूसरके मनके भावोंको जानकर मन्द-मन्द हँस रही हैं। उस हँसीको कभी-कभी कोई देख लेता है, श्रीमती इसे जानकर लज्जासे सिर झुका लेती हैं।

श्रीमतीने घर आकर समयानुसार प्रिय सखी काञ्चनाको साथ लेकर रात्रिकी लीलाके सम्बन्धमें बहुत चर्चा की। उन सबकी आलोचना करते-करते आनन्दसे दोनों एक दूसरेके वदन पर ढल पड़ीं। हँसते-हँसते दोनोंका दम घुटने लगा, मानो नाड़ी छूटने लगी। हृदय खोलकर अपनी प्रिय सखीके साथ प्राण-बल्लभकी चर्चा करके श्रीमतीजीको बड़ा आनन्द प्राप्त हुआ।

● लीलाके बाद प्रभुसे मिलन

प्रभुके साथ श्रीमतीजीका उस दिन साक्षात्कार नहीं हुआ। प्रभु उस दिन प्रेममें उन्मत्त होकर भक्तवृन्दके साथ कीर्त्तनके रङ्गमें आनन्दोत्सव करते रहे। श्रीमतीजीके साथ प्रभुका जब दूसरे दिन साक्षात्कार हुआ, तो दोनों एक दूसरेके

मुँहकी ओर देखकर कुछ हँसे। उस हँसीका मर्म समझनेकी क्षमता किसमें है ? परन्तु श्रीमतीकी हँसी मानों रससे सराबोर थी। जान पड़ता है उस रसपूर्ण मधुर हँसीका मर्म यही है कि तुम बड़े निर्लज्ज हो। श्रीगौराङ्गकी कटाक्षयुक्त मृदु मधुर हँसीका मर्म यह जान पड़ता है कि तुमको दिखला दिया कि तुम्हारी अपेक्षा और भी सुन्दरी है। श्रीमतीके मनका भाव समझकर श्रीगौराङ्ग हँसे। प्रभुके मनका भाव समझकर श्रीमतीजी भी हँसीं, परन्तु उत्तर दिये बिना न रह सकीं। प्रभुकी बातसे पतिव्रता, अभिमानिनी, नव-युवतीके हृदय पर मानो चोट लगी। श्रीमतीजीने कुछ गम्भीर भावसे प्राण-बल्लभके प्रति तिरछे नयनोंसे देखकर गर्व पूर्वक कहा––"तुमने अच्छी तरह देखकर विवाह क्यों नहीं किया ? अपनी माँसे कहो, तुम्हारा एक और विवाह कर दें।" प्रभुने यह सुनकर प्रेमालिङ्गन प्रदान कर श्रीमतीजीको सुख प्रदान किया। स्वामीके स्नेहसे श्रीमतीजी आनन्दसे विह्वल होकर प्रभुके चरणोंमें जा गिरीं।

कृष्णलीलाके बाद सात दिनों तक चन्द्रशेखर आचार्यका घर एक अपूर्व ज्योतिसे पूर्ण रहा। जिस घरमें प्रभुने लक्ष्मीवेशमें नृत्य किया था तथा जगज्जननी रूपमें भक्तवृन्दको स्तन-पान कराया था, उस स्थानमें विद्युत्के समान अद्भुत तेज और ज्योति फैल रही थी। कोई आँख मिलाकर उस स्थानको देख नहीं सकता था।

नाचिया आइला प्रभु रहिला छटाक।
उदय हइल जेन चाँद लाखे लाख ।।

जहाँ प्रभु नाचकर आये, वह स्थान इस प्रकार सुदीप्त हो रहा था मानो लाखों चाँद उदय हुए हों।

अद्भुत शीतल शोभा अमृत अधिक।
चाहिते ना पारि जेन चौदिके तड़ित ।।

उसकी अत्यन्त अमृतमयी अद्भुत शीतल शोभा थी। उस पर आँखें नहीं टिकती थीं, मानो चारों ओर तड़ित् विलास कर रही हो।

हृदय आह्लाद करे देखि हेन साध।
आँखि मेलिबारे नारे तेजे करे बाध ।।

देखने पर हृदयको आह्लाद प्रदान करती है, देखनेकी इच्छा होती है। परन्तु तेज इतना है कि आँखें मिलायी नहीं जातीं।

अष्टादश अध्याय

प्रभुके मनमें श्रीधाम वृन्दावनकी यात्राकी प्रबल वासना और श्रीमतीका उद्वेग

ए भव ससार आमि केमने तरिब । से नन्द नन्दन पद कोथा गेले पाब ।।	यह भव संसार मैं किस प्रकार तरूँगा ? उन नन्द-नन्दनके पद कहाँ जाने पर पाऊँगा ?
--वृन्दावन दास	

● प्रभुका मुरारी गुप्तको वृन्दावन जानेकी इच्छा प्रकट करना

प्रभुका कृष्ण-प्रेमोन्माद-भाव दिन-दिन बढ़ने लगा । वे अब मनके भावको छिपाकर नहीं रख पा रहे हैं। प्रभुने एक दिन मुरारी गुप्तको कहा कि वे श्रीकृष्ण-दर्शनके लिए श्रीधाम वृन्दावनकी यात्रा करेंगे। श्रीकृष्णका विरह वे अब सहन नहीं कर पा रहे हैं। श्रीकृष्णके नित्यधाम, उनके लीलास्थल श्रीधाम वृन्दावनका नाम लेने पर उनका हृदय व्याकुल होता है, मन आनन्दसे उत्फुल्ल हो उठता है। श्रीधाम वृन्दावनके नामसे प्रभुके दोनों नेत्रोंसे झर-झर प्रेमाश्रु बहने लगते हैं। वे प्रेममें विह्वल होकर फुङ्कार मारकर रोते हैं और कहते हैं--"अहा ! कब मैं वृन्दावन जाऊँगा ? कब मुझे कालिन्दी यमुना, गोवर्द्धन गिरि, तालवन, निधु वन, भाण्डीर वन आदि श्रीकृष्णके सारे लीलास्थल दर्शन करनेका सौभाग्य प्राप्त होगा ? अब मैं इस स्थान पर टिक नहीं पा रहा हूँ ।"

नारिल नारिल एथा रहिबारे आमि । देखिबारे जाब श्रील वृन्दावन भूमि ।।	अब मैं यहाँ नहीं रह सकता, श्रीवृन्दावनकी भूमिके दर्शन करने जाऊँगा ।
कति मोर कालिन्दी यमुना वृन्दावन । कति मोर बहुला भाण्डीर गोवर्द्धन ।।	मेरी कालिन्दी यमुना , मेरा वृन्दावन कहाँ है ? मेरा बहुतसे वटवृक्षोंसे भरा गोवर्द्धन कहाँ है ?

कति गेला आरे मोर ललितादि राधा ।
कति गेला आरे मोर ए नन्द जशोदा ।।

मेरी ललिता, राधा आदि सखियाँ कहाँ गयीं ? मेरे नन्द-यशोदा, पिता-माता कहाँ गये ?

श्रीदाम सुदामा मोर रहिला कोथाय ।
धवली साङली बलि अनुरागे धाय ।।

मेरे श्रीदाम और सुदामा कहाँ रह गये ? जो धवली, साँवली कहकर प्रेमपूर्वक मेरे साथ गौवोंके पीछे दौड़ते थे ।

क्षणे दन्ते तृण करि करुणा करिया ।
फुकरि फुकरि कान्दे चौदिके हेरिया ।।
--चै० मं०

इस प्रकार क्षण भरमें दाँतोंमें तृण पकड़कर करुणा करके चारों ओर देख-देखकर फुँकार-फुँकार कर रोते हैं ।

कृष्ण-प्रेममें उन्मत्त होकर प्रभु इस प्रकार विलाप कर रहे हैं । कृष्ण ! हा कृष्ण !' कहकर उच्चस्वरसे क्रन्दन करते हैं । किसी प्रकार भी चित्त शान्त नहीं हो रहा है । प्रेमोन्मत्त होकर प्रभु स्वतन्त्र घूमते-फिरते हैं । दुःख और खेदसे प्रभुने अपना यज्ञोपवीत तोड़ फेंका । इससे उनका कृष्ण-विरह दूना वर्द्धित हो गया । आँखोंकी अश्रुधारासे वक्षःस्थल निमज्जित हो गया । 'हरि-हरि' कहकर वे लम्बे साँस लेने लगे । प्रभुकी तत्कालीन अवस्था देखकर मुरारी बहुत व्यथित हुए ।

इहा बलि छिण्डिल गलार उपवीत ।
कृष्णेर विरहे दुःख भेल विपरीत ।।

इतना कहकर गलेका उपवीत तोड़ डाला । कृष्णके विरहमें विषम दुःख होने लगा ।

हरि हरि बलि डाके छाड़ये निःश्वास ।
अश्रुधारा गले किछु ना कहे विशेष ।।

हरि-हरि कहकर दीर्घ श्वास छोड़ने लगे । अश्रुधारा बह रही है और कुछ विशेष बात नहीं कह पा रहे हैं ।

पुलके पूरित तनु आनन्द वदन ।
देखिया मुरारि किछु बोलय वचन ।।
--चै० मं०

शरीरमें रोमाञ्च हो रहा है, मुख प्रसन्न है, जिसको देखकर मुरारी गुप्तने कुछ बातें कहीं ।

मुरारी गुप्त प्रभुको सम्बोधन करके अत्यन्त विनीत भावसे कहते हैं—"प्रभो ! तुम्हारे लिए जगत्में असाध्य क्या है ? तुम यहाँ रह सकते हो,

यहाँसे जा भी सकते हो। परन्तु मेरी एक बात सुनते जाओ। तुम यदि अभी श्रीधाम वृन्दावन गमन करते हो, तो तुम्हारे भक्तोंकी बड़ी हानि होगी। कोई किसीकी बात न सुनेगा। सभी अपने-अपने प्रधान बनकर फिर संसारके रौरव नरकमें प्रवेश करेंगे। इतना परिश्रम करके तुमने जो बनाया है, वह नष्ट हो जायगा। यह बात मैं तुमसे निश्चयपूर्वक कहता हूँ।"

तुमि यदि एक्षणे चलिबे देशान्तर।
तबे आर वचन शुनिबे केवा कार॥
स्वतन्त्र करिब करि जेवा मने लय।
पुनः प्रवेशिबे सभे संसार आश्रय॥
जतेक करिले नाथ किछुइ नहिल।
निश्चय करिया प्रभु ! तोमारे कहिल॥

—चै० मं०

मुरारी गुप्तकी यह सद्‌युक्तिपूर्ण कातरोक्ति प्रभुने चुपचाप सुनली। उसकी अकाट्य युक्तियोंका वे खण्डन न कर सके। मुरारीके समझानेसे प्रभुका श्रीधाम वृन्दावन जानेका प्रस्ताव एक बार तो कुछ दिनोंके लिए स्थगित हो गया। नदियावासी नर-नारीवृन्द और भी कुछ समय तक मनकी साधसे श्रीगौराङ्गको नयन भरकर देख सके। भक्तोंने और भी कुछ दिन श्रीगौराङ्गके सङ्ग-सुखमें आनन्दसे समय व्यतीत किया। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको श्रीगौराङ्गके साथ और भी कुछ दिन संसार चलानेका सुयोग मिला। शची देवीको भी पुत्र और पुत्रवधूको साथ लेकर कुछ दिन और गृहस्थी चलानेका अवसर प्राप्त हुआ।

ए बोल शुनिया प्रभु निशबदे रहि।
खण्डिवारे नारिल मुरारि जत कहि॥
तबे आर कत दिन रहिला कौतुके।
नयन भरिया देखे नदीयार लोके॥
जननीर हृदय नयन स्निग्ध करि।
विष्णुप्रिया सङ्गे क्रीड़ा करे गौरहरि॥

—चै० मं०

● शची देवीकी आशंका

प्रभुके श्रीधाम वृन्दावन गमनोद्योगका संवाद सबको मिल गया, शची देवीने भी सुना। श्रीमतीके कानोंमें भी यह समाचार पहुँचा। शची देवी यह सुनकर आशङ्कित हो उठीं, श्रीमतीजी विषण्ण हो उठीं। शची देवीके द्वारा ठाकुर लोचनदासने उसी समय यह दुःख-सङ्गीत गवाया था।

कि दोषे छाड़िया जाइबा मायेरे।	अरे वत्स निमाई! दुःखनी माँको
आरे दुःखिनीरे बाछा निमाञि रे॥	किस दोषके कारण छोड़ जाओगे?

प्रभु श्रीधाम वृन्दावन जायँगे, तीर्थभ्रमण करेंगे, इसमें तो कोई हर्जकी बात नहीं है। वृन्दावन तो बहुत लोग जाते हैं। तीर्थ-दर्शन करने जायँगे और लौट आयँगे। इसमें दुःख क्या है? परन्तु उनके आँखोंसे ओझल होने पर विरहमें शची-विष्णुप्रिया देवियोंके हृदयोंमें शूल बिंध जायगा। बूढ़ी शची माताके लिए यह उतनी सहज बात नहीं है। वे निमाई चाँदको क्षणभर भी देखे बिना नहीं रह सकतीं। कैसे निमाई चाँदके लम्बे वियोगको सहन करेंगी? यह सोचकर शची देवी विशेष चिन्तित हुई। और भी उनके मनमें एक बड़ी आशङ्का हुई कि फिर शायद पुत्र घर न लौटे। पुत्रके मनका जैसा भाव देखती थीं, उससे शची देवीके मनमें यह सन्देह दृढ़ हो गया।

● विष्णुप्रियाकी व्याकुलता

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके तत्कालीन मनके भाव भी यही थे—"प्राण-बल्लभ लम्बी तीर्थयात्रामें जा रहे हैं, बहुत दिनों तक उनको देख न सकूँगी। पैदल ही इतनी दूर जायँगे। इससे उनको कितना कष्ट होगा? प्राण-बल्लभको बिना देखे वे कैसे घर पर रहेंगी? वहाँका समाचार उनको कौन देगा? श्रीधाम वृन्दावन श्रीकृष्णका लीलास्थल है। प्राण-बल्लभके कृष्ण-प्रेमोन्मादको उन्होंने अपनी आँखों देखा है। पीछे उनके प्राण-बल्लभ वृन्दावन जाकर उनको भूल जायँ और लौटकर न आवें।" इस प्रकारकी विभिन्न चिन्ताएँ श्रीमतीजीके मनमें उठने लगीं। उनके प्राण व्याकुल हो उठे। दाहिनी आँख फरकने लगी। लज्जाशीला कुलवन्ती कुल-वधू किसके आगे अपने मनकी बात कहे? दारुण उत्कण्ठामें श्रीमती

कातर होकर बैठी हैं। चित्तमें बड़ी चञ्चलता है। मनोवेदनाको दबाए रखना कठिन हो रहा है। हृदय मानो फटा जा रहा है। दोनों नेत्रोंसे अविरल आँसू बह रहे हैं। ऐसे समय श्रीमतीकी प्राणसखी काञ्चना वहाँ आ उपस्थित हुई। काञ्चनाको देखकर श्रीमतीका मानसिक दुःख दूना बढ़ गया। दुःखके समय, शोकके समय, प्रियजनको सामने देखने पर दुःख और शोकमें मानो उबाल आ जाता है। श्रीमतीकी भी यही अवस्था हुई।
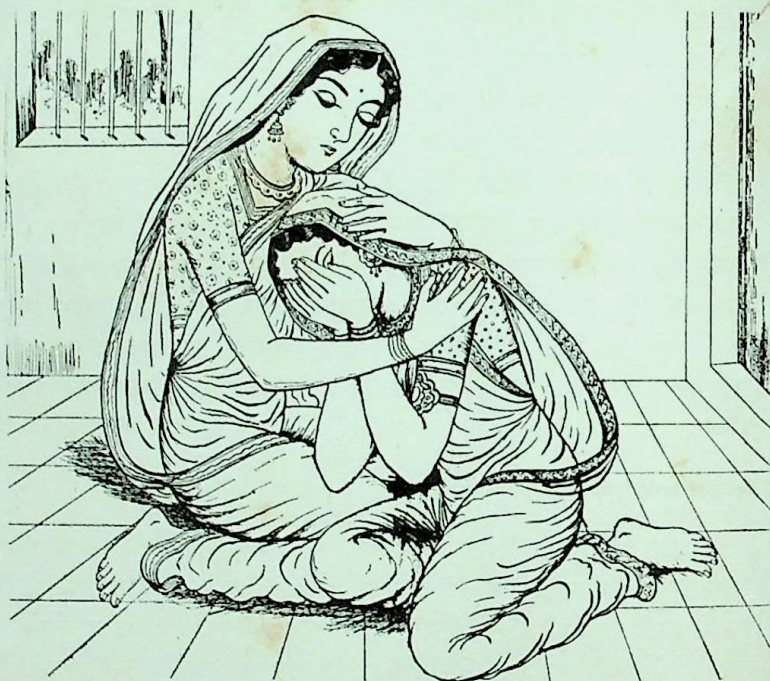
काञ्चना श्रीमतीके पास बैठ गयीं। श्रीमतीजी काञ्चनाके हृदयमें मुँह छिपाकर आँचलसे मुँह ढँककर चुपचाप क्रन्दन करने लगीं। काञ्चनाको श्रीमतीजीके चित्तकी चञ्चलताका पता पहलेसे ही है। श्रीगौराङ्ग श्रीधाम वृन्दावन जायँगे, यह समाचार सब भक्तोंको मिल गया है। काञ्चनाने भी सुना है। उसने श्रीमतीजीको नाना प्रकारकी बातोंसे, नाना प्रकारके बहानोंसे समझानेकी चेष्टा की। परन्तु श्रीमतीजीका नीरव रुदन बन्द न

हुआ। वासु घोषके भ्राता माधव घोष रचित निम्नलिखित प्राचीन पदसे देवीके तत्कालीन मनके भाव सुन्दरता पूर्वक व्यक्त हुए हैं।

विष्णुप्रिया सखिसङ्गे कहे धीरे धीरे।
आज केन प्राण मोर सदाइ अस्थिरे॥

श्रीविष्णुप्रियाजी सखीसे धीरे-धीरे कह रही हैं--न जाने आज मेरा हृदय क्यों अनवरत व्याकुल हो रहा है?

स्फुरये दक्षिण आँखि केन स्फुरे अङ्ग।
ना जानि विधि कि करये छल रङ्ग॥

दाहिनी आँख फरक रही है, न जाने अङ्ग क्यों फरकता हैं? न जाने विधि क्या छल-छन्द करना चाहता है।

आर जत अकुशल स्फुरये सदाइ।
मरमक वेदन शत अवगाइ॥

और सब प्रकारके अपशकुन हो रहे हैं, मर्मकी वेदना सौगुनी बढ़ रही है।

आरे सखि पाछे मोर गौराङ्ग छाड़िब।
माधव एमन हइले अनले पशिव॥

हे सखि! यदि पीछे गौराङ्गने मुझे छोड़ दिया, तो ऐसी स्थितिमें मैं अग्निमें प्रविष्ट हो जाऊँगी।

बहुत देरके बाद श्रीमतीजीने अपनी प्रिय सखी काञ्चनाके साथ बातें कीं। श्रीमतीने कहा--"सखि! मेरे कपालमें विधाताने सुख लिखा ही नहीं। प्राण-वल्लभकी मानसिक अवस्थाको तुम तो खूब जानती हो। वे कृष्ण-प्रेममें उन्मत्त हैं। लोग कहते हैं कि वे श्रीधाम वृन्दावन दर्शन के लिए जा रहे हैं। वहाँ जाकर क्या वे फिर लौटेंगे?" श्रीमतीजी और कुछ बोल न सकीं। अदम्य हृदयका आवेग बाहर फूट पड़ा। पुनः सखीके हृदयमें मुँह छिपाकर क्रन्दन करने लगीं। काञ्चना घबरा गयीं। क्या करें, क्या कहकर सखीको समझावें, कुछ भी निश्चय नहीं कर पा रही हैं। अचानक काञ्चनाके मनमें एक भाव उदय हुआ। वह भाव यह था कि प्रियसखीका दुःख निवारणके लिए वह श्रीगौराङ्गसे कुछ प्रार्थना करेगी, शायद उसकी बातपर प्रभु कान दें और श्रीमतीजीके दुःखको समझें। युवती नदिया-नागरीके पक्षमें यह भाव असङ्गत नहीं है। महाजन लोगोंकी प्राचीन पदावलीमें यह भाव पाया जाता है। पद कल्पतरुमें माधव घोषका एक पद मिलता है--

तछू दुःखे दुःखी एक प्रिय सखी, गौर विरहे भोरा। सहिते नारिया, चलिल धाइया, जेमत बाउरि पारा ।।	उसके दुःखसे दुःखी एक प्रिय सखी गौर-विरहमें विभोर, दुःख सहनेमें असमर्थ होकर बावलीकी तरह व्याकुलतापूर्वक दौड़ चली।
नदीया नगर सुरधुनी तीरे, जेखाने बसिता पँहु। तथाइ जाइया गद गद हिया, कि कहये लहु लहु ।।	नदिया नगरमें सुरसरिके तट पर जहाँ प्रभु बैठते थे, वहाँ जाकर वह गद्गद् हृदयसे धीरे-धीरे क्या कहती है ?
से सब प्रलाप, वचन शुनिते, पाषाण मेलाआ जाय। नीलाचलपुरे, जैछन गौरे, जाइया देखिते पाय ।।	उन सब प्रलाप वचनोंको सुनकर पाषाण भी पिघल जाय। किसी प्रकार नीलाचल जाकर गौराङ्गको देख सके (ऐसी भावना है)।
आँखि झर झर, हिया गर गर, कहये कान्दिया कथा। माधब घोषर हिया वियाकुल, शुनिते मरमे व्यथा ।।	उसकी आँखोंसे झर-झर आँसू बह रहे हैं, हृदय व्याकुल है, उसने रो-रोकर कथा सुनाई। माधव घोषका हृदय उस मर्मव्यथाको सुनकर व्याकुल हो गया।

काञ्चनाने श्रीमतीजीको सम्बोधित करते हुए कहा—"सखि! तुम रोती क्यों हो? स्वामी तीर्थ-दर्शनके लिए जा रहे हैं, यह बड़े सुखकी बात है। वे लौटकर आवेंगे तो वृन्दावनकी कितनी ही बातें तुमसे कहेंगे। वे नहीं लौटेंगे—इस व्यर्थकी आशङ्कासे अपने चित्तको चञ्चल मत करो। उनको लौटकर आना ही पड़ेगा। तुमको छोड़कर वे रह नहीं सकते। मैं आज स्वयं उनके पास जाकर यह बात कहूँगी। उनके धर्म-कार्यमें विघ्न करना ठीक नहीं है।" प्रभुके गयाधाम जाते समय काञ्चनाने श्रीमतीजीको ठीक यही बात कही थी। श्रीमतीजी काञ्चनाकी वात सुनकर कुछ हँसीं। बहुत देरके बाद श्रीमतीजीके मुख-मण्डल पर यह हँसीकी रेखा दिखायी दी है। उनकी प्रिय सखी काञ्चना उनके प्राण-वल्लभके साथ बातें करेगी, उनके लिये अनुनय-विनय करेगी—इसीको लेकर श्रीमतीजीको हँसी आ गयी

और वे बात किये बिना रह न सकीं। श्रीमतीने मृदु मधुर वचनोंसे उत्तर दिया---"सखि! पर-पुरुषके साथ बात करनेमें तुझे लज्जा नहीं आवेगी?" काञ्चनाने हँसते-हँसते उत्तर दिया---"तुम्हारे लिए मैं सब कुछ कर सकती हूँ। तुम्हारे स्वामी पर-पुरुष नहीं, परम पुरुष हैं।"

प्रभुके श्रीधाम वृन्दावनकी यात्राका समाचार सुनकर श्रीमतीजी इतनी कातर, इतनी अधीर, इतनी उतावली हो गयी हैं। शची देवीके मनकी अवस्था और भी शोचनीय है। उनको आशङ्का है कि पीछे निमाई चाँद विश्वरूपके समान संसार-परित्याग न कर दे। प्रभुकी वृन्दावन-यात्राकी बात सुननेके बादसे शची देवीके मनमें यह आशङ्का प्रबल हो गयी है। उसी समय नवद्वीपमें केशव भारती नामके एक संन्यासी आये। महान तेजस्वी संन्यासी केशव भारतीके दर्शन करके प्रभुकी प्रेमोन्मत्तता और भी दूनी हो गयी। दोनों एक दूसरेके रूप और गुणोंसे आकृष्ट हुए। श्रीगौराङ्ग मन-ही-मन सोचने लगे---

तोमार मत वेश आमि कबे से धरिब।	तुम्हारे जैसा वेश मैं कब धारण
कृष्णेर उद्देशे मुञि देशे देशे जाब।।	करूँगा? श्रीकृष्णके उद्देश्यसे मैं देश-
---चै० मं०	देशमें भ्रमण करूँगा।

प्रभुके संन्यासका यहींसे सूत्रपात हुआ। इसीसे श्रीमतीजी इतनी रो रही हैं। इसीसे शची देवीके मनमें इतनी चिन्ता और आशङ्का है।

●

ऊनविंश अध्याय

नवद्वीपमें प्रभु और केशव भारती

तुमि जे जगत गुरु जानिल निश्चय। **तोमार गुरुर योग्य केह कभु नय।।** **--श्री चैतन्य-भागवत।**	तुम जगत्गुरु हो यह मैंने निश्चय जान लिया है। हे प्रभु! तुम्हारा गुरु होने योग्य कोई कभी नहीं है।

● प्रभु और केशव भारतीका मिलन

नवद्वीपमें केशव भारती आये हैं। प्रभुके साथ उनका विशेष परिचय हो गया। प्रभुको देखकर केशव भारती परम सन्तुष्ट हुए। प्रभुने केशव भारतीकी चरण-वन्दना की। केशव भारतीके संन्यास-वेशको देखकर प्रभुको बड़ा आनन्द प्राप्त हुआ। दोनों नेत्रोंसे प्रेमाश्रु बहने लगे। प्रभुके प्रत्येक अङ्गका निरीक्षण करके केशव भारतीने समझ लिया कि उनके कार्यसाधनमें सफलता मिल सकती है।

आचम्बिते आसिया देखिला विश्वम्भर। **विश्वम्भर देखि तुष्ट हैला न्यासीवर।।**	अचानक आकर उन्होंने विश्वम्भरको देखा और वे संन्यासीवर, विश्वम्भरको देखकर प्रसन्न हुए।
उठिया ठाकुर कैल चरण वन्दन। **संन्यासी देखिया प्रेमे झरे दुनयन।।**	ठाकुर (श्री विश्वम्भर) ने उठकर चरण-वन्दना की और संन्यासीको देखकर उनके दोनों नयनोंसे प्रेमाश्रु झरने लगे।
प्रभु अङ्ग निरखिया सेइ न्यासी-राज। **महाबुद्धि न्यासीवर बुझिलेन काज।।** **--चै० मं०**	प्रभुके श्रीअङ्गोंको देखकर महाबुद्धिमान संन्यासीवरने कार्य समझ लिया।

केशव भारती प्रभुकी रूपराशि देखकर अत्यन्त मोहित हो उठे। प्रभुके सारे अङ्गसे दिव्य ज्योति प्रकट हो रही है। कृष्ण-प्रेममें वे उन्मत्त हैं। केशव

भारती देखते हैं कि यह साधारण पुरुष नहीं है। प्रकट रूपमें उन्होंने प्रभुको सम्बोधन करते हुए कहा--"बापू! तुमको देखकर मैं बड़ा आनन्दित हुआ। मेरे मनमें हो रहा है कि तुम साक्षात् शुकदेव या प्रह्लाद हो।"

केशव भारती गोसाञि कहिछे वचन।
तुमि शुक प्रह्लाद कि हेन लय मन।।
--चै० मं०

केशव भारतीके मुखसे यह बात सुनकर प्रभु बालकके समान क्रन्दन करने लगे। नेत्रोंके जलसे वक्षःस्थल निमज्जित हो गया। केशव भारतीने देखकर चकित होकर फिर कहा--

तुमि देव भगवान् जानिल निश्चय।	मैं निश्चयपूर्वक जान गया कि तुम
सर्व्वलोक प्राण इथे नाहिक संशय।।	साक्षात् भगवान् हो और सर्वलोकोंके
--चै० मं०	प्राण हो, इसमें संशय नहीं है।

प्रभु केशव भारतीकी बात सुनते हैं और उनके मुखकी ओर देखकर अविरल रुदन कर रहे हैं। उनका रोना रुक नहीं रहा है। प्रभुका रोना देखकर केशव भारतीके समान संन्यासीकी आँखोंमें भी जल आ गया। उन्होंने प्रभुको दृढ़ आलिङ्गन देकर नाना प्रकारकी आश्वासनकी बातें कहकर सन्तुष्ट किया। प्रभुकी तुलना पहले शुकदेव और प्रह्लादसे की। पश्चात् उनको श्रीभगवान् कहा। प्रथम दर्शनसे ही संन्यासीवरने प्रभुको पहचान लिया है। प्रभु भी उनको छोड़नेवाले नहीं हैं। केशव भारतीकी बातका प्रभु उत्तर दे रहे हैं--

तोर कृष्ण अनुराग अति बड़ हय।	तुम्हारा कृष्णमें अत्यन्त अनुराग
ते कारणे यथा तथा देख कृष्णमय।।	है, इसी कारण तुम सब कुछ कृष्णमय
--चै० मं०	देखते हो।

प्रभुने बड़ा सुन्दर उत्तर दिया है। श्रीभगवान् जब भक्तके सामने पकड़े जाते हैं, तब इसी प्रकारकी बातें करते हैं। श्रीभगवान्का आत्म-गोपन स्वाभाविक है। वे गुप्त रहते हैं, भक्तगण उनको प्रकाशमें लाते हैं।

तोमार मत वेश आमि कबे जे धरिब।	तुम्हारे समान वेश मैं कब धारण करूँगा?

केशव भारतीके दर्शन मात्रसे प्रभुके मनमें संन्यास-ग्रहणकी वासनाका उद्रेक हुआ। प्रभुके साथ केशव भारतीका प्रथम दर्शन श्रीवासके घरमें हुआ। वहाँ ही प्रभुके साथ केशव भारतीका उपर्युक्त वार्तालाप हुआ था। उस दिन प्रभुके अनुरोधसे श्रीवास पण्डितने अपने घर केशव भारतीको भिक्षा कराई।

श्रीवास देखिया प्रभु कहिल उत्तर।
संन्यासी लइया तुमि जाओ निजघर॥
प्रभुर वचन शुनि श्रीवास ठाकुर।
संन्यासी लइया भिक्षा दिलेन प्रचुर॥
--चै० मं०

● प्रभुके घर केशव भारतीकी भिक्षा और शची माताकी चिन्ता

दूसरे दिन प्रभुने केशव भारतीको अपने घर भिक्षा कराई। निर्जनमें बैठकर प्रभुने उनके साथ बहुत देरतक कृष्णचर्चा की। शची देवी संन्यासीको देखते ही शङ्कित हो उठतीं। आज वही संन्यासी उनके घर आ गया है। निमाई चाँद संन्यासीके साथ एकान्तमें क्या बातें करता है? विश्वरूपकी बात शची देवीको याद आती है और मनःसन्तापसे वे दग्ध होती रहती हैं। प्रभु संन्यासीको निमन्त्रित करके घर पर लाये हैं, शची देवी कुछ बोल नहीं पाती हैं, उनके मनमें एक विषम उद्वेग, विषम आकुलता हो रही है। अत्यन्त व्यग्र होकर शची देवीने अपनी बहिनको बुला भेजा। चन्द्रशेखर आचार्यकी गृहिणी शची देवीकी बहिन हैं, एक महल्लेमें घर है। वे तत्काल आ उपस्थित हुई। शची देवीने रो-रोकर बहिनसे सारी बातें कह सुनायी। संन्यासी केशव भारतीका निमाई चाँदने बड़ा सत्कार किया है, उनके साथ अकेले बैठकर उन्होंने बहुत देर वार्त्तालाप किया है। इससे शची देवीके मनमें आशङ्का हुई है कि पीछे कहीं निमाई चाँद विश्वरूपके समान संन्यासी होकर गृह-त्याग न कर दे। दोनों बहिनोंने एक जगह बैठकर इस सम्बन्धमें बहुत विचार-विमर्श किया। बहिनने शची देवीसे कहा--"दीदी! इसमें भयका कोई कारण नहीं है। तथापि कुछ कहा नहीं जा सकता। आजकल निमाई चाँदकी जैसी भावभङ्गी देख रही हूँ, उससे कोई भरोसा नहीं होता। परन्तु दीदी तुम्हें यह बात खोलकर निमाईसे पूछनी चाहिये। वह कभी झूठी बात नहीं कहेगा।" दोनों बहिनोंमें इस प्रकार बात-चीत हो ही रही थी कि

उन्होंने निमाई चाँदको वहाँ आते देखा। पुत्रका हाथ पकड़कर शची देवीने आदर पूर्वक उसे निकट बैठाया और कहा—"तुम्हारी मौसी तुम्हें देखने आयी हैं।" निमाई चाँद माता और मौसीको प्रणाम करके भलेमानसके समान उनके पास बैठ गये। प्रभुका मन अन्यमनस्क और गंभीर है, मानो कुछ सोच रहे हों। शची-देवीने कहा—"बेटा निमाई! आज तुमसे एक बात पूछूँगी, यदि सही उत्तर दो तो पूछूँ?" प्रभुने उत्तर दिया—"माँ! तुमसे तो कभी मैं कोई बात नहीं छिपाता, फिर ऐसा क्यों कह रही हो?" शची देवीको यह सुनकर साहस हुआ। तब उन्होंने प्रभुसे कहा—"बेटा निमाई! तुम आज संन्यासीको लेकर इतनी देरतक एकान्तमें बैठे क्या बातें करते रहे? तुम्हारी भावभङ्गी देखकर मुझको बड़ा भय हुआ है। तुम भी क्या विश्वरूपके समान मुझको छोड़कर चले जाओगे? बेटा! तुम ठीक-ठीक मुझसे अपने मनका भाव कहो।" श्रीगौराङ्ग विषम समस्यामें पड़ गये। कुछ देर तक चुपचाप बैठे रहे। प्रभुका चन्द्रवदन अवनत हो गया मानो वे बड़े अपराधी हैं। धीरे-धीरे मातासे बोले—"माँ! संन्यासीके साथ कृष्ण-चर्चा कर रहा था। वे एक परम कृष्ण-भक्त हैं। उनकी सङ्गत पाकर मैं कृतार्थ हो गया हूँ। माँ! तुम तो जानती हो, मैं कृष्णप्रेममें उन्मत्त रहता हूँ। वे जब जो करायँगे, मुझको तब वही करना पड़ेगा। तुम्हारी अनुमतिके बिना तथा आज्ञाके बिना मैं कोई कार्य न करूँगा। यदि कृष्ण मुझको कहीं जानेकी आज्ञा देगें तो तुम्हारी अनुमतिके बिना मैं नहीं जाऊँगा।"

निमाई चाँदकी बात सुनकर शची देवी कुछ शान्त हुई। परन्तु उनके मनमें एक खटका लगा रहा। निमाई चाँदने उनको स्पष्टतः कह दिया है कि यदि कहीं जायँगे तो उनकी अनुमति लेकर जायँगे। तो क्या निमाई चाँद उनको छोड़कर चले जायँगे? यह बात शची देवीके मनमें बारम्बार आने लगी और दोनों नेत्रोंकी अश्रुधारासे वृद्धाका वक्षःस्थल निमज्जित होने लगा। रोते-रोते उन्होंने अपनी बहिनसे पूछा—"बहिन! तो क्या निमाई चाँद भी मुझको छोड़ जायगा?" बहिनने उत्तर दिया—"दीदी! तुम सोच मत करो। तुम्हारा निमाई वैसा लड़का नहीं है, वह बड़ा मातृभक्त है, वह तुमको कभी कष्ट नहीं देगा। तुमको बिना देखे वह क्षण भर भी नहीं रह सकता। तुम ऐसी चेष्टा करो जिससे उसका मन संसारमें लगे। बहूको नैहरसे बुला लो।"

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी कुछ दिनोंके लिए उस समय पिताके घर गयी थीं। केशव भारतीके आगमनके विषयमें उनको कुछ भी ज्ञात न था। ससुरालमें रहने पर कुछ-न-कुछ इस विषयमें अवश्य जान सकती थीं। प्रभुके श्रीधाम वृन्दावनकी यात्राकी बात जबसे सुनी है, तबसे श्रीमतीजीके मनमें शान्ति नहीं है। पिताके घर वे चैनसे नहीं रहती हैं, प्राणवल्लभके लिए वे सदा ही उत्कण्ठिता रहती हैं। मन-ही-मन सोचा कि वे स्वयं ससुराल चली जायेंगी।

●

विंश अध्याय

प्रभुका संन्यास सङ्कल्प और भक्तवृन्दका आर्त्तनाद

तोमारे कहिलुँ एइ आपन हृदय।	तुमको मैंने यह अपने हृदयकी
गारिहस्त वाण आमि छाड़िब निश्चय।।	बात कह दी, गृहस्थ आश्रम मैं निश्चय
——श्रीचैतन्य-भागवत	छोड़ूँगा।

● प्रभुका संन्यास-सङ्कल्पकी बात नित्यानन्दजीसे कहना

प्रभुने दृढ़ सङ्कल्प कर लिया कि वे गृहस्थ जीवनमें नहीं रहेंगे, संन्यास आश्रम उनको ग्रहण करना ही पड़ेगा। केशव भारतीके साथ गुप्त परामर्शका यही फल हुआ।

घरे जाञा मने मने अनुमान करि।	घर पहुँच कर मन-ही-मन अनुमान
दढ़ाइला संन्यास करिब गौरहरि।।	करके गौरहरिने संन्यास लेनेका दृढ़
——चै० भा०	निश्चय किया।

प्रभुने श्रीनित्यानन्दसे अपने मनका भाव व्यक्त किया। इस अध्यायमें उपर्युक्त पद श्रीनित्यानन्दके प्रति प्रभुकी उक्ति है। श्रीश्रीनित्यानन्दको अकेलेमें बुलाकर प्रभुने यह दारुण बात कही——

इथे तुमि किछु दुःख ना भाविओ मने।	इससे तुम अपने मनमें कुछ भी
विधि देह तुमि मोरे संन्यास कारणे।।	दुःख न मानना। मेरे संन्यास धारण
	करनेका विधान तुम ही दो।
जे रूप कराह तुमि सेइ हइ आमि।	तुम जो रूप धारण करवाते हो
एतेक विधान देह अवतार जानि।।	मैं वही बन जाता हूँ। इस अवतारका
	मन्तव्य समझ कर इसका विधान दो।
जगत उद्धार यदि चाह करिबारे।	यदि जगत्का उद्धार करना चाहते
इहाते निषेध नाहि करिबे आमारे।।	हो, तो मुझको इस कार्यसे न रोको।

इथे मने दुःख ना भाविह कोन क्षण ।	इससे कभी मनमें दुःख न मानना,
तुमित जानह अवतारेर कारण ।।	क्योंकि तुम तो अवतारका कारण
--चै० भा०	जानते हो ।

श्रीश्रीनित्यानन्दजी प्रभुके मुखसे यह दुःसह बात सुनकर कुछ देर चुप हो रहे, उनके मुँहसे बात नहीं निकली ।

गृह छाड़िबेन प्रभु, जानि नित्यानन्द ।
वाक्य नाहि स्फुरे देह हइल निस्पन्द ।।
--चै० भा०

कुछ देरके बाद प्रभुके मुखकमलकी ओर देखकर अति कातर स्वरसे नित्यानन्द कहने लगे--"तुम इच्छामय हो ! तुम्हारी जो इच्छा होगी, वही होगा । तुमको कोई विधि नहीं दे सकता, निषेध भी कोई नहीं कर सकता । तुम विधि निषेधके परे हो, तुम सर्व-लोक-पाल हो, तुम सर्व-लोक-नाथ हो, जो उचित है, वह तुमसे छिपा नहीं है । जिस प्रकार जगत्का उद्धार होगा, उसे तुम भली भाँति जानते हो । तुम्हारी लीला स्वतन्त्र है, तुम जो करोगे निश्चयपूर्वक वही होगा । तथापि मेरा अनुरोध है, अपने मनका भाव सब भक्तोंके सामने खोलकर बोल दो । उसके बाद तुम्हारी जो इच्छा हो करना ।" प्रभु, नित्यानन्दकी बात सुनकर बहुत प्रसन्न हुए और उनको बारम्बार आलिङ्गन करने लगे ।

नित्यानन्द वाक्ये प्रभु सन्तोष हइला ।
पुनः पुनः आलिङ्गन करिते लागिला ।।
—चै० भा०

दोनों ही प्रेमसे गद्गद हो रहे हैं । दोनोंके नेत्रोंमें प्रेमाश्रु हैं । नित्यानन्दके परामर्शके अनुसार प्रभु अन्तरङ्ग भक्तोंके पास यह समाचार देने चले ।

एइ मत नित्यानन्द सङ्गे युक्ति करि ।
चलिलेन वैष्णवसमाजे गौरहरि ।।
—चै० भा०

नित्यानन्द शची देवीकी बात सोचकर बहुत व्याकुल हुए। प्रभुके वियोगमें वे कैसे जीवन धारण करेंगी? यह सोचते-सोचते नित्यानन्द मूर्च्छित-से हो गये। शची देवीके दु:खको सोचकर एकान्तमें जाकर वे रोने लगे।

भाविया आइर दुःख नित्यानन्द राय।
निभृते बसिया प्रभु काँदये सदाय।।"
—चै० भा०

● प्रभु और मुकुन्द

प्रभु पहले मुकुन्दके घर गये। उनसे बोले—"मुकुन्द! कुछ कृष्ण-मङ्गल गान करो।" मुकुन्द कृष्ण-मङ्गल गीत गाने लगे। प्रभु सुनकर प्रेम-विह्वल होकर नृत्य करने लगे। कुछ देरके बाद प्रभुने भाव संवरण करके मुकुन्दसे कहा—

प्रभु बोले मुकुन्द शुनह किछु कथा।
बाहिर हइब आमि ना रहिब हेथा।।

प्रभुने कहा—हे मुकुन्द! कुछ बात सुनो। मैं यहाँ न रहूँगा, बाहर जाऊँगा।

गारिहस्त आमि छाड़िबाङ सुनिश्चित।
शिखासूत्र छाड़िया चलिब जे ते भित।।
—चै० भा०

मैंने गृहस्थ आश्रमको छोड़नेका निश्चय कर लिया है। शिखा-सूत्र त्यागकर यत्र-तत्र घूमूँगा।

प्रभुके मुखसे यह हृदय-विदारक दारुण संवाद सुनकर मुकुन्द अत्यन्त हतप्रभ हो गये। समझमें नहीं आता कि क्या उत्तर दें। वे प्रभुके एक मर्मी अन्तरङ्ग भक्त थे। मुकुन्द जानते थे कि प्रभु जो कहेंगे वह अवश्य करेंगे। इसलिए पहले बहुत कातर अनुनय करते हुए प्रभुसे बोले—

काकु करि बोलये मुकुन्द महाशय।
जदि वा प्रभु एमत से करिवा निश्चय।।
दिन कथो एइरूपे करह कीर्त्तने।
तबे प्रभु करिह हे जे तोमार मने।।
—चै० भा०

कातर अनुनय करते हुए मुकुन्द महाशय बोले—हे प्रभु! यदि ऐसा निश्चय कर लिया है, तो कुछ दिनों तो इसी प्रकार कीर्त्तन कीजिए और उसके बाद जो मनमें आवे करियेगा।

प्रभुने इसके उत्तरमें मुकुन्दसे कहा—"मुकुन्द! नहीं, यह न होगा। शुभ कार्यमें विलम्ब करना ठीक नहीं है।" तब प्रभुके भक्त मुकुन्द बहुत

नाराज हो गये। प्रभुके संन्यास-ग्रहणके संवादसे उनको मर्मान्तिक पीड़ा हुई, अतएव उनके मुखसे ऐसे समय अच्छी बात नहीं आ सकती थी। मुकुन्द प्रभुको शठ, खल, कपटी, कठोर हृदय आदि विशेषणोंसे भूषित करके अभिमान और रोषमें भरकर कहने लगे—

मोरा सब अधम दुरन्त दुराचार । तुमि खल शठमति बुझिब बेभार ।।	हम सब अधम और दुर्जय दुराचारी हैं और तुम खल और शठमति हो, तुम्हारा व्यवहार समझमें आ रहा है ।
अचतुरगण मोरा ना बुझिलुँ तोरे । शरण लइनु तोर छाड़िया संसारे ।।	हम लोग मूढ़ हैं जो तुमको समझ नहीं पाये, इसीसे संसारका त्याग करके तुम्हारी शरण ली ।
धर्म्म कर्म्म छाड़ि तोर पद कैलुँ सारे । पतित करिया केन छाड़ मो सभारे ।।	धर्म-कर्म छोड़कर तुम्हारे चरणोंको सार-तत्त्व माना। अब हम सबको पतित करके तुम क्यों त्याग रहे हो ?
पतित-पावन तुमि शास्त्रेते जानिया । शरण लइनु सर्व्व धर्म्मेरे छाड़िया ।।	शास्त्र द्वारा तुमको पतितपावन जानकर सब धर्मोको छोड़कर तुम्हारी शरण ली ।
एखन छाड़िया जाइ मो सबारे तुमि । ए नहे उचित प्रभु निवेदिलुँ आमि ।।	अब हम सबको छोड़कर तुम जा रहे हो । हे प्रभु ! यह उचित नहीं है, मैंने यह निवेदन कर दिया ।
खलमति ना बुझिया लइलुँ शरण । बजर अन्तर तोर हृदय कठिन ।।	तुमको खलमति न जानकर ही हमने शरण ली थी। तुम्हारा अन्तः-करण वज्र है और हृदय कठोर है ।
बाहिरे कमलरस सुगन्धि पाइया । अन्तरेह एइ मत छिल मोर हिया ।।	बाहरसे कमल-रसकी सुगन्ध पाकर मेरे हृदयमें विश्वास था कि तुम्हारा अन्तः करण भी ऐसा ही होगा ।

एखन जानिल तोर कठिन अन्तर।	अब तुम्हारे कठोर अन्तःकरणका
विषकुम्भ पय जेन ताहार उपर।।	पता लगा, जैसे विषके घड़ेके ऊपर दूध
काष्ठेर मोदक जेन कर्पूर छाइया।	हो। जैसे काष्ठके मोदकके ऊपर
गिलिते ना पारे जेन ताहा ना बुझिया।।	कर्पूर लगा हो और उसको न जानकर
—चै० मं०	कोई उसे निगल न सके (वैसी हमारी
	दशा है)।

प्रभुने मुकुन्दकी बातें अत्यन्त ध्यानपूर्वक सुनीं। भक्तके मुखसे भर्त्सना और अभिमान-व्यञ्जक बातें सुनकर श्रीभगवान्‌के मनमें बड़ा आनन्द हुआ। भक्त यदि प्रेमके आवेशमें आकर श्रीभगवान्‌को कटु वचन बोलता है, ईर्ष्याके वश होकर यदि उनको गाली देता है, मानमें भरकर यदि उनको नाना प्रकारसे लाञ्छित करता है, उससे भी भगवान्‌का मन विचलित न होकर और भी प्रफुल्लित होता है। वे भक्तकी गाली सुनकर बड़ा सुख मानते हैं। महर्षियोंकी प्रगाढ़ भक्तियोग-समन्वित दीर्घ काल व्यापी कठोर साधनासे श्रीभगवान्‌की जैसी तृप्ति होती है, उससे सौ गुना अधिक आनन्द अभिमानी भक्तके द्वारा अपना मान-भञ्जन होते देखकर होता है। क्योंकि प्रेमी भक्त जो कुछ करता है, वह अपनी स्वार्थ-सिद्धिके लिए नहीं करता, प्रेमभाजन श्रीभगवान्‌का आनन्द-वर्द्धन ही प्रेमिक भक्तके सब कार्योंका मुख्य उद्देश्य होता है। यही भक्ति-तत्त्वका मूल मन्त्र है, इसीमें श्रीभगवान्‌की भगवत्ता है, यही प्रेमभक्तिका निगूढ़ रहस्य है। इसका ही नाम भक्ति-तत्त्व या भक्त-महिमा है, इसका ही नाम राधा-तन्त्र है। परम पुरुष श्रीभगवान्‌के सिवाय इस प्रकारके निःस्वार्थ प्रेमके सम्मानकी रक्षा करनेमें और कोई समर्थ नहीं हो सकता।

मुकुन्दके दुःखसे श्रीगौराङ्गका हृदय द्रवित हो गया। भक्तके दुःखसे श्रीभगवान् कातर हो उठे। वे और कुछ उत्तर न दे सके। केवल करुण दृष्टिसे मुकुन्दके मुखकी ओर ताकते रहे। प्रभुके दोनों नेत्रोंसे अविरल अश्रुधारा बहती रही। कण्ठ-स्वरके अवरुद्ध होनेके कारण वे और कोई बात न कह सके।

भक्तेर दुःख देखि भकत-वत्सल।
अरुण करुण आँखि करे छल छल।।

गदगद स्वर कथा ना बाहिर हय।
सकरुण दिठे प्रभु भक्तपाने चाय।।
--चै० मं०

प्रभुकी अवस्था देखकर मुकुन्दके मनमें बड़ा दुःख हुआ। और कुछ न बोले, केवल एक बात कही। मुकुन्दने कही --"हे प्रभु! तुम तो जाओगे ही, पर कुछ दिन तो और ठहर जाओ। तुम्हारा यहाँका कार्य अभी पूरा नहीं हुआ है।" प्रभु बोले--"मुकुन्द! ऐसा ही होगा।" श्रीभगवान्‌ने भक्तकी बात सुन ली, इससे भक्तके मनमें बड़ा आनन्द हुआ। मुकुन्द प्रभुके चरणोंमें गिरकर रोने लगे।

● प्रभु और गदाधर

इसके बाद श्रीगौराङ्गने गदाधरके घर आकर अपना अभिप्राय प्रकट किया। प्रभु बोले--

"ना रहिब गदाधर आमि गृहवासे।
जे ते दिगे चलिबाङ कृष्णेर उद्देशे।।

हे गदाधर! अब मैं गृहवासमें न रहूँगा। कृष्णकी खोजमें मैं जहाँ-तहाँ विचरण करूँगा।

शिखासूत्र सर्व्वथाय आमि ना राखिब।
माथा मुडाइया जे ते दिगे चलि जाब।।
--चै० भा०

मैं शिखा-सूत्र बिल्कुल ही नहीं रक्खूँगा। सिर मुंडाकर जहाँ-तहाँ चला जाऊँगा।

शिखा-सूत्र त्यागनेकी बात सुनते ही मानो गदाधरके सिरपर वज्र गिर पड़ा। उनके हृदयको बड़ी चोट लगी। गदाधर प्रभुके प्रधान अन्तरङ्ग भक्त हैं। प्रभुके मुखसे यह दारुण वार्ता सुनकर वे किंकर्त्तव्यविमूढ़ हो उठे। कुछ देरके बाद मनका आवेग शान्त होनेपर अभिमान पूर्वक प्रभुको धमकाते हुए बोले--"प्रभो! तुम्हारे सारे काण्ड अद्‌भुत हैं। क्या शिखा-सूत्र त्याग करनेसे ही तुम्हें कृष्ण मिल जायँगे? क्या गृहस्थाश्रममें रहकर कोई वैष्णव नहीं हो सकता? सिर मुंडाकर देश-विदेश भटकनेसे ही क्या कृष्ण मिलते हैं? तुम्हारा यह विचार वेद-सम्मत नहीं है।" भक्त श्रीभगवान्‌को धमकाता है, शास्त्र-विधि दिखलाता है, यह दृश्य बड़ा सुन्दर है। श्रीभगवान् यही चाहते हैं। इसी कारण गदाधरकी बात सुनकर श्रीश्रीगौराङ्ग हँसते हैं। श्रीगौराङ्ग-गत-प्राण गदाधरके मनमें बड़ा

क्रोध हुआ, वे अपनेको सँभाल न सके। तब वे भक्त श्रीभगवान्‌को मातृ-वधके पापका उल्लेख करके भय दिखाकर कहने लगे--

अनाथिनी मायेरे वा केमते छाड़िबे।
प्रथमे त जननी बधेर भागी हबे।।

तुम अनाथिनी माँको कैसे छोड़ोगे? पहले तो तुम्हें मातृ-बधका भागी होना पड़ेगा।

तुमि गेले सर्व्वथा जीवन नाहि तान।
सबे अवशिष्ट आछ तुमि ताँर प्राण।।"
--चै० भा०

तुम्हारे चले जाने पर निश्चय उनका जीवन नहीं बचेगा। क्योंकि एकमात्र तुम्हीं उनके प्राणस्वरूप अवशिष्ट हो।

प्रभु कोई उत्तर न देकर फिर कुछ हँसे। इससे गदाधरके मनमें और भी क्रोधका उद्रेक हुआ, अभिमानसे भक्तका हृदय भर गया। गदाधरका मुखमण्डल लाल हो उठा। वे प्रभुसे कहने लगे--

तथापिह माथा मुँडाइले स्वास्थ्य पाओ।
जे तोमार इच्छा ताइ कर चलि जाओ।।
--चै० भा०

तथापि यदि सिर मुंडानेसे ही तुम्हें शान्ति मिलती हो, तो जाओ जो तुम्हारी इच्छा हो वही करो।

प्रभुके मनमें आज बड़ा आनन्द है। गदाधरकी फटकार उनको वेद-स्तुतिसे भी बढ़कर लगी। उन्होंने प्रेमानन्दसे गदाधरको आलिङ्गन किया। भक्त और श्रीभगवान्‌का मिलन हुआ। गदाधर सब दुःख भूलकर श्रीगौराङ्गके चरणोंमें गिर पड़े। भक्त और भगवान् दोनों मिलकर प्रेमाश्रु विसर्जन करने लगे। भक्तके सामने श्रीभगवान्‌की हार हुई। यही वे चाहते हैं।

● प्रभु और श्रीवास

उसके बाद प्रभुने एक-एक करके श्रीवास, मुरारि, हरिदास आदि सब अन्तरङ्ग भक्तोंके निकट जाकर अपना अभिप्राय प्रकट किया। प्रभुके गृहस्थ-आश्रमका त्याग करके संन्यास-आश्रम ग्रहण करनेके प्रस्तावको सुनकर सभी मर्म-वेदनासे हाहाकार करने लगे। वृद्ध ब्राह्मण श्रीवास पण्डितके कातर मुखको देखकर सान्त्वना देते हुए प्रभु बोले--

प्रेम उपार्ज्जने आमि जाब देशान्तर। तो सबारे आनि दिब शुन द्विजवर।।	मैं प्रेमोपार्जन करनेके लिए देशान्तर जाऊँगा। हे द्विजवर! सुनो, उसे लाकर तुम लोगोंको दूँगा।
साधु जेन नौका चढ़ि जाय दूर देश। धन उपार्ज्जन लागि करे नाना क्लेश।।	जैसे साधु पुरुष नौका पर चढ़कर दूर देश जाता है, धन उपार्जनके लिए नाना प्रकारके क्लेश कठिनकार्य करता है।
आनिञा बान्धव जाने करये पोषण। आमिओ ऐछन आनि दिब प्रेमधन।। ——चै० मं०	धन लाकर बान्धवोंका पोषण करता है, मैं भी उसी प्रकार प्रेमधन लाकर दूँगा।

वृद्ध श्रीवास पण्डित इस भुलावेमें आनेवाले न थे। वे श्रीगौराङ्गको अत्यन्त प्यार करते हैं, क्षण मात्र भी उनको बिना देखे नहीं रह सकते। वे कैसे प्रभुको देखे बिना प्राण धारण करेंगे? वृद्ध ब्राह्मणका अदम्य हृदया-वेग एकवारगी उछल उठा, वे संभल न सके। मनके आवेगसे प्रभुसे बोले——"तुमको देखे बिना मैं जी नहीं सकता। जीवित रहने पर ही तो तुम्हारे प्रेमधनका भोग कर सकूँगा? जो तुम्हारे वियोगको सहन करके जीवित रह सकेंगे उनको तुम प्रेमधन दान करना और मेरा श्राद्ध-तर्पण आदि करना, तुमसे यही मेरी भिक्षा-याचना है।"

जीवित शरीरे बन्धु करये पोषण। देहान्तरे करे तार श्राद्ध तर्पण।।	जीवित शरीरका बन्धु-बान्धव पोषण करते हैं। देहान्त हो जाने पर उसका श्राद्ध-तर्पण करते हैं।
जे जीवे ताहारे तुमि दिओ प्रेमधन। तोमा ना देखिले हइवे सभार मरण।। ——चै० मं०	जो जीवे उसको तुम प्रेम-धन देना। तुमको देखे बिना सबकी मृत्यु हो जायगी।

प्रभु इसका उत्तर क्या देंगे? लज्जासे उन्होंने सिर झुका लिया।

● प्रभु और मुरारि

कुछ देरके बाद प्रभुने मुरारिके मुखकी ओर देखा। देखते क्या हैं कि मुरारि भी रो रहे हैं। रोते-रोते मुरारिने प्रभुसे कहा——

शुन शुन ओहे प्रभु गौर भगवान्।
अधम मुरारि बले कर अवधान।।

हे प्रभु! हे गौर भगवान्! सुनो, यह अधम मुरारि जो कहता है, उसपर ध्यान दो।

रुइले अपूर्व्व वृक्ष अंगुलि धरिया।
बाड़ाइले दिवा निशि सिंचया कुँड़िया।।

अंगुलियोंसे पकड़कर अपूर्व वृक्ष रोपा था। रात-दिन सींचकर, कोड़कर उसे बड़ा किया।

तिले तिले राखिले ढाकिले बहु यत्ने।
बाँधिले तरुर मूल दिया नाना रत्ने।।

प्रति क्षण बहुत यत्नपूर्वक ढककर उसकी रक्षा की। वृक्षके मूलमें नाना प्रकारके रत्न देकर बाँधा।

फल फूल काले गाछ फेलाह काटिया।
मरिव आमरा सब हृदय फाटिया।।
चै० मं०

उस वृक्षको फल-फूलके समय काट-गिराते हो। हम सबोंका हृदय फट जायगा और हम मर जायँगे।

मुरारिने पक्की बात कही। भक्ति-वृक्ष पर फल लगनेका समय हुआ ही है। प्रभुने इस वृक्षको अपने हाथों रोपा है, उन्होंने इसको अति यत्न-पूर्वक प्रेमवारिसे सींचकर बढ़ाया है। इस समय वेही इसके मूलमें कुठारा-घात करना चाहते हैं। प्रभुने मुरारिकी बात अत्यन्त ध्यानपूर्वक सुनी, परन्तु कुछ उत्तर नहीं दिया। उनके नेत्रोंके जलसे वक्षःस्थल भीगा जा रहा है। भक्त-वत्सल श्रीगौर भगवान् भक्तके दुःखसे कातर होकर रो रहे हैं। यह दृश्य अति सुन्दर है, अति पवित्र है। कृपालु पाठक! इस मधुमय चित्रको चित्तमें दृढ़रूपसे अङ्कित कीजिए। भक्तके सामने भगवान् सदासे पराजित होते आये हैं। भक्तके आगे श्रीभगवान्के क्रन्दनमें कोई नवीनता है। प्रभुके क्रन्दनमें जो तात्पर्य है, उसे आगे कहूँगा।

● प्रभु और हरिदास

भक्त हरिदास भी वहाँ थे। दूर खड़े होकर केवल रो रहे हैं तथा एक-एक वार श्रीचरणयुगलकी ओर देख लेते हैं। हरिदासके प्रशान्त मुख-मण्डल पर विषादकी घोर छाया पड़ रही है। जब सबकी बात समाप्त हो गयी, तब हरिदासने आकर प्रभुके दोनों चरण पकड़ लिये, और अजस्र अश्रु प्रवाहित करने लगे। मुखसे कुछ कहते नहीं हैं, केवल रोते हैं। "बालानां रोदनं बलम्।" हरिदासको भी यही हुआ है। बालकके

समान हरिदास उच्च स्वरसे क्रन्दन करने लगे। हरिदासके करुण रुदन और आर्त्तनादसे सारे भक्तगण व्यथित होकर क्रन्दन करने लगे। भक्तवत्सल श्रीगौर भगवान् भक्तके क्रन्दनपर अधिक देर तक अपनेको रोक न सके,

उनके दोनों नेत्रोंसे झर-झर अश्रु प्रवाहित होकर उनके वक्षःस्थल पर वह चले। मनमें इच्छा है कि भक्तगणको कुछ प्रवोध देकर सन्तुष्ट करें, परन्तु मुँहसे बात नहीं निकल रही है। स्वर बन्द होता जा रहा है।

कहिते आरम्भ मात्र गदगद स्वर। अरुण करुण आँखि करे छल छल ।।	बोलना शुरू करते ही स्वर गद्गद हो जाता है। करुणासे भरी लाल आँखोंमें आँसू छल-छल करते हैं।
सकरुण कण्ठे आध आध वाणी कहे। सम्बरिते नारि क्षणे निशबदे रहे ।। ——चै० मं०	करुणा भरे कण्ठसे आधी-आधी बातें बोल पाते हैं, अपनेको सँभाल न पानेके कारण क्षण-क्षणमें चुप हो जाते हैं।

● प्रभु और भक्तवृन्द

इस अवस्थामें प्रभुने सब भक्तोंको सम्बोधन करके रोते हुए कहा——

प्रभु बोले तोमरा आमार निज दास। तो सबारे कहि सुन आपन विश्वास ।।	प्रभु बोले——तुम लोग मेरे निज दास हो, मैं अपना विश्वास तुम सबसे कहता हूँ, सुनो।
आमार विच्छेदभये तोमरा कातर। मोर कृष्णविरहे व्याकुल कलेवर ।।	मेरे वियोगके भयसे तुम लोग डरते हो और मेरा शरीर कृष्ण-विरहमें व्याकुल है।
आत्मसुख लागि तोरा मोरे देह दुख। केमन पिरिति करु मोरे तोरा लोक ।।	तुम लोग अपने सुखके लिए मुझको दु:ख देते हो, तुम लोग मुझसे कैसी प्रीति करते हो ?
कृष्णेर विरहे मोर पोड़ाये अन्तर। दगध इन्द्रिय देहे भेल महाज्वर ।।	कृष्णके विरहमें मेरा अन्त:करण जल रहा है, इन्द्रियाँ दग्ध हो रही हैं, शरीरमें महा ज्वर हो गया है।
अग्नि हेन लागे मोर से हेन जननी। विष माखाइल जेन तो सवार वाणी ।। ——चै० मं०	मेरी वह जननी मानो अग्नि जैसी लगती है और तुम लोगोंकी वाणी मुझको विष मिली हुई जान पड़ती है।

प्रभुकी बातें घोर वैराग्यपूर्ण हैं। उनको कुछ भी अच्छा नहीं लग रहा है। वे सोचते हैं कि उनके भक्तगण अपने सुखके लिए उनके संन्यास-

आश्रम ग्रहणकी वासनाका विरोध कर रहे हैं। उनके दुःखसे कोई दुःखी नहीं है, उनके दुःखका कोई साथी नहीं मिला, उनकी व्यथासे व्यथित कोई नहीं मिला, इस दुःखसे श्रीगौराङ्ग रो रहे हैं। उनके मनमें बड़ी अशान्ति हो गयी है। इतने अन्तरङ्ग भक्तोंमें कोई उनकी व्यथाका व्यथी नहीं, सभी आत्म-सुखकी इच्छासे विह्वल हैं, सभी स्वार्थी हैं—ये भाव श्रीभगवान्के मनमें क्यों उदित हुए? वे तो भक्त-वाञ्छा-कल्पतरु हैं। भक्त-वत्सल, दयालु प्रभु, श्रीभगवान्के मनमें तो यह भाव आना उचित नहीं। इसका तात्पर्य है, श्रीभगवान्की यह नर-लीला है। इस लीलामें ऐश्वर्यभाव रहने पर लीलाका मधुरत्व नष्ट हो जाता है। साधारण मनुष्य इस परिस्थितिमें पड़ने पर जो करता है, श्रीगौराङ्गने भी वही किया। वे ऐश्वर्य दिखलाकर सब भक्तोंके मनको अनायास ही हर ले सकते थे, परन्तु यह उन्होंने नहीं किया। प्रभुके मुखसे कठोर वैराग्यकी बात सुनकर समस्त भक्तोंने और कुछ बोलनेका साहस नहीं किया। प्रभु यह असहनीय बात कहकर ही शान्त नहीं हुए। उन्होंने और भी कहा——

धरयिा जोगीर वेश जाब देशे देशे।	प्राणनाथके उद्देश्यसे मैं योगीका
यथा लागि पाङ प्राणनाथेर उद्देशे।।	वेश धारण करके देश-विदेश जाऊँगा,
——चै० मं०	जिससे उन्हें प्राप्त कर सकूँ।

इतनी बात कहते-कहते प्रभु आर्त्तनाद करके भूतल पर गिरकर क्रन्दन करने लगे। "हा कृष्ण! हा कृष्ण!" कहकर उच्च स्वरसे उन्मत्त होकर वे मदन-मोहन श्याम-सुन्दर श्रीकृष्णको पुकारने लगे। कृष्ण-प्रेममें उन्मत्त होकर उन्होंने अपने शरीरसे यज्ञोपवीत तोड़ फेंकी।

इहा बलि काँदे प्रभु धरणी पड़िया।
निज अङ्ग उपवीत फेलिला छिँड़िया।।
कृष्ण कृष्ण बलि डाके अति आर्त्तनादे।
सकरुण स्वरे प्राणनाथ बलि काँदे।।

——चै० मं०

सबको ज्ञात हो गया कि प्रभुको तीव्र वैराग्य उपस्थित हो गया है। उनसे तर्क-वितर्क करना या विधि-निषेधका उल्लेख करके उनको शुद्ध सङ्कल्पसे

विरत करना ठीक नहीं। प्रभुका अपने यज्ञोपवीतके ऊपर पहलेसे ही मानो एक प्रकार वैराग्य भाव था। कृष्ण-प्रेममें उन्मत्त होते ही वे पहले भी अपनी यज्ञोपवीत तोड़ फेंकते थे। जान पड़ता है श्रीगौराङ्ग शिखा-सूत्र त्याग करनेके लिए ही ऐसा किया करते थे।

प्रभु कुछ देरके बाद शान्त हुए। सब भक्तोंको एक जगह बुलाकर कहने लगे--

प्रभु बोले तोमरा चिन्तह कि कारण।
तुमि सब यथा तथा आमि सर्व्वक्षण।।

प्रभु बोले--तुम लोग किस कारण चिन्ता करते हो? तुम लोग जहाँ हो वहीं मैं सदा उपस्थित हूँ।

तोमा सभार ज्ञान आमि संन्यास करिया।
चलि-बाङ आमि तोमा सभारे छाड़िया।।

तुम सब लोग समझते हो कि मैं संन्यास लेकर तुम सबको छोड़कर चला जाऊँगा।

सर्व्वथा तोमरा इहा ना भाविह मने।
तोमा सबा आमि ना छाड़िब कोन क्षणे।।

इसकी तुम लोग मनमें तनिक भी चिन्ता न करना, मैं किसी क्षण भी तुम लोगोंको नहीं छोड़ूँगा।

सर्व्वकाल तोमरा सकल मोर सङ्ग।
एइ जन्म केन ना जानि वा जन्म जन्म।।

तुम सब लोग नित्य मेरे साथ रहते हो। इसी जन्ममें ही क्यों, जन्म-जन्मान्तरमें इसी प्रकार रहते हो।

एइ जन्मे जेन तुमि सब आमा सङ्गे।
निरवधि आछ संकीर्तन-सुखरङ्गे।।

जैसे इस जन्ममें तुम लोग सब मेरे साथ संकीर्त्तन सुखके रंगमें निरन्तर रहते हो।

एइ मत आछे आर दुइ अवतार।
कीर्त्तन आनन्द रूप हइब आमार।।

इसी प्रकार दो और कीर्त्तनानन्दरूप मेरे अवतार होंगे।

ताहातेओ तुमि सब एइ मत रङ्गे।
कीर्त्तन करिवा महासुखे आमा सङ्गे।।

उनमें भी तुम सब लोग इसी प्रकार आनन्दसे कीर्त्तन करते हुए मेरे साथ परम सुखपूर्वक रहोगे।

लोकरक्षा निमित्त से ग्रामार संन्यास ।	यह मेरा संन्यास लोक-रक्षाके
एतेक तोमरा सब चिन्ता कर नाश ।।	निमित्त है। इसलिये तुम लोग अपनी
—चैं० भा०	इस चिन्ताको छोड़ दो।

प्रभुकी आश्वासन-वाणी सुनकर सब भक्तगण शान्त हो गये। श्रीगौराङ्गने जब यह बात कही, तब उनके प्रशान्त मुख-मण्डलसे दिव्य ज्योति विकीर्ण हो रही थी, सारे अङ्गकी आभासे स्थान आलोकित हो रहा था। सभी लोग प्रभुके प्रफुल्ल और ज्योतिर्मय मुखकी ओर ताक रहे थे, सभी नीरव और निःस्पन्द थे। श्रीगौराङ्ग उस निस्तब्धताको भङ्ग करते हुए फिर मधुर वचन बोले—

"शुन सब जन ग्रामार वचन,	तुम सब लोग मेरी बात सुनो,
सन्देह ना कर केह।	इसमें कोई सन्देह न करना।
यथा तथा जाइ तोमा सबा ठाँइ	चाहे मैं कहीं भी जाऊँ, परन्तु
ग्राछिये जानिह एहो ।।	सदा तुम्हारे पास हूँ, यह निश्चय
—चैं० मं०	जानना।

श्रीगौराङ्ग फिर बोले—"तुम लोग कृष्ण-भजन करो। जहाँ कृष्ण-भजन, जहाँ हरि-संकीर्त्तन होता है, वहाँ ही सदा मुझको अवस्थित जानना।"

नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न वै।
मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारद ।।

तब सब भक्तोंने जान लिया कि प्रभु इच्छामय श्रीभगवान् हैं। नित्यानन्दने इसी कारण पहले ही कहा था—"तुम स्वतन्त्र ईश्वर हो, तुम इच्छामय हो, तुम्हारी जो इच्छा हो वही करो।" प्रभुने अपनी संन्यास आश्रम ग्रहण करनेकी इच्छा सबसे पहले नित्यानन्दको बतलायी थी, नित्यानन्दके द्वारा यह उत्तर पाकर प्रभुको बड़ा आनन्द मिला था। अब समस्त भक्तगण इकट्ठे होकर श्रीगौराङ्गके दोनों चरणोंको पकड़कर कातर नयनोंसे श्रीमुखकी ओर देखकर बोले—"प्रभु! तुम्हारी जो इच्छा हो वही करो। हम

अधम, क्षुद्र जीव हैं, तुम्हारे कार्यके उद्देश्यको कैसे समझ सकते हैं? परन्तु हम लोगोंकी एक बात रखना। जब तुम जाना, हम लोगोंको साथ लेकर जाना। क्योंकि तुम्हारे विरहमें हमारे प्राण नहीं बचेंगे। देखना प्रभु, कहीं हमारे प्राण न लेना।" प्रभु यह बात सुनकर थोड़े हँसे और प्रत्येकको एक-एक करके प्रेमालिङ्गन देकर कृतार्थ किया। श्रीगौराङ्गके श्रीअङ्गके स्पर्शसे सबके प्राण शीतल हो गये।

एतेक बलिया प्रभु धरिया सभारे।
प्रेम आलिङ्गन प्रभु पुनः पुनः करे॥
--चै० भा०

इस प्रकार सब भक्तोंको समझा-बुझाकर तथा उनसे बिदा लेकर प्रभु अपने घर गये। शची देवीको इसकी तनिक भी टोह न मिली।

तबे विश्वम्भर गेला निज घर
सभारे विदाय दिया।
संन्यास-आशये जतेक करये
जननी ना जाने इहा॥
--चै० मं०

प्रभुके भक्तोंने उनकी संन्यास-ग्रहणकी इच्छा सुनकर श्रीगौराङ्गको उस सङ्कल्पसे विरत करनेके लिए नाना प्रकारकी बातें कहकर उनके मनको हटानेकी चेष्टा की; परन्तु किसीने श्रीमतीके नामका उल्लेख नहीं किया। इसका उल्लेख ग्रन्थोंमें भी नहीं मिलता। प्रभुके गृह-त्याग करने पर भक्त-वृन्द जीवित नहीं रहेंगे, यह बात बारम्बार उन्होंने प्रभुको कही। एक भक्तने श्रीगौराङ्गसे यह भी कहा था कि गृहत्याग करने पर वे मातृ-बधके भागी होंगे। परन्तु श्रीमतीकी बात लेकर किसीने उनको कुछ नहीं कहा, इसका कारण क्या है? मुझे ऐसा लगता है कि यह प्रभुकी ही लीला है। संन्यास-आश्रम ग्रहण करने पर स्त्रीका मुख नहीं देखा जाता। संन्यास-आश्रम ग्रहणकी मन्त्रणाके समय जान पड़ता है स्त्रीका नाम नहीं लिया जाता,

इसी कारण श्रीमतीजीका नाम किसीने नहीं लिया। श्रीगौराङ्गने घोर वैराग्यके प्रभावमें कहा था —

"अग्नि हेन लागे मोर से हेन जननी"

—चै० मं०

परन्तु श्रीमतीकी बात वे कुछ नहीं बोले। इससे जान पड़ता है कि श्रीमतीके दुःखकी बात उठाकर श्रीगौराङ्गकी संन्यास-सङ्कल्प-सभामें उपस्थित भग्नहृदय भक्तमण्डलीके प्राणोंको आघात देना युक्तिसङ्गत नहीं समझा गया। यह काम अच्छा ही हुआ था।

●

एकविंश अध्याय

प्रभु और जननी

बड़ साध छिल मने नदीया वसति ।	मनमें बड़ी साध थी कि नदियाको
काल हइया एल मोर केशव भारती ।।	बसाऊँगी, केशव भारती मेरा काल होकर आया ।

● प्रभुके संन्यासकी इच्छाका संवाद सुनकर शची माँका हाल

प्रभुके संन्यास ग्रहण करनेकी बात अब गुप्त नहीं रह सकी। यह दुःसह हृदय विदारक कुसंवाद समस्त नवद्वीपमें फैल गया। सब लोग कानाफूसी करने लगे कि यह दुःसह संवाद यदि प्रभुकी वृद्धा माता सुनेंगी, तो उनकी प्राण-रक्षा करना विषम समस्या हो जायगी। आहा! वृद्धाको दुर्दैवने कैसी विपद दी। सोलह वर्षका एक पुत्र संन्यासी होकर गृहत्यागी हो चुका है और अब चौबीस वर्षका युवा पुत्र, युवती गृहिणीको घरपर रखकर, वृद्धा माताको शोक सागरमें डुबाकर संन्यास ग्रहण करेगा। नवद्वीपमें हाहाकार मच गया। सबके मुँहमें यही बात है। स्त्रियोंके मुखसे शची देवीने यह दारुण संवाद सुना, तो उनके सिर पर मानो वज्र गिर पड़ा और वे अचेत होकर भूतल पर गिर पड़ीं। मूर्च्छा दूर होने पर पागलिनीके समान चारों ओर भटकने लगीं और जो मिलता उसीसे पूछने लगतीं— "अरे! तुमने सुना है क्या? मेरा निमाई विश्वरूपके समान ही हमको छोड़-कर चला जायगा।"

एइ मने अनुमानि जाना जानि कथा ।
संन्यास करिबे पुत्र शुने शची माता ।।
आकाश भाङ्गिया पड़े मस्तक उपरे ।
अचेतन हैला शची मूर्च्छित अन्तरे ।।
उन्मत्ता पागली शची बेड़ाय चौदिके ।
जारे देखे तारे पूछे सर्व्व नवद्वीपे ।।

—चै० मं०

● विष्णुप्रियाको प्रभुकी संन्यास-इच्छाका संवाद

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी पिताके घर थीं। उन्होंने भी लोगोंके मुखसे यह दारुण संवाद सुना। यह संवाद जानबूझकर किसीने उनको नहीं दिया, परन्तु जान पड़ता है कि सारी भक्तमण्डलीकी सम्मिलित इच्छासे यह व्यवस्था की गयी थी कि जैसे हो श्रीमतीजीके कानोंमें यह संवाद शीघ्र पहुँचे। क्योंकि उनको ग्रन्तिम भरोसा यही रह गया था कि शायद श्रीमतीजी प्रभुको यह कार्य करनेसे रोक सकें। यही कारण है कि श्रीमतीजीके कानोंमें यह दुःसंवाद इतना शीघ्र पहुँच गया। श्रीमतीजीको पिताके घर ग्राये ग्रभी थोड़े ही दिन हुए थे। यह संवाद पाकर वे स्थिर न रह सकीं। चुपचाप दासीके द्वारा सासके पास यह संवाद भेजा कि वे शीघ्र ही ससुराल बुला ली जायँ। श्रीमतीजी उस समय केवल चौदह वर्षकी बालिका थीं। कुलकी कुलबधू पित्रालयमें हैं, माता-पिताकी इच्छा होगी, ससुरालके लोग लेने ग्रावेंगे, ग्रच्छा दिन देखना पड़ेगा; इन सब बातोंकी वे कुछ भी परवा नहीं कर रही हैं। सासके यहाँसे ग्रादमीके ग्राते ही माता-पिताको सारी बातें कहकर दासीके साथ श्रीमतीजी पतिगृहमें ग्राकर उपस्थित हो गयीं। ग्राकर देखती क्या हैं कि वृद्धा सास मनके दुःखसे मृतप्राय हो रही हैं, दुःखसे मुख उदास है। ग्राँखोंसे निरन्तर झरझर ग्राँसू बह रहे हैं, मुँहसे बात नहीं निकल रही है। पुत्रवधूको कुछ मानो कहना चाहती थी, पर बोल नहीं सकीं। हृदयाग्निसे भीतर ही भीतर दग्ध हो रही हैं। श्रीमती विष्णुप्रियाको देखकर वे ग्रचेत हो गिर पड़ीं।

तबे देवी शचीरानी, कहे मन काहिनी, हिया दुखे विरस वदन।	तब शची देवी मनकी बात कहने लगीं। हृदयके दुःखसे मुँह विरस है।
मुखे ना निःसरे वाणी, दुनयने झरे पानि, देखि विष्णुप्रिया ग्रचेतन॥	मुँहसे वाणी नहीं निकल रही है, दोनों नयनोंसे ग्रश्रु झर रहे हैं। विष्णु-प्रियाको देखते ही ग्रचेतन हो गई।
सुधाइते नारे कथा, ग्रन्तरे मरम-व्यथा, लोकमुखे शुनि घाना घूना।	ग्रन्तरकी मर्म-व्यथाकी बात समझा नहीं पा रही है, जो लोगोंके मुखकी कानाफूसीके कारण हुई है।

इङ्गिते बुझिल काज,	इङ्गितसे ही बात समझमें आ गई।
पड़िल विषम बाज,	विषम संकट आ उपस्थित हुआ है
चेतन हरिल सेइ दीना।।	और उस दीन माताकी चेतना लुप्त
--चै० मं०	हो गई।

सास और बधूमें तब नयनोंके अश्रु तथा सङ्केतसे सारी बातें हो गयीं, अर्थात् दोनोंने समझा, शीघ्र ही दोनोंके सिर पर आकाश फाड़कर वज्रपात होनेका उपक्रम हो गया है। दोनों एक दूसरेके दुःखसे दुःखी हैं। सम-वेदनाका साथी पानेसे मनका दुःख कुछ शमन होता है, यही दशा शची देवीकी हुई। शची देवी आँखोंके आँसू पोंछकर पुत्रवधूको आदर पूर्वक गोदमें लेकर बैठ गयीं। अपने वस्त्रोंके आँचलसे श्रीमतीकी आँखोंके आँसू पोंछ दिये और समझाकर बोलीं--"बेटी! तुम रोओ मत, तुम्हारे रोनेसे मेरे निमाई चाँदका अमङ्गल होगा। मेरा निमाई बड़ा मातृभक्त है, वह मेरा बड़ा अच्छा लड़का है। उसने मुझको वचन दिया है कि मुझको बतलाये बिना कोई काम न करेगा, कहीं न जायगा। मैं उसे नहीं छोड़ूँगी। बेटी! तुम निश्चिन्त रहो।" सासके समझाने-बुझाने पर श्रीमतीजीका मन कुछ शान्त हुआ। किन्तु वे प्राणवल्लभके घर लौटनेकी प्रतीक्षा करने लगीं। क्योंकि, उनसे इस विषयमें कुछ आश्वासन बिना पाये, श्रीमतीजीका चित्त शान्त नहीं हो रहा है।

● दोपहरको प्रभुका भोजनके लिये घर आना

उसी समय दोपहरको भोजन करनेके लिए प्रभु घर आये। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी पिताके घरसे आयी हैं, प्रभुको इसकी सूचना नहीं थी। घर पर आकर घरकी गृहलक्ष्मीको देखकर मन-ही-मन प्रसन्न हुए। कौशली श्रीभगवान्का यह कौशल है। वे सारे कार्य कौशलसे सिद्ध करना चाहते हैं। गृह-त्यागके पहले कुछ दिन वे माता तथा गृहिणीके साथ भली भाँति संसारी बनकर उनकी मनःतुष्टि करें, श्रीगौराङ्गकी यह मनकी वासना थी। अन्तर्यामी श्रीगौर भगवान् सब कुछ जानते हैं, तथापि माताको सम्बोधन करके कहने लगे--"माँ! तुम्हारी बहूको कौन ले आया? मैं तो कुछ भी नहीं जानता, मुझसे तो इस विषयमें किसीने कुछ नहीं पूछा!"

शची देवीने उत्तर दिया—"बेटा निमाई! अब बहुत देर हो गई है, तुम भोजन करो, पश्चात् मैं सारी बातें कहूँगी। मेरी बहू अपने आप आयी है।" प्रभु माताकी बात सुनकर उस समय कुछ न बोले, उनको और कुछ जानना शेष नहीं रहा। तथापि मन देखनेके लिए मातासे यह प्रश्न किया था। यही चक्रीका चक्र है।

श्रीगौराङ्ग भोजन करने बैठे हैं, श्रीमतीजी परोस रही हैं। शची देवी पास बैठकर पुत्रको भोजन करा रही हैं। भोजन करते समय ही माताके साथ प्रभुकी दो-चार सांसारिक बातें होती हैं। किन्तु आज शची देवीका मुँह कुछ मलिन है, आँखोंमें अश्रुधारा है। प्रभु देखते हुए भी मानो नहीं देख रहे हैं। इस समय शची देवीकी अवस्था ६७ वर्षकी है। शोक पर शोक पड़नेसे वृद्धाका भग्न शरीर और भी भग्न हो गया है। वे अब कुबड़ी हो गयी हैं। दु:खके ऊपर दु:ख, शोकके ऊपर शोक! उनका एक मात्र जीवनका सहारा, नेत्रोंकी मणि, अन्धीकी लाठी, अँधेरे घरका माणिक निमाई चाँद उनको इस बुढ़ापेमें छोड़कर चला जायगा, यह दु:ख क्या कहनेकी वस्तु है? तथापि वृद्धाका मन नहीं मानता, इसी कारण भोजन कराते समय पुत्रसे बोलनेके लिए तैयार हुई हैं।

● शची माँका पुत्रसे प्रश्न

पुत्रके भोजन कर चुकने पर शची देवी निमाई चाँदको सम्बोधन करके रोते-रोते बोलने लगीं, बोलते-बोलते उनका कण्ठ अवरुद्ध हो गया, फिर भी कहने लगीं—"बेटा निमाई! अपने भैयाके समान क्या तुम भी अपनी दु:खिनी माँको छोड़ जाओगे? तुम जगतके जीवोंको धर्म शिक्षा देने जाओगे! माताका बध करके तुमको क्या धर्म होगा? और लोक-शिक्षा तुम क्या करोगे?"

धर्म्म बुझाइते बाप! तोर अवतार।
जननी छाड़िया कोन धर्म्म वा विचार।।
तुमि धर्म्ममय यदि जननी छाड़िवा।
केमनेते जगते तुमि धर्म्म बुझाइवा।।

—चै० भा०

प्रभुने सिर झुकाकर माताकी मर्मान्तिक हृदय-विदारक बात सुन ली और सुनकर बहुत व्यथित हुए। श्रीभगवान्के पास उत्तर देनेकी शक्ति न थी। श्रीगौराङ्गके दोनों नेत्रोंसे अश्रु प्रवाहित होने लगे, कण्ठावरोध हो गया और उत्तर न दे सकनेके कारण माताके मुखकी ओर उन्होंने सकरुण दृष्टिसे देखा। तब शची देवीने रोते-रोते फिर कहा—

"तोमार अग्रज आमा छाड़िया चलिला। वैकुण्ठे तोमार बाप गमन करिला॥	तुम्हारा बड़ा भाई मुझको छोड़कर चला गया। तुम्हारे बाप भी वैकुण्ठ चले गये।
तोमा देखि सकल सन्ताप पासरिलुँ। तुमि गेले प्राण मुञि सर्व्वथा छाड़िलुँ॥" **—चै० भा०**	तुमको देखकर मैं सारा सन्ताप भूल गयी थी। अब तुम्हारे चले जाने पर मैं सर्वथा प्राण त्याग दूँगी।

प्रभु सुनते हैं और रो रहे हैं; कोई उत्तर नहीं दे पा रहे हैं। शची देवीके हृदयका दुःख उमड़ उठा है, उनके हृदयका वेग अदम्य है। वे फिर कहने लगीं—"बेटा निमाई! तुम मुझ अन्धीकी लाठी हो। क्षण मात्र भी तुमको देखे विना मेरे लिए चतुर्दिक अन्धकार ही अन्धकार है। लोग कहते हैं, तुम गृह-त्याग करके संन्यास आश्रम ग्रहण करोगे, यह दारुण संवाद सुनकर मेरे सिर पर मानो आकाश टूट पड़ा है। सात कन्याओंके बाद अनेक देवी-देवताओंकी आराधना करके तुमको धनके रूपमें प्राप्त किया है। विधाताके मनमें क्या है, नहीं जानती। इस संसारमें मैं अनाथिनी हूँ। इस अनाथिनीका इस जगतमें तुम्हारे सिवा और कोई नहीं है। तुम्हारे मुखचन्द्रका दर्शन करके मैं सारे दुःख भूल जाती हूँ। बेटा! तुम मेरे नयनोंके तारे हो, कुलके दीपक हो। तुम्हारे जैसा पुत्र पानेके कारण सारा ही नवद्वीप मुझे भाग्यवती कहता है। बेटा! मेरा यह सौभाग्य तुम दूर मत करो। तुम्हारे विना मेरा सोनेका संसार भस्मी-भूत हो जायगा। लोग आज मेरा मुख देखना अपना सौभाग्य समझते हैं, तुम्हारे चले जाने पर इस अभागिनीको देखकर लोग मुँह फेर लेंगे। तुम्हारे जैसा पुत्र पाकर मैं धन्य हो गयी हूँ। तुम यदि मुझको दुःख देकर चले गए तो मैं गङ्गामें डूब मरूँगी। तुम मेरी सोनेकी पुतली हो। बेटा! कोमल चरणोंसे तुम कैसे रास्ता चलोगे? प्यास लगने पर तुम्हें जल और भूख लगने पर अन्न कौन देगा? तुम मेरी नवनीतकी पुतली हो, कड़ी धूपकी गर्मीसे गल जाओगे। यह

सब क्या माँ सहन कर सकती है ? तुम्हारे चले जाने पर मैं विष खाकर मर जाऊँगी। तुम्हारे संन्यासकी बात मैं कानोंसे सुन न सकूँगी। पहले मुझको मार डालो, तब गृह-त्याग करना।"

प्रभुने चुपचाप सिर झुकाकर सारी बातें सुन लीं। माताकी प्रत्येक बात श्रीगौराङ्गके रोम-रोममें प्रवेश कर गयी। माताके शोकका आवेग अभी शान्त नहीं हो रहा है; उन्होंने रोते-रोते निमाई चाँदसे फिर कहा—"क्यों रे निमाई ! लोग तुमको भगवान् कहते हैं, सब जीवों पर तुम्हारी दया बताते हैं। इस चिर दुःखिनी अभागिनी जननीके प्रति तू इतना निर्दयी क्यों है ?"

सर्व्व जीवे दया तोर मोरे अकरुण। कि जानि कि लागि मोरे विधाता दारुण॥" —चै० मं०	तुम सब जीवोंके ऊपर दया करते हो, मेरे ऊपर क्यों निर्दय होते हो ? न जाने क्यों, विधाता मेरे ऊपर इतना निष्ठुर हो रहा है ?

अपनी बात छोड़कर शची देवी अब प्रभुके अन्तरङ्ग भक्तोंकी बात उठाकर पुत्रको समझा रही हैं। क्योंकि शची देवी जानती हैं कि उनका पुत्र माता और स्त्रीकी अपेक्षा अपने भक्त-वृन्दको अधिक प्यार और स्नेह करता है।

केमने छाड़िया बापु निज सङ्गिगण। ना करिबे ता सभा सहित संकीर्त्तन॥	बेटा ! तुम अपने साथियोंको कैसे छोड़ोगे ? उनके साथ तुम संकीर्तन नहीं करोगे ?
से हेन सुन्दर वेशे ना नाचिबे आर। जाहा देखि मोह पाय सकल संसार॥	क्या इस प्रकार सुन्दर वेशमें फिर नृत्य नहीं करोगे ? जिस नृत्यको देखकर सारा संसार मुग्ध हो जाता है।
केमने वा जीवे तोर निज प्रिय जन। सभारे मारिया तोर संन्यास करण॥ —चै० मं०	तुम्हारे निज प्रिय जन कैसे जीवित रहेंगे ? यह तो सबको मारकर तुम्हारा संन्यास-ग्रहण होगा।

शची देवी आज पागलिनीके समान मनके आवेगसे जो जीमें आता है, वही पुत्रको कहती हैं। प्रभुके अति प्रिय भक्तोंकी बात उठाकर शची देवीने पुत्रके दोनों हाथ पकड़कर पुनः रोते-रोते कहा—

मुरारि मुकुन्द दत्त आर श्रीनिवास। **अद्वैत आचार्य आदि आर हरिदास।।**	मुरारि, मुकुन्द दत्त, श्रीनिवास, अद्वैताचार्य, हरिदास आदि
मरिबे सकल लोक ना देखिये तोमा। **ए सब देखिया बापू चित्ते देह क्षमा।।** **––चै० मं०**	सब लोग तुमको न देखनेसे मर जायँगे। यह सब विचार कर बेटा! तुम चित्तको शमन करो।

प्रभु पूर्ववत् चुप बैठे रहे, बीच-बीचमें जननीके मुखकी ओर कभी-कभी देख लेते हैं और आँखें मिलते ही प्रभु सिर अवनत कर लते हैं। इसके बाद शची देवीने बहूका नाम लेकर कहा––

आगेते मरिब आमि पाछे विष्णुप्रिया। **मरिबे भकत सब बुक विदरिया।।** **––चै० मं०**	पहले मैं मरूँगी, फिर विष्णुप्रिया मरेगी, पश्चात् सब भक्त लोग हृदय-विदीर्ण होकर मर जायँगे।

श्रीमतीका नाम कानमें पड़ते ही श्रीगौराङ्ग सिहर उठे। तथापि उत्तर न देते देखकर शची देवी पुत्रको कुछ धर्मोपदेश और कुछ तत्त्वकी बातें कहने लगीं। नीति-शास्त्रकी दो एक गूढ़ बातें बोलीं––

पितृहीन पुत्र तुमि दिला दुइ बिभा। **अपत्य सन्तति किछु ना देखिल इहा।।**	हे पुत्र! तुम पितृविहीन हो, तुम्हारे दो-दो विवाह किये। यहाँ पुत्र-सन्ततिका मुँह नहीं देखा।
तरुण वयस नहे संन्यासेर धर्म्म। **गृहस्थ आश्रमे थाकि साध सब कर्म्म।।**	तरुण अवस्थामें संन्यास लेना धर्म नहीं है। गृहस्थ-आश्रममें रहकर सब कर्मोंकी साधना करो।
काम, क्रोध, लोभ, मोह यौवने प्रबल। **संन्यास केमने तोर हइबे सफल।।**	यौवनमें काम, क्रोध, लोभ, मोह प्रबल होते हैं, तुम्हारा संन्यास कैसे सफल होगा?
मनेर निवृत्ति कलियुगे नाहि हय। **मनेर चाञ्चल्य संन्यासेर धर्म्मक्षय।।**	कलियुगमें मनकी निवृत्ति नहीं होती, मनकी चञ्चलतासे संन्यास-धर्म नष्ट हो जाता है।
गृही जन मनः पापे नाहि हय बद्ध। **संन्यासीर धर्म्म जाय, मनोजय शुद्ध।।** **––चै० मं०**	गृहस्थ मानसिक पापसे बद्ध नहीं होता पर उससे संन्यासीका धर्म नष्ट हो जाता है। वह मनको जीतनेपर ही शुद्ध होता है।

● प्रभु द्वारा माताको तत्त्वोपदेश

अब तक श्रीगौराङ्ग माताकी बातें चुपचाप सुनते रहे। अब माताके मुखसे धर्म-तत्त्वकी सूक्ष्म बात सुनकर वे चुप न रह सके। श्रीनिमाई पण्डितके अभिमानमें ठेस लगी। प्रभु गम्भीर भावसे माताके मुँहकी ओर देख कर माताको धर्मका तत्त्व समझाने बैठे। प्रभुके प्रशान्त मुख-मण्डलपर दिव्य ज्योति फूट पड़ी। दोनों आँखें खोलकर प्रेममयी करुण दृष्टिसे जननीके मनको हरण करने लगे। आँखोंमें अश्रुधार नहीं रही, मुख-मण्डल पर दुःखका चिह्न नहीं रहा। प्रभु मधुर वचनोंसे माताको कहने लगे—

के तुमि तोमार पुत्र के वा कार बाप।
मिछा तोर मोर करि कर अनुताप।।

तुम कौन हो, कौन तुम्हारा पुत्र है, किसका कौन बाप है? व्यर्थ ही तेरा-मेरा करके चिन्ता कर रही हो।

कि नारी पुरुष कि वा के वा कार पति।
श्रीकृष्णचरण वहि अन्य नाहि गति।।

कौन नारी है? कौन पुरुष है? कौन किसका पति है? श्रीकृष्णके चरणोंके सिवा अन्य कोई गति नहीं।

सेइ माता, सेइ पिता, सेइ बन्धु जन।।
सेइ हर्त्ता, सेइ कर्त्ता, सेइ मात्र धन।।

वे ही माता हैं, वे ही पिता हैं, वे ही बन्धु-जन हैं, वे ही हर्त्ता हैं, वे ही कर्त्ता हैं, वे ही एकमात्र धन हैं।

ता बिनु सकल मिछा कहिलुँ ए तत्त्व।
ता बिनु सकल मिथ्या सकल जगत।।

उनके सिवा सब मिथ्या है—यह मैंने तत्व बता दिया। उन श्रीकृष्णके विना यह सारा जगत, यह सब कुछ मिथ्या है।

विष्णुमाया बन्धे सब लोक सुयन्त्रित।।
निजमद-अहङ्कारे केवल पीड़ित।।

सारे लोक विष्णुकी मायाके बंधनसे सुनियन्त्रित है। केवल अपने मद और अहङ्कारके कारण पीड़ित रहते हैं।

निज भाल बलि जेइ जेइ करे कर्म्म।
परकाले बन्दी हय सेइ सब धर्म्म।।

अपना भला समझकर मनुष्य जो जो कर्म करता है, उन्हीं कर्मोंके फलके पश्चात् वह बन्धनमें पड़ता है।

कर्म्मसूत्रे बन्दी हैया बुलये भ्रमिया । आपना ना जाने जीव कृष्ण पासरिया ।।	कर्म-सूत्रमें बन्दी होकर वह भ्रमित हो घूमता है, कृष्णको भूलकर वह स्वयं अपने आपको भी नहीं जानता है ।
चतुर्द्दश लोक माझे मानुषेर जन्म । दुर्ल्लभ करिया मानि कहिल ए मर्म्म ।।	चौदहों भुवनोंमें मनुष्यका जन्म दुर्लभ माना जाता है, मैं यह मर्म तुमको कहता हूँ ।
विषय विपाक इथि आछये अपार । क्षणेक भंगुर एइ अनित्य संसार ।।	यहाँ विषयोंका अपार विपाक है । यह अनित्य संसार क्षणभंगुर है ।
तबहुँ दुर्ल्लभ जानि मनुष्य शरीर । श्रीकृष्ण भजये जे मायाय हैये स्थिर ।।	तथापि मनुष्य शरीरको दुर्लभ जानकर जो श्रीकृष्णको भजता है, वह मायासे स्थिर हो जाता है अर्थात् माया उसको चञ्चल नहीं कर सकती ।
श्रीकृष्णभजन सरे मात्र एइ देहे । मुक्तबन्ध हय यदि कृष्णे करे नेहे ।।	श्रीकृष्णका भजन केवल मात्र इस मानव शरीरसे ही होता है, यदि कृष्णमें नेह (प्रेम) करे, तो वह बद्धजीव मुक्त हो जाता है ।
पुत्रस्नेहे कर मोरे जत बड़ भाव । श्रीकृष्ण चरणे हइले कत हैत लाभ ।।	तुम मुझपर पुत्र-स्नेहके कारण जितना बड़ा भाव करती हो, श्रीकृष्णके चरणोंमें वह भाव होता तो कितना लाभ होता ?
संसारे आरति करि मरिबार तरे । श्रीकृष्ण आरति करि भव तरिवारे ।।	संसारमें आसक्ति करना मृत्युका कारण होता है । श्रीकृष्णमें आसक्ति भवसागरसे पार होनेको होती है ।
सेइ से परम बन्धु सेइ माता पिता । श्रीकृष्ण चरणे जेइ प्रेमभक्ति दाता ।।	वे ही परम बन्धु हैं, वे ही माता-पिता हैं, जो श्रीकृष्णके चरणोंमें प्रेम-भक्ति प्रदान करते हैं ।

कृष्णेर विरहे मोर पोड़ये अन्तर । चरणे पड़िया बोलों वचन कातर ।।	श्रीकृष्णके विरहमें मेरा हृदय दग्ध हो रहा है, मैं तेरे चरणोंमें पड़कर ये कातर वचन कह रहा हूँ ।
विस्तर पिरिति मोरे करियाछ तुमि । तोमार आज्ञाय चित्ते शुद्ध हइ आमि ।।	तुमने मेरे ऊपर बड़ी प्रीति की है, तुम्हारी कृपासे मेरा चित्त शुद्ध हो गया है ।
आमार निस्तार आर तोर परित्राण । श्रीकृष्ण चरण भज छाड़ पुत्रज्ञान ।।	इसमें मेरा निस्तार और तुम्हारा परित्राण है कि श्रीकृष्णके चरणोंको भजो और मेरे प्रति पुत्रज्ञान छोड़ दो ।
संन्यास करिब कृष्ण प्रेमार कारणे । देश देश हैते आनि दिब प्रेमधने ।।	मैं श्रीकृष्णके प्रेमके लिए संन्यास ग्रहण करूँगा । देश-विदेशसे लाकर मैं तुमको प्रेमधन प्रदान करूँगा ।
आनेर तनय आने रजत सुवर्ण । खाइले विनाश पाय नहे कोन धर्म्म ।।	दूसरोंके पुत्र चाँदी और सोना (रुपये-पैसे) कमाकर लाते हैं, जिनका भोग करनेसे वे नाशको प्राप्त होते हैं, कोई धर्म-अर्जन नहीं होता ।
धन उपार्ज्जन करे आने बड़ दुख । धनइ जाउक किवा आपनि मरुक ।।	बड़े दुखसे धनोपार्जन करके लाते हैं, फिर भी वह धन नष्ट हो जाता है, या वे स्वयं मर जाते हैं ।
आमि आनि दिव कृष्णप्रेम हेन धन । सकल सम्पद् सेइ श्रीकृष्ण-चरण ।।	मैं कृष्णप्रेम जैसा धन लाकर दूँगा, वे श्रीकृष्ण-चरण ही सब सम्पद हैं ।
इहलोके परलोके अविनाशी प्रेमा । आज्ञा देह वेदनी मा चित्ते देह क्षमा ।।	वह प्रेम-भक्तिधन इहलोक और परलोकमें अविनाशी है । हे मेरी दुखी माता ! मुझे आज्ञा दो, अपने हृदयमें शान्ति रखो ।
सकल जनमे सभे पिता माता पाय । कृष्णगुरु नाहि मिले बुझिबे हियाय ।।	माता-पिता तो सभी जन्मोंमें सबको मिलते हैं, परन्तु हृदयमें खूब समझ लो, कृष्ण-गुरु नहीं मिलते ।

मनुष्य-जनमे कृष्ण गुरु सभे जानि ।
जेइ गुरु नाहि करे पशु पक्षी मानि ।।
--चै० मं०

मनुष्य जन्ममें श्रीकृष्ण ही गुरु हैं, यह सब जानते हैं । जो गुरु नहीं करता, उसे पशु-पक्षीके समान मानना चाहिए ।

● माताको ऐश्वर्य-दर्शन और उनकी संन्यासकी अनुमति

श्रीगौराङ्ग जब गम्भीर भावमें माताके पास ये धर्मके सूक्ष्म तत्त्व कह रहे थे, उस समय वृद्धा शची देवी पुत्रके ज्योतिर्मय प्रशान्त मुखमण्डलको देखकर सोचती थीं कि उनका यह पुत्र साधारण मनुष्य नहीं है। श्रीगौर भगवान्ने माताको दिव्य ज्ञान प्रदान किया, उनकी मायाका बन्धन काट दिया। श्रीभगवान्में उनकी पुत्र-बुद्धि हट गयी, उस समय अपने पुत्रमें कृष्ण-बुद्धि हो गयी। तब शची देवीने देखा कि उनका पुत्र पीताम्बरधारी है, उसके हाथमें मुरली है, त्रिभङ्गी होकर श्यामसुन्दर, मनमोहनरूपमें वृन्दावनमें गोपिकाओंके बीचमें खड़ा है। पुत्रके इस आकस्मिक रूप-परिवर्तन को देखकर शची देवी चकित हो गयीं। उनका सर्वाङ्ग पुलकित हो उठा। उन्होंने सोचा "जगतमें जो दुर्लभ वस्तु श्रीकृष्ण है, उसने स्वयं पुत्ररूपमें मेरे गर्भसे जन्म ग्रहण किया है। उसके समान सौभाग्यवती नारी जगत्में और कौन है? पुत्र और कोई नहीं, स्वयं भगवान् हैं। श्रीभगवान् इच्छामय हैं, जो इच्छा हो वही कर सकते हैं। वे मुझको माँ सम्बोधन करके पुकारते—पूछते हैं और बतलाते हैं; यह उनकी अपार दयाका परिचय मात्र है।"

सेइ क्षणे विश्वम्भरे कृष्णबुद्धि हइल ।
आपनार पुत्र बलि माया दूरे गेल ।।
नवमेघ जिनि द्युति श्याम कलेवर ।
त्रिभङ्ग मुरलीधर वर-पीताम्बर ।।
गोप-गोपी गो-गोपाल सने वृन्दावने ।
देखिल आपन पुत्र चकित तखने ।।
देखि शची चमत्कार हइला अन्तरे ।
पुलके आकुल अङ्ग कम्प कलेवरे ।।
स्नेह नाहिं छाड़े पुन आपन सम्बन्ध ।
कृष्ण हैया पुत्र हैला भाग्येर निर्ब्बन्ध ।।

जगत्दुर्लभ कृष्ण आमार तनय।
कारु वश नहे मोर शक्त्ये किवा हय।।
——चै० मं०

श्रीगौर भगवान्‌ने क्षणभरके लिए माताको दिव्य ज्ञान प्रदान कर दुस्त्यज्य मायाको अपहृत कर लिया। शची देवी दिव्य ज्ञानमें पुनः बोल रही हैं। इस बार प्रभुको उद्देश्य करके शची देवी मनके भावको प्रकट करके कह उठीं——

एइ अनुमानि शची कहिला वचन।
स्वतन्त्र ईश्वर तुमि पुरुष रतन।।

यह अनुमान करके शची देवीने कहा——"तुम पुरुष-रत्न हो, स्वतन्त्र ईश्वर हो।

मोर भाग्ये एत दिन छिला मोर वश।
एखने आपन सुखे करगे सन्न्यास।।
——चै० मं०

मेरे भाग्यसे इतने दिन मेरे अधीन रहे हो। अब अपनी इच्छासे संन्यास लोगे।"

महाचक्रीका चक्र फलित हो गया। कौशलीके कौशलसे माताने अपने प्राणप्रिय पुत्रको संन्यासाश्रम ग्रहण करनेकी अनुमति दे दी। प्रभुने माताको वचन दिया था कि तुम्हारी अनुमतिके बिना कोई कार्य न करूँगा और न कहीं जाऊँगा। क्षणमात्रके लिए दिव्य ज्ञान प्रदान करके उन्होंने मातासे की हुई अपनी प्रतिज्ञाकी रक्षा की। श्रीगौराङ्ग भगवान्‌ने माताके दिव्य ज्ञानको हर लिया।

● माताका पश्चात्ताप और प्रभु द्वारा आश्वासन

शची देवी तत्काल ही पुनः पुत्रज्ञानसे निमाई चाँदको देखने लगीं और चीत्कार करके रोते-रोते यह कहकर धूलिमें गिर पड़ीं——

आमि कि बलिते कि बलिलाम।
माँ ह'ये निमाये विदाय दिलाम।।
——चै० मं०

मैं क्या कहती, क्या कह गयी! माँ होकर मैंने निमाईको विदाई देदी।

वृद्धा रोते-रोते फिर उठीं। इस समय शची देवी भयानक रीतिसे सांसारिक मायाके वशीभूत थीं। उनके सोनेके संसारकी माया छोड़कर पुत्र चला जायगा——इसको क्या वे सहन कर सकेंगी? वे माता जो हैं।

वात्सल्य रससे उनका हृदय परिपूर्ण है, इस कारण वे निमाई चाँदसे अनुनय-विनय करके कहती हैं--

एक निवेदन मोर आछे तोर ठाँय।	मेरा तुमसे एक निवेदन है कि ऐसी
एहेन सम्पद मोर कि लागिया जाय।।	अतुल सम्पत्ति मेरी किस कारणसे
--चै० मं०	जा रही है?

शची देवी सोचती हैं--"यह मेरा विश्ववन्द्य साक्षात् नारायण-तुल्य युवा पुत्र और यह मेरी लक्ष्मीके समान, सारे सुलक्षणोंसे युक्त नवीना पुत्रबधू--यह मेरा इतना अभिलषित संसार, किस पापसे मेरा यह अतुल ऐश्वर्य जा रहा है? मैंने तो श्रीभगवान्के सामने ऐसा कोई बड़ा अपराध नहीं किया है, जिसके लिए वे मुझे ऐसा कठोर दण्ड देंगे।" यह बात सोचते-सोचते वृद्धा शची देवीके दोनों नेत्रोंसे झर-झर अश्रुधारा प्रबल वेगसे बहने लगी। कण्ठ अवरुद्ध हो गया। वृद्धा फुंकार मार-मारकर बालिकाके समान रोने लगीं। माताके क्रन्दनसे श्रीगौराङ्ग व्यथित होकर बहुत व्याकुल हुए, उनके पास जाकर अति निकट बैठे और शची देवीके मुँहकी ओर देखकर बोले--"माँ! तुम रोओ मत, तुमको तो सारी बातें मैंने कह दी हैं, मुझको जिस दिन तुम जब अनुरागसे पुकारोगी, मैं तत्काल तुम्हारे चरणोंमें आकर तुम्हारे सामने उपस्थित हो जाऊँगा।

जे दिन देखिते मोरे चाह अनुरागे।
सेइ क्षण तुमि मोर दरशन पाबे।।
--चै० मं०।

प्रभु कहते हैं कि अनुरागसे पुकारने पर वे दर्शन देंगे। अनुरागसे श्रीगौर भगवान्को पुकारना बड़ा ही कठिन है। इसीसे प्रभुने इस शब्दका व्यवहार किया है। अनुरागसे श्रीगौर भगवान्को पुकारने पर आज भी उनके दर्शन प्राप्त हो सकते हैं। ठीक पुकार होनी चाहिए, अनुरागके सहित पुकार होनी चाहिए। दृढ़ अनुरागपूर्वक आज भी यदि कोई श्रीगौर भगवान्को पुकारे, तो प्रभु उसे दर्शन दे सकते हैं। श्रीगौराङ्ग-लीला नित्य है, आज भी प्रभु वह लीला करते हैं।

अद्यापिओ सेइ लीला करे गौरराय।
कोन कोन भाग्यवाने देखिवारे पाय ।।

—चै० भा०

शची देवी पुत्रकी बात सुनकर कुछ शान्त हुईं और रोना बन्द किया।

ए बोल शुनिया शची सम्वरे क्रन्दन।

तब प्रभु धीरे-धीरे मातासे कहने लगे—"मैंने व्यर्थ ही तुम्हारा पुत्र होकर जन्म लिया, मेरे द्वारा तुम्हारा प्रतिपालन नहीं हुआ। तुम्हारी बधू घरमें तुम्हारा काल बन गयी। वह जलती अग्नि-स्वरूप है, उसको यत्न पूर्वक कृष्णनामकी शिक्षा देना। माँ! यही मेरी अन्तिम भिक्षा है।"

वृथा पुत्र तोमार जन्मे छिलाम उदरे।ध्रु०
ह'लो ना ह'लो ना (आमा हते) प्रतिपालन तोमारे।।
विष्णुप्रिया तोमार ज्वलन्त आगुनि।
गृहे रैल से हये अनाथिनी।।
मा जतन करे रेखो तारे,
मा जननी गो!
तारे कृष्णनाम दिओ शिक्षे
एइ आमार भिक्षे,
मा जननी गो।

—बलराम दास

पुत्रके मुखसे बहूकी बात सुनकर शची देवीके हृदयकी अग्नि और दूनी धधक उठी। निमाई चाँदके मुखसे बहूकी बात बहुत दिनसे नहीं सुनी थी, आज सदाके लिये अन्तिम बात सुन ली। सुनकर शची देवी करुण स्वरसे आर्त्तनाद करने लगीं। प्रभुने भी उस रुदनमें योग दिया। माता-पुत्रके नयन-जलसे पृथिवी आर्द्र हो गयी। श्रीगौर भगवान्की नवद्वीप-लीलामें केवल रुदन ही रुदन है, इसे उन्होंने श्रीनित्यानन्द प्रभुसे पहले ही कहा है—

कि पुछसि भाइ निताइ आमाय। ध्रु०	क्या पूछते हो, भाई निताई मुझसे?
व्रजेर खेला छिल दौड़ादौड़ि।	व्रजका खेल कुलेल मगन मन।
नदेर खेला धुलाय गड़ागड़ि।।	नदियाका रज लुण्ठित तन।।

व्रजेर खेला छिल बाँशीर गान।	व्रजका खेल मुरलिका वादन।
नदेर खेला केवल हरिनाम।।	नदियाका हरि नाम भजन।।
व्रजेर खेला वन भ्रमण।	व्रजका खेल कुसुम-वन विहरण।
नदेर खेला एबार केवल रोदन।।	नदियाका दृग-जल वर्षण।।

श्रीगौराङ्गने माताको समझाते हुए कहा--"माँ! अभी कुछ दिन और मैं गृहस्थाश्रममें रहूँगा, तुम रोओ मत। जानेके समय तुमको कहकर जाऊँगा।" शची देवीने कुछ उत्तर न दिया।

●

द्वाविंश अध्याय

प्रभु और श्रीमती—विषम कथा

शुन शुन प्राणनाथ मोर शिरे देह हात सन्न्यास करिबे नाकि तुमि ?	हे प्राणनाथ ! सुनो, मेरे सिरपर हाथ रखकर बताओ, क्या तुम संन्यास लोगे ?
लोक मुखे शुनि इहा विदरिते चाहे हिया आगुनिते प्रवेशिब आमि ।	लोगोंके मुखसे यह जो सुन रही हूँ उससे हृदय विदीर्ण होना चाहता है । मैं तो अग्निमें प्रवेश कर जाऊँगी ।

—श्रीचैतन्य मंगल ।

● शयनकक्षमें प्रभु और प्रियाजी

श्रीगौराङ्ग शयनगृहमें शयन किये हुए हैं, निद्रा आ रही है या नहीं, इसको वे ही जानें । रात अधिक नहीं हुई है, श्रीमती विष्णुप्रिया देवी प्रभुका भुक्तावशेष प्रसाद ग्रहण करनेके बाद पनबट्टा, फूलोंकी माला और चन्दनकी बाटी हाथमें लेकर दिव्य वस्त्रालङ्कारसे आभूषित होकर स्वामीके शयन-गृहमें प्रविष्ट हुई । प्राणवल्लभको निद्राभिभूत देखकर श्रीमती उनके चरण-प्रान्तमें बैठ गयीं और सजल एवं कातर नेत्रोंसे प्राणवल्लभके नयनानन्द वदन-चन्द्रका अवलोकन करने लगीं । प्रभुको जगानेका साहस नहीं होता था, क्योंकि श्रीमतीजीने उनको इस प्रकार शान्त होकर कभी नींद लेते नहीं देखा था । सङ्कीर्त्तनकी धुनमें प्रभु सारी रात जागरण करते थे । रात्रिके समय उनको शयन-गृहमें प्राप्त करना दुर्लभ था, इसी कारण श्रीमतीजी निर्निमेष नेत्रोंसे प्रभुके निद्रित मुखचन्द्रकी अपूर्व सौन्दर्य-राशि देख रही हैं और सोच रही हैं कि उनके प्राणवल्लभ सारे दिन परिश्रान्त होकर नींद ले रहे हैं, निद्रा-भङ्ग करके उनको कष्ट देना उचित नहीं है । प्राणवल्लभके

दर्शन करके ही श्रीमतीजी परम सुखी हैं, उनको जी भरकर देख पानेसे ही वे कृतार्थ हो जाती हैं।

श्रीमतीजीके हृदयमें प्रसन्नता नहीं है, उन्होंने लोगोंके मुखसे सुना है कि उनके प्राणवल्लभ गृह-त्याग करेंगे। यह दारुण वृत्तान्त स्मरण होते ही श्रीमतीका कोमल हृदय व्यथित हो उठा और उनकी दोनों आँखोंसे झर-झर अश्रु प्रवाहित होने लगे। उन्होंने एक लम्बी साँस ली।

चरण-कमल पाशे,	निश्वास छोड़ते हुए चरणकमलों
निःश्वास छाड़िया बैसे,	के पास बैठ गईं और कातर वदनसे
निहारेये कातर बयाने।	निहारने लगीं।

--चै० मं०

श्रीमतीके मनमें प्राणवल्लभकी चरण-सेवा करनेकी अभिलाषा बड़ी बलवती हुई। मनमें डर था कि कहीं उनकी निद्रा भङ्ग न हो जाय।

अतिशय शङ्कित भावसे धीरे-धीरे श्रीमतीके श्रीहस्तने प्रभुके श्रीचरण-कमलको स्पर्श किया। श्रीमतीजी अपने प्राणवल्लभके त्रिलोक-वाञ्छित पाद-स्पर्शके

सुखसे विह्वल हो उठीं। यह देव-दुर्लभ सुख सहज ही किसीके भाग्यमें बदा नहीं होता। श्रीमतीको बहुत भय है कि कहीं प्रभुकी निद्रामें विघ्न न पड़े। श्रीमतीजीको अभी यह ज्ञान नहीं हुआ था कि प्रभु अन्तर्यामी हैं। रसिक-शेखर श्रीगौराङ्ग सब कुछ जानते हैं और मन-ही-मन सोच रहे हैं कि देखूँ आज क्या होता है? मानो यह सोचकर ही वे निद्राभिभूत हो गये हैं। श्रीमतीजी पद-सेवा कर रही हैं और सोच रही हैं कि इस भवाराध्य शिव-विरिञ्चि-वन्दित दोनों श्रीचरणोंको एक बार हृदयमें धारण कर देखूँ, कैसा सुख मिलता है,—केवल रूप देखकर सुख नहीं हो रहा है। श्रीमतीके चित्तमें इस वासनाका उदय होते ही प्राणवल्लभके अभय अरुण चरणोंको धीरे-धीरे उठाकर अपने वक्षःस्थल पर धारण करके वे सैकड़ों बार चुम्बन करने लगीं।

हृदय ऊपरे थुञा, बाँधे भुज-लता दिया,	अपने प्रिय प्राणनाथके चरण
प्रिय प्राणनाथेर चरण।	हृदय पर रख कर भुज-लताओंसे
——चै० मं०	बाँध लिये।

● प्रियाजीकी कातरता और प्रभु द्वारा सान्त्वनाकी चेष्टा

श्रीमतीके हृदयमें तब प्रेमका तूफान उठ खड़ा हुआ, तरङ्ग पर तरङ्ग उठने लगी। दोनों नेत्रोंसे झर-झर प्रेमाश्रु प्रवाहित होने लगे, नयनोंके जलसे वस्त्र भीग गया। कुछ उष्ण आँसुओंकी बूंदे श्रीगौराङ्गके चरण-कमल पर पड़ते ही उनकी निद्रा भङ्ग हो गयी। श्रीगौराङ्गने आँखें खोलकर जो देखा, उससे वे आनन्दसे गद्गद हो गये और शय्यासे उठकर बैठ गये। श्रीमतीजीको परम आदरपूर्वक अपनी जंघों पर बैठाकर दक्षिण हाथसे उनका चिबुक पकड़ कर प्रेमपूर्वक कहने लगे—"प्रियतमे! तुम रो क्यों रही हो? तुम मेरी प्राण-प्रिया हो, मैं तो तुम्हारे पास ही हूँ, फिर तुम क्यों रो रही हो?"

दु'नयाने झरे नीर, भिजिल हियार चीर,
चरण बाहिया पड़े धारा।

चेतन पाइया चिते, उठे प्रभु आचम्बिते,
विष्णुप्रियाय पुछे अभिपारा॥

मोर प्राण-प्रिया तुमि, कान्द कि कारणे जानि,
कह कह इहार उत्तर।

थुइया ऊरुर परे, चिबुक दक्षिण करे,
पुछे वाणी मधुर अक्षर ।।

--चै० मं०

प्रभुके इस प्रिय संभाषणको सुनकर श्रीमतीके हृदयमें प्रेमका वेग और भी जोर पकड़ने लगा। उनके नयनोंसे अश्रुधारा और भी प्रबल वेगसे बहने लगी। श्रीमती मन-ही-मन सोच रही थीं कि प्राणबल्लभके मधु-मिश्रित प्रिय संभाषणका यथोचित उत्तर देकर उनको सुखी करें, परन्तु ऐसा कर न सकीं। अदम्य हृदयावेगसे उनका गला अवरुद्ध हो गया। प्राण भीतर ही भीतर रो उठे। श्रीमतीजी केवल प्रभुके दोनों चरणोंको पकड़कर रोने लगीं।

कान्दे देवी विष्णुप्रिया **शुनिले विदरे हिया,** **कहिले ना कहे किछु वाणी।**	देवी विष्णुप्रिया क्रन्दन कर रही हैं, जिसको सुनकर हृदय विदीर्ण होता है, पूछने पर भी कुछ बोल नहीं पा रही हैं।
अन्तरे गुमरे प्राण, **देहे नाहि सम्बिधान,** **नयाने जलये मात्र पानी ।।**	अन्दर ही अन्दर प्राण रो उठे। देहमें शान्ति नहीं, केवल नयनोंसे पानी बह रहा है।

--चै० मं०

प्रभु बड़ी विपत्तिमें पड़े, उनका चित्त बहुत व्याकुल हो गया। बारंबार वे प्रियाको आदरपूर्वक मधुर वचनोंसे पूछने लगे। परन्तु श्रीमती बात नहीं कर पा रही हैं। श्रीगौराङ्गने अपने अङ्गके वस्त्रके अञ्चलसे प्रियाजीकी आँखें पोंछी और नाना प्रकारकी प्रेमकी बातोंसे उनकी मनस्तुष्टि करनेकी चेष्टा करने लगे। किन्तु इसका फल उलटा हुआ। श्रीगौराङ्ग श्रीमतीजीको जितना ही गोदमें लेकर प्यार-दुलार कर रहे हैं, उतना ही अधिक उनके हृदयका उद्वेग बढ़ रहा है। यही विशुद्ध प्रेमका स्वाभाविक लक्षण है।

प्रियतमके आदर और प्रेमसे प्रियाका अभिमान बढ़ता जाता है, मन-ही-मन बड़ा सुख अनुभव होता है, परन्तु वाणीके द्वारा वह सुख प्रकट नहीं किया जाता। श्रीमतीकी ठीक यही अवस्था हुई है। श्रीगौराङ्ग इसको समझ रहे हैं; इसी कारण अधिक कुछ न कहकर प्रियाको गोदमें बैठाकर केवल आँखोंके आँसू पोंछ रहे हैं। इस प्रकार निस्तब्ध भावमें कुछ समय बीत गया। श्रीमतीजी रह-रहकर एक बार प्राणवल्लभकी ओर कातर दृष्टिसे देख लेती हैं, फिर मुख-चन्द्रको अवनत करके रोती हैं। इससे प्रभुका हृदय व्याकुल हो रहा है, मन बड़ा अस्थिर हो रहा है। दोनों ही एक दूसरेके प्रेमोन्मादपूर्ण मधुर मुख-चन्द्रके कमनीय भावको देख-देखकर हृदय और मनको तृप्त कर रहे हैं।

पुनः पुनः पुछे पहुँ,
सुमति ना देइ तभु,
कान्दे मात्र चरण धरिया।

प्रभु वारम्वार पूछते हैं, परन्तु वे धैर्य नहीं धरती हैं, उनके चरण पकड़ केवल रो रही हैं।

प्रभु सर्व्व कला जाने,
पुछे नाना विधाने,
अङ्गवासे वयान मुछाजा।।

प्रभु सब कलाएँ जानते हैं, नाना प्रकारसे पूछते हैं, अपने शरीरके वस्त्रसे उनके वदनको पोंछते हैं।

नाना रङ्ग परभाव
करिया बाड़ाय भाव,
जे कथाय पाषाण मुञ्जरे।।
—चै० मं०

नाना प्रकारसे प्रतीति करानेके लिए भाव दिखलाते हैं, जिससे पाषाण भी पुष्पित हो जाय।

प्रभुके इस सरस और सकरुण प्रेमालापसे पाषाण भी द्रवित हो सकता है, फिर श्रीमतीजीका कुसुम-कोमल हृदय द्रवित क्यों नहीं होता? श्रीमतीजीका हृदय प्रभुके आदर-स्नेहसे पानी-पानी हो गया, स्वामी-सोहागिनी स्वामीके स्नेहसे आत्म-विस्मृत हो रही हैं। श्रीगौर-वक्ष-विलासिनी श्रीगौरके अङ्कमें बैठकर कृतार्थ हो रही हैं। ऐसा न होता तो उनके नेत्रोंसे इतने प्रेमाश्रु क्यों प्रवाहित होते? केवल हृदयके आत्यन्तिक सुखसे मनके भावको कहकर

प्रकट नहीं कर पा रही हैं। प्रभुकी व्यग्रताको देखकर, प्राणवल्लभकी व्याकुलताको देखकर श्रीमतीजी अधिक स्थिर न रह सकीं।

प्रभुर व्यग्रता देखि, विष्णुप्रिया चन्द्रमुखी,
कहे किछु गदगद स्वरे ॥
--चै० मं०

● प्रियाजी द्वारा स्पष्ट प्रश्न और निवेदन

श्रीमतीजी मनके भावको रोककर न रख सकीं। जिस दारुण समाचारको सुनकर उनका कोमल हृदय व्यथित हुआ है, लोगोंके मुखसे कई दिनोंसे वे जो सुन रही हैं, उससे उनका कुसुम-कोमल हृदय विदीर्ण हो रहा है। कहनेकी इच्छा होते हुए भी जो बात अब तक नहीं कह पा रही थीं, जो असह्य बात प्राणवल्लभको कहनेके लिए मन निरन्तर उत्सुक था, इतने आदर, इतने सोहागमें उसको कहे बिना देवीसे रहा न गया। इसी कारण देवीने दूसरे विषय या दूसरी बातको न उठा कर एकबारगी उस असह्य बातके सत्यासत्यके विषयमें प्राणवल्लभसे पूछा। केवल पूछा ही नहीं, श्रीमतीजीने प्रभुको स्पष्टास्पष्ट भावसे पकड़ लिया। श्रीमतीने कहा—"अभी तुम अपना स्नेह-प्यार किनारे रखकर मेरे सिर पर हाथ रखकर स्पष्ट बतलाओ कि अपने उस भाईके समान क्या तुम भी···"इसके आगे श्रीमतीजी और कुछ नहीं कह सकीं। वह विषम असह्य बात उनके मुँहमें न आ सकी। श्रीमतीका कोमल हृदय व्याकुल हो उठा। दुःखसे उनकी दोनों आँखोंसे आँसुओंकी धारा बह चली। एक टक प्राणवल्लभके मुख-चन्द्रकी ओर कुछ क्षणों तक ताकती रहीं, अधिक देर तक नहीं देख सकीं। श्रीगौराङ्गके वक्षःस्थलमें नयन-जल-सिक्त अपने सुन्दर मुखको छिपाकर रोने लगीं। श्रीगौर-वक्ष-विलासिनी श्रीगौरके वक्षःस्थल पर स्थान पाकर जी भरकर रोती रहीं। श्रीगौराङ्गने प्रियाको हृदयसे लगा कर श्रीहस्त द्वारा उनके दोनों नेत्रोंको पोंछ दिया। प्रभु सोचने लगे कि प्रियाको क्या कहकर समझावें। श्रीमतीजी इस भावमें कुछ देर रहनेके बाद स्थिर चित्त होने पर प्राणवल्लभसे बोलीं—

शुन शुन प्राणनाथ, मोर शिरे देह हात, सन्न्यास करिबे नाकि तुमि ?	हे प्राणनाथ ! सुनो, मेरे सिरपर हाथ रखकर बताओ, क्या तुम संन्यास लोगे ?
लोक मुखे शुनि इहा, विदरिते चाहे हिया आगुनिते प्रवेशिब आमि ।।	लोगोंके मुँहसे यह जो सुन रही हूँ उससे हृदय विदीर्ण होना चाहता है । मैं तो अग्निमें प्रवेश कर जाऊँगी ।
तो लागि जीवन धन रूप नव यौवन, वेश विलास भाव कला ।।	हे जीवन धन ! तुम्हारे ही लिये यह रूप, नवयौवन, वेश, विलास, भाव, कला हैं ।
तुमि जबे छाड़ि जाबे, कि काज ए छार जीवे हिया पोड़े जेन विषज्वाला ।। --चैं० मं०	जब तुम ही छोड़कर चले जाओगे इस क्षार जीवनसे क्या प्रयोजन ? हृदय जल रहा है, मानो विषकी ज्वाला है ।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी यह बात कहकर ही शान्त न हुईं । अपने मनके भीतरके विषम उद्वेगकी बात अपने प्राणवल्लभको उन्होंने खोलकर कह दी, छिपाकर न रख सकीं । एक-एक करके सारी बातें कह गयीं । बड़े दुःखसे श्रीमतीजीने रोते-रोते कहा—

आमा हेन भाग्यवती नाहि कोन युवती, तुमि मोर प्रिय प्राणनाथ ।	हे प्राणनाथ ! मेरे जैसी भाग्यवती कोई युवती नहीं है । कारण, तुम मेरे प्रिय प्राणनाथ हो ।
बड़ प्रति-आशा छिल, देह प्राण समर्पिल, ए नव जौवन दिल हाथ ।। --चै० मं०	तुमसे बड़ी आशा थी, मैंने देह और प्राण तुमको समर्पित किया, अपना यह नव यौवन तुम्हारे हाथोंमें सौंपा ।

श्रीगौराङ्ग जिनके प्राणवल्लभ हैं, जो श्रीगौराङ्गके वक्षःस्थलमें विलास करनेवाली हैं, उनके समान सौभाग्यवती रमणी त्रिलोकमें और कौन है ?

श्रीमतीने श्रीगौराङ्ग-धनको पाकर मनमें बड़ी आशा की थी कि उनके साथ सुखसे गृहस्थी बितावेंगी। वह सुख भस्मीभूत हो जाय--इसको उनके प्राण कैसे सहन करें? इसके ऊपर यह दुःख कि उनके हृदयकी सम्पत्ति आदरके धन जो श्रीचरण-कमल हैं, जिनका स्पर्श करनेमें भी उनको भय लगता है, कि कहीं उनमें व्यथा न हो जाय, ऐसे सुकोमल चरण-युगलसे वे कैसे पैदल चलेंगे? संन्यासी होने पर मार्गमें भ्रमण करना पड़ता है और कण्टकमय अरण्यमें वास करना पड़ता है। मार्गमें चलनेसे जो श्रम होगा उससे शरीर व्यथित होगा, प्राणवल्लभका चन्द्र-मुख सूख जायगा, चन्द्र-मुखसे स्वेद-बिन्दु बह चलेंगे --इसी चिन्तासे श्रीमतीजीका मन व्याकुल हो उठा है, इस कारण वे अत्यन्त करुण स्वरसे प्राणवल्लभसे निवेदन करती हैं--

धिक् रहे मोर देह, एक निवेदेङ तोहे, केमने हाँटिया जाबे पथे।	धिक्कार है मेरे देहको! एक निवेदन तुमसे कर रही हूँ। तुम मार्गमें कैसे पैदल चलोगे?
शिरीष कुसुम जेन, सुकोमल चरण, परशिते डर लागे हाथे॥	तुम्हारे चरण शिरीष-कुसुमके समान कोमल हैं, जिनको अपने हाथोंसे छूनेमें भी मुझे डर लगता है।
भूमिते दाँड़ाह जबे, डरे प्राण हाले तबे, सिञ्चिया पड़ये सर्व्व गाय।	जब तुम भूमि पर खड़े होते हो तो डरसे मेरे प्राण काँप उठते हैं और सारा शरीर पसीज जाता है।
अरण्य कण्टक वने, कोथा जाबे कोन स्थाने, केमने हाँटिबे राङ्गा पाय॥	कण्टकारण्य वनमें तुम कहाँ किस स्थानमें जाओगे और इन अरुण चरणोंसे कैसे पैदल चलोगे?
सुधामय मुख-इन्दु, ताहे धर्म्म बिन्दु बिन्दु, अलप आयासे मात्र देखि।	थोड़ा श्रम होनेपर तुम्हारे सुधा-मय मुखचन्द्र पर पसीनेकी बूँदे झलकने लगती हैं।

बरिषा बादल बेला,	बादल-वर्षाके दिनोंमें क्षणमें ही
क्षणे वा विषम खरा	असह्य धूप निकल आती है। जो महा
सन्न्यास करये महा दुखी ।।	दुखी होता है, वही संन्यास लिया
--चै० मं०	करता है।

ये सारी बातें बोलने पर भी श्रीमतीजीके मनका उद्वेग दूर न हुआ। अब प्राणवल्लभको धर्मभय दिखाकर सङ्कल्पित संन्यासग्रहणकी वासना त्याग देनेका अनुरोध करती हैं। श्रीमतीके मनका भाव यह है कि स्त्री स्वामीके सिवाय और कुछ नहीं जानती, जिसके लिए स्वामीके चरणोंके सिवा अन्य कोई गति नहीं है, उसको त्याग करनेसे पुरुषको अधर्म होता है। वृद्धा, अर्द्धमृता माताको जो पुत्र त्यागकर भाग जाता है, वह निश्चय ही धर्मसे नहीं डरता। अपने शरणागत जन, एकान्त भक्त तथा अनुचरवर्गको रुलाकर जो पुरुष गृहत्याग करता है, उसके हृदयमें निश्चय ही दया-माया नहीं है, इसलिए श्रीमतीजी प्रभुको धर्म दिखाकर कहती हैं--

तोमार चरण बिनि,	मैं तुम्हारे चरणोंके अतिरिक्त
आर किछु नाहि जानि,	और कुछ नहीं जानती, मुझे किसके यहाँ
आमारे फेलाह कार ठाँय।	फेंकोगे?
धर्म्मभय नाहि तोरा,	तुमको धर्मका भय नहीं है?
शची वृद्ध आध मरा,	शची माँ वृद्ध और अधमरी हो रही हैं;
केमने छाड़िबे तेन माय ।।	ऐसी माँको कैसे छोड़ोगे?
मुरारि मुकुन्द दत्त,	मुरारि, मुकुन्द दत्त, श्रीनिवास,
तेन सब भकत,	हरिदास--
श्रीनिवास आर हरिदास।	
अद्वैत आचार्य्य आदि,	अद्वैत आचार्य आदि सब
छाड़िया कि कार्य्य साधि,	तुम्हारे भक्तगण हैं, उनको छोड़कर
केने तुमि करिबे सन्न्यास ।।	कौनसा कार्य सिद्ध करोगे? तुम संन्यास
--चै० मं०	क्यों ले रेहे हो?

श्रीमतीजीकी उम्र अभी केवल चतुर्दश वर्ष है। उनकी बालिका बुद्धिमें यह सब निश्चय ही अधर्मका कार्य जान पड़ता है। इसलिए प्राणबल्लभको

धर्म-भय दिखलाकर संन्यास-ग्रहण करनेकी वासनासे विरत करनेकी चेष्टा कर रही हैं, क्योंकि श्रीमतीजी जानती हैं कि उनके प्राणवल्लभ बड़े ही धार्मिक पुरुष हैं, बड़े मातृभक्त हैं, निज जनकी रुचि रखनेवाले हैं। कदाचित् धर्म-हानिके भयसे घर पर रह जायँ, इस अभिप्रायसे वृद्धा जननीकी बात उठाकर प्राणवल्लभको अधर्मका भय दिखला रही हैं। श्रीमतीजीने अपनी बात भी कही है, परन्तु उससे उनके मन पर असर नहीं पड़ा है। एक बात और है, श्रीमती विष्णुप्रिया देवी वाल्यकालसे ही शची देवीमें अतिशय भक्ति करती हैं। प्रभुके गृहत्याग करने पर वृद्ध सासकी क्या दशा होगी, यह सोचकर वे व्याकुल हो रही हैं। शोक-तापसे जर्जरित वृद्धा सासकी बात याद आते ही श्रीमतीजी अपना दुःख भूल जाती हैं, इसी कारण माताकी बात उठाकर प्रभुको धर्मभय दिखला रही हैं। श्रीमतीजी यह भी जानती हैं कि उनके प्राणवल्लभके कतिपय लोग अतिप्रिय और अन्तरङ्ग भक्त हैं। उनको प्रभु बहुत ही चाहते हैं, उनको छोड़कर प्रभु क्षणमात्र भी नहीं रह सकते, इसी कारण श्रीमतीजीने उनका नाम लेकर भी अपने प्राण-वल्लभको दो बातें कह दीं। पहले तो धर्मका भय दिखला कर श्रीमतीजीको जो कहना था वह कह दिया, अब लोक-निन्दा और अपयशका भय दिखलाकर कह रही हैं--"नाथ! तुम यदि अपनी वृद्धा माता और अनुगत भक्तजनोंको छोड़कर चले जाओगे तो लोग तुम्हारी निन्दा करेंगे, तुम अपयशके भागी होगे, यह सब बातें मुझसे कैसे सुनी जायँगी? इन सब बातोंका भी तो विचार करो। मैं बालिका हूँ, तुमको और क्या कहूँ?"

तुमि प्रभु गुणराशि,	प्रभु! तुम गुणोंकी राशि हो,
जगजने हेन वासि,	संसारके लोग ऐसा ही समझते हैं।
विपरीत चरित आशय।	विपरीत चरितका आश्रय लेकर--
तुमि जबे छाड़ि जाबे,	जब तुम छोड़कर जाओगे, तो इसे
शुनिले मरिब सभे,	सुनकर सब मर जायँगे और तुम केवल
आरजिबे अपयशमय॥	अपयश अर्जन करोगे।

--चै० मं०

देवीके मनमें इस समय एक और भाव उदय हुआ। वे प्राणवल्लभके दोनों चरणोंको पकड़ कर रोते-रोते कहने लगीं--"प्राणेश्वर! हृदय-बल्लभ!

मुझको लेकर ही तुम्हारा संसार है, यह अभागिनी ही तुम्हारा जंजाल है, मेरे ही कारण तुम संसारका त्याग करनेके लिए उद्यत हुए हो, मेरे ही कारण तुम वृद्धा माताको छोड़कर गृहत्यागी बन रहे हो, मैं ही तुम्हारे धर्मजीवनकी परम शत्रु बनकर खड़ी हूँ, मेरे ही कारण तुम निश्चिन्त होकर भजन-कीर्त्तन नहीं कर पा रहे हो, अतएव इस अभागिनीके लिए मरना ही मङ्गल है, इस तुच्छ जीवनको अब मैं नहीं रक्खूँगी। तुम्हारा प्रसाद लेकर, मैं विष खाकर मर जाऊँगी। इससे तुम सुखपूर्वक घरपर रहकर धर्म-कर्म कर सकोगे। गृह-त्याग करनेकी आवश्यकता न पड़ेगी। अपने साधन-पथके कण्टक, अपने धर्म-जीवनके शत्रु इस अभागिनीको विदा करो नाथ!" इतना कहकर श्रीमतीजी प्रभुके दोनों चरणोंको पकड़कर, मर्मव्यथित होकर कातर कण्ठसे रुदन करने लगीं।

कि कहिब मुञि छार, मुञि तोमार संसार,
सन्न्यास करिबे मोर तरे।
तोमार निछनि लैञा, मरि जाइ विष खाञा,
सुखे निवसह निज घरे।।

—चै० मं०

श्रीमतीजी हृदयाग्निसे दग्ध हो रही हैं और रोते-रोते प्राणवल्लभके मुख-चन्द्रकी ओर देखकर पुनः विनती करके कह रही हैं—

प्रभु! ना जाइह देशान्तरे,	हे प्रभु! देशान्तर न जाना,
केह नाहि ए संसारे	मेरे लिए इस संसारमें तुम्हारे सिवा
बदन चाहिते पोड़े हिया।	कोई नहीं है। तुम्हारा मुख देखनेके लिए हृदय दहकने लगता है।

श्रीमतीके हृदयमें आज बड़ी विषम वेदना है, मनमें दारुण व्यथा है, वे और कुछ नहीं कह पा रही हैं। देवीके दोनों कमल-नयनोंसे अविरल अश्रुधारा वह रही है। प्राणवल्लभके चरणोंको पकड़कर केवल रो रही हैं।

कहिते ना पारे कथा, अन्तरे मरम व्यथा
कान्दे मात्र चरणे धरिया।

● प्रभुका उत्तर

श्रीगौराङ्ग अबतक श्रीमतीजीकी मर्मभेदी, हृदय-विदारक, विषादपूर्ण विलाप-ध्वनि सुन रहे थे। श्रीमतीके कातर हृदयकी प्रत्येक बात प्रभुके

हृदयके अन्तस्तलमें मानों शेलके समान चुभ रही थी। श्रीगौराङ्गके हृदयमें दारुण व्यथा हो रही थी। प्रभुने मनके भावको छिपाकर हँसते हुए आदरपूर्वक प्रियाको पुनः गोदमें उठा लिया। गौर-वक्ष-विलासिनी स्वामी-सोहागिनी पुनः प्राणवल्लभके अङ्कमें बैठ गयीं। श्रीगौराङ्गने अपने अङ्गके वस्त्रसे श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके आँसू भरे चन्द्र-वदनको पोंछा और प्रियाकी चिबुकको पकड़कर पुनः बहुत प्यार करने लगे एवं स्नेहपूर्वक सैकड़ों बार प्रियाका मुख चुम्बन किया। नाना प्रकारके कौतुक और रस-रंगसे प्रियाके मनको भुलाने लगे। स्वामी-सोहागिनी प्राणवल्लभके हास्यमय मुखचन्द्रकी ओर देखकर मन-ही-मन सोचती हैं--"ये क्या मुझको छोड़कर जा सकेंगे?" तब श्रीगौराङ्गने हँसते-हँसते श्रीमतीजीसे कहा--"प्राणाधिके ! प्रियतमे ! तुमसे किसने कहा है कि मैं तुमको छोड़कर गृह-त्याग करूँगा? तुम अकारण, मिथ्या ही शोक कर रही हो तथा व्यर्थ मनको कष्ट दे रही हो। मैं जब जो कुछ करूँगा, तुमको बिना बताये नहीं करूँगा, तुम इस विषयमें निश्चिन्त रहो, व्यर्थ ही दुःख न करो।"

शुनि विष्णुप्रिया वाणी, **प्रभु गोर गुणमणि,** **हासिया तुलिया लइल कोले।**	विष्णुप्रियाकी वाणी सुन गुणमणि गौर प्रभुने हँसकर उनको गोदमें उठा लिया।
वसने मुछाय मुख, **करे नाना कौतुक,** **मिछा शोक ना करिह बोले॥**	वस्त्रसे मुख पोंछने लगे, नाना प्रकारके कौतुक करने लगे और बोले--व्यर्थमें शोक न करना।
आमि तोरे छाड़िजा, **सन्न्यास करिव गिजा** **ए कथा वा के कहिल तोके ?**	मैं तुमको छोड़कर संन्यास लेने जाऊँगा--यह बात तुमको किसने कही?
जे करि से करि जबे, **तोमाके कहिव तबे,** **एखने ना मर मिछाशोके॥**	जब जो करूँगा तुमसे कहकर करूँगा, अभी व्यर्थ शोकमें न मरो?
इहा बलि गौरहरि, **अशेष चुम्बन करि,** **नाना रस कौतुक बिथारे।**	यह कह गौरहरि अनेक चुम्बनकर नाना रस-कौतुकोंका विस्तार करने लगे।

अनन्त विनोद क्रीड़ा,	अनन्त विनोद, क्रीड़ा और
लीला लावण्येर सीमा,	लीला की, जिनके लावण्यकी सीमा
विष्णुप्रिया तुषिला प्रकारे ॥	नहीं—इस प्रकार विष्णुप्रियाको तुष्ट
—चैं० मं०	किया।

● प्रियाजीकी दशा और पुनः निवेदन

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी प्राणवल्लभके सादर संभाषण और प्रेमालिङ्गनसे एकबारगी प्रेमानन्दमें डूब गयीं। उनका सारा दुःख दूर हो गया, कोई दुःखकी बात उनके मनमें न रही। पतिके सङ्ग-सुखमें, रति-रङ्ग-रसमें विरह-विधुरा नवबालाने सारी रजनी आनन्दमें बितायी। उस दिनकी वैसे सुखकी रात मानो कभी व्यतीत ही न हो। प्रभु और श्रीमती दोनों ही आनन्द-समुद्रमें डूब गये हैं। श्रीमतीजी चुपके-चुपके प्रेमानन्द-रस पान करके स्वर्ग-सुख-भोग कर रही हैं। तत्कालीन नव-दम्पतिकी अवस्था कवि ज्ञानदासकी भाषामें अति सुन्दर रूपसे प्रकट हुई है।

गले गले लागल, हिये हिये एक।
बयाने बहु आरति अनेक॥

ऐसी अवस्थामें दुखकी बात मनमें नहीं आती, दुःखमय जगत सुखका भण्डार जान पड़ता है; यह मनमें भी नहीं आता कि दुःख नामकी कोई वस्तु है। परन्तु श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके मनमें इतने सुखके भीतर भी दुःखका चिह्न दिखलायी दिया। अकस्मात् न जाने कहाँसे काले मेघने आकर पूर्णिमाके चन्द्रको ढँक लिया। श्रीमतीजीने प्राणवल्लभके मुखकी ओर ताक करके देखा, उनका मुखचन्द्र मलिन है, आँखोंसे अश्रु-बिन्दु गिर रहे हैं, हृदयमें मानो कोई गुह्य भाव छिपा हुआ है, जो कुछ बोलते हैं, या कर रहे हैं, सब बाह्य भाव मात्र हैं। श्रीमतीजीके मनमें इस भावके उदय होते ही हृदय कम्पित हो उठा, सारे अङ्ग सिहर उठे, बुझती हुई हृदयाग्नि पुनः धाँय-धाँय करके जल उठी। श्रीमतीजीके मनमें घोर सन्देह उठा कि यह सब केवल प्रभुकी चातुरी है। वे बाहरी प्रेम और स्नेह दिखलाकर मनको भुलावा दे रहे हैं। यह विचारकर श्रीमतीने मन-ही-मन उपाय सोचा कि प्राण-वल्लभका हाथ अपने हृदयपर रखकर, शपथ कराकर, सच्ची बात कहला लूँगी।

विनोद विलास रसे, भै गेल रजनी शेषे, पुन किछु पुछे विष्णुप्रिया।	विनोद और विलास-रसमें रात बीत गयी, तब विष्णुप्रियाने फिर पूछा।
हियाय आगुनि आछे, ते कारणे पुन पुछे, प्रिय प्राणनाथ मुख चाञा॥	उनका हृदय सन्तप्त हो रहा है, इसी कारण प्रिय प्राणनाथके मुँहकी ओर देखकर फिर पूछा।
प्रभु कर बुके निया, पुछे देवी विष्णुप्रिया मिछा ना बलिह मोर डरे।	प्रभुके हाथको अपने हृदय पर रखकर विष्णुप्रिया देवी पूछती हैं--"मुझसे डरकर तुम झूठ न बोलना।
हेन अनुमान करि, जत कह जे चातुरी, पलाइबे मोर अगोचरे॥	मुझे ऐसा अनुमान हो रहा है कि जो कुछ तुम बोल रहे हो, सब चातुर्य है, तुम मुझसे छिपकर भाग जाओगे।
तुमि निजवश प्रभु, परवश नह कभु, जे करिबे आपनार सुखे॥	प्रभु! तुम स्वाधीन हो, कभी पराधीन नहीं हो, जो करोगे अपनी इच्छासे करोगे।
सन्न्यास करिबे तुमि, कि बलिते पारि आमि निश्चय करिया कह मोके॥	तुम संन्यास लोगे तो भी मैं क्या कह सकती हूँ? ठीक निश्चित करके मुझको बतलाओ।"

प्रभुके दोनों हाथोंको पकड़ कर, वक्षःस्थल पर रखकर, श्रीमतीजीने अत्यन्त कातर स्वरमें प्राणवल्लभसे कहा--"हृदय-वल्लभ! मुझको जान पड़ता है, तुम मेरे साथ चातुरी कर रहे हो। तुम्हारा मुँह देखनेसे जान पड़ता है कि तुम्हारे मनका भाव अन्य ही प्रकारका है। अबलाको भुलावा देनेके लिए इतना प्रेम केवल बाह्यभावसे दिखलाते हो। नाथ! हृदय-सर्वस्व! मेरे हृदय पर हाथ रखकर शपथ करके बोलो, क्या तुम सचमुच इस अभागिनीको छोड़कर चले जाओगे? जीवन-सर्वस्व! यह अभागिनी तुम्हारे सिवाय और किसीको नहीं जानती। तुम्हारे इन अरुण चरणोंके सिवाय अन्यत्र इसकी गति नहीं। इस निरपराध अबलाके गले पर छुरी

न चलाना। तुम प्रभु हो, मैं दासी हूँ। तुम पुरुष हो, मैं अबला स्त्री हूँ। तुम स्वाधीन हो, मैं पराधीन हूँ। तुम जो चाहो कर सकते हो। तुम मेरी बात क्यों सुनोगे? तथापि मेरा मन नहीं मानता, इसी कारण तुमसे इतनी बात कह रही हूँ। तुम्हारे भावको देखकर मेरे मनमें भयानक सन्देह हो रहा है कि तुम मुझको धोखा देकर चले जाओगे। तुम्हारी गति-विधि मुझको तनिक भी अच्छी नहीं लग रही है। मेरे सिरकी शपथ है, सच-सच कहो, तुम क्या सचमुच अपनी बूढ़ी माँ और मुझको धोखा देकर चले जाओगे? देखना, स्त्रीबधके भागी मत बनना।"

● प्रियाजीको प्रभुके द्वारा धर्मोपदेश

श्रीगौराङ्गने स्थिर और गम्भीरभावसे श्रीमतीजीकी प्रत्येक बात सुनी और देखा कि प्रियाके नयनयुगल आँसुओंसे छलछला रहे हैं, सारा शरीर थर-थर काँप रहा है, मुख सूख गया है, सुन्दर मुख-मण्डल पर मानो एक विषम विषादकी छाया पड़ रही है। प्रभुने तब अपने मनके भावको छिपानेकी चेष्टा नहीं की। वह दारुण अन्तिम बात, वह प्राण-घातिनी वाणी 'संन्यास-ग्रहण करूँगा' प्रियाके समीप बोलनेका समय आ गया था। श्रीमतीजीके वक्षःस्थल पर सान धरायी हुई छुरी चलानेका समय उपस्थित हो गया था। इसलिए श्रीगौराङ्ग थोड़े गम्भीर हुए, परन्तु अधिक देर तक न रह सके। तनिक मृदु मुस्कानके साथ प्रियासे उस समय धर्म-तत्त्व और हित-कथा कहने लगे। प्रभुने अन्तमें जो माताके सम्मुख कहा था, वही प्रियाजीके सामने कह रहे हैं, उनके पास वही एक बात है। प्रभु बोले--"प्रियतमे! इस संसारमें सब कुछ मिथ्या है, सब असार है। माता, पिता, पति, पुत्र, भाई, बन्धु--कोई किसीका नहीं है। एक मात्र श्रीकृष्ण-भजन ही जीवनका मुख्य उद्देश्य है। इसीलिए जीवको मानव-जन्म मिला है। यह दुर्लभ मानव-जन्म प्राप्त करके यदि कोई श्रीकृष्ण-भजन नहीं करता है, तो उसका जन्म व्यर्थ है। मायाका बन्धन ही श्रीकृष्ण-भजनका विघ्न है, उसको काटना ही पड़ेगा। मान, अभिमान, अहङ्कार ये एकबारगी त्याज्य हैं। श्रीकृष्ण-भजनके लिए ही यह देह धारण किया जाता है। संसारकी मायामें पड़कर संसारका जीव श्रीकृष्ण-भजनको भूल जाता है। मायाकी ऐसी ही शक्ति है। इसीके कारण जीवको इतना दुःख है, ऐसी

दुर्गति है, इसीके कारण वह नरक यन्त्रणा भोग करता है। यदि संसाररूपी दावानलसे बचना चाहो, तो दूसरी चिन्ताएँ छोड़कर एकान्त मनसे श्रीकृष्णका भजन करो।"

ए बोल शुनिया पँहु मुचकि हासिया लेहु, कहे शुन मोर प्राणप्रिया।	यह बात सुनकर प्रभु किञ्चित मुस्कराते हुए बोले--"हे प्राणप्रिये! सुनो।
किछु ना करिह चिते, जे कहिये तोर हिते, सावधाने शुन मन दिया।।	जो कुछ मैं कह रहा हूँ तुम्हारे हितकी कह रहा हूँ, कुछ दूसरा मत सोचना, मन लगाकर सावधानीसे सुनो।
जगते जतेक देख मिछा करि सब लेख मिछा करि करह गेयान।	जगतमें जो कुछ देखती हो, सबको मिथ्या करके मानो। उनमें मिथ्याबुद्धि करके ज्ञान प्राप्त करो।
मिछा पति सुत नारी पिता माता जत बलि परिणामे के हये काहार।	पति-पत्नी, पुत्र, पिता-माता आदि जितने संबंध हैं, सब मिथ्या हैं। अन्तमें कौन किसका होता है?
श्रीकृष्ण चरण वहि आर त कुटुम्ब नाहि, जत देख सब माया तार।।	श्रीकृष्णके चरणोंको छोड़कर और कोई कुटुम्बी नहीं है। जो कुछ देखती हो सब उसीकी माया है।
कि नारी पुरुष देख सभारि से आत्मा एक मिछा मायाबन्धे हये दुइ।	जितने स्त्री-पुरुष देखती हो, सबमें वही एक आत्मा हैं, मिथ्या मायाके बन्धनमें पड़कर दो हो जाते हैं।
श्रीकृष्ण सभार पति आर सब प्रकृति, एइ कथा ना बुझये कोइ।।	श्रीकृष्ण सबके पति हैं और सब प्रकृति हैं, इस बातको कोई नहीं समझता।
रक्त-रेतः-सम्मिलने जन्म मूत्र-विष्ठास्थाने भूमे पड़े हैञा अगेयान।	रक्त और रेत (वीर्य) के संयोगसे मूत्र और विष्ठाके स्थानमें जीवका जन्म होता है और वह भूमि पर गिरते ही ज्ञान भूल जाता है।

बाल युवा वृद्ध हैञा नाना दुःख कष्टपाञा देहे गेहे करे अभिमान ।।	बालक, युवा और वृद्ध होकर, नाना प्रकारके दुःख--कष्ट भोगता हुआ देह-गेहमें अभिमान करता है।
बन्धु करि जारे पालि, तारा सबे देय गालि अभिमाने वृद्ध काल बञ्चे।	जिनको हम बन्धु मानकर पालते हैं, वे सभी गाली देते हैं। अभिमानमें पड़ा, वृद्ध होने पर कालकी वञ्चना करता है।
श्रवण नयान आन्धे विषाद भाविया कान्दे तभु नाहि भजये गोविन्दे ।।	आँखोंसे अन्धा और कानोंसे बहरा हो जाता है और विषाद (दुःख) की भावनासे रोता है। परन्तु फिर भी गोविन्दको नहीं भजता।
कृष्ण भजिवार तरे देह धरि ए संसारे, मायाबन्धे पासरे आपना।	कृष्णकी भक्ति करनेके लिए इस संसारमें देह धारण करता है। किन्तु मायाके बन्धनमें पड़कर अपने आपको भूल जाता है।
अहङ्कारे मत्त हैञा निज प्रभु पासरिया, शेषे मरे नरक-यन्त्रणा ।। --चै० मं०	अहंकारमें मत्त होकर अपने प्रभुको भूलकर अन्तमें नरककी यन्त्रणामें मरता है।"

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके कानोंमें प्रभुके श्रीमुखसे निःसृत अमृतमय सूक्ष्म धर्मतत्त्व प्रविष्ट हुए या नहीं, यह वे ही जानें। उनके उस समयके मनका भाव श्रीगौराङ्ग समझ गये थे। ये तत्त्वकी बातें बालिका श्रीमती विष्णु-प्रिया देवीके लिए उपयोगी थीं या नहीं, यह प्रभु ही जानें। प्राणवल्लभके मुखसे इस प्रकारकी तत्त्वकी बातें श्रीमतीजीने पहले नहीं सुनी थीं। विशेषतः इस समय ये बातें देवीको बिल्कुल ही अच्छी नहीं लगीं। श्रीमतीजीका मलिन मुख और भी मलिन हो गया। प्रभुने इसे देखा। यह भी देखा कि उनकी प्राण-प्रियाके हृदयमें एक विषम चिन्ताका स्रोत बह रहा है। श्रीगौराङ्ग फिर श्रीमतीजीसे कहने लगे--

तोर नाम विष्णुप्रिया सार्थक करिह इहा,
मिछा शोक ना करिह चिते।
ए तोरे कहिलुँ कथा, दूर कर आन चिन्ता,
मन देह कृष्णेर चरिते ।।
--चैं० मं०

प्रभुने गंभीर भावसे श्रीमतीजीसे कहा--"प्रियतमे ! तुम्हारा नाम विष्णु-प्रिया है, अपने नामको सार्थक करो। मिथ्या शोक न करो, दूसरी चिन्ता छोड़कर श्रीकृष्णका भजन करो।"

● प्रियाजीकी द्विविध अवस्था

श्रीमतीजीने प्राणवल्लभके मुखके भावको देखकर उनकी कथा-वार्त्ता सुनकर समझ लिया कि प्रभु उनको धोखा देकर चले जायँगे। श्रीगौराङ्गमें अब वह पहलेके भाव नहीं हैं, वह मिलना-जुलना नहीं है, वह प्रेम-विह्वलता नहीं है। उन्होंने गम्भीर भावसे उपर्युक्त बातें श्रीमतीजीसे कहीं। श्रीमतीजीने देखा कि उनके प्रेममय प्राणवल्लभ उपदेष्टा गुरुके समान गंभीर भावसे कुछ अलग रहकर उनके साथ शास्त्रकी बातें कर रहे हैं। प्राणवल्लभका यह आकस्मिक परिवर्तन देखकर श्रीमतीका शुष्क हृदय और भी शुष्क हो गया। उनके मुखसे फिर कोई बात न निकली। वे जड़वत् एक टक होकर प्राणवल्लभके मुँहकी ओर देखती रहीं। श्रीगौराङ्ग सब समझ गये। प्रियाकी अवस्था देखकर उनके मनमें बड़ी व्यथा हुई। श्रीगौर भगवान्ने भक्तके दुःखसे कातर होकर पुनः श्रीमतीका हाथ पकड़कर उनको गोदमें बैठा लिया। स्वामी-सोहागिनी गौर-वक्ष-विलासिनी श्रीमती विष्णुप्रिया देवी स्वामी-स्नेहसे फिर द्रवित हो उठीं। भक्तवत्सल श्रीभगवान् भक्तके दुःखको सहन नहीं कर सकते, भक्तका दुःख दूर करनेके लिए वे सब कुछ कर सकते हैं। भक्तकी कातरता, उसका मलिन मुख देखकर श्रीगौर भगवान् थिर न रह सके। प्रियाजीको और जो कुछ बोलना चाहते थे, बोल न सके। प्रभुके दोनों नेत्र छलछला आये। वे स्थिर न रह सके, प्रियाजीको गाढ़ आलिङ्गन प्रदान कर सुखी किया।

प्रियजन आर्त्ति देखि, छल छल करे आँखि	प्रियाकी आर्त्ति देखकर, आँखें
कोले करि करिला प्रसाद ।।	छल-छल करने लगीं और उनको
--चै० मं०	गोदमें ले सुखी किया ।

श्रीमतीजी प्राण-वल्लभके आदर सोहागसे सारा दुःख भूल गयीं। अब श्रीगौराङ्ग प्रियाजीको गोदमें लेकर बैठे हैं। स्वामी-सोहागिनी श्रीमती विष्णुप्रिया देवी स्वामीका आदर प्राप्त कर प्रफुल्लित हो रही हैं। उनके मुँह पर कुछ हँसी भी दिखायी दे रही है। यह देखकर श्रीगौराङ्ग बहुत सुखी हुए। पहलेकी कोई बात फिर उन्होंने नहीं उठायी। प्रभु बोले--"प्रियतमे! तुमको छोड़कर मैं कहाँ जाऊँगा? यदि कभी कहीं जाऊँगा, तो अवश्य तुमसे कहकर जाऊँगा। अभी तुम्हारे साथ कुछ दिन सुखसे गार्हस्थ्य जीवन व्यतीत करूँगा। तुम्हारे समान पत्नी मुझे बड़े भाग्यसे प्राप्त हुई है।"

श्रीमतीजीको प्राणवल्लभकी बात सुनकर कुछ आश्वासन प्राप्त हुआ। परन्तु मनका सन्देह पूर्णतः दूर न हुआ। 'तुम्हारे साथ कुछ दिन गार्हस्थ्य जीवन व्यतीत करूँगा' यह बात प्रभुने क्यों कही? श्रीमतीजीके मनमें यह सन्देह उत्पन्न होते ही वे विषाद-ग्रस्त हो गयीं। श्रीगौराङ्ग इसको समझ गये और अधिक आदरपूर्वक श्रीमतीजीको प्यार जताने लगे। प्राण-वल्लभको अपने मनकी बात कहे बिना श्रीमतीजीसे न रहा गया। श्रीमती-जीने कहा--"तुमने यह क्यों कहा कि तुम्हारे साथ कुछ दिन गृहस्थी करूँगा--यह कैसी बात है? तो क्या तुम इस दासीके साथ छल करते हो? स्पष्टतः मुझसे बोलो, तुम्हारे मनका भाव क्या है?"

● प्रभुकी स्पष्टोक्ति और दोनोंका संवाद

श्रीगौराङ्ग इस बार बड़ी विपदमें पड़े। श्रीभगवान् भक्तके साथ कब तक छल करेंगे? इस बार भक्तने भगवान्को पकड़ लिया है, अब सत्य बात बोलनी पड़ेगी। श्रीगौराङ्ग और क्या करते? निरुपाय होकर श्रीगौर भगवान्ने प्रियाजीसे कहा--"प्रियतमे! तुमसे अब मैं कुछ भी न छिपाऊँगा। इस जीवनमें मैं दुःख भोगने आया हूँ, दुःख मेरे जीवनका साथी है। मैं स्वयं रो-रो कर मरता हूँ, तब भी जीवोंने कृष्णनाम नहीं

लिया। तुम्हारे और माँके रोनेसे जीवका हृदय द्रवित होता है या नहीं, इसको देखना है। इसीलिए मैंने गृह-त्याग करनेका सङ्कल्प किया है। तुमको रुलानेके लिए ही मेरा गृह-त्याग होगा। तुम लोगोंके रुदनसे कलिके जीवोंके सारे पाप धुल जायँगे। केवल मेरे रोनेसे काम नहीं बना, इसलिए तुम लोगोंकी सहायता चाहता हूँ। स्वेच्छासे तुम लोग मुझे सहायता प्रदान करोगी, इसलिए चुपकेसे इसकी चेष्टा कर रहा था, लेकिन अब ऐसा नहीं करूँगा। माँसे यह सारी बातें मैंने कह दी हैं, उन्होंने कलिके जीवोंके उद्धारके लिए रोना स्वीकार किया है, मैं आशा करता हूँ कि तुम भी यही करोगी। मेरे गृह-त्याग किये बिना तुम लोग रो न सकोगी। इस संसारके सब सुखोंका त्याग किये बिना; तुम्हारे जैसी सुन्दरी, नवीना, पतिप्राणा पत्नीको और वृद्धा पुत्रवत्सला जननीको एवं प्राणोंसे भी प्रिय अन्तरङ्ग भक्तोंको छोड़े बिना; संन्यासीके वेशमें करवा-कौपीन धारण करके रास्ते-रास्ते दीन-दरिद्रके समान जीवोंसे कृपाकी भीख माँगे बिना; लोग हरिनाम न लेंगे और जीवोद्धारका कार्य पूरा न होगा। जिस कार्यके लिए मेरा आगमन हुआ उस कार्यको किये बिना मैं कैसे रह सकता हूँ? प्रियतमे! अब मैंने तुमसे सब बातें खोलकर बता दीं, मेरे शुभकार्यमें बाधा न देना, माँने अनुमति दे दी है, तुम भी अनुमति दे दो और अपने विष्णुप्रिया नामकी सार्थकता सिद्ध करो।"

श्रीगौराङ्गके श्रीमुखसे इस दारुण संवादको सुनकर श्रीमतीजी स्तम्भित हो गयीं। उनके सिरपर मानो आकाश टूट पड़ा। वे प्रभुकी ओर देखकर चुपचाप रोने लगीं।

प्रभु फिर बोले--"विष्णुप्रिये! रोओ मत। श्रीभगवान् तुम्हारे मनमें बल प्रदान करें, तुम्हारे क्रन्दनसे जीवोंका उद्धार होगा। भुवन-मङ्गल श्रीभगवान् तुम्हारा मङ्गल करेंगे। जीवोंका दुःख देखकर मैं अब स्थिर नहीं रह सकता, तुम मेरी सहधर्मिणी हो, मेरे इस धर्मकार्यमें सहायता करो।"

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी प्राणवल्लभकी बातका उत्तर न दे सकीं। श्रीगौराङ्ग-हृदि-विलासिनी श्रीगौरके हृदयमें मुँह छिपाकर केवल रोने लगीं। श्रीमतीजीके उष्ण अश्रुजलसे श्रीगौराङ्गका कुसुम-कोमल हृदय द्रवित हो उठा।

उनकी दोनों आँखोंसे प्रबल वेगसे अश्रुधारा बह निकली, दोनों कुछ देर तक चुपचाप रोते रहे। उसके बाद श्रीमतीजीने प्रभुके दोनों चरणोंको पकड़कर कातर स्वरसे कहा––"प्राणवल्लभ! मैं तुम्हारी दासी होकर तुम्हारे श्रीचरणोंकी सेवाकी अधिकारिणी न बन सकी, यह दुःख तो मेरे मरने पर भी न जायगा। तुम्हारा दासीत्व ही मेरी सारी सम्पत्ति है। मेरी यह अधोगति किस पापसे हुई?"

मो अति अधम छार जनमिल ए संसार
तुमि मोर प्रिय प्राणपति।
ए हेन सम्पद् मोर दासी हइया छिनु तोर
कि लागिया भेल अधोगति॥
––चै० मं०

श्रीगौराङ्गने कहा––"विष्णुप्रिये! तुम समझ नहीं रही हो। तुम्हारे साथ मेरा बाहरी दैहिक सम्बन्ध लुप्त हो जायगा। परन्तु तुम्हारे साथ मेरे अन्य सब सम्बन्ध बने रहेंगे, तुम सदा ही मेरे अन्तःकरणमें विराजोगी। मैं भी तुम्हारे हृदयसे कहीं नहीं जाऊँगा। मेरा यह संन्यास-ग्रहण केवल लोक-शिक्षाके लिए है। तुम्हारे प्रति मेरी प्रीति अटूट बनी रहेगी। तुम्हारी आँखोंसे ओझल होने पर मेरे प्रति तुम्हारी प्रीति सौगुनी बढ़ जायगी। विरहसे उत्पन्न प्रीति ही यथार्थ प्रीति होगी। तुम मुझको भूल न सकोगी, यह मैं जानता हूँ।"

श्रीमतीजी प्राणवल्लभकी इन बातोंका अर्थ न समझ सकीं। अथवा समझनेकी चेष्टा नहीं की। उनके मुँहकी ओर ताक कर वे रो-रोकर कहने लगीं––"तुम संन्यासी होकर गृह-त्याग न करो, ऐसे तीर्थ-दर्शनके उद्देश्यसे विदेश जा सकते हो। तुम संन्यासी होकर गृह-त्याग करोगे तो लोग मेरी निन्दा करेंगे। सती-साध्वी कुल-ललनाएँ कहेंगी कि मेरे ही कारण तुमने वैरागी होकर गृह-त्याग कर दिया और मैंने ही काल-सर्पिणी होकर तुमको गृह-त्यागी बनाया है। यह निन्दा, यह अपवाद मैं सहन न कर सकूँगी। मेरे सिर पर हाथ रखकर बोलो, क्या मैं ही तुम्हारे गृह-त्यागका कारण हूँ?" श्रीमतीजीकी उक्तिका श्रीबलरामदास रचित एक समयोचित पद यहाँ उद्धृत किया जाता है––

आमार वयसी जे तोमा देखिल कत ना निन्दिल मोरे।	मेरी सखियोंमेंसे जिस-जिसने तुमको देखा है उसने मेरी कितनी निन्दा की है कि---
सेत अभागिनी हेन गुणमणी केन रबे तार घरे।।	तुम्हारे जैसा गुणवान पुरुष जो अभागिनी है उसके घर कैसे रहेगा ?
जदि रूप गुण थाकित ताहार, पति कि जौवन काले।	यदि उसमें रूप और गुण होते, तो क्या पति यौवनावस्थामें--
कौपीन परिया काङ्गाल हइया गृह छाड़ि बने चले।।	कौपीन धारण करके कङ्गाल होकर घर छोड़कर बनमें चले जाते ?
निठुर रमणी पापिनी तापिनी पति देशान्तरि करे।	जो निष्ठुर रमणी है और पापिनी-तापिनी है वह पतिको देशान्तर भेज देती है।
निदय हइया चलिछ फेलिया लोके गालि पाड़े मोरे।।	तुम निर्दय होकर, मुझको छोड़कर जाओगे तो लोग मुझे इस प्रकार गाली देंगे।
आमि कि तोमार दियाछि विदाय सत्य करे बल नाथ।	हे नाथ ! सत्य बोलो, क्या मैंने तुमको घरसे विदा किया है ?
तोमार लागिया मरेछि पुड़िया ताहे लोक - परिवाद।।	मैं तो तुम्हारे लिए सन्तप्त हो मर रही हूँ तो भी लोग निन्दा करते हैं।
तुमि मोर पति हइयाछ जति एका मोर सर्ब्बनाश।	मेरे स्वामी तुम संन्यासी हो गये हो, यह केवल मेरा सर्वनाश है।
प्रियार रोदन तारिबे भुवन आर बलराम दास।।	इस प्रकार प्रियाजीका रुदन त्रिभुवनको और बलरामदास पदकर्त्ताको तार देगा।

● प्रभुका ऐश्वर्य-दर्शन और प्रियाजीकी स्थिति

श्रीगौराङ्ग श्रीभगवान् हैं। नरलीला करनेके लिए नदियाधाममें 'अवतीर्ण हुए थे। श्रीभगवान्की नरलीलाके समान सुन्दर वस्तु जगतमें दूसरी नहीं है।

नरलीलामें श्रीभगवान्‌की कृपा जिस प्रकार उपलब्ध होती है, उनकी दया जिस प्रकार प्रस्फुटित होती है, वैसी उनकी ऐश्वर्यमयी भगवत्तामें नहीं होती। श्रीगौराङ्ग श्रीमती विष्णुप्रियाको विधिपूर्वक समझा रहे हैं, उनके मनको शान्ति प्रदान करनेके लिए प्राणपनसे चेष्टा कर रहे हैं। नराकार श्रीभगवान् शास्त्र-तत्त्व, युक्ति, सिद्धान्त—सबकी सहायता लेकर चौदह वर्षकी बालिकाको समझा न सके। प्रेमकी मधुरता, प्रेमका बन्धन एवं प्यारकी शृंखला, युक्ति-सिद्धान्त और शास्त्र-तत्त्वके विधि-नियमके अन्तर्गत नहीं हैं। प्यारकी वस्तुकी प्राप्तिकी आशामें, प्रियतमके विरहकी आशङ्कामें नर-नारी विधि-नियमकी दृढ़ शृंखलाको और शास्त्रके उपदेश, गुरुके आदेश एवं युक्ति-सिद्धान्तके कठोर बन्धनको भी बिना किसी बाधाके तोड़ फेंकते हैं।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी श्रीगौराङ्गके उपदेशकी बातें सुनकर भी अनसुनी कर देती हैं। जो बात पकड़ रक्खी है, उसे ही पकड़े हुए हैं—प्राणवल्लभको गृह-त्याग नहीं करने दूँगी। स्त्रियोंके पास जो युक्ति होती है, उन सबका प्रयोग किया। श्रीगौराङ्ग उनको काट न सके। पति संन्यासी हो रहे हैं, इस प्रकारकी बदनामीकी अपेक्षा स्त्रीके लिए इससे मर जाना कहीं अच्छा है। पतिके संन्यासी होने पर साधारणतः लोग इस प्रकारसे स्त्रीकी निन्दा करते हैं। श्रीगौराङ्गकी समझमें यह बात आयी और वे कुछ चिन्तित भी हुए। उन्होंने श्रीमतीजीके सम्मुख पराजय स्वीकार कर ली। श्रीभगवान्, भक्तके सामने सदासे पराजय स्वीकार करते आये हैं। इसीमें उनकी महिमा है। अब श्रीगौर भगवान् वही अपने अन्तिम साधन ब्रह्मास्त्र अर्थात् ऐश्वर्यकी सहायता लेनेके लिए बाध्य हुए। माताके सामने भी उन्होंने अन्तमें यही किया था, श्रीमतीके सामने भी उन्होंने यही किया। श्रीभगवान्‌ने श्रीमतीकी माया हर ली, उनको दिव्य ज्ञान और दिव्य चक्षु प्रदान किये। श्रीमतीजीने अचानक देखा कि उनके पतिके स्थानमें शङ्ख-चक्र-गदा-पद्मधारी चतुर्भुज श्रीविष्णुकी मूर्ति विराजमान है।

आपनि ईश्वर हञा, दूर करे निज माया
विष्णुप्रिया परसन्न चित्त।

स्वयं ईश्वर होकर अपनी मायाको दुरा लिया और विष्णुप्रिया प्रसन्न चित्त हो गई।

दूरे गेल दुःख शोक, आनन्दे भरल बुक	दुःख-शोक दूर हो गये, आनन्दसे
चतुर्भुज देखे आचम्बित ।।	हृदय भर गया। अचानक चतुर्भुज
--चैं० मं०	रूप दिखलाई पड़ा।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी क्षणमात्रके लिए श्रीभगवान्‌की चतुर्भुज मूर्ति देखकर अपनेको कृतार्थ मानने लगीं, उनका चित्त प्रसन्न हो गया। क्षणमात्रके लिए देवीके सारे दुःख-शोक दूर हो गये। परन्तु अपने प्राणवल्लभको न देखकर वे फिर तत्काल विषण्ण हो उठीं। अब चतुर्भुज मूर्ति उनको अच्छी न लगी। घरमें प्राणवल्लभको खोजने लगीं, न दिखलायी देने पर व्याकुल होकर गलेमें वस्त्र डाल चतुर्भुज मूर्त्तिधारी श्रीगौर भगवान्‌के दोनों चरणोंको पकड़कर अत्यन्त कातर स्वरमें कहने लगीं--"प्रभु! अपना चतुर्भुज रूप संवरण करो, तुम्हारा यह रूप मुझको अच्छा नहीं लगता, मैं ऐश्वर्य नहीं चाहती, मैं अबला रमणी हूँ। पति ही मेरे परम देवता हैं, मैं पतिके सिवा न तो कुछ जानती हूँ और न कुछ चाहती हूँ। मेरे स्वामी कहाँ गये? तुम्हारे चरण पकड़ती हूँ, मेरे स्वामीको ला दो।" इतना कहकर श्रीमतीजी प्रभुके चरणोंमें गिरकर रोने लगीं। श्रीभगवान् भक्तके सामने पराजित हो गये। उनका ब्रह्मास्त्र विफल हो गया। ऐश्वर्य और विभूति निष्काम प्रेम और प्रीतिके सामने पूर्णतः पराजित हो गये। श्रीमतीजीकी विजय हुई, प्रभुने हारकर अपने ऐश्वर्यका संवरण किया। तब देवीको दिखाई दिया कि उनके वे हृदय-रत्न प्राणवल्लभ श्रीगौराङ्ग उनको उसी प्रकार गोदमें लेकर बैठे-बैठे प्यार कर रहे हैं, चतुर्भुज श्रीविष्णुमूर्त्ति अन्तर्हित हो गयी है। प्राणवल्लभको देखते ही श्रीमतीजीका दुःख-समुद्र फिर उद्वेलित हो उठा, वे धोखा देकर चले जायँगे--यह बात सोचकर श्रीमतीजी फिर दुःख-सागरमें निमग्न हो गयीं।

ग्रन्थकार-रचित श्रीमतीकी उक्तिका निम्नलिखित पद यहाँ पाठक-पाठिकावृन्दको प्रेमोपहार दिया जाता है। श्रीमतीजीकी उक्ति (चतुर्भुज-मूर्त्तिधारी श्रीगौराङ्गके प्रति)--

देव !

के तुमि हेथा, कह ना कथा।	हे देव! तुम यहाँ कौन?
लुकाले कोथा, आमार नाथ ।।	बोलो तो सही मेरे नाथ कहाँ छिप गये?
तिलेक तरे, ना हेरि जारे।	जिसको तिलमात्र भी नहीं देखनेसे
हय जे शिरे, बजर पात ।।	सिर पर वज्रपात-सा होने लगता है।

(श्रामि) श्रबला नारी, बुझिते नारि, पति ना हेरि पराण जाय।	मैं श्रबला नारी हूँ, समझ नहीं पाती। पतिको न देखकर मेरे प्राण निकल रहे हैं।
सम्बर तेज, हे चतुर्भुज, धरह निज, मायिक काय।।	हे चतुर्भुज! तुम श्रपने तेजका संवरण करो श्रौर श्रपना मायिक शरीर धारण करो।
चाहि ना श्रामि, जगत पति, श्रामार पति, फिराये दाश्रो।	मुझे जगतके स्वामी नहीं चाहिए, मुझे तो मेरे पतिको लौटा दीजिये।
मिनती करि दु'हाते जुड़ि, त्वरा करि, चलिया जाश्रो।।	मैं दोनों हाथ जोड़कर विनती करती हूँ, तुम जल्दी चले जाश्रो।
जे हश्रो तुमि, जगतस्वामि, चाहि ना श्रामि, श्रोरूप तव।	हे जगत्पति! तुम चाहे जो हो, तुम्हारा यह रूप मुझे नहीं चाहिये।
सतीर गति, पराण पति, ताँहार ज्योति, नितुइ नव।।	सतीकी गति उसके प्राणपति हैं, जिनकी ज्योति नित्य नयी रहती है।
बालिका भेबे, भुलाये जाबे, ताहा ना हबे, हे निखिलेश।	तुम मुझको बालिका समझकर भुलावेमें डाल दो, हे निखलेश! यह नहीं हो सकता।
श्रोरूपे तब, मुग्ध ना हब, हे भव धव, जानिश्रो वेश।।	तुम्हारे इस रूपसे मैं मुग्ध नहीं हो सकती, हे जगत्पति! इसको भली भाँति जान लो।
नहि योगिनी, मन्त्र ना जानि, सदाभिमानी, पतिर बले।	न मैं योगिनी हूँ श्रौर न मन्त्र जानती हूँ, सदा पतिके बलकी श्रभिमानिनी हूँ।
पति देवता, मन्त्र दाता, थाकि पतिता, चरण तले।।	पति ही मेरे देवता हैं, मन्त्रदाता गुरु हैं, मैं उनके चरणतलोंमें पड़ी रहती हूँ।
सर्व्वसिद्धि, मोक्ष ऋद्धि, ज्ञान बुद्धि, सकलि तिनि।	वे ही मेरी सर्वसिद्धि हैं, मोक्ष श्रौर ऋद्धि हैं, ज्ञान श्रौर बुद्धि सब कुछ हैं।

ज्ञान गरिष्ठ, तिनिइ कृष्ण, इष्ट-निष्ठ, अन्तरयामी ।।	वे ही ज्ञान-गरिष्ठ, इष्ट-निष्ठ, अन्तर्यामी श्रीकृष्ण हैं ।
तुमिइ किहे, भुलाते मोहे, आसिले गेहे, छलना करि ।	अजी ! तुम कौन हो ? जो छल करके मुझे भ्रममें डालनेके लिए मेरे घर आये हो ?
चक्री तुमि, अबला आमि, चरणे नमि, हुतासे मरि ।।	तुम चक्री हो, मैं अबला हूँ, तापसे जलती हूँ। तुम्हारे चरणोंमें नमस्कार है।
छाड़ हे छल, दुर्ब्बलेर बल, चरणतल, राखह शिरे ।	हे दुर्बलके बल ! छल छोड़कर मेरे शिर पर अपने चरण तलको रखो ।
हे नरवर, रूप सम्वर, स्वरूप धर, देखिहे फिरे ।।	हे नरवर ! इस रूपका संवरण करो । अपने स्वरूपको धारण करो, जिसे मैं फिर देखूँ ।
नाट्या वेशे, हेंसे हेंसे, निकटे बसे, कह गो कथा ।	नटवर वेषमें हँसते-हँसते मेरे पास बैठकर बातें करो ।
पराण भरे, सेरूप हेरे, हृदये धरे, घुचाइ व्यथा ।।	जिससे मैं मन भरकर वह रूप देखूँ और हृदयमें धारण करके अपनी व्यथा दूर करूँ ।

श्री गौराङ्ग श्रीमतीजीकी बातका उत्तर देते हैं। स्वरूपमें श्रीगौराङ्ग (श्रीमतीजीके प्रति)--

पराण सखि, तोमारे देखि, बड़इ सुखी, हलाम आमि ।	हे प्राणसखि ! तुमको देखकर मैं बड़ा सुखी हुआ ।
करि उपेक्षा, महान् भिक्षा, साधन शिक्षा, शिखाले तुमि ।।	महान वस्तुकी उपेक्षा करके साधनकी शिक्षा तुमने दी ।
आमार लागि, विष्णु त्यागी, विषम योगी, तुमि सेजेछ ।	मेरे लिए विष्णुको त्यागकर तुम कठिन योगिनी बनी हो ।
प्रेमेर डोरे, कठिन क'रे, तुमिइ मोरे, दृढ़ बेंधेछ ।।	प्रेमकी डोरसे दृढ़ हाथोंसे तुम्हींने मुझको दृढ़तापूर्वक बाँध लिया है ।

तोमार द्वारे, तोमार घरे, तोमार कोरे, आमार वास।	तुम्हारे द्वार पर, तुम्हारे घरमें, तुम्हारी गोदमें मेरा वास है।
बाँधन छिड़े, तोमाय छेड़े, जेते कि पारे, तोमार दास॥	क्या यह तुम्हारा दास बन्धन तोड़कर तुमको छोड़कर जा सकता है?
हओलो स्थिरा, हे मनोहरा, आमारि किवा, ना कर डर।	हे मनोहरे! तुम शान्त हो जाओ, मेरा और क्या है? तुम भय मत करो।
साध्वी तुमि, हओ संयमी, मरत भूमि, स्वरग कर॥	तुम साध्वी हो, संयमी बनो, इस मृत्युलोकको स्वर्ग बनाओ।
साधने तव, तरिबे भव, विरहे नव सुख उदय।	तुम्हारी साधनासे संसारका उद्धार होगा। विरहमें अभिनव सुख उदय होगा।
से सुख-बिन्दु, प्रेमेर सिन्धु, पराण-बन्धु, ताहाते पाय॥	उस सुखके विन्दुमें प्रेमका सिन्धु होगा जिसमें प्राण-वन्धु प्राप्त होंगे।
विरहे सुखी, साधनोन्मुखी, कखनओ दुःखी, ना हय तारा।	जो विरहके सुखी हैं, वे ही साधनोन्मुखी हैं, वे कभी दुःखी नहीं होते।
विरह अर्थ, साधन-तत्त्व, विरह-मुक्त, लक्ष्य हारा॥	विरहका अर्थ साधनतत्त्व है। जो विरहमुक्त होते हैं, वे लक्ष्य-हारा हैं।
हे विष्णुप्रिये, सुस्थिर हिये, तोमा फेलिये, कोथा ना जाब।	हे विष्णुप्रिये! चित्तको शान्त करो, तुमको छोड़कर मैं कहीं न जाऊँगा।
बसति मोर, हृदिकन्दर, एरूप सुन्दर, अन्तरे भाव॥	मेरा वास तुम्हारी हृदयकन्दरामें है। यह सुन्दररूप अन्तःकरणमें देखो।
बाह्येन्द्रिय, मोर अप्रिय, अन्तर अमिय, आमारे दिओ।	बाह्य इन्द्रियां मुझे प्रिय नहीं हैं। अन्तःकरणमें जो अमृत है, वह मुझे दो।
जखनि डाकिबे, तखनि पाइबे, हृदये बाँधिबे, पराण-प्रिय॥	जिस समय तुम पुकारोगी, मुझे पा जाओगी, इस प्रकार प्राण-प्रियको हृदयमें बाँध रक्खोगी।

जब प्रभुने देखा कि उनके ऐश्वर्यसे श्रीमतीजी भुलावेमें नहीं आयीं, तो वे ऐश्वर्यको समेट लेनेके लिए बाध्य हो गये। उन्होंने माधुर्य दिखलाकर प्रियाको गाढ़ालिङ्गन देकर प्रेमपूर्वक कहा--"प्रियतमे! साध्वि! तुमने मेरे लिए चतुर्भुज मूर्तिधारी श्रीश्रीनारायण मूर्त्तिकी उपेक्षा कर दी। तुम्हारी पतिभक्ति, तुम्हारा पतिप्रेम देखकर मैं मुग्ध हो गया हूँ। क्या मैं तुमको छोड़कर कहीं रह सकता हूँ? तुम मेरे हृदयको अपना नित्य वासस्थान समझो। लोग समझेंगे कि मैंने तुमको त्याग दिया है, परन्तु तुम सर्वदा मेरे हृदयकी अधिष्ठात्री बनकर रहोगी। जब कभी तुम मेरे विरहमें कातर होकर मुझको याद करोगी, तभी मैं तुमको दिखलायी दूँगा। मैं चाहे जहाँ रहूँ, तुमको कभी न भूलूँगा। तुम्हारे अनुरागपूर्वक बुलाते ही तो आ जाऊँगा, मेरी इस बातको सत्य मानना।"

शुन देवि विष्णुप्रिया **तोमारे कहिल इहा** **जखन जे तुमि मने कर।**	हे देवि विष्णुप्रिया! सुनो, तुमसे मैं यह कहता हूँ, जब ही तुम मनमें करोगी–
आमि यथा तथा जाइ **थाकिब तोमार ठाँइ** **एइ सत्य कहिलाम दृढ़॥**	मैं जहाँ कहीं भी रहूँ, तुम्हारे पास आ उपस्थित रहूँगा। यह दृढ़ बात मैंने तुमसे बता दी।

--चै० मं०

● प्रियाजीका आदर्श त्याग और अन्तिम निवेदन

पतिगत-प्राणा श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने स्वामीके आदेशको शिरोधार्य करके छलछलाती हुई आँखोंसे सिर झुकाकर कहा--"प्राणेश्वर! हृदयकान्त! तुम स्वतन्त्र ईश्वर हो। तुम इच्छामय हो, तुम अपने सुखके लिए जो करोगे, उसमें कौन बाधा देगा? तुम्हारे सुखमें ही मुझे सुख है। इस जन्मको मैंने रोनेके लिए ही धारणा किया है, रोते हुए काट लूँगी। इससे यदि तुम्हारा उपकार होता है, तो अवश्य करूँगी। बहुत पुण्योंके बलसे तुम्हारी दासी हुई हूँ। इस उच्चपद, इस सम्पद्को, हे प्रभु! तुम छीन न लेना, दु:खिनी दासी समझकर श्रीचरणोंमें स्थान देना। यही मेरा अन्तिम निवेदन है।"

प्रभु आज्ञावाणी शुनि, विष्णुप्रिया मने गणि
स्वतन्त्र ईश्वर एइ प्रभु।
निज सुखे करे काज, के दिबे ताहाते बाध
प्रत्युत्तर ना दिलेन तभु।।
—चै० मं०

श्रीमतीजी उत्तर दिये बिना न रह सकीं, और उनको कहना ही क्या था? प्रभुसे अन्तिम भिक्षा माँग ली। श्रीमतीजीके तात्कालीन मानसिक भाव ग्रन्थकार रचित निम्नलिखित पद्यांशमें व्यक्त हुए हैं, इसीलिए उसे यहाँ उद्धृत किया गया है।

श्रीचरणे दिये स्थान, जुड़ाओ तापित प्राण तुमि नाथ प्राण-रमण।	हे नाथ! हे प्राण-रमण! तुम श्रीचरणोंमें स्थान देकर मेरे सन्तप्त प्राणोंको शीतल करना।
त्रिजगते नाहि ठाँइ, तुमि भिन्न केह नाइ, जानि मात्र तोमार चरण।।	मेरे लिए तीनों लोकोंमें कोई स्थान नहीं है, तुम्हारे सिवा मेरा दूसरा कोई नहीं है। मैं केवल तुम्हारे चरणोंको जानती हूँ।
चरणे ना ठेले दिओ, प्राणबन्धु प्राणप्रिय दयामय पतित - पावन।	हे प्राणबन्धु! हे प्राणप्रिय! हे दयामय पतित-पावन! मुझे अपने चरणोंसे दूर न हटाना।
जनमेर अभिलाष जीवनेर श्रेष्ठ आश नाथ! तव चरण-वन्दन।।	हे नाथ! मेरी जन्मकी अभिलाषा, जीवनकी श्रेष्ठ आशा तुम्हारे चरण-कमलोंकी वन्दना है।

● प्रियाजीकी फिर कातर अवस्था

श्रीगौराङ्गने प्रगाढ़ अनुरागसे श्रीमतीजीको आलिङ्गन करके अपनी गोदमें बैठा लिया। दोनोंके हृदय काँप रहे थे, दोनोंकी आँखें छल-छल हो रही थीं और दोनों एक दूसरेके मुँह देखते रहे। सरला वालिका विष्णु-प्रियाको वे भुलावेमें डाल रहे हैं, यह विचार कर श्रीगौराङ्गके मनमें सन्तोष नहीं हो रहा है। सरला, पतिप्राणा वालिकाको भुलावा देकर जा रहे हैं,

इससे उनके मनमें व्यथा हो रही है। मुँहसे चाहे जो कुछ बोलें, प्रभु भीतरसे रो रहे हैं, यह उनकी मुखाकृतिसे स्पष्ट झलकता है। श्रीमतीजी सोचती हैं--"मेरे मुँहसे निकल गया है, मैं स्वामीके शुभ कार्यमें बाधा न दूँगी। यह बात मैं मुँह जली क्यों बोल गयी? क्या करते, क्या कर गयी? यह तो दासीका कार्य नहीं है। प्रभुका दासीत्व ही मेरी अतुल सम्पत्ति है, अपने सुखमें मैं आप ही बाधक बन गयी। धिक्कार है मेरे जीवनको, मैं मर क्यों नहीं गयी?"

निस्तब्धता भङ्ग करके श्रीगौराङ्ग श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको कम्पित स्वरमें गद्‌गद भावसे कहने लगे--"विष्णुप्रिये! तुम्हारे जैसी सौभाग्यवती रमणी जगतमें और कौन है? कलिग्रस्त जीवोंके परित्राणके लिए तुमने आज जो उपकार किया है, वह चिरकाल तक स्वर्णाक्षरोंमें मेरे भक्तोंके हृदयमें दृढ़रूपसे अङ्कित रहेगा। तुम्हारे इस स्वार्थ-त्यागकी जगतमें कहीं तुलना नहीं है। कलिग्रस्त जीवोंके कल्याणके लिए तुमने जो कार्य किया है, वह कलिके जीव चिरकाल तक स्मरण रक्खेंगे। मैं जीवोंके मङ्गलके लिए संन्यास-ग्रहण करता हूँ। जीवके दुःखसे मैं विशेष कातर हो रहा हूँ। इस दुःखसे मेरा हृदय जर्जरित है, तुमने मुझको अनुमति देकर इस दुःखको बहुत हल्का कर दिया है। श्रीभगवान् तुम्हारा मङ्गल करेंगे।"

श्रीमतीजीने फिर कोई उत्तर न दिया। प्राणवल्लभके वक्षःस्थलपर मुँह छिपाकर वे चुपचाप रोने लगीं। श्रीमतीजीके अश्रुजलमें प्रभुका वक्षःस्थल डूब गया।

प्रभुने श्रीमतीजीका मुँह पोंछकर आदरपूर्वक कहा--"विष्णुप्रिये! तुम रोना मत, तुम्हारे रोनेसे मेरे प्राणोंको बड़ी व्यथा होती है। सुनो, अभी मैं कुछ दिन तुम्हारे साथ गृहस्थ-धर्मका पालन करूँगा। माताके सामने मैंने प्रतिज्ञाकी है कि कुछ दिन गृहस्थ रहकर उनको सुख पहुँचाऊँगा। पश्चात् जो कुछ कहना होगा, तुम लोगोंसे कहकर करूँगा।"

श्रीमतीजीने इतने भारी दुःखके बीच रहते हुए भी प्रभुके मुखसे यह मधुमय आश्वासवाणी सुनकर कुछ सुख अनुभव किया। उस दिन प्राण-वल्लभके साथ इस सम्बन्धमें और कोई बात न कर दुःखित मनसे निद्रा-ग्रस्त हो गयीं। श्रीगौर-विष्णुप्रिया दोनों ही सो गये।

त्रयोविंश अध्याय

प्रभुका विकट वैराग्य और सबको वैराग्य-शिक्षा

गौराङ्ग बलेन आमार वैराग्य स्वधर्म्म ।	गौराङ्ग बोले—मेरा वैराग्य ही
वैराग्य छाड़िया आमार नाहि कोन कर्म्म ।।	स्वधर्म है। वैराग्यको छोड़कर मेरा
—ज० चै० मं०	दूसरा कोई कर्म नहीं है।

● भक्तोंका घरमें आवाहन

श्रीविष्णुप्रिया-वल्लभको जब तीव्र वैराग्य हुआ तो सांसारिक सुख उनको विषवत् जान पड़ा। पितृकर्म करके गयाधामसे नवद्वीप लौट आकर उन्होंने एक दिन अपने घरके भीतर श्रीअद्वैत प्रभुको एकान्तमें बुलाया। एकान्तमें क्या परामर्श किया, यह किसीको पता न चला। भक्तोंको बुलानेके लिए कहा तो सब भक्तगण प्रभुके घरके भीतर एकत्रित हुए। वैराग्य-योगकी व्याख्या करनेके लिए प्रभुका भीतर-ही-भीतर गुप्तरूपसे यह आयोजन था। प्रभुके मनमें एक निगूढ़ उद्देश्य भी था। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी प्रभुके वैराग्यभावको देखकर विशेष सन्तप्त थीं। उनको वैराग्य-तत्त्वकी शिक्षा देनेके लिए ही प्रभुने यह गुप्त कौशल-जाल फैलाया था। प्रभुने स्वयं वैराग्यकी पराकाष्टा दिखलायी, गौर-वक्ष-विलासिनी श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने भी प्रभुके अनुसार उत्कट वैराग्य-योग साधन किया। उस वैराग्य-तत्त्वको समझानेके लिए ही प्रभुने अपने गृहके अभ्यन्तर अपने भक्तवृन्दको बुलाया है। जयानन्द ठाकुरने अपने चैतन्य-मङ्गल ग्रन्थमें इन सारी बातोंको विशेषरूपसे लिखा है—

एक दिन गौराङ्ग अद्वैतचन्द्रे आनि ।	एक दिन श्रीगौराङ्गने श्रीअद्वैता-
भितर मन्दिरे विष्णुप्रिया ठाकुराणी ।।	चार्यको मन्दिरके भीतर बुलाया,
	वहाँ विष्णुप्रिया ठाकुराणी भी थीं।
श्रीवास पण्डित ठाकुर चारि भाइ ।	पण्डित श्रीवास चारों भाई और
गदाधर पण्डित गोसाञि बसिला तथाइ ।।	गोस्वामी गदाधर पण्डित भी वहाँ बैठे।

हरिदास, ठाकुर जगदानन्द, गोपीनाथे । श्रीवास दास मुरारि गुप्त जोड़ हाथे ।।	हरिदास, ठाकुर जगदानन्द गोपीनाथ, श्रीवास, दास, मुरारि गुप्त हाथ जोड़कर बैठे ।
दामोदर स्वरूप आर दास गदाधर ।। आचार्य्यरत्न राघव पण्डित वक्रेश्वर ।।	स्वरूप दामोदर, गदाधर दास, आचार्य-रत्न चन्द्रशेखर, राघव पण्डित और वक्रेश्वर भी थे ।

समस्त भक्तगण आज प्रभुके अन्तःपुरमें उपस्थित हैं। प्रभुके मनका असली भाव कोई नहीं जानता। प्रभु साधारणतः गृहके बहिःप्रकोष्टमें ही भक्त-सङ्ग करते थे। आज इस नियमका व्यतिक्रम क्यों हुआ ? यह कोई भी समझ नहीं रहा है। इस भक्त-गोष्ठीमें प्रभुके श्वशुर महाशय भी हैं और मौसा भी हैं। खोला* बेचनेवाले दीन श्रीधर भी हैं, पुरोहित महाराज भी हैं।

आचार्य पण्डित श्रीवास, पण्डित सनातन ।
पाटूया श्रीधर, श्रीमान् पण्डित सुदर्शन ।।

भक्तवृन्दमें कोई भी बाकी न था। सभी प्रभुको घेरकर क्रमशः बैठे थे। प्रभुके मनकी बात कोई नहीं जानता था। गौरगृहमें मानो आज चाँदकी हाट लगी थी।

ए सब वैष्णव बसिला सारि सारि । प्रभुर हृदय केह बुझिते ना पारि ।।	बैठ गए वैष्णव सभी लगा-लगाके पाँत । समझ नहीं कोई सका, प्रभु अन्तरकी बात ।।

● प्रभुका विकट वैराग्य

प्रभुको उस समय विकट वैराग्य हो रहा था। बड़ा उग्र स्वभाव हो रहा था। उनकी तात्कालिक अवस्थाका वर्णन ठाकुर जयानन्दने किस प्रकार किया है, श्रद्धा और भक्तिपूर्वक श्रवण कीजिये—

ना लय चन्दनमाला, ना परे वसन । निगमे बसिया थाके, कान्दे सर्व्व क्षण ।।	न चन्दन माला लेते हैं, न (सुन्दर) वस्त्र पहिनते हैं। निश्चेष्ट बैठे रहते हैं और सर्वदा क्रन्दन करते हैं।

* केलेके वृक्षका आवरण।

चाँचर केश ना बान्धे, ना शुने कारो कथा । भोर दुपुर बेला गौर जाये यथा तथा ।।	न घुँघराले बालोंको सँवारते हैं, न किसीकी बात सुनते हैं । सवेरे और दोपहर जहाँ-तहाँ गौर चले जाते हैं ।
गजेन्द्र गमने जाये उलटि ना चाये । आउलाइल माथार केश शची पाछु धाये ।।	गजेन्द्र-गतिसे चलते हैं, उलटकर नहीं देखते । माथेके केश बिखरे पड़े हैं । शची माता पीछे-पीछे जाती हैं ।
कर्पूर ताम्बूल छाड़ि प्रिय कृष्णकेलि । कनक कुण्डल हार हिरण्य मादुलि ।।	कर्पूरयुक्त ताम्बूल, सुन्दर कृष्ण-केलि वस्त्र, कनक कुण्डल, हार, स्वर्ण मादुलि सब छोड़ दिये हैं ।
छाड़िया पालङ्की शय्या भूमे निद्रा जाये । कि रे कि रे करि घन डाके ऊर्द्ध राये ।।	पलङ्गकी शय्या छोड़कर भूमिपर सोते हैं । क्या रे ? क्या रे ? करते हुए ऊर्द्ध दृष्टि किये पुकारते रहते हैं ।
ना करे स्नान गौर ना करे भोजन । ना करे श्रीअङ्गे वेश तैल उद्वर्त्तन ।।	गौर सुन्दर न स्नान करते हैं, न भोजन करते हैं । न श्रीअङ्ग पर वेश-भूषा करते हैं और न तेल-उबटन ।
दूरे गेल सन्ध्या तर्पण देवार्च्चना । दूरे गेल मन्त्र जाप्य तुलसी-वन्दना ।।	सन्ध्या, तर्पण, देवाचर्ना सब छूट गये और मन्त्र-जाप तथा तुलसी-वन्दना भी छूट गई ।
सिंहासन पालङ्क छाड़िञा भूमिशय्या । छाड़िल वृन्दार सेवा कृष्ण-परिचर्य्या ।।	सिंहासन और पलङ्ग छोड़ दिये, भूमिको शय्या बनाया, तुलसी-सेवा और श्रीकृष्ण-परिचर्या छूट गई ।
रत्नकुण्डल हार हिरण्य मादुलि । सुखमय वसन ना परे कृष्णकेलि ।।	रत्न कुण्डल, हार, स्वर्ण मादुलि, सुखमय वसन, कृष्णकेलि धोती पहनना छोड़ दिया ।
विष्णु तैल छाड़ि प्रभु सुगन्धि पराग । चाँचर केश धूलाय धूसर तिन भाग ।।	प्रभुने विष्णु तैल, सुगन्धित पराग छोड़ दिये । घुँघराले बालोंका तीन भाग धूलिसे धूसरित रहता है ।

जे ठाकुर दिव्य माला परे शत शत।
से प्रभुर गले नाम डोर ग्रन्थ कत।।

जो ठाकुर सैकड़ों दिव्य मालाएँ धारण करते थे उन प्रभुके गलेमें अब नाम जाप गिननेकी कितनी ही ग्रन्थियोंवाली डोर रहती है।

जे अङ्गे चन्दनागुरु कस्तुरी सुन्दर।
से अङ्ग कीर्त्तनानन्दे धूलाय धूसर।।

जिन श्रीअङ्गों पर सुन्दर चन्दन, अगरु और कस्तूरी रहती, वे अब कीर्त्तनके आनन्दमें धूलिसे धूसरित रहते हैं।

सुवासित कर्पूर ताम्बुल जार मुखे।
से प्रभु हरीतकी फल खाय कोन सुखे।।

जिनके श्रीमुखमें सुवासित कर्पूर युक्त ताम्बूल रहता, वे प्रभु अब हरीतकी फल खाकर सुखी होते हैं।

महा वैराग्य देखि पार्षद उन्माद।
ता देखि गौराङ्ग सभारे करिल प्रसाद।।
--ज० चै० मं०

ऐसा महावैराग्य देखकर पार्षदगण पागल हो रहे हैं। उन्हें देखकर श्रीगौराङ्ग सबको सान्त्वना देते हैं।

इस प्रकार प्रभुकी अवस्था देखकर पुत्र-वत्सला शची माताके मनमें तथा पतिप्राणा श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके प्राणोंमें कैसी मर्मान्तिक व्यथा होती थी, उसका भाषाके द्वारा वर्णन नहीं हो सकता। श्रीमती केवल प्रभुके चरण-प्रान्तमें पड़कर रोतीं और कहतीं--"हे नाथ! प्राण-धन! जीवन-सर्वस्व! इस दासीको छोड़कर तुम कहाँ जाओगे?"

विष्णुप्रिया ठाकुराणी चरणे पड़िया।
(बोलेन) कोथाय चलिबे प्रभु
आमारे छाड़िया।।

विष्णुप्रिया महारानी चरणोंमें पड़कर कहती हैं--प्रभु! मुझको तजकर कहाँ जाओगे?

शची माताके हृदय-विदारक दुःखको देखकर मालिनी देवी तथा नारायणी देवी रोते-रोते व्याकुल हो उठीं। प्रभुके विकट वैराग्यको देखकर तथा शची-विष्णुप्रियाकी दुःखभाराक्रान्त मर्मान्तिक अवस्थाको देखकर नवद्वीप निवासी सभी नर-नारी बहुत ही दुःखी और म्रियमाण-से हो गये। प्रभुकी धात्री-माता नारायणी और मालिनी देवी विशेषरूपसे अति व्यथित हुईं। वे दिन-रात विलखती रहती थीं।

शचीर करुणा देखि वैष्णवी मालिनी । कान्दिते लागिला धात्री-माता नारायणी ।।	शचीकी करुणा देख वैष्णवी मालिनी और धातृ-माता नारायणी विलखने लगीं ।

● अद्वैत प्रभुके साथ संवाद

प्रभुकी तात्कालिक अवस्था अतिशय शङ्काजनक थी। सभी विशेष चिन्ताग्रस्त थे। श्रीअद्वैत प्रभु और प्रमुख भक्तगण प्रभुको घेर कर उनके अन्त:पुरमें बैठे हैं। प्रभुने उनको अपने घर किस हेतु बुलाया है, यह कोई भी कुछ नहीं जानता। प्रभुके कठोर वैराग्यपूर्ण मलिन श्रीमुखकी ओर सभी ताक रहे हैं। उनका भाव गम्भीर है। कोई कुछ बोल नहीं पा रहा है। प्रभु भी कुछ नहीं बोल रहे हैं। उनका मुखमण्डल पूर्ण वैराग्यभाव-व्यञ्जक है। प्रभु कुछ बोल नहीं रहे हैं—यह देखकर श्रीअद्वैत प्रभु चुप न रह सके। उन्होंने डरते-डरते प्रभुसे पूछा—

अनुमान करि तबे कहिला ईश्वरे । जिज्ञासिला ईश्वरे वैराग्य केन करे ।।	तब अनुमान करके प्रभुसे बोले और उनसे जिज्ञासा की—"प्रभु वैराग्य क्यों करते हैं ?
ईश्वरे वैराग्य सेवके किबा सुख । ईश्वर बैमुख जार संसार विमुख ।।	प्रभुके वैराग्यसे सेवकोंको क्या सुख होगा ? जिससे भगवान् विमुख हो जाते हैं, उससे संसार विमुख हो जाता है ।
सर्व्व भूते अन्तर्य्यामि कि कार्य्य वैराग्ये । सर्व्व सुख आमोद कराह भाग्ये ।। —ज० चै० मं०	आप सब भूतोंके अन्तर्यामी हैं, आपको वैराग्यसे क्या मतलब ? आप हमारे भाग्य सब सुख और आमोद-पूर्ण कर दें ।"

अब इस निगूढ़ वार्ताका कुछ मर्म समझनेकी चेष्टा करें। श्रीअद्वैत प्रभु सर्वज्ञ हैं। उनसे कोई बात छिपी नहीं है। वे प्रभुके भीतरकी सब बातें जानते हैं। प्रभु भी उनके भीतरकी बातें जानते हैं। अद्वैत प्रभुने कहा—

"तुम साक्षात् भगवान् हो, तुम सर्वानन्द हो, सदानन्द हो, सर्व-सुखके आकर हो। हे प्रभु, तुम वैराग्य क्यों ले रहे हो? तुम्हारे सुखमें ही तुम्हारे सेवकोंको सुख है। तुम्हारे दुःखमें तुम्हारे भक्तोंको दुःख है। सेवकोंके मनको सुख प्रदान करना ही तुम्हारा कर्त्तव्य है। तुम उनको दुःख क्यों दोगे? उन्होंने तुम्हारा क्या अपराध किया है? तुम यदि उनके दुःखको न समझकर उनसे विमुख हो जाओगे तो उनको संसारसे क्या प्रयोजन रह जायगा? तुम तो सब जानते हो। जान-सुनकर यह कार्य क्यों करते हो? तुम आनन्दमय हो, सर्व प्रकारके सुखसे, सर्व-भावसे तुम भक्तवृन्दको सुखी करो। उनके भाग्यसे तुम नदियामें अवतीर्ण हुए हो, उनकी आत्माको दुःखी मत करो। उनको साथ लेकर आनन्द करो।"

श्रीअद्वैतप्रभुकी इस बातमें एक गूढ़ रहस्य छिपा है। शची माता तथा श्रीविष्णुप्रिया देवीके हृदयकी मार्मिक व्यथासे वे अवगत हैं। प्रभुके वैराग्यको देखकर प्रियाजी कितनी व्यथित हो रही हैं, उनके कोमल हृदयमें कितना दारुण आघात हुआ है, सर्वज्ञ श्रीअद्वैत प्रभुको यह सब ज्ञात है। इसी कारण सबके सामने प्रभुको वैराग्यसे हटानेके लिए उन्होंने यह बात कही।

प्रभुका भी यही उद्देश्य था। अपनी स्वरूपशक्ति श्रीमती विष्णुप्रिया देवीसे वे कुछ नहीं छिपावेंगे। वे स्वतन्त्र, ईश्वर, तथा इच्छामय हैं। वे जो कुछ करेंगे, उससे निवारण करनेकी क्षमता किसीमें नहीं। गुरुतुल्य वृद्ध श्रीअद्वैत प्रभुकी बात भी नहीं मानी, यह समझकर श्रीमती विष्णुप्रिया देवी प्रभुको वैराग्यसे रोकनेकी चेष्टा न करेंगी--यही समझानेके लिए हमारे रङ्गीले प्रभुका यह अद्भुत लीला-रङ्ग था। श्रीअद्वैत प्रभुकी वे गुरुवत् भक्ति करते थे। शची माता और श्रीमती विष्णुप्रिया देवी यह जानती थीं कि उनकी बातको प्रभु कदापि टाल नहीं सकेंगे। परन्तु प्रभुकी इच्छा और ही थी, उनको दिखलाना था कि वे इच्छामय, स्वतन्त्र ईश्वर हैं। वे पूर्ण स्वाधीन हैं। वे अपनी इच्छाके अनुरूप कार्य करेंगे। कोई उसका विरोध नहीं कर सकेगा। ईश्वरका कार्य उनकी स्वतन्त्रता है। स्वेच्छा-चारिता उनका एक गुण है, वे जीवकी आलोचनाके विषय नहीं हैं। यह सारी तात्त्विक बात समझानेके लिए परम कौशली हमारे प्रभुने श्रीअद्वैत-प्रभुसे गम्भीरतापूर्वक कहा--

गौराङ्ग बलेन आमार वैराग्य स्वधर्म्म ।	गौराङ्ग बोले—वैराग्य ही मेरा
वैराग्य छाड़िया आमार नाहि कोन कर्म्म ।	स्वधर्म है । वैराग्यको छोड़कर दूसरा कोई कर्म नहीं है ।

इन दो शब्दोंमें हमारे पूर्णब्रह्म—सनातन प्रभुने अपने निर्विकार परम-ब्रह्म भावका परिचय दिया है। उनके लिये जैसा संन्यास है वैसा ही सांसारिक सुख। उन्होंने कहा—'वैराग्य आमार स्वधर्म्म'—इस बातका कुछ विचार करना आवश्यक है। वैराग्य श्रीभगवान्‌के षड् ऐश्वर्यमें एक ऐश्वर्य है। जैसे श्रीविष्णुपुराण (६।५।७४) में लिखा है—

ऐश्वर्यस्य समग्रस्य वीर्यस्य यशसः श्रियः ।
ज्ञानवैराग्ययोश्चापि षण्णां भग इतीङ्गना ।।

अतएव वैराग्य उनका धर्म है। केवल धर्म नहीं, उनका स्वधर्म है। स्वयं भगवान्‌के इस वैराग्यरूप ऐश्वर्यका पूर्ण आविर्भाव केवल श्रीगौराङ्ग अवतारमें ही देखनेमें आता है। अन्य किसी अवतारमें श्रीभगवान्‌ने इस ऐश्वर्यको विशेषरूपसे प्रकट नहीं किया। महापुरुष लोग जो कह गये हैं कि श्रीगौराङ्ग अवतार अन्यान्य सारे अवतारोंकी अपेक्षा श्रेष्ठ है, यही उसका एक विशेष कारण है। वैराग्य श्रीभगवान्‌का सर्वश्रेष्ठ ऐश्वर्य है, क्योंकि श्रीभगवान्‌के वैराग्यको देखकर सब श्रेणियोंके जीवोंका हृदय द्रवित हो जाता है, स्थावर-जङ्गम, पशु-पक्षी पर्यन्त भगवद्-भावमें विह्वल होकर श्रीभगवान्‌के पाद-पद्ममें आत्म-समर्पण करते हैं। श्रीभगवान्‌का भी स्वधर्म है, उनको भी उसका पालन करना पड़ता है। अतएव वैराग्य श्रीभगवान्‌की एक विशिष्ट आकांक्षणीय वस्तु है। इसी कारण इसकी गणना उनके श्रेष्ठ ऐश्वर्यमें होती है। श्रीगौराङ्ग प्रभु अपने निवास-स्थानमें बैठकर चौदह वर्षकी सुन्दरी किशोरी भार्याके सामने, शोकातुर वृद्धा माताको सुना-सुना कर इस अपूर्व वैराग्यकी बात कहने लगे। श्रीअद्वैत प्रभु और भक्तमण्डली चुपचाप सुनने लगी। प्रभुके श्रीमुखसे उत्कट वैराग्यकी बात सुनकर उनके मनमें दारुण संशयका उद्रेक हो रहा है। तत्पश्चात् जब उन्होंने उनके श्रीमुखसे ही वैराग्यकी प्रशंसाकी बात सुनी तो उनके मनका सन्देह और भी दृढ़ हो गया। श्रीगौर सुन्दर श्रीअद्वैत प्रभुसे बोले—"वैराग्य छाड़िया आमार नाहि कोन कर्म्म।"

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी यह बात सुनते ही चकित हो उठीं। उनके सिर पर मानों उसी समय वज्रपात हो गया। वे और शची माता बगलके घरमें थीं। प्रियाजी शची माताके क्रोड़में मूर्च्छित होकर गिर पड़ीं। शची माता पुत्रबधूको लेकर वहाँ सङ्कट-ग्रस्त हो गयीं।

सर्वज्ञ प्रभु गम्भीरतापूर्वक समस्त भक्तवृन्दको उस दिन विशिष्टरूपसे वैराग्य-योगकी शिक्षा देनेके लिए बैठे। उन्होंने राजा जडभरतकी कथा उठाई। राजा भरतको कर्मवासनाके फलसे मृगजन्मकी प्राप्ति हुई थी, उसके बाद फिर ब्राह्मणके घरमें जन्म हुआ था। विषयोंसे उत्कट वैराग्य होनेके फलस्वरूप उनको श्रीकृष्णकी प्राप्ति हुई। ये सारी बातें प्रभुने एक-एक करके सब भक्तोंको विशदरूपसे समझाईं। ये सारी बातें कहते-कहते प्रभुने हरिदास ठाकुरको लक्ष्य करके कहा--

सेइ निद्रा सिंहासन पालङ्क उपरे। सेइ निद्रा तृण काष्ठ कुटीर भितरे।।	जो नींद सिंहासन और पर्यङ्क पर होती है, वही नींद तृण-काष्ठकी कुटीके भीतर होती है।
देह माझे करङ्गेते करे जलपान। दुइ जले तृष्णा खण्डे सन्तोष समान।।	पात्रसे जलपान करे, अथवा अञ्जलीसे--दोनोंसे ही तृष्णा बुझती है और समान तृप्ति होती है।
अल्प भाग्ये नहे देहे वैराग्य प्रकाशे। अल्प भाग्ये नहे गुरुचरण प्रवेशे।। --चै० मं०	स्वल्प भाग्यसे किसीको वैराग्य नहीं होता है। स्वल्प भाग्यसे गुरु-पदमें अनुराग नहीं हो सकता।

प्रभुकी ये सारी बातें सुनकर श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने समझा कि निश्चय ही उनका भाग्य फिर गया है। प्रभुके मनके भाव और उद्देश्यको समझकर देवी विशेषरूपसे कातर हो उठीं। उन्होंने अब समझा कि तीव्र वैराग्यकी इन सारी बातोंको समझानेके लिए ही उनके प्राणवल्लभने अपने घरके अन्तः-पुरमें भक्तवृन्दको बुलाया है, उनको ही उद्देश्य करके उनके प्राणवल्लभने ये तीव्र वैराग्यकी बातें उठायी हैं, उनके प्राणवल्लभ वैराग्यके अवतार हैं

और नदियाके अवतारकी पत्नी होकर उनकी तीव्र वैराग्य-योगका अनुष्ठान करना पड़ेगा, जिसका प्रारम्भ प्रभुके इस उपदेशसे होता है। चतुर-शिरोमणि प्रभुने श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको वैराग्यकी शिक्षा देनेके लिए ही यह जाल फैलाया है, इसको बुद्धिमती पतिप्राणा सनातन-नन्दिनी भली भाँति समझती थीं।

श्रीअद्वैत प्रभु तथा उपस्थित सभी भक्तोंने सुना। प्रभु स्वतन्त्र ईश्वर हैं, वे इच्छामय हैं। कौन उनके बीचमें बाधक होगा? पहर भर रात बीतने पर भक्तगण अपने घर वापस गये। प्रभुकी अवस्था देखकर सभी मनमें दुःखी होकर आहें भरने लगे। पुत्र-प्राणा वृद्धा शची माता तथा पतिप्राणा दुःखिनी श्रीमती विष्णुप्रियाकी बात सोच कर सभी आँखोंसे आँसू बहाने लगे। श्रीपाद सनातन मिश्र मानसिक दुःखसे अभिभूत होकर बालकके समान उच्च स्वरसे रो पड़े। आते समय अपनी दुःखिनी कन्याके साथ एक बार भेंट भी न कर सके।

● रात्रिमें प्रियाजीके साथ

उस दिन रातको प्रभुके साथ प्रियाजीका मिलन हुआ। प्रभुने अपने तात्कालिक स्वभावसिद्ध गम्भीरभावसे प्रियाजीको अत्यन्त स्पष्टरूपमें तीव्र वैराग्य-योगकी शिक्षा दी। वह बहुत ही दारुण विषय था।

प्रभु अपने शयनगृहमें पृथ्वी पर सोये हुए हैं। उनके वैराग्यके लक्षणोंको देखकर शची माता और श्रीमती विष्णुप्रिया देवी अत्यन्त ही भीत और चिन्तित हो गयी हैं। प्रभु अब पलङ्गके ऊपर दुग्ध-फेनके समान कोमल शय्या पर शयन नहीं करते। जिस दिन उन्होंने श्रीअद्वैत प्रभु तथा अन्यान्य भक्तोंको अपने घर बुलाकर विषय-वैराग्यकी बात उठाकर नाना प्रकारसे उपदेश दिया, उस दिन रात्रिकालमें प्रियाजीने प्रभुके शयन-गृहमें जाकर देखा, उनके प्राणवल्लभ भूमि पर सोये-सोये अजस्र आँसू बहाते हुए रो रहे हैं। यह देखकर पतिप्राणा सरला बाला श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके हृदयमें कैसी दारुण मर्मव्यथा हुई होगी, कृपालु पाठक-पाठिकावृन्द इसकी मन-ही मन कल्पना करें। उस दारुण मनःकष्ट तथा भीषण मार्मिक पीड़ाका विवरण कल्पनातीत होते हुए भी गौरभक्तोंके ध्यानका विषय है। श्रीमती विष्णुप्रिया

देवीकी तात्कालीन मनकी अवस्था तथा मर्म-व्यथाके विषयको दो दण्डभर स्थिरतापूर्वक ध्यान, चिन्तन और अनुशीलन करने पर मलिन हृदय निर्मल हो जायगा, शुष्क नेत्रोंमें वारिधारा प्रवाहित होगी, काष्ठ-पाषाण भी द्रवित हो उठेंगे। प्रियतम गौरभक्त पाठकवृन्द! कृपया मन स्थिर करके गौर-वक्ष-विलासिनी श्रीविष्णुप्रिया देवीकी तात्कालिक मानसिक अवस्थाको मन-ही-मन एक वार ध्यान करके देखें। श्रीभगवान्‌की श्रीमूर्त्तिका ध्यान तो सभी किया करते हैं, उनके सच्चिदानन्दमय युगल-मिलनरूपका ध्यान करके तो सभी आनन्दानुभव करते हैं। सुखमय और आनन्दप्रद वस्तुके ध्यानमें चित्त प्रेमानन्दमय हो जाता है, इसमें सन्देह नहीं। परन्तु श्रीभगवानकी नर-लीलाकी दुःखमय लीला-कथा, उनकी सर्वोत्तम नर-लीलाके पारिषदोंके भगवत्-विरह-सम्बन्धी उच्छ्वास-तरङ्ग, उनकी लीलाकी प्रधान सहायिका अन्तरङ्गा ह्लादिनी-शक्तिरूपा महालक्ष्मीगणकी हृदय-द्रावक विरहोन्माद अवस्था भी भक्तोंके ध्यानके विषय हैं।

श्रीगौराङ्ग-पार्षद पूज्यपाद श्रीमद् दास गोस्वामी स्वरचित श्रीगौराङ्ग-स्तव-कल्पतरुमें प्रेमोन्माद-दशा-ग्रस्त श्रीकृष्ण-चैतन्य महाप्रभुकी गम्भीरा लीलाके स्मरणमें प्राचीरकी दिवालसे मुख घर्षण करने तथा तज्जनित रक्तपतन-लीला-रङ्गका वर्णन कर गये हैं——

स्वकीयस्य प्राणार्ब्बुद-सदृश-गोष्ठस्य विरहात्
प्रलापानुन्मादात् सततमति कुर्व्वन् विकलधीः।
दधद्भित्तौ शश्वद्वदन-विधु-घर्षेण रुधिरं
क्षतोत्थं गौराङ्गो हृदय उदयन्मां मदयति॥

इन सब विषयोंका चिन्तन करनेसे मनमें जो शोकावेग उठता है, उसका फल भक्तोंकी इन्द्रियोंमें परिलक्षित होता है। अश्रु, कम्प, पुलक, वैवर्ण्य, स्वेद आदि आठ सात्त्विक भावोंके उदय होनेसे जीवके मनकी मलिनता सदाके लिए नष्ट हो जाती है, चित्तका अवसाद दूर हो कर मलिन चित्त शुद्ध हो जाता है। श्रीभगवान्‌की नर-लीलाके सर्वश्रेष्ठ और सर्वोत्तम होनेका यही प्रमाण है। कृपालु पाठकवृन्द श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके मनःकष्ट और मर्म-पीड़ाको भली भाँति समझलें तथा समझकर चुपचाप दो बूंद आँसू गिरा लें। इससे ही आपको सर्वसिद्धि प्राप्त हो जायगी।

कृष्ण-विरहमें अतिशय क्लिष्ट और तीव्र वैराग्य-प्रिय तथा भूमिशय्या पर पड़े पतिदेवताके चरणोंमें प्रियाजी धीरे-धीरे जा बैठीं। प्रभुकी अवस्था देखकर उनका सिर चकराने लगा और वे खड़ी न रह सकीं। प्रभु भूतल पर पड़े-पड़े अपने आप आँसू भरे नेत्रोंसे क्रन्दन कर रहे हैं, प्रियाजी उनके पादमूलमें आ बैठी हैं––इस पर उनका ध्यान ही नहीं गया। कुछ देर श्रीमती विष्णुप्रिया देवी इसी प्रकार चुपचाप अपने पतिदेवताके सब अङ्गोंकी ओर सतृष्ण नेत्रोंसे देखती रहीं। पश्चात् कातरध्वनिसे रोती-रोती अतिशय भय-विह्वल चित्तसे करुण स्वरमें बोलीं––

यथा तथा चल तुमि,
सङ्गे जाइब आमि,
आमा ना छाड़िबे द्विजराज।

जहाँ-जहाँ तुम जाओगे, वहीं-वहीं मैं भी चलूँगी। हे द्विजराज!, मुझे छोड़ना मत।

करिब तोमार सेवा,
सेइ से आमार शोभा
गृह परिजन पड़ु बाज।।

तुम्हारी सेवा करूँगी, इसीमें मेरी शोभा है। गृह परिजनपर भले ही वज्र आ गिरे।

केन कर हेट माथा,
शुनियाछि पूर्व्व कथा
वेद-विहित लोकाचार।

सिर नीचा न करें, पूर्वकथा मैंने सब सुनी है, जो वेद विदित लोकाचार है।

रघुनाथ वनवासे,
जानकी ताँहार पाशे,
अयोध्या छाड़िया सिन्धुपार।।

रघुनाथ जब वन गये तो जानकी उनके साथ रहीं, अयोध्या छोड़कर सिन्धुके पार गईं।

धर्म्मपुत्र युधिष्ठिर,
केवल धार्म्मिक वीर,
पाशारे हारिया निजदेशे।

धर्मपुत्र युधिष्ठिरने––जो केवल धर्मवीर थे––अपना राज्य जुएमें हारकर––

द्रौपदी सङ्गेते करि,
अज्ञात वासेते चलि,
महारण्ये करिल प्रवेशे।।

द्रौपदीको संग लेकर अज्ञातवासके लिये चल पड़े और महा अरण्यमें प्रवेश किया।

नल-दमयन्तीर कथा, शुनेछि यतेकावस्था, एइ से तोमार श्रीमुखे।	नल-दमयन्तीकी कथा और उनकी जो अवस्था हुई, वह सब तुम्हारे ही श्रीमुखसे सुनी है।
शनिग्रहे दोषे तथि श्रीवत्स नरपति, चिन्ता निया भ्रमिला विपाके।।"	शनिग्रहके दोषसे श्रीवत्स नरपति रानी चिन्ताको लेकर कष्टमें भ्रमते रहे।

--ज. चै. मं.

श्रीमती विष्णुप्रियादेवीकी यह हृदय-विदारक, मर्मव्यथाकी करुण-कथा प्रभुने भूतल पर सोये-सोये एक-एक करके सारी सुन ली। उनकी इच्छा थी कि प्रियाजीको तीव्र वैराग्यके विषयमें और उपदेश दें। परोक्षमें यह उपदेश उन्होंने दिया था। अब प्रत्यक्ष दो-एक गुह्य उपदेश देनेके लिए वे जाल बिछाये बैठे थे। प्रभु धीरे-धीरे उठ बैठे, मुँह छिपा रक्खा था, अब वदनको ऊपर उठाया। प्रियतमाके अश्रुपूर्ण कातर मुखचन्द्रकी ओर गम्भीरता पूर्वक एक बार उदास नेत्रोंसे देखा। पुनः अपने मुखचन्द्रको झुका कर धीरे-धीरे विशेषरूपसे कुछ दिव्य ज्ञानकी बातें कहने लगे--

विष्णुप्रियार कथा सुनि गौरचन्द्र मने गुणि, दिव्य ज्ञान कहिल विशेषे।	विष्णुप्रियाकी बात सुनकर, गौरचन्द्र मनमें विचार करके विशेष दिव्य ज्ञानकी बात बोले--
नवद्वीपे वैस तुमि, तोमार पतिक भूमि, सस्त्रीक धर्म्म कभु नहे।।	"तुम्हारे पतिकी भूमि नवद्वीपमें ही तुम रहो, संन्यास-धर्म स्त्रीके साथ नहीं होता।
अरुण उदय काले, अलकनन्दार जले, नित्यरूपी स्नान करिह।	अरुणोदयके समय गङ्गाजलसे नित्य नियम पूर्वक स्नान करना।
आमार यज्ञसूत्र दिव्य धौत खेनि वस्त्र, मन्दिरे आसि नित्य परिह।।	मेरा यज्ञोपवीत और दिव्य धोया हुआ पवित्र वस्त्र मन्दिरमें आकर धारण करना।

आतप तण्डुल मुष्टि, भूमे थुआ एक मुठि, एकटि तण्डुल हाते करिह ।	अरवा चावलोंकी एक मुट्ठी भूमि पर रखकर एक चावल हाथमें लेना ।
हरे कृष्ण हरिनाम, बत्रिश अक्षर नाम साङ्ग हैले से तण्डुल छाड़िह ।।	हरे कृष्ण हरे राम बत्तीस अक्षरोंके महामन्त्रके पूर्ण होने पर उस चावलको छोड़ देना ।
एइ मते जत पार, प्रमाण दुइ प्रहर, से तण्डुल रन्धन करिह ।	इस प्रकार दोपहरतक जितना जप कर सको उन चावलोंका रन्धन करना ।
से अन्न भाजने थुआ, तुलसी मञ्जरी दिया कृष्णे निवेदिया ध्यान करिह ।।	उस अन्नको पात्रमें रखकर तुलसी-मंजरी देकर श्रीकृष्णको निवेदन कर ध्यान करना ।
से महाप्रसाद अन्न केवल तोमारे भक्ष्य, सेइ अन्न भोजन तोमार ।	केवल वह महाप्रसाद अन्न ही तुम्हारे (जीवनके) लिये तुम्हारा भोजन होगा ।
सङ्कीर्तन कराइह वैष्णवेरे अन्न दिह, एइ सत्य पालिह आमार ।।	संकीर्त्तन करवाना, वैष्णवोंको अन्न देना । मेरे इन सत्य वचनोंका पालन करना ।
कार माता पिता पुत्र धन जन बन्धु जत, स्वकर्म्म फलेर भोग भुञ्जिये ।	कौन किसके माता, पिता, पुत्र धन हैं? जितने बन्धुजन हैं, अपने-अपने कर्मोका फल भोगते हैं ।
कृष्ण हेन महाप्रभु ना पासरिह कभु, वैष्णवी मायाय मन मजिये ।।	श्रीकृष्ण जैसे महाप्रभुको वैष्णवी मायामें मन फँसाकर भूल न जाना ।
जत देख चलाचल पद्मपत्रे जेन जल, समुद्र-तरङ्ग हेन वासि ।	जितने चल-अचल देखती हो, वे मानों पद्मपत्रके जलके और समुद्रकी तरङ्गोंके समान हैं ।

जीवन यौवन धन जत गृह परिजन, तिलेक विनाश भस्मराशि ।।	जीवन, यौवन, धन, गृह, परिजन जितने हैं, वे क्षण भरमें विनाश होकर भस्मकी राशि-से हो जायँगे ।
शन सती विष्णुप्रिया हृदये देख चिन्तिया, सब मिथ्या केह कारो नहे ।	हे सती विष्णुप्रिया ! सुनो, हृदयमें विचारकर देखो, सब मिथ्या है, कोई किसीका नहीं है ।
कहिल सकल तत्त्व राखिह आपन महत्त्व, स्त्री सङ्गे सन्न्यास ना हये ।।	सब तत्त्व तुमको बता दिया । अपना महत्त्व बनाये रखना । संन्यास स्त्रीके साथ नहीं होता है ।"

ज० चै० मं०

यहाँ प्रभुकी इन बातों पर थोड़ा विचार करें। उन्होंने सबसे पहले प्रियाजीसे कहा--"तुम नवद्वीपमें रहो, नवद्वीप तुम्हारे पतिका घर है, तुमको मैं सङ्ग नहीं ले जा सकता, क्योंकि स्त्रीको सङ्ग रखनेसे (संन्यास) धर्म नहीं होता।" यहाँ प्रभुने प्रियाजीसे तीन बातें कहीं हैं। प्रथम 'तुम नवद्वीपमें रहो'--इसका गूढ़ अर्थ है। प्रभु जानते हैं कि वे संन्यास ग्रहण करके नवद्वीपमें फिर नहीं आ सकते। नवद्वीप उनकी नित्य-लीला-स्थली, परम धाम है। अनादि-अनन्तकाल तक वे युगलमूर्त्तिमें इस नित्य-धाममें नित्य-लीला करते हैं। इस बातको वे अभी खोलकर प्रियाजीसे नहीं कह सके, क्योंकि वे प्रच्छन्न अवतार हैं। 'तुम नवद्वीपमें रहो'--इसका गूढ़ अर्थ यह है कि "तुम जहाँ हो, मैं भी वहाँ ही हूँ, तुम नवद्वीपमें रहोगी तो मैं भी नवद्वीपमें रहूँगा।" दूसरी बात है--'नवद्वीपमें तुम्हारे पतिका घर है'--पतिगृहमें ही स्त्रियोंका वास सर्वथा विधेय है। पतिगृह ही स्त्रियोंका अपना वास-स्थान है। नदिया नित्य धाम है, श्रीश्रीनदिया-युगलकी नित्य-युगल-विलास-रास-स्थली है, इस नित्यधाम श्रीनवद्वीपको छोड़कर तुम अन्यत्र कहीं नहीं जा सकती--प्रभुके मनका यही भाव है। तीसरी बात है--'स्त्रीको सङ्ग रखनेसे धर्म नहीं होता'--प्रभुका यह वचन 'सस्त्रीको धर्ममाचरेत्' इस महद्वाक्यका विरोधी है। यहाँ धर्म शब्दका अर्थ विभिन्नरूपसे समझना ठीक होगा। प्रियाजीने पहले ही श्रीरामचन्द्र, युधिष्ठिर, राजा नल, राजा श्रीवत्स आदिके सस्त्रीक धर्म-आचरणकी बात

उठाकर इस कार्यको 'वेद-विहित लोकाचार' कहा है। प्रभु इसके उत्तरमें कहते हैं--'स्त्रीको सङ्ग रखनेसे धर्म नहीं होता।' इस स्थलमें धर्म शब्दका अर्थ है--परमहंस--भागवत संन्यास-धर्म है। श्रीगौर भगवान्‌के षड् ऐश्वर्यमें एक ऐश्वर्य है वैराग्य। सार्वभौम भट्टाचार्यने इसको 'वैराग्य-विद्या' संज्ञा दी है। यह वैराग्य-धर्म, जिसका स्वयं आचरण करके प्रभुने जीवको उपदेश दिया है, सस्त्रीक आचरणीय नहीं है, यह गार्हस्थ्य-धर्मके अन्तर्गत नहीं है। यह पूर्ण स्वतन्त्र वस्तु है। श्रीरूप, सनातन, रघुनाथ दास गोस्वामी, श्रीगदाधर पण्डित, श्रीस्वरूप दामोदर, दामोदर पण्डित, जगदानन्द पण्डित आदि प्रभुके अन्तरङ्ग नित्य पार्षदगण प्रभुकी कृपासे इस परमहंस-धर्ममूलक भागवत वैराग्य-विद्याकी शिक्षा प्राप्त कर स्वधर्माचरण करके कलिके प्राणीको वैराग्यकी शिक्षा दे गये हैं। इस प्रकारके संन्यास-धर्ममें प्रकृतिके मुखका दर्शन निषिद्ध है। हमारे प्रभु इसी प्रकारके भागवत यतिधर्मको ग्रहण करेंगे, इसी हेतु कहते हैं--'स्त्रीको सङ्ग रखनेसे धर्म नहीं होता।'

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको प्रभुने तीव्र वैराग्यका उपदेश दिया। प्रभुके संन्यास-ग्रहणके बाद जबतक शची माता जीवित रहीं, तब तक श्रीविष्णुप्रिया देवीने प्रभुके दिखलाये इस उत्कट वैराग्यके मार्गका सम्यक् अवलम्बन नहीं किया, क्योंकि प्रभुने इसका निषेध किया था। शची माताके अप्रकट होने पर विरहिणी गौर-वल्लभाके हृदयमें यह उत्कट वैराग्य-योग उदित हुआ। श्रीअद्वैत प्रभुने अपने विश्वासी अनुचर और प्रियतम मन्त्रशिष्य श्रीईशान नागरको नवद्वीप भेजकर श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी तात्कालिक अवस्था अपनी आँखों देखकर उनसे निवेदन करनेका आदेश दिया था। श्रीईशान नागरने जो देखा, उससे उनका हृदय दुःखसे विह्वल हो उठा और रोते हुए शान्तिपुर लौटकर श्रीअद्वैत प्रभुके चरणोंमें निवेदन किया था, प्रियाजीके प्रति उनके प्राणवल्लभके द्वारा आदिष्ट तीव्र वैराग्यके उपदेश यहाँ वर्णित हुए हैं। प्रियाजीने जो कुछ किया था, वह सब अपने प्राणवल्लभके उपदेशके अनुसार ही किया था। प्रभुने अपनी चतुर्दश वर्षीया सरला बालिका गृहिणीको किस प्रकारके तीव्र वैराग्यके आचरणका उपदेश दिया था, इसे सुनकर सबका शरीर सिहर उठता है। सोलह नाम, बत्तीस अक्षरके तारक ब्रह्म 'हरे कृष्ण हरे राम' का एक बार जप करके एक-एक तण्डुल मिट्टीके पात्रमें रखते जाना।

दो पहरके समय इस प्रकार विधिवत् जपके द्वारा एकत्रित सारे तण्डुलोंको एकत्र करके उन्हें पकाकर ठाकुरजीको भोग लगाना। वही प्रसाद प्रियाजीके प्राण-धारणके लिए ग्रहणीय था। परन्तु प्रियाजी उस प्रसादमें-से भी भक्तोंको कुछ-कुछ बाँट कर जो कुछ बचता, वही प्राणरक्षार्थ ग्रहण करती थीं। प्रभुके सुतीव्र वैराग्य तथा प्रियाजीके द्वारा अनुष्ठित उत्कट वैराग्यमें कुछ भी भेद नहीं था। भेद होता भी कैसे? शक्ति और शक्तिमान दोनों ही एक वस्तु है, केवल लीलाके उद्देश्य मात्रसे देह-भेद हुआ है। प्रभुने अपनी प्रियाजीको नवद्वीपमें क्यों रक्खा? यह पहले ही कहा जा चुका है। उनको नवद्वीपमें रखनेका एक और कारण है। उसको प्रभुने प्रियाजीसे उसके बाद खुलकर कह दिया--

सङ्कीर्त्तन कराइह वैष्णवेरे अन्न दिह।	संकीर्त्तन कराइयो, भक्तनको प्रसाद दियो
एइ सत्य पालिह आमार ।।	मानियो यह मेरी बात ।।

प्रभुने प्रियाजीको यह आदेश दिया था लोकशिक्षाके लिए। नदिया-वासी सब नर-नारियोंने प्रभुके कहनेसे हरिनाम नहीं लिया। इसी दुःखसे हमारे प्रभुने गृह-त्याग करके संन्यास ग्रहण किया। उस अति दुरूह कार्य-भारको प्रभु हमारी नवीना प्रियाजीके ऊपर छोड़कर चले गये। प्रियाजीने किस प्रकार प्रभुके आदेशसे यह जीवोद्धार-कार्य सम्पन्न किया, यह बात पीछे कही जायगी। प्रभुने जो बाकी रक्खा था, प्रियाजीने उसे सम्पन्न किया। यह सब अति निगूढ़ वेद-गोप्य वस्तु है। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी महाप्रभुकी स्वरूप शक्ति हैं, उनकी अलौकिक शक्तिकी सहायतासे जीवोद्धार-कार्य कैसे सम्पन्न हुआ था और हो रहा है, यह अनेक बार कहा जा चुका है। और प्रयोजन होने पर सैकड़ों-हजारों बार कहूँगा।

जीवनमें मरणमें गौर-वक्ष-विलासिनी सनातननन्दिनी श्रीविष्णुप्रिया देवीके इन गुणोंको निरन्तर गाते हुए शरीर-त्याग करके आत्म-शुद्धि कर सकूँ--श्रीश्रीगौर-गोविन्दके रसिक भक्तोंके चरणोंमें इस जीवाधम लेखककी यही कातर प्रार्थना और विनीत निवेदन है। कलिके जीवोंका उद्धार करने-वाली, पतितोद्धारिणी, गौर-वल्लभा श्रीविष्णुप्रिया देवीकी अपूर्व लीला कथा, श्रीश्रीनवद्वीप-सुधाकर श्रीविष्णुप्रिया-वल्लभकी अमृतमयी लीला-कथाके साथ ओत-प्रोत होकर मिली हुई है। अगाध असीम गौराङ्ग-लीला-सिन्धुके

अनन्त माधुर्यपूर्ण रसास्वादनका लोभ भी महा सौभाग्यशील गौरभक्तोंके लिए अवज्ञापूर्वक छोड़नेकी वस्तु नहीं है। श्रीगुरु निताई-गौराङ्ग तथा गौर-भक्त महापुरुषोंकी कृपासे यह लोभ और सौभाग्य कलि-ग्रस्त जीवोंके सन्तप्त हृदयमें कभी-कभी उदय होता है। जिनका भाग्य अति उज्ज्वल है वे ही श्रीमन्महाप्रभुके साथ उनकी मुख्य शक्ति, प्रेमभक्ति स्वरूपिणी और गौर-वक्ष-विलासिनी श्रीविष्णुप्रिया देवीके अपूर्व नदिया-युगल-विलास-रस-रङ्ग तथा मधुर लीला-रसका आस्वादन करके अपनेको कृतार्थ और धन्य मानते हैं। सपार्षद श्रीगौराङ्गकी वन्दनामें प्राचीन महात्मा कवि नरहरि दास लिखते हैं—

लक्ष्मी-विष्णुप्रिया देवी	लक्ष्मीप्रिया, विष्णुप्रिया,
निज गण सने।	और निज गण।
कृपा कर नदीयार	कृपा करें नदिया-
विहार रहु मने।।	लीला रहे मन।।

करुणामय प्रभु हमारी वैष्णव-जननी प्रियाजीको इस प्रकार तीव्र वैराग्य-योगकी शिक्षा देकर मन-ही-मन कुछ सन्तप्त हो उठे। नवबाला विष्णुप्रियाकी नव वयस, नवीन यौवनका प्रारम्भ मात्र था। ऐसी अल्प वयसमें इस प्रकारके तीव्र वैराग्य-योगकी साधना संभव नहीं है, यह प्रभु खूब जानते थे। इसके सिवा प्रियाजीका मलिन मुख, नीरव क्रन्दन और उदास भाव देखकर प्रभुने समझा कि औषधके फलीभूत होनेमें सन्देहकी गुंजाइश है। यह बात जैसे ही प्रभुके मनमें उठी, वैसे ही वे दृढ़ सङ्कल्प होकर पुनः उनको पतिधर्मके विषयमें उपदेश देने लगे। वे जानते थे कि साध्वी स्त्रियोंके लिए पतिधर्म ही परम धर्म है, सर्वोच्च और सर्वश्रेष्ठ धर्म है। उन्होंने जिस कठोर व्रतका पालन करनेके लिए श्रीविष्णुप्रिया देवीको आज्ञा दी है, उस आज्ञाका पालन करना ही उनका सर्वश्रेष्ठ धर्म है—इस वार प्रभुने यही बताया। पतिव्रता नारीके लिए पतिकी आज्ञाका पालन करनेके सिवा दूसरा कोई धर्म-कर्म नहीं है। इसी कारण प्रभुने इस वार स्त्रियोंके पतिधर्मका उल्लेख करके रोती हुई प्रियाजीको जो उपदेश दिया उसे भक्तिपूर्वक सुनिये—

पतिधर्म्म रक्षा करे सेइ प्रतिव्रता।	पतिधर्म रक्षा करे वही पतिव्रता।
नवद्वीपे विष्णुप्रिया तुमि कल्पलता॥	नदियामें विष्णुप्रिया ! तुम कल्पलता॥
शुन शुन विष्णुप्रिया ना कर क्रन्दन।	सुनो सुनो विष्णुप्रिया ! न करो क्रन्दन।
पति-आज्ञा लङ्घिले कि धर्म्मे प्रयोजन॥	धर्म नहीं जहाँ पति आज्ञा उलङ्घन॥

--ज. चै. मं.

अन्तमें हमारे सर्वज्ञ प्रभुने पति-भक्तिके चरम सिद्धान्तोंको बतलाया। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने चुपचाप धैर्यपूर्वक सुना। अब तक उन्होंने मुँह खोलकर एक बात भी नहीं की। उनके दोनों नेत्र प्रभुके चरण-कमलोंकी ओर लगे थे, प्रभुके चरणोंमें वे बैठी हुई थीं और उनके श्रीमुखसे तीव्र वैराग्यकी बात सुन रही थीं। प्रियाजीका मुँह सूख गया था, बीच-बीचमें गर्म-गर्म लम्बी साँसे ले रही थीं, कमल-नयनोंकी अश्रुधारसे अञ्चल भीग रहा था। हमारे जगद्गुरु प्रभु जीवोंके लिए परम कल्याणप्रद उपदेश दे रहे थे। प्रियाजीके साथ प्रभुका इस समय गुरु-शिष्य सम्बन्ध था। प्रभु जगद्गुरुका कर्त्तव्य-कर्म निबाह रहे थे। उन्होंने फिर उसी कठोर व्रतानुष्ठानकी बात उठा कर प्रियाजीको गम्भीरता पूर्वक कहा--

अरुण उदय-काले गङ्गा स्नान करि। मन्दिरे आसिया दिव्य धौत-वस्त्र परि॥	अरुणोदयके समय गङ्गा-स्नानकर मन्दिरमें आकर दिव्य धोया हुआ पवित्र वस्त्र धारण कर--
एक मुष्टि आतप तण्डुल भूमे फेलि। एकटि तण्डुल लइया हरेकृष्ण बलि॥	एक मुट्ठी अरवा चावल भूमि पर रखकर, एक चावल लेकर 'हरे कृष्ण...' कहकर--
हरि-नाम बत्रिश अक्षर हैले॥ सेइ तण्डुल गुटि थुवे गङ्गाजले॥	हरिनामके बत्तीस अक्षर होने पर जितने चावल हों, उनको गंगाजलमें धोकर--

एइ मत तिन प्रहर जत पार।
रन्धन करिया कृष्णे निवेदन कर।।

इस प्रकार तीन प्रहरतक जितना जप कर सको, उतने चावलोंका रन्धन कर श्रीकृष्णको निवेदन करना।

सेइ अन्न भक्षण कर देह रक्षा हेतु।
तोमार चरित्र लोके धर्म्म-शिक्षा-सेतु।।
—ज. चै. मं.

अपनी देह रक्षा हेतु केवल उन्हीं चावलोंका आहार करना। तुम्हारा यह चरित्र लोक शिक्षाके लिये है।

प्रभुकी यह सारी कठोर और कठिन आदेश-वाणी श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने धैर्य पूर्वक सुनी। यही बात एक बार पहले भी उन्होंने कही थी। इस बार फिर कह गये। पहले दिन दो पहर तक इस प्रकारके कठोर व्रताचरण करनेका उपदेश दिया था। इस बार बोले कि तीन पहर तक जितना हो सके इसी प्रकार श्रीहरिनाम लेते रहना। इससे देवीके मनमें हुआ कि प्रभु उनकी कर्तव्य-निष्ठामें सन्देह कर रहे हैं। यह सोचकर उनके मनमें बड़ा दुःख हुआ। वे दुःख भला किससे कहतीं ? मनका दुःख मनमें ही दबाकर रखनेसे नेत्रोंकी अश्रुधारामें वह प्रकट होता है। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी भी यही हालत हुई। उनके दोनों नेत्रोंसे प्रबल वेगसे झर-झर अश्रुधार बहकर उनके अञ्चलको भिगोने लगी। प्रियाजीके नयन-श्रोतसे घरकी भूमि भीग उठी। वैष्णव-जननीका उष्ण नेत्र-जल जगद्गुरु प्रभुके पाद-पद्मोंको धोने लगा। तब प्रभुने देखा और समझा कि औषध सफल हुई है। अब कुछ सान्त्वना देनेकी आवश्यकता हुई, इस समय कुछ तीव्र वैराग्य-योगका फल बतलाना आवश्यक हुआ। यह सोचकर प्रियाजीको उन्होंने आदरपूर्वक मधुर वचनसे 'वैष्णव-जननी' कहकर सम्बोधन किया। नवद्वीप-रक्षाका गुरुतर भार वैष्णव-जननी प्रियाजीके हाथमें देकर कर्त्तव्य-परायण, सूक्ष्मदर्शी प्रभु उनको सुमधुर सान्त्वनाके वचन बोले—

शुन सति, विष्णुप्रिया वैष्णव-जननी।
नवद्वीप रक्षा कर चिन्त मने गुणि।।

हे विष्णुप्रिया वैष्णव-जननी सती ! सुनो और उसका चिन्तन-मनन करके नवद्वीपकी रक्षा करो।

कलिकालसर्पे दंशिबे सर्व्वजीवे। सङ्कीर्त्तन बिना किछु ना करल सबे।।	कलिकाल रूपी सर्प सब जीवोंको दंशेगा, संकीर्त्तनके बिना किसीका कुछ भी नहीं बन पायगा।
तुमि ना थाकिले हबे सङ्कीर्त्तन बाद। नवद्वीप लैञा ह'बे बड़इ प्रमाद।।	तुम्हारे न रहनेसे संकीर्त्तन भी बन्द हो जायगा और नवद्वीपमें बड़ा प्रमाद होने लगेगा।
महान्त वैष्णव उदासीने हवे द्वन्द्व। तुमि सभार मा पुत्रे कराबे आनन्द।।	महन्त, वैष्णव और उदासीनोंके बीच द्वन्द्व छिड़ जायगा। तुम सबकी माँ हो, पुत्रोंको आनन्द देना।
बाप शून्य पुत्र जीवे माय शून्य मरे। इहा जानि थाक सति नवद्वीपपुरे।।	बापके बिना तो पुत्र जीवित रह सकता है, माताके बिना मर जाता है। यह समझकर हे सती ! नवद्वीपमें रहो।
आमार वचन सति कर अवधान। तोमार शाशुड़ी जेन दुःख नाहि पान।। ——ज. चै. मं	हे सती ! मेरे वचनों पर ध्यान दो। देखो, तुम्हारी सास दुःख नहीं पावे।

यहाँ कृपालु पाठकवृन्द प्रभुकी उपर्युक्त बातों पर कुछ विचार करें। हमारे सर्वज्ञ प्रभु सर्वदर्शी हैं। उन्होंने पहले ही श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको 'वैष्णव-जननी' विशेषण प्रदान किया। नवद्वीपमें अनेक पतित और पाखण्डी रहते हैं। उन्होंने प्रभुके द्वारा मधुर हरिनाम ग्रहण नहीं किया। उनके उद्धारके लिए ही प्रभुका यह संन्यास ग्रहण है। वे तो नवद्वीपमें रह नहीं सके, इसलिए इस गुरुतर भारको प्रधाना शक्तिके कन्धे पर डालकर निश्चिन्त हो गये। स्वयं भगवान् हमारे प्रभुने उसके बाद युगधर्मकी बात उठायी। 'कलौ तद्धरिकीर्तनात्'——श्लोकका मर्म समझाते हुए प्रभुने प्रियाजीसे कहा—— तुम नवद्वीपमें नहीं रहोगी तो मेरे इस स्पृहणीय हरि-सङ्कीर्तनमें बाधा पड़ेगी और इससे नवद्वीपमें बड़ा प्रमाद हो जायगा। क्योंकि नवद्वीपके लोगोंमें जो कुछ विष्णु-भक्ति हुई है, वह केवल युगधर्म हरिनाम-सङ्कीर्तनके बलसे हुई है। इसी कारण प्रियाजीसे प्रभुकी यह कातर प्रार्थना है कि उनके इस परम

अभिलषित सङ्कीर्तनमें कोई बाधा न पड़े। हमारे प्रभु 'सङ्कीर्तनैक पितरौ' हैं और हमारी जगज्जननी विष्णुप्रिया 'सङ्कीर्तन-जननी' हैं। पिता शिशु पुत्रोंके लालन-पालनका भार माता पर सौंपकर निश्चिन्त हो गये। केवल इतना ही नहीं, प्रभुने एक और अति मधुर बात कही। उदासीन वैष्णव, गृहस्थ वैष्णव, महन्त आदिमें जब वाद-विवाद खड़ा हो तो श्रीमती विष्णुप्रिया देवी मध्यस्थ होकर सारे विवादोंको शमन करके सबके मनमें शान्ति और आनन्द प्रदान करें। रङ्गीले प्रभुने प्रियाजीके साथ एक रङ्गीली बात की। यद्यपि इस समय ऐसी रङ्गीली बातका अवसर न था। तथापि रसराज नदिया-नागरने अपना रङ्ग जमाया ही। उन्होंने प्रियाजीसे कहा--"विष्णुप्रिये! तुम नवद्वीप छोड़ न सकोगी। मैं नदिया छोड़कर जा रहा हूँ। नदियाके निवासी मेरे प्राणोंके समान हैं, वे मेरे लिए पुत्रकी अपेक्षा भी प्रियतम हैं। पितृविहीन बालक मातृस्नेहसे पालित होते हैं, परन्तु मातृहीन बालक माताके स्नेहके अभावमें मर जाते हैं। तुम यहाँ न रहो तो नदियावासी भक्तवृन्द प्राण छोड़ देंगे। उनके सामने मेरी अपेक्षा तुम्हीं बड़ी हो।" हमारे प्रभुने यहाँ भागवतके उत्तमश्लोक 'मद्भक्तपूजाभ्यधिका' भगवद्वाक्यके मर्मकी व्याख्या की है। गौर-वल्लभा प्रियाजी श्रीगौर भगवान्‌की सर्वश्रेष्ठ प्रियतम भक्त हैं। भक्त-गोष्ठीकी समष्टिरूपा हैं। उनके समान प्रिय भक्त कौन है? इसी हेतु चतुर-चूड़ामणि प्रभुने भक्तका मान बढ़ाकर चतुराईके साथ यह बात कही है। भक्तका मान बढ़ानेके लिए हमारे प्रभु सदा व्याकुल रहते हैं। समय पाकर यहाँ भी श्रीगौराङ्ग प्रभुने प्रियाजीके तत्त्व और महिमाको प्रकट किया है। इसके बाद प्रभुने सोचा कि प्रियाजीको कठोर वैराग्य-योगका उपदेश तो दिया, परन्तु वृद्धा जननी अभी विद्यमान हैं और उनके हृदयमें शूल बनकर श्रीमती विष्णुप्रिया देवी घर पर रहेंगी। इस अल्प वयसमें यदि अभीसे इस प्रकार कठोरता अवलम्बन करके वे भजन-साधन करती हैं तो वृद्धा जननीके हृदयमें कष्ट पर कष्ट विषम होते जायँगे और वे जीवनसे हाथ धो बैठेंगी। इसी कारण हमारे प्रभुने सङ्केतसे ही प्रियाजीसे कहा कि यह सब सोचकर वैराग्ययोगकी जो बात मैंने तुमसे कही है, कठोर व्रतानुष्ठानका जो उपदेश तुमको दिया है, वह अभी तुम्हारे लिए कर्त्तव्य नहीं है, जब तक मेरी वृद्धा जननी जीवित हैं, तब तक वह आचरणीय नहीं है। अतएव प्रभु बोले—

आमार वचन सति कर अवधान।
तोमार शाशुड़ी जेन दुःख नाहि पान।।

प्रियाजी अत्यन्त बुद्धिमती हैं। प्रभुके सङ्केत-वाक्यको समझना उनके लिए बाकी न रहा। अपने हृदयबल्लभकी बातके अभिप्रायको समझकर चुपचाप प्रभुके सारे उपदेश-वाक्य स्वीकार कर लिये।

इतनी बातें प्रभुने प्रियाजीसे कहीं, परन्तु प्रियाजीके मुखसे एक शब्द भी न निकल सका। वे केवल सुनती जा रही हैं, यह देखकर प्रभुके मनमें साहस हुआ। और भी दो एक अन्तिम बातें कहनेका सुयोग देखकर उन्होंने भक्त-पूजाका विषय उठाया। प्रभुने प्रियाजीसे कहा--"देखो, हमारे भक्तगण हमारी अपेक्षा बड़े हैं। इस नवद्वीपमें मेरे अगणित भक्त विराजते हैं। उनमेंसे कुछका नामोल्लेख मैं करता हूँ। उनमेंसे एक-एक वैष्णवमूर्ति हैं, उनको मेरी अपेक्षा बड़ा मानकर पूजा करना।"

गङ्गा विष्णु पूजा, नवद्वीपे संकीर्त्तन।
तुलसी, अद्वैत, नित्यानन्द प्राणधन।।
हरिदास ठाकुर, पण्डित श्रीनिवास।
गदाधर पण्डित, गोंसाञि आदि सुप्रकाश
श्रीरामदास, जगदानन्द, वक्रेश्वर।
द्वादश विग्रह मुञि सबाकार पर।।
--ज० चै० मं०

गंगापूजन, विष्णुपूजन, नवद्वीपमें संकीर्त्तन, तुलसीपूजन, अद्वैताचार्य, प्राणधन नित्यानन्द, हरिदास ठाकुर, पण्डित श्रीवास, गदाधर पण्डित, श्रीरामदास, जगदानन्द पण्डित, वक्रेश्वर--ये सभी प्रसिद्ध गोसाईं हैं, ये द्वादश विग्रह मैं ही हूँ, इनको सबसे श्रेष्ठ जानना।

श्रीविष्णुप्रिया देवीने प्रभुके मुखके सारे उपदेशोंको कण्ठहार बना लिया। यह देखकर कि वे किसी बातका उत्तर नहीं दे रही हैं, श्रीगौराङ्ग प्रभु उन्हें अन्तिम बात सुना कर विरत हो गये। वह अन्तिम बात है--

विष्णुप्रिया! मने किछु ना भाविह आर।
तोमारे छाड़िते जेन विषम संसार।।

हे विष्णुप्रिया! मनमें और कुछ विचार न करना, तुमको छोड़ते संसार विषम-सा लगता है।

आमि यदि वैराग्य ना करिब संसारे।
वेद निन्दा कलियुगे धर्म्म ना प्रचारे।।

मैं यदि संसारमें वैराग्य नहीं करूँगा तो कलियुगमें वेदकी निन्दा होगी, धर्मका प्रचार नहीं होगा।

अभिलषित सङ्कीर्तनमें कोई बाधा न पड़े। हमारे प्रभु 'सङ्कीर्तनैक पितरौ' हैं और हमारी जगज्जननी विष्णुप्रिया 'सङ्कीर्तन-जननी' हैं। पिता शिशु पुत्रोंके लालन-पालनका भार माता पर सौंपकर निश्चिन्त हो गये। केवल इतना ही नहीं, प्रभुने एक और अति मधुर बात कही। उदासीन वैष्णव, गृहस्थ वैष्णव, महन्त आदिमें जब वाद-विवाद खड़ा हो तो श्रीमती विष्णुप्रिया देवी मध्यस्थ होकर सारे विवादोंको शमन करके सबके मनमें शान्ति और आनन्द प्रदान करें। रङ्गीले प्रभुने प्रियाजीके साथ एक रङ्गीली बात की। यद्यपि इस समय ऐसी रङ्गीली बातका अवसर न था। तथापि रसराज नदिया-नागरने अपना रङ्ग जमाया ही। उन्होंने प्रियाजीसे कहा--"विष्णुप्रिये! तुम नवद्वीप छोड़ न सकोगी। मैं नदिया छोड़कर जा रहा हूँ। नदियाके निवासी मेरे प्राणोंके समान हैं, वे मेरे लिए पुत्रकी अपेक्षा भी प्रियतम हैं। पितृविहीन बालक मातृस्नेहसे पालित होते हैं, परन्तु मातृहीन बालक माताके स्नेहके अभावमें मर जाते हैं। तुम यहाँ न रहो तो नदियावासी भक्तवृन्द प्राण छोड़ देंगे। उनके सामने मेरी अपेक्षा तुम्हीं बड़ी हो।" हमारे प्रभुने यहाँ भागवतके उत्तमश्लोक 'मद्भक्तपूजाभ्यधिका' भगवद्वाक्यके मर्मकी व्याख्या की है। गौर-बल्लभा प्रियाजी श्रीगौर भगवान्‌की सर्वश्रेष्ठ प्रियतम भक्त हैं। भक्त-गोष्ठीकी समष्टिरूपा हैं। उनके समान प्रिय भक्त कौन है? इसी हेतु चतुर-चूड़ामणि प्रभुने भक्तका मान बढ़ाकर चतुराईके साथ यह बात कही है। भक्तका मान बढ़ानेके लिए हमारे प्रभु सदा व्याकुल रहते हैं। समय पाकर यहाँ भी श्रीगौराङ्ग प्रभुने प्रियाजीके तत्त्व और महिमाको प्रकट किया है। इसके बाद प्रभुने सोचा कि प्रियाजीको कठोर वैराग्य-योगका उपदेश तो दिया, परन्तु वृद्धा जननी अभी विद्यमान हैं और उनके हृदयमें शूल बनकर श्रीमती विष्णुप्रिया देवी घर पर रहेंगी। इस अल्प वयसमें यदि अभीसे इस प्रकार कठोरता अवलम्बन करके वे भजन-साधन करती हैं तो वृद्धा जननीके हृदयमें कष्ट पर कष्ट विषम होते जायँगे और वे जीवनसे हाथ धो बैठेंगी। इसी कारण हमारे प्रभुने सङ्केतसे ही प्रियाजीसे कहा कि यह सब सोचकर वैराग्ययोगकी जो बात मैंने तुमसे कही है, कठोर व्रतानुष्ठानका जो उपदेश तुमको दिया है, वह अभी तुम्हारे लिए कर्त्तव्य नहीं है, जब तक मेरी वृद्धा जननी जीवित हैं, तब तक वह आचरणीय नहीं है। अतएव प्रभु बोले—

आमार वचन सति कर अवधान।
तोमार शाशुड़ी जेन दुःख नाहि पान।।

प्रियाजी अत्यन्त बुद्धिमती हैं। प्रभुके सङ्केत-वाक्यको समझना उनके लिए बाकी न रहा। अपने हृदयबल्लभकी बातके अभिप्रायको समझकर चुपचाप प्रभुके सारे उपदेश-वाक्य स्वीकार कर लिये।

इतनी बातें प्रभुने प्रियाजीसे कहीं, परन्तु प्रियाजीके मुखसे एक शब्द भी न निकल सका। वे केवल सुनती जा रही हैं, यह देखकर प्रभुके मनमें साहस हुआ। और भी दो एक अन्तिम बातें कहनेका सुयोग देखकर उन्होंने भक्त-पूजाका विषय उठाया। प्रभुने प्रियाजीसे कहा--"देखो, हमारे भक्तगण हमारी अपेक्षा बड़े हैं। इस नवद्वीपमें मेरे अगणित भक्त विराजते हैं। उनमेंसे कुछका नामोल्लेख मैं करता हूँ। उनमेंसे एक-एक वैष्णवमूर्ति हैं, उनको मेरी अपेक्षा बड़ा मानकर पूजा करना।"

गङ्गा विष्णु पूजा, नवद्वीपे संकीर्त्तन।
तुलसी, अद्वैत, नित्यानन्द प्राणधन।।
हरिदास ठाकुर, पण्डित श्रीनिवास।
गदाधर पण्डित, गोंसाञि आदि सुप्रकाश
श्रीरामदास, जगदानन्द, वक्रेश्वर।
द्वादश विग्रह मुञि सबाकार पर।।
--ज० चै० मं०

गंगापूजन, विष्णुपूजन, नवद्वीपमें संकीर्त्तन, तुलसीपूजन, अद्वैताचार्य, प्राणधन नित्यानन्द, हरिदास ठाकुर, पण्डित श्रीवास, गदाधर पण्डित, श्रीरामदास, जगदानन्द पण्डित, वक्रेश्वर--ये सभी प्रसिद्ध गोसाई हैं, ये द्वादश विग्रह मैं ही हूँ, इनको सबसे श्रेष्ठ जानना।

श्रीविष्णुप्रिया देवीने प्रभुके मुखके सारे उपदेशोंको कण्ठहार बना लिया। यह देखकर कि वे किसी बातका उत्तर नहीं दे रही हैं, श्रीगौराङ्ग प्रभु उन्हें अन्तिम बात सुना कर विरत हो गये। वह अन्तिम बात है--

विष्णुप्रिया! मने किछु ना भाविह आर।
तोमारे छाड़िते जेन विषम संसार।।

हे विष्णुप्रिया! मनमें और कुछ विचार न करना, तुमको छोड़ते संसार विषम-सा लगता है।

आमि यदि वैराग्य ना करिब संसारे।
वेद निन्दा कलियुगे धर्म्म ना प्रचारे।।

मैं यदि संसारमें वैराग्य नहीं करूँगा तो कलियुगमें वेदकी निन्दा होगी, धर्मका प्रचार नहीं होगा।

कुलधर्म्म युगधर्म्म आमि ना पालिब ।	यदि मैं कुलधर्म और युगधर्मका
केमते संसारे लोक धर्म्म प्रचारिब ।।	पालन नहीं करूँगा, तो संसारमें लोक-धर्मका प्रचार कैसे करूँगा ?

इस स्थान पर प्रभुने प्रियाजीको महाभारतके 'संन्यासकृत् समः शान्तः' श्लोकका भावार्थ समझाकर कहा—"श्रीभगवान्के षड् ऐश्वर्योंमें वैराग्य प्रधान ऐश्वर्य है। कलियुगमें इस सर्वप्रधान ऐश्वर्यका प्रयोजन देखकर मुझे लोकशिक्षाके लिए स्वयं वैराग्य-योगका साधन करना पड़ेगा। युगधर्मका प्रचार करनेके लिए मेरा यह अवतार है। मैं स्वयं आचरण न करूँगा, तो इसे दूसरा कौन करेगा ? तुमको त्याग कर, संसारको त्यागकर मैं वैराग्यधर्म अवलम्बन करूँगा, इसमें मुझे सुख नहीं है, परन्तु करूँ क्या ? कलिके जीवोंका उद्धार करनेके लिए मैं नदियामें अवतीर्ण हुआ हूँ। मुझे यह करना ही होगा। तुम चिन्ता न करना।"

प्रियाजीने सब कुछ सुन लिया। चुपचाप प्रभुकी सारी ही बातोंका अनुमोदन किया। स्वामीके उपदेशको सिर झुकाकर ग्रहण किया। कोई उत्तर न पाने पर प्रभुने समझ लिया कि उनकी प्राण-प्रिया उनके उपदेशके अनुसार चलेंगी। 'मौनं सम्मति लक्षणम्'—इस महान् पुरुषोंके वाक्य पर विश्वास करके प्रभु उस गंभीर रातमें गृहसे निकल कर गङ्गाके तट पर आकर बैठे। प्रियाजीने भूमि-शय्या ग्रहण की।

ठाकुर जयानन्द अपने श्रीचैतन्यमङ्गल ग्रन्थके वैराग्यखण्डमें इन सब बातोंका सूत्ररूपमें कुछ आभास दे गये हैं। मैंने उन सूत्रोंका आश्रय लेकर प्रभु और प्रियाजीके वैराग्य-तत्त्व-व्यञ्जक कथोपकथनको विस्तारपूर्वक वर्णन करके आत्मशुद्धि की है। ठाकुर जयानन्दने लिखा है—

वैराग्य खण्ड विचारिते जत बाड़े सुख ।	वैराग्य खण्ड चिन्तनसे जितना सुख है होता ।
से सुख वैष्णव भुञ्जे पाखण्डी वैमुख ।।	वह सुख भोगे वैष्णव पाखण्डी वंचित रहता ।।
आगम निगम वेद पुराणेर सार ।	आगम निगम वेदका, है पुराणका सार ।
वैराग्य शुनिले सर्व्व जीवेर निस्तार ।।	वैराग्य श्रवणसे होता सब जीवोंका निस्तार ।।

प्रभुकी वैराग्य-विषयक बातें बड़ी विषम हैं, बड़ी ही हृदय विदारक हैं। परन्तु महापुरुषोंने इन सब बातोंका विचार कर आनन्द प्राप्त किया है। हम इन विषयों पर जितना ही चिन्तन करते हैं, जितनी ही आलोचना करते हैं, उतना ही रोकर आकुल होते हैं। कलिकी भक्ति ही रुदन है--यह बात भी महापुरुष लोग कह गये हैं। 'बालानां रोदनं बलम्'--यह भी महापुरुषोंका वचन है। कलिके अधम जीवके लिए यही विधि बलवान है।

● माता द्वारा प्रभुकी गंगातट पर खोज

प्रभुके आदेश और उपदेशकी वाणीको प्रियाजीने अपने कोमल हृदय पटपर स्वर्णाक्षरोंमें अङ्कित करके रखा। वही उनकी जपमाला हो गयी। उस रात प्रभुके साथ और कोई बात न हुई। प्रभुके शयन-कक्षसे निकल जाने पर श्रीमती विष्णुप्रिया देवी अपनी सासके पास जाकर विषण्ण वदन हो बैठ गईं। शची माताने वधूके म्लान मुखको देखकर ही समझ लिया कि उनके पुत्रके इतनी रातमें बाहर जानेका क्या कारण है। उन्होंने प्रियाजीको कुछ न कहकर गृहके बाहरी द्वार पर आकर 'निमाई! निमाई!' कहकर उच्च स्वरसे पुकारना शुरू किया। मिश्रभवन गङ्गाके ऊपर ही अवस्थित है। रात्रिके समय पुकारनेसे गङ्गाके तीरके लोग जाग उठे। प्रभु गङ्गाके तटपर बैठकर हरिनाम ले रहे थे, उनके कानोंमें भी माताकी पुकार पहुँची। वे वहाँसे उठकर धीरे-धीरे घर आये। माताको द्वार पर खड़ी रुदन करती देखकर मातृभक्त प्रभुका कोमल हृदय द्रवीभूत हो गया। वे भी माताके पैरोंमें गिरकर रुदन करने लगे। शची माता अपने कृष्ण-विरह जर्जरित, रोते हुए पुत्रका हाथ पकड़ कर रोते-रोते घरमें चली गयीं।

घरमें माता और पुत्र एकत्र बैठकर अजस्र अश्रु-प्रवाह करते हुए रोने लगे। दोनों चुपचाप रो रहे थे। किसीके मुँहसे कोई बात नहीं निकल रही थी। प्रियाजी भी घरके भीतर द्वारकी आड़में बैठकर अजस्र अश्रु-प्रवाह कर रही थीं। दो पहर रात बीत गयी थी। चारों ओर सन्नाटा छाया था। नदियाके गौर-गृहमें तीन प्राणी चुपचाप रुदन कर रहे थे। तीनोंके ही मनमें दारुण व्यथा हो रही थी। व्यथित हृदयकी मर्म-व्यथा तीनोंके अन्तः-करणमें दबी पड़ी है। कोई किसीसे अपनी मनोवेदना प्रकट नहीं कर रहा है। कुछ देरके बाद निस्तब्धता भङ्ग करते हुए शची माताने रोते-रोते

पुत्रसे कहा—"बेटा निमाई ! तू इतनी रातको कहाँ गया था?" प्रभुके हृदयमें तीव्र वैराग्य है। उनके मनमें वैराग्य-भावके सिवा अन्य भावकी स्फूर्ति ही नहीं हो रही है। वे सिर झुकाए माताकी बगलमें बैठे हुए हैं। शची माताकी बात उनके कानोंमें नहीं पहुँची। वे क्या सोच रहे हैं, उसको उनके सिवा कोई नहीं जानता। शची माताने फिर अपनी बातको दुहराया। प्रभुने तब एक बार सिर उठाकर माताकी ओर करुण-नेत्रोंसे देखा। उनके दोनों कमल-नयनोंसे अविरल अश्रु प्रवाहित हो रहे थे, चन्द्र-वदन मलिन हो रहा था, मुख-मण्डलसे गम्भीर कातरता-व्यन्जक भाव व्यक्त हो रहा था।

शची माताने पुत्रकी अवस्थाको समझ लिया। पुत्रकी ऐसी अवस्था और कातर भाव देखकर उनका हृदय विदीर्ण हो गया। गौर-सुन्दरने अपनी स्नेहमयी जननीके दुःखका अनुभव कर इस बार उत्तर दिया। अत्यन्त कष्टसे अपने आपको रोककर उन्होंने अत्यन्त मृदु स्वरसे कहा—"माँ ! रातके समय एकान्तमें गङ्गाकी शोभा अत्यन्त मनोहर लगती है। मैं गंगाजीके दर्शन करनेके लिए उनके तटपर गया और सुख पाकर वहाँ ही सो गया था।" शची माताका हृदय स्नेहका समुद्र है। पुत्र-स्नेहके रसमें उनका मन, प्राण, देह—सब कुछ सराबोर हो गया। पुत्रकी बात सुनकर उन्होंने स्नेहपूर्वक कहा—"मेरी षष्ठी ! मेरी षष्ठीके दास ! रातमें क्या गङ्गाके तटपर सोया जाता है? वहाँ कितने ही भूत-प्रेत, पिशाचोंकी दृष्टि पड़ती है। तुम्हारे मनमें कुछ भय नहीं होता? आजसे बेटा ! आ, तू मेरे घरमें मेरे साथ सोया कर।" यह सुनकर प्रभु मन-ही-मन हँसे। जननीके वात्सल्य-भावकी अधिकता देखकर उनके हृदयमें अत्यन्त प्रसन्नता हुई। वे और कुछ कह न सके।

शची माता पुत्रको गोदमें लेकर सो गयीं। बधूको भी उन्होंने उसी घरमें सुलाया। मातृभक्त-चूड़ामणि मेरे प्रभु माताकी आज्ञा पालन करनेमें सदा तत्पर रहते थे। इस बार कुछ दिन तो वे माँके घरमें सोते रहे, शची माता रातके समय बधूके सामने पुत्रके साथ नाना प्रकारकी सांसारिक बातें करतीं। प्रभु सुनते रहते, पर कोई उत्तर न देते। शची माताने देखा, प्रियाजी बालिका नवबधू हैं। पुत्रको दुष्कर उग्र वैराग्य हो गया है। बालिका बधूकी मनःतुष्टिके लिए वे घरके सारे काम-काज छोड़कर सन्ध्याके समय पुत्र और पुत्रबधूको साथ लेकर घरमें बैठकर नाना प्रकारकी गृहस्थीकी

बातें करने लगतीं। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको प्रभुके द्वारा कठोर वैराग्यकी जो शिक्षा मिली थी, उसका शची माताको ज्ञान न था। उस उपदेशके अनुसार ही वे प्रभुकी इच्छासे शची माताके घरमें शयन करती थीं।

विष्णुप्रिया पदपद्मकी करके हियमें आस।
उन्हें सीख वैराग्यकी गाते हैं हरिदास॥

●

चतुर्विंश अध्याय

प्रभु संसारी, श्रीमतीजीका अन्तिम स्वामी-सङ्गका सुख, प्रभुका गृह-त्याग

जखन थाकये लक्ष्मी सङ्गे विश्वम्भर ।
शचीर चित्तेते हय आनन्द विस्तर ।।

जब विश्वम्भर श्रीगौराङ्ग श्रीविष्णुप्रियाके साथ रहते हैं, तो उन्हें देखकर शची माताके चित्तमें बहुत आनन्द होता है ।

मायेर चित्तेर सुख ठाकुर जानिया ।
लक्ष्मीर सङ्गेते प्रभु थाकये बसिया ।।
--चै० भा०

माताके चित्तके सुखको जानकर प्रभु श्रीविष्णुप्रिया देवीके साथ बैठे रहते हैं ।

● प्रभुका गृहस्थाश्रम

श्रीगौराङ्ग शची देवीके सामने वचनबद्ध हैं कि वे कुछ दिन गृहस्थाश्रममें रहकर माताको सुखी करेंगे, उनको आनन्द प्रदान करेंगे। प्रभुने श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके सामने भी यही कहा है। जो कुछ कहा है, उसका पालन करेंगे--यह निश्चय करके प्रभुने अब कुछ दिन गृहस्थाश्रममें मनोनिवेश किया। माता और गृहिणीके सन्तोषके लिए प्रभु सांसारिक कार्यमें पूर्वापेक्षा अधिक प्रीति दिखलाने लगे।

आछिल अधिक करि पीरिति बाढ़ाया ।
मायेर सन्तोष करे हृदय जानिया ।।
--चै० मं०

प्रभु अब माताके निकट घरमें रहकर अनेक सांसारिक बातें करते हैं। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके साथ अपराह्नमें घरमें बैठकर रसालाप करते हैं। घरके अभाव-अभियोगके प्रति भी वे दृष्टि रखते हैं। वे माताके पास बैठकर श्रीमतीजीके सम्बन्धमें भी दो-चार बातें करते हैं। इससे शची देवीके मनमें बड़ा

सुख होता है और श्रीमतीजी भी बड़ी प्रसन्न रहती हैं। प्रभुके घरमें प्रति-दिन छोटा-मोटा एक भोज होता है। शची देवी अपने हाथसे सारा भोजन तैयार करती हैं। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी सर्वदा सासके निकट रहकर सारा जोगाड़ कर देती हैं। लोगोंको खिलानेमें और दस आदमियोंकी पत्तलोंमें प्रसाद देनेमें शची देवीको बड़ा आनन्द मिलता है। इतनी वृद्धा हो गयी हैं, परन्तु रसोई बनानेमें उनको कुछ भी आलस्य नहीं होता। प्रभुके घरमें किसी वस्तुका अभाव नहीं है। शची देवीका घर मानो अक्षय भण्डार है।

दामोदर पण्डित प्रभुके घरके कर्त्ता-धर्त्ता हैं। वे शची देवीके बड़े प्रिय हैं। शची देवीको जब जो आवश्यकता होती है, दामोदर पण्डित उसका प्रबन्ध अविलम्ब कर देते हैं। दामोदर पण्डितके लिए श्रीगौराङ्गकी सेवा प्राणोंसे भी प्रिय वस्तु है। श्रीगौराङ्गके घरका कुत्ता भी दामोदर पण्डितको अति प्रिय है। प्रभुके घरके कामका सारा भार दामोदर पण्डित पर है। श्रीगौराङ्ग उनका सम्मान किया करते थे और विशेष श्रद्धाकी दृष्टिसे देखते थे।

हमारे प्रभु अब गृहस्थीके सुखमें मस्त रहते हैं, अब वे प्रेमोन्मादके भाव नहीं हैं, अब व्याकुलतापूर्ण वह रुदन नहीं है, अब वह विषादपूर्ण हृदय नहीं है, वह अन्यमनस्कता नहीं है। इस समय वे घोर संसारी-से हैं। बाजारसे अच्छी-अच्छी वस्तुएँ खरीदकर माताको देते हैं। शची देवीका मन आनन्दसे पूर्ण रहता है। पुत्र और पुत्र-वधूको साथ लेकर वे परम आनन्दपूर्वक संसार चला रही हैं। उनके सोनेके संसारमें किसी प्रकारका अभाव नहीं है। निमाई चाँदको संसारी बनानेके लिए शची देवीने न जाने कितने देवी-देवताओंके आगे सिर रगड़ा है। शची देवी सोचती हैं कि इतने दिनोंके बाद नारायणने उनके पुत्रको सुमति दी है, उनकी मति-गतिको फेर दिया है। शची देवी पूर्व वृत्तान्तको एक दम भूल गई हैं। श्रीभगवान्का यह कौशल है। वे कौशलसे सारा कार्य सम्पन्न करना चाहते हैं। परन्तु भक्तोंके सामने बीच-बीचमें पकड़े जाते हैं। कौशलीका कौशल प्रकृत भक्तके सामने सदा नहीं चलता।

शची देवीको इस समय कोई दुःख नहीं है। निमाई चाँदको संसारी देखकर वे पहलेकी सारी बातें भूल गयी हैं। इसीलिए श्रीभगवान्ने उनको यह सुख दिया है। सुखके बाद दुःख, दुःखके बाद सुख--जीवके लिए अवश्यम्भावी कर्मफल है। सुख प्राप्त होने पर हम दुःखको बिल्कुल भूल जाते हैं, दुःख पड़ने

पर सुखकी आशा नहीं करते। जैसे विपदमें पड़ने पर मनमें आता है कि इस विपदसे अब उद्धार नहीं, दुःख पड़ने पर भी ऐसा लगता है कि यह दुःख जाने वाला नहीं है। इसी प्रकार सुख पाने पर हम दुःखकी बात भूल जाते हैं, मानो सुखके समुद्रमें निमग्न हो जाते हैं। हम यह एकदम भूल जाते हैं कि संसारमें दुःख न होता तो सुखकी अभिव्यक्ति ही नहीं होती। शची देवी इस समय सुखके समुद्रमें डूब रही हैं, इसी कारण दुःखकी बात एकदम भूल गयी हैं। पहले की बातें भूल गयी हैं। वे निमाई चाँदको लेकर बड़े सुखसे अपना संसार चला रही हैं। बीस-तीस प्रकारके शाक-व्यञ्जन तैयार करके निमाई चाँदको नित्य भोजन कराती हैं।

भोजन करते समय श्रीगौराङ्ग माताके साथ बाल-क्रीड़ा करते हैं। भोजन करते समय श्रीमतीजीको सामने देखकर प्रभु माताको सम्बोधन करके कहते हैं—"माँ! अपनी बहूको अपने ही समान भोजन बनाना सिखा दो। तुम वृद्धा हो गयी हो, रसोई बनानेमें तुम्हें कष्ट होता है। अपनी बहूपर रसोई बनानेका भार सौंपकर तुम निश्चिन्त हो जाओ।"

शची देवी पुत्रकी बात सुनकर मुस्कराने लगीं। पुत्रके मुखसे बहूकी बात सुनकर उनके मनमें बड़ा सुख होता है। उन्होंने उत्तर दिया—"तुमको किसने कहा कि मेरी बहू भोजन बनाना नहीं जानती? बहू मुझसे भी अच्छा भोजन बना सकती है। कल भोजन बनाकर तुम्हें खिलायेगी, देखना कैसा होता है?"

श्रीगौराङ्ग बोले—"माँ! तुम्हारी बातका मैं विश्वास नहीं कर सकता। तुम्हारी बहूकी बनायी रसोई खा चुका हूँ। तुम्हारे जैसी चतुर रंधनकर्तृके पास बैठकर तुम्हारी बहू कुछ भी नहीं सीख सकी है।" शची देवी निमाई चाँदकी बात समाप्त होनेके पहले ही बोल उठीं—"यह क्या? ऐसी बात मुंह पर न लाना। मेरी बहू बहुत अच्छा भोजन बनाती है। तुम्हारी अलग बात है। अभी वह बालिका—बच्ची है, वह जो कुछ बनाती है, उसको प्रसन्न मुखसे खाना चाहिए।"

श्रीगौराङ्ग और कुछ अधिक न बोल सके, समझ गये कि पुत्रवधूकी निन्दा माँको अच्छी नहीं लगती। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी पास ही थीं। उन्होंने भी यह बात सुनी, सुनकर मुस्करा दिया। सासकी बातें श्रीमतीजीको बहुत प्रिय लगीं। वे भोजन बनानेमें पटु नहीं हैं—यह वे खूब जानती हैं। श्रीगौराङ्गकी बातें सुनकर श्रीमतीजीके रोष या अभिमानका कोई कारण नहीं। प्राणवल्लभके

प्रति एक चञ्चल कटाक्ष-पात करके मधुर मुस्कानके साथ श्रीमतीजी आड़में जाकर छिप गयीं। श्रीमतीजीको कुछ लज्जा आ गयी है, उनकी मुस्कानका मर्म यह जान पड़ता है कि वे श्रीगौराङ्गसे हँसकर कह रही हैं--"तुम इतना जानते हो, फिर भी कुछ नहीं लजाते।" श्रीगौराङ्गने श्रीमतीजीके कटाक्षके उत्तरमें एक बार प्रियाके मुखचन्द्रकी ओर देखा। उस देखनेका अभिप्राय यह था-- "कैसा हुआ? माँके सामने तुम्हारी विद्याको मैंने प्रकट कर दिया।"

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको शची देवीने रसोई बनानेकी कला भली भाँति सिखलायी थी, इसका प्रमाण ग्रन्थोंमें मिलता है। प्रभुकी हँसी-मजाक करनेकी इच्छा हुई थी और उन्होंने मज़ाक कर लिया। इससे यह कोई न समझे कि श्रीमती विष्णुप्रिया देवी रसोई बनानेकी कलामें पटु न थीं।

विष्णुप्रिया देवीरे कहये शची आइ।
बेलाधिक हय मागो पाकघरे जाइ।।

शची माताने विष्णुप्रिया देवीसे कहा--"बेटी! बहुत देर हो गई है। रसोई घरमें जाओ।"

आज्ञा पाइ हरषिता मने विष्णुप्रिया।
शीघ्र पाक करिबारे बसिलेन गिया।।

आज्ञा पाकर श्रीविष्णुप्रिया देवी प्रसन्न चित्तसे रसोई बनानेके लिए जा बैठीं।

विष्णुप्रिया देवी तबे समापि रन्धने।
शचीर आदेशे गेला भोगेर सदने।।

रंधन समाप्तकर विष्णुप्रिया देवी शची माँके आदेशसे ठाकुरजीको भोग लगानेके घरमें गयीं।

उभारिला भात बहु सुवर्ण थालिते।
सारि सारि राखिलेन सिक्त करि घृते।।

सोनेकी थालियोंमें भात निकाला और घृतसे सिक्त करके सजा-सजाकर रक्खा।

व्यञ्जनादि जत किछु रन्धन करिला।
क्रम करि ताहा सब पाशेते धरिला।।

जितने व्यंजन बनाये थे, सब क्रमपूर्वक पास-पास रक्खे।

पक्वान्नादि करि आर जतेक आचारे।
निसकड़ि प्रथम धड़िल थरे थरे।।

पक्वान्न आदि तैयार करके तथा जितने प्रकारके अचार थे सब निकाल कर प्रथम यथा स्थान सजाकर रक्खे।

सुवर्ण-भाजने जल सुवासित करि। **कर्पूर सहिते छानि राखिलेन धरि।।**	जल छानकर, कर्पूरसे सुवासित करके सोनेके पात्रमें रक्खा।
रतन सम्पुटे करि उत्तम ताम्बूल। **लवङ्ग एलाची ग्रादि जत ग्रनुकूल।।**	रत्नजटित सम्पुटमें लवङ्ग, इलायची ग्रादि ग्रनुकूल वस्तुग्रोंसे उत्तम पान बनाकर रक्खे।
तुलसी-मञ्जरी ग्रन्न उपरि धरिला। **शालग्रामे समर्पिया ग्राचमन दिला।**	तुलसी-मञ्जरी ग्रन्नके ऊपर रक्खी ग्रौर शालग्रामको समर्पित करके ग्राचमन दिया।
तबे शची देवी बड़ हरषित मने। **गण सह पुत्र बोलाइलेन भोजने।।** **—श्रीगौराङ्ग लीलामृत**	तब शची देवीने बड़े हर्षित मनसे साथियोंके साथ ग्रपने पुत्रको भोजन करनेके लिये बुलाया।

इस प्रकार माता ग्रौर गृहिणीके साथ श्रीगौराङ्ग नित्य ग्रनेक प्रकारके कौतुक, रङ्ग ग्रौर हास-परिहासकी लीलाएँ कर रहे हैं। श्रीविष्णुप्रिया देवी प्रेमानन्दमें विभोर होकर पतिके सोहाग ग्रौर ग्रादरका नेत्रोंके द्वारा पान करती रहती हैं। शची देवीके समान वे भी पहलेकी सारी बातें भूल गयी हैं। श्रीगौराङ्ग प्रेममय, प्रेमिक पुरुष हैं। उन्होंने श्रीमतीको प्रेमतरङ्गमें प्रवाहित करके उनके सारे दुःखोंको भुला दिया है। ग्राजसे कुछ ही दिन पूर्व उन्होंने ग्रपने प्राणवल्लभके श्रीमुखसे एक हृदय विदारक बात सुनी थी ग्रौर सुनकर सारी रात रोते-रोते बितायी थी। प्राणवल्लभको क्या-क्या कह डाला था, वे सारी बातें इस समय श्रीमतीजी एकदम भूल गयी हैं, मानो कुछ भी नहीं हुग्रा है, कुछ भी उनको ज्ञात नहीं है। श्रीगौर भगवान्की मायामें ऐसी ही मोहिनी शक्ति है। श्रीगौराङ्ग-सुन्दरका प्रेम ऐसा विलक्षण है कि श्रीमती विष्णुप्रिया देवी प्रेमान्ध होकर सारी पूर्वस्मृति खो चुकी हैं। प्राणवल्लभके ऊपर उनको किसी प्रकारका सन्देह नहीं रह गया है। श्रीगौराङ्ग उनको धोखा देकर चले जायँगे, यह बात श्रीमतीजीके मनमें एक वार भी नहीं ग्रायी। निरन्तर उनके दिन दाम्पत्य सुखमें बीतेंगे, इस प्रकारके दिन, इसी प्रकारके सुखके दिन उनके सदा बने रहेंगे—यही सोचकर श्रीमतीजी ग्रानन्दमें मग्न होकर सुख-सिन्धुमें निमज्जित हो रही हैं। श्रीगौराङ्ग-लीलाका यही गूढ़ रहस्य है। जो उस प्रेममय, प्रेमिक परम पुरुषके प्रेममें एक बार पड़ गया है, जिसने उस सतत सुन्दर, सनातन पूर्णब्रह्म श्रीगौराङ्ग

सुन्दरके श्रीचरण-कमलोंमें आत्म-समर्पण किया है, उसके लिए श्रीअद्वैतके लाये धन श्रीगौराङ्गके चरण-चिन्तनके सिवा जगतमें और भी कोई सुखकी उत्तम वस्तु है क्या, वह नहीं जानता। उसकी सारी उत्कण्ठा, सारी चिन्ता, सारे भय, विपत्ति दूर हो जाते हैं, वह गौरगत-प्राण होकर सब कुछ गौरमय देखता है। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी अवस्था भी तद्रूप ही है। वे सब दुःखोंको भूलकर प्राणवल्लभकी सेवाकी व्रती हो गयी हैं। दो प्राण एकमें मिल गये हैं, श्रीगौर-विष्णुप्रिया एकत्र होकर आनन्दसे सांसारिक जीवन यापन कर रहे हैं। श्रीमतीजीका मन सदा प्रेमानन्दमें उत्फुल्ल रहता है। प्रभुके मुखपर हँसी समाती नहीं है। प्रियाजीको लेकर वे परम आनन्दपूर्वक संसार चला रहे हैं। वे किसी बातकी चिन्ता नहीं करते, चाहते हैं केवल आनन्द, जो श्रीमतीजी प्रचुर परिणाममें उनको प्रदान कर रही हैं। आनन्दमय श्रीगौराङ्ग आनन्दमयी श्रीविष्णुप्रियाजीके साथ पूर्ण आनन्दसे विहार कर रहे हैं। शची देवीके मनमें बड़ा सुख है। वे आनन्दके समुद्रमें गोते खा रही हैं। शची देवीकी दुनियामें आनन्दका बाजार लगा है। वहाँ प्रेमानन्दका क्रय-विक्रय हो रहा है। वहाँ जो जाता है, वही जी भरकर प्रेमानन्दका उपभोग कर-कर आता है। आनन्दके बाजारमें बिना मूल्य आनन्द विक्रय हो रहा है। श्रीगौराङ्ग वितरण कर रहे हैं, श्रीमतीजी वितरण कर रही हैं, शची देवी वितरण कर रही हैं, जो जाता है वह धन्य हो जाता है। शची देवीका घर आनन्दनिवास, आनन्दधाम बन रहा है। जीवके भाग्यमें इतना आनन्द कहीं संघटित नहीं होता। इस सुखकी तरङ्गमें, इस प्रेमानन्दकी तरङ्गमें, नदियावासी श्रीगौराङ्गके भक्तगण भी निमग्न हो रहे हैं। सभी सोच रहे हैं कि प्रभुके संसार-त्यागका सङ्कल्प मूल विहीन है। वे इस समय नितान्त संसारी हो रहे हैं, वैराग्यका चिह्न मात्र भी नहीं है। इतना सुखमय संसार छोड़कर प्रभु कहीं भी नहीं जा सकेंगे, यह सोचकर भक्तगण निश्चिन्त हो रहे हैं। शची देवी और श्रीमती विष्णुप्रिया देवी भी निश्चिन्त हैं।

● प्रभुकी संन्यास-योजना

इस प्रकार सुख और आनन्दपूर्वक श्रीगौराङ्गने प्रायः छः महीनों तक संसार यापन किया। माघका महीना बीतनेको आया। प्रभु दिन गिन रहे थे, माघ मासके उत्तरायणकी संक्रान्तिके दिन प्रभुने गृहत्याग करनेका संकल्प किया। वह अति उत्तम दिन था।

एइ संक्रमण उत्तरायण दिवसे । निशाय चलिब आमि करिते संन्यासे ।। --चै० भा०	इस उत्तरायणकी संक्रान्तिके दिन मैं संन्यास लेने के लिए रातमें निकल चलूँगा ।

चुपचाप यह कार्य करनेका निश्चय करके प्रभुने उस दिन मातासे कहा, "माँ, आज श्रेष्ठ दिन है, ब्राह्मणों और वैष्णवोंको अच्छी प्रकार उत्तम भोजन कराओ ।" शची देवी आनन्दित चित्तसे रसोई तैयार करने लगीं । श्रीमतीजीने सासके पास रहकर सब चीजें जुटा दीं । उसी समय प्रभुके परम भक्त श्रीधर एक लौकी लेकर आये और शची देवीको भक्तिपूर्वक प्रणाम करके उनके हाथमें देकर कहा--"माँ ! मैं बड़ा दरिद्र हूँ, मेरे घरकी यह लौकी रन्धन करके प्रभुको खिलाना ।" शची देवीने आदरपूर्वक श्रीधरके हाथसे लौकी ले ली । उस दिन एक दूसरे भक्तने प्रभुके लिए कुछ उत्तम दूध ला दिया । प्रभु वहाँ उपस्थित थे, श्रीधरने लौकी भेंट की है--देखकर वे मुस्कुराये और माँसे बोले--"आज दूधमें लौकी पकाओ, बड़ी अच्छी बनेगी ।" प्रभुके भक्त श्रीधर सुनकर बहुत सुखी हुए ।

एक लाउ हाते करि सुकृति श्रीधर । हेनइ समये आसि हइला गोचर ।।	इसी समय भाग्यवान श्रीधर हाथमें एक लौकी लेकर आ उपस्थित हुए ।
लाउ भेंट देखि हासे वैकुण्ठेर राय । कोथा पाइला प्रभु जिज्ञासे ताहाय ।।	लौकीकी भेंट देखकर वैकुण्ठके अधिपति हँस पड़े और उनसे पूछने लगे कि यह लौकी कहाँ मिली ?
निज मने जाने प्रभु कालि चलि बाङ । एइ लाउ भोजन करिते नारिलाम ।।	मनमें तो प्रभु जानते हैं कि कल तो चले ही जाना है, तब इस लौकीका भोजन तो कर न सकूँगा ।
श्रीधरेर पदार्थ कि हइबे अन्यथा । ए लाउ भोजन आजि करिब सर्व्वथा ।।	तो क्या श्रीधरका लाया पदार्थ अन्यथा हो जायगा ? मैं जैसे होगा आज ही इस लौकीका प्रसाद पाऊँगा ।
एतेक चिन्तिया भक्त-वात्सल्य राखिते । जननीरे बलिलेन रन्धन करिते ।।	इतना सोचकर भक्त-वत्सलता रखनेके लिये प्रभुने मातासे उसका रन्धन करनेको कहा ।

हेनइ समये आर कोन पुण्यवान् ।	उसी समय किसी और पुण्यात्मा
दुग्ध भेट आनिया दिलेन विद्यमान ।।	पुरुषने आकर दुग्ध भेंट किया ।
हासिया ठाकुर बले बड़ भाल भाल ।	हँसकर प्रभुने कहा--बड़ा ही
दुग्ध लाउ पाक गिया करह सकाल ।।	अच्छा हुआ । शीघ्र दुग्ध और लौकी,
--चै० भा०	सबका एक साथ पाक किया जाय ।

शची देवीने पुत्रकी इच्छाके अनुसार दुग्ध-लौकी पकाकर पुत्रको खिलायी । उस दिन प्रभुके घर अनेकों अन्तरङ्ग भक्तोंने प्रसाद ग्रहण किया ।

भोजनके उपरान्त प्रभु नदियामें भ्रमण करने निकले । एक-एक करके प्रायः सब भक्तोंके घर जाकर प्रभुने अनेक प्रकारकी बातोंसे उनको सन्तुष्ट किया । किसीकी भी समझमें नहीं आया कि प्रभुका नवद्वीपमें यह अन्तिम आदर संभाषण है ।

प्रभुने इसके बाद गङ्गातट पर जाकर मन भरकर गङ्गाजीका दर्शन किया । प्रभु उसी स्थान पर जाकर बैठे, जहाँ बैठकर छात्रोंके साथ शास्त्रालाप किया करते थे । उनको घेरकर भक्तोंकी मण्डली बैठ गयी । प्रभु कृष्ण-कथा कहने लगे, गङ्गाकी महिमाका वर्णन करने लगे । सब लोग एक टक होकर प्रभुके उज्ज्वल ज्योतिर्मय मुखचन्द्रकी ओर निहार रहे हैं । प्रभुके श्रीमुखसे मानो अमृतवर्षण हो रहा है और भक्तवृन्द उसे स्थिर चित्तसे पान करके परितृप्त हो रहे हैं । उस दिन एक पहर रात गङ्गातट पर बिताकर प्रभु घर लौटे । भक्तवृन्द भी अपने-अपने घर गए ।

श्रीगौराङ्गने घर जानेके पूर्व फिर एक बार आँखें भरकर गङ्गाजीका दर्शन किया और एक बार नवद्वीप नगरीकी ओर अन्तिम दृष्टिपात किया । प्रभुकी आँखोंमें अश्रु भर आये । उन्हें और किसीने नहीं देखा । प्रभुने आँखें फेर लीं, परन्तु मनको नहीं फेर सके । उस समय प्रभुका मुखमण्डल गम्भीर हो उठा, किसीकी समझमें न आया कि वे क्या सोच रहे हैं । जननी और जन्मभूमिकी मायाका वन्धन काटना पड़ेगा, युवती भार्याके गलेमें फाँसी देनी पड़ेगी, भक्तोंके प्राणोंका वध करना पड़ेगा--जान पड़ता है इसी प्रकारकी चिन्ताओंमें पड़कर प्रभु कुछ कातर हुए थे । परन्तु चतुर-शिरोमणि श्रीगौराङ्गने अपने मनके भाव किसी पर प्रकट न होने दिये ।

अन्तरङ्ग भक्तोंसे विदा लेकर, गाढ़ आलिङ्गनसे उनको प्रसन्न करके प्रभु सन्ध्याके पश्चात् घर लौटे। घरपर आकर माताके पास बैठकर प्रभुने बहुत देर तक सांसारिक बात-चीतमें काल यापन किया। यथासमय भोजन करके शयन-गृहमें गये, प्रभुके गृह-वासका आज अन्तिम दिन था। परन्तु अबतक इस बातको न तो प्रभुकी माता और न गृहिणी ही जानती थीं। शची देवी अपने घरमें जाकर निश्चिन्त होकर सो गयीं।

● प्रियाजीके साथ संन्यासकी पूर्व रात्रि

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने पानबट्टा, चन्दन, पुष्पमाला आदि हाथमें लेकर मुस्कुराते हुए प्रभुके शयन-गृहमें प्रवेश किया। श्रीगौराङ्गने मृदु मुस्कानके साथ परम आदरपूर्वक प्रियाजीको अपने अङ्कमें बैठा लिया।

शयन-मन्दिरे सुखे शयन करिला।
ताम्बूलस्तवक करे विष्णुप्रिया गेला।।
हासिया सम्भाषे प्रभु आइस आइस बोले।
परम पिरिति करि बसाइला कोले।।
——चै० मं०

श्रीमती प्रभुकी गोदमें बैठ गयीं, मानो श्रीश्रीलक्ष्मीकान्त नारायणकी गोदमें जगन्माता श्रीमहालक्ष्मी विराजमान हों। प्रभुके शयन-गृहकी आज कैसी अपूर्व शोभा है! अधम जीवके भाग्यमें इस प्रेममय और प्रेममयीके अपरूप युगल-मिलनका दर्शन प्राप्त होना दुर्लभ है।

श्रीवृन्दावन दास ठाकुरकी माता नारायणी देवी उस रात्रिमें प्रभुके घरमें शयन कर रही थीं। श्रीलोचन दासके 'श्रीश्रीचैतन्य मङ्गल' ग्रन्थका पाठ करके श्रीवृन्दावन दास ठाकुरके मनमें एक सन्देह उपस्थित हुआ। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीसे प्रभुकी अन्तिम विदायी, उनको अपने हाथों भुवनमोहिनी रूपमें सजाना, उनके साथ रसालाप करना, उनको प्रेमानन्दपूर्वक अन्तिम आलिङ्गन प्रदान करना इत्यादि बातोंको श्रीवृन्दावन दासने अपने ग्रन्थ 'श्रीश्रीचैतन्य भावगत' में लिपिबद्ध नहीं किया था। क्योंकि वे इन सब घटनाओंसे अवगत नहीं थे। इन सब घटनाओंके सत्यासत्यके विषयमें श्रीवृन्दावन दासके मनमें सन्देह होनेसे उन्होंने अपनी जननी नारायणी देवीसे पूछा। उसके उत्तरमें उनकी जननीने कहा——

"लोचन दासकी लिखी एक भी बात झूठी नहीं है और न उसमें किसी प्रकारकी अत्युक्ति ही है।" क्योंकि, उस रातको नारायणी दासी प्रभुके घर थीं और अपनी आँखों श्रीगौर-विष्णुप्रिया-लीलाके दर्शन करके पवित्र हुई थीं। नारायणी देवीके समान सौभाग्यशालिनी रमणी संसारमें और कौन है? यदि व्यासावतार श्रीवृन्दावन दासकी जननीको ऐसा सौभाग्य प्राप्त न होगा, तो किसको होगा?

श्रीलोचन दासने श्रीश्रीगौर भगवान्‌की माधुर्य-लीलाका वर्णन किया है, श्रीवृन्दावन दासने उनके ऐश्वर्यभावका वर्णन किया है। श्रीलोचन दासके श्रीगौराङ्ग हैं नवीन नागर, प्रेममय, प्रेमदाता, प्राणकान्त, जीवनधन। श्री-वृन्दावन दासके श्रीगौराङ्ग हैं महाप्रभु, ठाकुरके ठाकुर, जगतके स्वामी, पूर्णब्रह्म, सनातन। श्रीगौर-विष्णुप्रिया-लीला माधुर्यपूर्ण है, इसमें ऐश्वर्यका मिश्रण करने पर लीलाका माधुर्य नष्ट होता है। श्रीलोचन दास कृत 'श्रीचैतन्य मङ्गल' ग्रन्थ श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी प्रकटावस्थामें लिखा गया है। इस ग्रन्थको सुनकर देवी परम आनन्दित हुईं। यह ग्रन्थ देवीके द्वारा अनुमोदित है। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीका आदेश प्राप्तकर श्रीलोचन दासने अपने ग्रन्थका प्रचार वैष्णव-समाजमें किया।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने आज प्राणवल्लभको अपनी मनस्तुष्टिपूर्वक सजाना चाहा। प्रभुने सम्मति देते हुए कहा--"प्रियतमे! तुम पहले मुझको सजाओ, पश्चात् मैं तुमको अपने हाथोंसे सजाऊँगा। देखें, कौन किसको कैसा सजाता है?" श्रीमतीने हँसकर कहा--"पुरुष भी क्या स्त्रीको सजा सकते हैं? तुम अपनी यह बात रहने दो।" श्रीगौराङ्गने हँसकर उत्तर दिया--"वह देखा जायगा। पहले तुम तो अपना काम करो।"

श्रीमतीजीने जी भरकर प्रभुके श्रीअङ्गोंमें सुगन्धित चन्दन, कस्तूरी, कुंकुम आदि सुगन्धित द्रव्योंका लेपन किया। प्राणवल्लभके गलेमें मालतीकी माला पहना दी। अपने हाथसे प्रभुको सुन्दर तिलक लगा दिया। प्राणवल्लभके सुन्दर प्रशस्त ललाटको तिलकसे चित्रित कर दिया। सुगन्धित और सरस पान खानेके लिये दिया। प्रभुके मस्तकके घुँघराले केशदामको सजा दिया। अपने वस्त्रके अञ्चलसे उनके दोनों ही चरणोंको भली-भाँति पोंछ दिया। प्राणवल्लभको मनमाना सजाकर श्रीमतीके हृदयमें आज सुख नहीं समाता। रसराज रसिक-शेखर आज रससमुद्रमें निमज्जित हो रहे हैं। रसवती, रसिका, रासेश्वरी श्रीमती

विष्णुप्रिया देवीको अपने अङ्कमें बैठाकर कितना आदर-सोहाग कर रहे हैं! श्रीमतीजीके मनमें इस समय और कोई भावना नहीं है। वे सुखसागरमें सन्तरण कर रही हैं।

विष्णुप्रिया प्रभु अङ्गे चन्दन लेपिल।
अगोर कस्तूरीगन्धे तिलक रचिल।।
दिव्य मालतीर माला दिल गोरा अङ्गे।
श्रीमुखे ताम्बूल तुलि दिल नाना रङ्गे।।

—चै० मं०

अब श्रीमतीजीको सजानेके लिए प्रभुकी बारी आयी। श्रीगौराङ्ग अपने हाथों श्रीमतीजीको सजाने बैठे। श्रीमतीजी लज्जा और भयसे कुण्ठित होकर शय्याके एक पार्श्वमें सरक गयीं, प्रभु उनको छोड़नेवाले पात्र न थे। उनको पकड़कर निकट बैठाया। यह मधुर दृश्य जीवके भाग्यमें दुर्घट है। देव-देवीगण इस अपूर्व दृश्यको देखकर आनन्दसे पुष्प-वृष्टि करने लगे। प्रभुने सबसे पहले श्रीमतीजीका जूड़ा बाँध दिया। उसके चारों ओर मालतीकी माला पहनायी। श्रीमतीजीके सुन्दर ललाट पर सिन्दूरकी बिन्दी लगा दी। चौड़े ललाटको चन्दनकी बिन्दियोंसे भली-भाँति सजाया भी। प्रियाजीके दोनों कमल-नयनोंमें अञ्जनकी रेखा खींच दी। अपने हाथों मनकी साधसे प्रियाजीको वस्त्रालंकार पहना दिये एवं फूलोंकी माला गलेमें डाल दी।

तबे महाप्रभु से रसिक-शिरोमणि।
विष्णुप्रिया-अङ्गे वेश करेन आपनि।।

तब वे रसिक शिरोमणि महाप्रभु श्रीविष्णुप्रिया देवीके अङ्गको स्वयं सजाने लगे।

दीर्घकेश कामेर चामर जिनि आभा।
कबरि बाँन्धिया दिल मालतीर गाभा।।

उनके लम्बे-लम्बे केशोंको, जिनकी आभा कामदेवके चँवरकी शोभाको जीतनेवाली है, प्रभुने कबरी बाँधकर मालती-पुष्पोंके गुच्छसे सजाया।

मेघबन्ध हइल जेन चाँदेर कलाते।
किवा उगारिया गिले ना पारि बुझिते।।

चन्द्रकी कला पर मानो मेघबन्धन हुआ, पर वह बन्धनको ढीलाकर चन्द्रको प्रकाशित कर देगा या फिर ग्रस लेगा, यह समझमें नहीं आया।

सुन्दर ललाटे दिल सिन्दूरेर बिन्दु। दिवाकर कोले जेन रहियाछे इन्दु।।	सुन्दर ललाटपर सिन्दूरका बिन्दु दिया, मानो दिवाकरकी गोदमें चन्द्रमा बसा हो।
सिन्दूरेर चौदिके चन्दन-बिन्दु आर। शशिकोले सूर्य्य जेन धाय देखिवार।।	सिन्दूरके चारों ओर चन्दनके बिन्दु ऐसे लगते हैं मानो सूर्यकी गोदमें चन्द्रको देखने ग्रह (मंगल, शनि आदि) दौड़ रहे हैं।
खञ्जन नयने दिल अञ्जनेर रेख। भूरु काम-कामानेर गुण करिलेक।।	खञ्जन-नयनोंमें अञ्जनकी रेखा लगाई। भौंहें मानो कामदेवके धनुषकी प्रत्यञ्चा बनी हैं।
अगोर कस्तूरी गन्ध कुचोपरि लेपे। दिव्य वस्त्रे रचिला काँचुली परतेखे।।	अगरू, कस्तूरी आदि गन्ध कुचों पर लेप दिये। दिव्य वस्त्रसे बनी हुई सुशोभित कंचुकी पहना दी।
नाना अलङ्कारे अङ्ग भरिला ताँहार। ताम्बूल हासिर सङ्गे विहार अपार।। --चै० मं०	नाना प्रकारके अलंकारोंसे उनके अङ्ग भर दिये हैं। ओठोंमें ताम्बूलके रङ्गके साथ मन्द मुस्कानकी छटा अवर्णनीय है।

श्रीमतीकी रूप-राशि मानो फूट पड़ी। उनके रूपके आलोकमें घरका दीपक निष्प्रभ हो उठा। श्रीगौराङ्गने प्रियाजीसे पूछा--"बताओ तो मैंने कैसा सजाया है ? तुम स्वयं सजती तो मुझे इतना आनन्द नहीं मिलता।" श्रीमतीजीने लजीली आँखोंसे प्राणवल्लभकी ओर एक चञ्चल कटाक्षपात करके मुस्कुराकर उत्तर दिया--"इतने दिनों तक मैं यही जानती रही कि तुम पुरुष हो, पुरुषका काम ही भली भाँति जानते हो। अब समझी कि तुम स्त्रियोंकी अपेक्षा भी स्त्रियोंके वेष-विन्यासमें अधिक सिद्धहस्त हो। तुममें यह गुण है, यदि पहले जान पाती तो तुम्हारे द्वारा अपना अनेक कार्य करा सकती। आजसे तुम्हीं नित्य मेरा केश-विन्यास कर दिया करो। काञ्चना सखीको मैं अब कष्ट न दूँगी। अपना कार्य तुम्हीं कर लिया करो।"

काञ्चना श्रीमतीजीका केश-विन्यास किया करती थीं, उनको सजाकर गौराङ्गके पास भेजती थीं, इसी कारण श्रीमतीजीने यह बात कही। श्रीगौराङ्ग

प्रियाकी बातें सुनकर कुछ मुस्कुराये और मन-ही-मन खूब आनन्दित हो उठे। परन्तु यह सोचकर कि कल यह रस-रङ्ग न कर सकूँगा, वे विषण्ण हो उठे। प्रियाजीसे अपने मनका भाव छिपाते हुए बोले—"काञ्चना सखीसे यह बात कहते हुए तुझे लज्जा नहीं होगी ?" श्रीमतीजीने हँसकर उत्तर दिया—"सखीके सामने लज्जा ? तुम्हारी सारी बातें मैं अपनी प्रिय सखी काञ्चनासे कहती हूँ।"

श्रीगौराङ्गने प्रियाजीकी त्रैलोक्य-मोहिनी रूपराशिके दर्शनोंसे मुग्ध होकर श्रीमतीजीका चिबुक पकड़कर प्रेमपूर्वक मुख-चुम्बन कर लिया। दोनों परस्पर प्रेमालिङ्गनसे अतुल आनन्द उपभोग करने लगे। श्रीलोचन दास ठाकुरने श्रीगौर-विष्णुप्रियाकी, विदाके समय मदन-महोत्सवकी अपूर्व लीला-माधुरीका अपने ग्रन्थमें अति ललित मधुर छन्दमें जो वर्णन किया है, वह नीचे उद्धृत किया जाता है—

त्रैलोक्यमोहिनी रूप निरीखे वदन।
अधर-माधुरी साधे करये चुम्बन।।

त्रैलोक्य-मोहिनी रूप, मुखचन्द्रको देखकर, अधर माधुरीका जी भरकर चुम्बन करते हैं।

क्षणे भुजलता बेड़ि आलिङ्गन करे।
नव कमलिनी जेन करिवर कोरे।।

फिर भुजलतामें बाँधकर आलिङ्गन करते हैं, मानो करिवरकी गोदमें नव-कमलिनी विराजती है।

नाना रस विथारये विनोद नागर।
आछुक आनेर काज काम अगोचर।।

विनोदी नागर श्रीगौराङ्ग नाना प्रकारसे रस बिखेर रहे हैं। वास्तवमें अगोचर काम तो कुछ और ही है।

सुमेरूर कोले जेन बिजुरी प्रकाश।
मदन मुगधे देखि रतिर विलास।।

जान पड़ता है मानो सुमेरु पर्वतकी क्रोड़में बिजली प्रकाशित हो रही है। रतिके विलासको देखकर मदन मुग्ध हो रहा है।

हृदय उपरे थोय ना छुँयाय शय्या।
पाश पालटिते नारे दोंहे एक मज्जा।।

हृदयके ऊपर विराजमान किये हैं, शय्याका स्पर्श नहीं हो पाता। दोनों एकमें निमज्जित हो रहे हैं, करवट नहीं बदलते।

बुके बुके मुखे मुखे रजनी गोङाय।
रस अवसादे दोँहे सुखे निद्रा जाय।।
--चै० मं०

छातीसे छाती और मुखसे मुख मिलाये रजनी बिता रहे हैं। इस प्रकार रस-विलासमें श्रान्त होकर दोनों निद्राग्रस्त हो रहे हैं।

● काल-रात्रि और प्रभुकी विदा

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके लिए काल-निद्रा आ गयी। स्वामी-सोहागिनी सरला नारी स्वामीके क्रोड़में शयन करके निर्भय निद्रा-ग्रस्त हो गयी। वह घोर निद्रासे अभिभूत हो गयी। काल-रात्रिके अन्तमें श्रीगौराङ्ग धीरे-धीरे शय्यासे उठे। सोयी हुई प्रियाके निद्रित मुखकी शोभाको जी भर कर देख लिया।

प्रियाजीकी निद्रित छबि बड़ी ही सौन्दर्यमय, बड़ी ही मधुमय है। श्रीगौराङ्ग बहुत देर तक प्रियाकी निद्रित छबिको एक टकसे देखते रहे। अधम ग्रन्थकार-रचित निद्रित छबिकी एक समयोपयोगी कविता यहाँ सन्निवेशित की जाती है--

तार भाङ्गायो ना घुम।
प्राण भरे देखि,
बुके धरे राखि,
घुमन्त माधुरी-माखा, वदन निझुम।
(ओगो) तार भाङ्गायो ना घुम।।

उसकी निद्रा भङ्ग न करना और हृदयमें धारण किये रखना। माधुर्य-मण्डित निश्चल निद्रित मुख-मण्डलको मैं जी भर कर देख लूँ। अरे, उसकी निद्रा भङ्ग न करना।

आवेश लावण्यमय,
घुमन्त से आखिद्वय,
घुमन्त अधरे हासि,
घुमन्त माधुरी राशि,
घूमन्त प्रतिमा खानि, फुटन्त कुसुम।
(ओगो) तार भाङ्गायो ना घुम।।

लावण्यमय आवेशमें निद्रित वे दोनों नयन हैं, निद्रित अधरों पर हास्यकी छटा, निद्रित माधुर्यकी राशि, निद्रित प्रतिमा, विकसित कुसुम जैसी सुशोभित हो रही है। अरे, उसकी निद्रा भङ्ग न करना।

शिथिल कबरी चुल,
दु'टि आखि ढुल ढुल,
वदने अमिया राशि,
अधरे घुमन्त हासि,

शिथिल कवरी और केशपाश, डोलती-सी दोनों आँखें, मुखमण्डलकी अमृत-राशि, अधरों पर निद्रित हँसी,--

मोहन घुमन्त-छबि, अमर प्रतिमा ।	निद्रित मोहिनी छबिकी अमर प्रतिमा
मधुर मोहन भाव, सुषमा नवीना ।	मधुर मोहन भाव, नवीन सुषमा कैसी
(ओगो) जागाइओ ना ताय ।।	शोभा पा रही है! अरे उसे जगाना मत ।
भाल करे देखि,	इस निद्रित वदन और निद्रित
चोखे चोखे राखि,	हृदयको मैं भली भाँति देखूँ, आँखोंमें
घुमन्त वदन खानि, घुमन्त हृदय ।	रख लूँ । उसे जगाना मत ।
जागाइओ ना ताय ।।	
सरमेर नाहि लेश,	लज्जाका लेश भी नहीं है, मोहने-
मोहन शिथिल वेश,	वाला शिथिल वेश है, निद्रित हृदय
घुमन्त हृदय खानि,	स्वर्गके अमृतकी खान है। प्रेमकी निद्रित
स्वरग अमियाखनि	छवि प्रेमका घर है । उसको जगाना
घुमन्त प्रेमेर छबि, प्रेमेर आलय ।	नहीं, जगाना नहीं, अजी, उसको
जागाइयो ना ताय ।	जगाना नहीं ।
जागाइयो ना ताय ।	
(ओगो) जागाइयो ना ताय ।।	
बुके बुक राखि,	मैं हृदयसे हृदयको लगाये रखकर,
मुखे मुख राखि,	मुखसे मुख लगाये रखकर, इसके निद्रित
भाल करे देखि, तार घुमन्त वदन ।	मुखमण्डलको भली भाँति देखूँ, इसकी
तार भाङ्गायो ना घुम ।।	निद्रा भङ्ग मत करना ।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी श्रीगौराङ्ग सुन्दरके क्रोड़में किस प्रकार निद्रित थीं, श्रवण कीजिए——

निद्रिता विष्णुप्रिया श्रीवामचरण ।	श्रीविष्णुप्रिया देवीके वाम चरणको
पार्श्वे उपाधानोपरि करिया रक्षण ।।	पार्श्वमें उपाधान (तकिये) के ऊपर
वक्षःस्थले निजगण्ड-उपाधान दिया ।	सावधानीसे रखकर उनके वक्षःस्थलको
बाहिर हइला गोरा द्वार उद्घाटिया ।।	भी अपने गालके तकियेका सहारा लगा
——वं० शि०	दिया और (धीरेसे) श्रीगौरचन्द्र द्वार
	खोलकर बाहर निकल गये ।

श्रीमतीजीके वाम चरणको अपने अंगसे धीरे-धीरे उठाकर श्रीगौराङ्गने उस स्थान पर एक तकिया रख दिया। श्रीमतीजीके वक्षःस्थलके सहारे अपने गालके तकियेको धीरे-धीरे रख दिया। कहीं श्रीमतीजीकी निद्रा पीछेसे भङ्ग न हो जाय, इस आशंकासे चतुर शिरोमणि निज-जन-निष्ठुर हमारे प्रभुने यह सब काम किये। उन्होंने धीरे-धीरे घरका द्वार खोला और फिर एक बार जाकर प्रियाकी निद्रित छबिका अन्तिम दर्शन किया। प्रियाके निद्रित मुँह पर एक नीरव चुम्बन प्रदानकर वे शयन-गृहसे बाहर निकल गये और गृह-प्राङ्गणमें खड़े होकर हाथ जोड़कर मन-ही-मन निद्रिता जननीको भक्तिभावसे प्रणाम किया।* बाहरी द्वार खोलकर, आङ्गनमें खड़े होकर, रात्रिवास त्याग कर, उन्होंने जन्म-भूमिको प्रणाम किया और एक बार फिर जननीके उद्देश्यसे प्रणाम करके थपड़ी बजाते हुए द्रुत गतिसे गङ्गातीरकी ओर चल पड़े। गङ्गा देवीको प्रणाम करके, अग्रज विश्वरूपको स्मरण करके प्रभु गङ्गाजलमें कूद पड़े।

---

* कवि श्रीबलराम दासजीने श्रीगौराङ्ग महाप्रभु द्वारा इस अवसर पर कही उक्तिका वर्णन निम्न रचनामें किया है--

जाइ ! मागो तोमाय तोमार **वधूर काछे रेखे।**	माँ ! तुमको तुम्हारी वधूके पास रखकर मैं जा रहा हूँ।
सदा कृष्णनाम निओ **(जाबार बेला)** **निमाइयेर एइ भिक्षे।।**	सदा कृष्ण नामका स्मरण करना, जाते समय निमाई यही भिक्षा माँग रहा है।
विष्णुप्रिया अबोधिनी **दुखिनी से अनाथिनि** **यतन करे दिओ तारे** **कृष्णनाम शिक्षे।**	विष्णुप्रिया भोली है, वह दुःखिनी और अनाथिनी है, उसको यत्नपूर्वक कृष्ण-नामकी शिक्षा देना।
रइते नारि निमाइ गेल **ए कलङ्क चिर काल** **जलन्त अनल सम** **बलरामेर वक्षे।।**	संसारमें रह सकनेमें असमर्थ होनेसे निमाई चले गये। यह कलंक चिरकालके लिये बलराम दासके वक्षः-स्थलपर अनलके समान जल रहा है।

बाहिरे आसिया प्रभु दाँड़ाये अङ्गने।
यथाविधि रात्रिवास करेन वर्ज्जने।।
तबे करवाद्य करि विष्णु भगवाने।
करिलेन परणाम अष्टाङ्ग विधाने।।
विष्णुरे प्रणाम करि शचीर कुमार।
बाहिर हलेन खुलि बाहिरेर द्वार।।
अन्तर्द्वार उद्घाटन अनादि रूपेते।
प्रभुर आश्चर्य कहे वेद पुराणेते।।
बाहिरे आसिया जन्मभूमिरे माताय।
परणाम करिलेन श्रीगौराङ्ग राय।।
—वं० शि०

नवद्वीप-चन्द्र नवद्वीपको अन्धकारमय करके चले गये। नवद्वीप-चन्द्रने नवद्वीपको त्याग दिया। हे चन्द्रदेव! तब तुम क्यों अब भी गगन-मण्डलमें दिखलायी देते हो? आज तुम उदय ही क्यों हुए? तुम यदि आज उदय न होते तो यह काल-रात्रि नहीं आ पाती! काल-रात्रि नहीं आती तो नवद्वीप-चन्द्र इस प्रकार चुपचाप गृह-त्याग नहीं कर पाते। एक भूमण्डलमें दो चन्द्रकी अवस्थिति असंभव होनेके कारण ही तो तुमने कहीं षड्यन्त्र करके नवद्वीप-चन्द्र श्रीश्रीगौराङ्ग सुन्दरको विदा नहीं कर दिया। तुम देवता हो, तुम्हारे मनमें इतनी हिंसा-प्रवृत्ति क्यों है? नवद्वीप-चन्द्र श्रीश्रीगौराङ्ग सुन्दरको विदा करके तुम्हारी यह चिर सुन्दर लावण्यमयी रूपराशि अधिक सौन्दर्यपूर्वक मानो आज नवद्वीप-गगनमें विकसित हो रही है। जान पड़ता है, यह तुम्हारी ईर्ष्याकी हँसी है। चन्द्रदेव! तुम्हारी इस हँसीसे आज कोई सुखी नहीं है। तुम्हारी सुधामयी हँसी आज नवद्वीपवासियोंको विष-तुल्य लग रही है, तुम अपने हास्यको संवरण करो, ईर्ष्याको त्याग दो। नवद्वीप-चन्द्र नवद्वीप-गगनको अन्धकारमय करके चले गये हैं, समस्त भूमण्डल अन्धकारमय हो जाय! जगत्-संसार अन्धकारमें डूब जाय! तुमको यदि तनिक भी लज्जा, भय और अभिमान है तो समस्त पृथ्वीको अन्धकारसे ढँककर दूर चले जाओ, आज कोई भी तुमको नहीं चाहता। नवद्वीप-चन्द्रके बिना जीवके हृदयमें सुख नहीं है। तुमको वे नहीं चाहते। वे जीवन-पर्यन्त अन्धकार-कूपमें पड़े रहेंगे, तब भी तुम्हारी यह ईर्ष्याकी हँसी, यह घृणाकी

हँसी आँखोंसे नहीं देखेंगे। तुम फिर नवद्वीपमें उदय न होना। नवद्वीप सतत अन्धकारमें डूबा रहे! नवद्वीप-चन्द्र नवद्वीपको अन्धकारमय करके चले गये हैं, उनके सिवा दूसरा कोई इसको आलोकित नहीं कर पायेगा। तुम्हारे हास्य-आलोकसे नवद्वीप आलोकित न होगा।

श्रीलोचन दास ठाकुरने लिखा है कि किस प्रकार नवद्वीप-चन्द्र श्रीश्रीगौराङ्ग सुन्दर नवद्वीप छोड़कर चले गये--

किवा दिन माझे जेन रवि लुकाइल।

दिनके मध्यमें ही मानो सूर्यदेव अकस्मात् छिप गये और चतुर्दिक अन्धकार परिपूर्ण हो गया। उस अन्धकारको दूर करनेकी शक्ति चन्द्रदेवमें नहीं। नवद्वीपवासियोंके मनका अन्धकार मनमें ही रह गया। वह अन्धकार दूर होने-वाला नहीं। श्रीगौराङ्ग-विरहरूप काल-मेघने नवद्वीपवासियोंके हृदयको आच्छन्न कर दिया। श्रीगौरचन्द्र-वियोग-दुःख-सागरमें नवद्वीपवासी गोते खाने लगे, मानो उनके शरीरको छोड़कर अचानक प्राण निकल गये।

देह छाड़ि प्राण जेन गेल आचम्बित।

श्रीगौर-विरह-पर्वतने मानो सबको दबाकर मार डाला। अकस्मात् यह पर्वत घोर निनाद करते हुए नवद्वीपवासियोंके मस्तक पर गिर पड़ा।

शोकेर पर्व्वते जेन सभाकारे चापे। शोकके पर्वतने मानो सबको दबा दिया।

नवद्वीपवासी श्रीगौर-वियोगमें हाहाकार करने लगे।

●

पंचविंश अध्याय

श्रीगौर-विरहमें शची-विष्णुप्रियाकी अवस्था

शची देवी कान्दे कोले करि विष्णुप्रिया ।
विष्णुप्रिया मरा जेन रहिल पड़िया ।।
--चै० मं०

शची माता विष्णुप्रियाको गोदीमें ले क्रन्दन कर रही हैं और विष्णुप्रिया मृतकवत पड़ी हैं।

● प्रियाजीकी निद्रा भङ्ग और शची माँको सूचना

उस पिशाची काल-रात्रिके दो दण्ड रहते श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी निद्रा भङ्ग हुई।

क्रमे सेइ कालरात्रि लयोन्मुखा हइला ।
चमकिया विष्णुप्रिया अमनि जागिला ।।
--वं० शि०

क्रमशः वह काल-रात्रि लय होनेको आई, वैसे ही विष्णुप्रिया चमककर उठीं।

शय्या पर पति देवताको न देखकर श्रीमतीजीने चकिता हरिणीके समान झटपट शय्यासे उठकर इधर-उधर खोजा। अन्धेरे घरके भीतर वे कुछ भी नहीं देख पा रही हैं। श्रीमतीजीने भयार्त्त होकर शय्याके चारों ओर हाथसे टटोलकर देखा, उनके प्राणवल्लभ शय्या पर नहीं थे। शय्यासे उठकर देखा कि घरका द्वार खुला हुआ है। तब श्रीमतीजीने सिर पीट-पीटकर रोते हुए कहा--"इस अभागिनीका भाग्य फूट गया।"

जागिया देखेन सती नाहि प्राणनाथ ।
द्वार उद्घाटन देखि सिरे हाने हात ।।
--वं० शि०

जागकर सतीने देखा कि प्राणनाथ नहीं हैं, द्वार खुला देख सिरपर हाथ मारने लगीं।

एक बार श्रीमतीजीके मनमें हुआ कि कहीं उनके प्राणवल्लभ परिहास करके घरमें छिपे न हों। यह सोचकर उन्होंने घरके चारों कोनोंमें अनुसन्धान किया, पलङ्गके नीचे भी देखा, परन्तु घरमें कहीं भी प्राण-वल्लभको

नहीं दीख पड़े। तब श्रीमतीजी दुःखसे अवसन्न हो उठीं। उनके तत्कालीन मनकी व्यथाका श्रीलोचन दास ठाकुरने अति सुन्दर वर्णन किया है––

एथा विष्णुप्रिया, चमकि उठिया,	इधर विष्णुप्रिया चमककर उठके
पालङ्के बसिया बुलाये हात।	पलंगपर बैठीं हाथसे टटोलने लगीं।
प्रभु ना देखिया, कान्दिया कान्दिया,	प्रभुको न देखकर रो-रोकर सिर
शिरे मारे कराघात।।	पर हाथ पीटने लगीं।
ए मोर प्रभुर, सोणार नूपुर,	मेरे स्वामीके ये सोनेके नूपुर,
गलाय सोणार हार।	गलेका सोनेका हार––
ए सब देखिया, मरिब झुरिया,	इन सबको देखकर झूर-झूर मरूँगी,
जिते ना पारिब आर।।	अब मैं जीवित नहीं रह सकती।
मुञि अभागिनि, सकल रजनी,	मैं अभागिनी सारी रात प्रभुको
जागिल प्रभुरे लैया।	लेकर जागती रही।
प्रेमेते बान्धिया, मोरे निद्रा दिया,	प्रेमके बन्धनमें बान्धकर, मुझे
प्रभु गेल पलाइया।।	सुलाकर प्रभु भाग गए।

श्रीमतीजी अब शान्त न रह सकीं। रोती हुई दौड़कर सासको पुकारा।

तबे सती विष्णुप्रिया कान्दिते कान्दिते।	तब सती विष्णुप्रियाने रोते-रोते
डाकिया जागान ठाकुराणीके त्वरिते।।	शीघ्र ठाकुरानीको पुकारकर जगाया।

'माँ' कहकर एक बार पुकारते ही शची देवीकी निद्रा भङ्ग हो गई। वे बहूकी असामयिक पुकार सुनकर चकित होकर बिखरे केश घरका द्वार खोलकर बाहर आयीं। अत्यन्त उत्कण्ठाके साथ श्रीमतीजीसे पूछा––"बेटी! इस समय मुझे क्यों पुकारा? मेरे निमाईका कोई अमङ्गल तो नहीं हुआ? निमाई कहाँ है?" इतना कहते-कहते शची देवीने श्रीमतीजीको पकड़ लिया।

रोदनेर सह सुनि स्ववधूर भाष।	रुदनके साथ बहूकी आवाज सुनकर
जागिया उठिला माता हइया हताश।।	माता हताश होकर जाग उठीं।
द्वार उद्घाटिया माता बाहिरे आसिला।	द्वार खोलकर माता बाहर आयीं।
कि हलो कि हलो बले बधूरे धरिला।।	बहूको पकड़ कर पूछने लगीं––"क्या
––वं० शि०	हुआ? क्या हुआ?"

श्रीमतीजीने रोते-रोते कहा—"माँ! वे रात भर घरमें थे। बस रात बीतते-बीतते हम लोगोंको छोड़कर न जाने कहाँ चले गये! घरका द्वार खुला पड़ा है। मैं उनको ढूँढ़कर कहीं भी न पा सकी।"

शचीर वचन शुनि कन विष्णुप्रिया।
पलायाछे तव पुत्र मोदेर छाड़िया।।
—वं० शि०

शची देवीकी बात सुनकर विष्णु-प्रिया कहती हैं कि आपके पुत्र हम लोगोंको छोड़कर भाग गये।

शयन मन्दिरे छिला,
मागो मा से कोथा गेला
मोर मुंडे बजर पाड़िया।
—लोचनदास

वे शयन-मन्दिरमें थे। अरी माँ! मेरे सिर पर बज्र गिराकर वे कहाँ चले गये?

● शची माता द्वारा अन्वेषण और विलाप

शची देवीके मस्तकपर बज्र गिर पड़ा। कुछ देरके लिए वे स्तम्भित हो गयीं। अकस्मात् निमाई चाँदकी पहली सारी बातें याद हो आयीं। परन्तु मनमें विश्वास नहीं हुआ। शची देवी मन-ही-मन सोच रही हैं—"क्या यह हो सकता है? मुझको कहे बिना मेरा निमाई चला जायगा? निश्चय ही वह बहूके साथ कौतुक करके कहीं छिपा है।" यह सोचकर वे द्रुतगतिसे पहले पुत्रके घरमें गयीं। घरको छान करके खोज डाला। कहीं भी निमाईको न देख आङ्गनमें आ पछाड़ खा गिरीं और हाहाकार करने लगीं।

बधूर मुखेते एइ शुनिया उत्तर।
बेगे जाञा प्रवेशिल तनयेर घर।।

वधूके मुखसे ऐसा उत्तर सुन शीघ्रतासे पुत्रके शयनागारमें प्रवेश किया।

घरे गिया देखे माता नाहिक निमाइ।
अमनि अङ्गने आसि पड़े आछड़ाइ।।
—वं० शि०

वहाँ जाकर माताने देखा कि निमाई तो नहीं है, तो उसी समय आङ्गनमें आ पछाड़ खाकर गिर पड़ीं।

शची माताके मनका भ्रम तब भी दूर नहीं हुआ। धूल धूसरित देहसे आङ्गनसे उठकर प्रदीप जलाया। पुत्रबधूको साथ लेकर वे रात्रिके अवसानमें घरसे बाहर निकलीं। द्वारके बाहर खड़ी होकर प्रदीपके द्वारा

चारों ओर खोजने लगीं और--"निमाई रे! बाप रे! कहाँ गया रे?"--कहकर उच्च स्वरसे क्रन्दन करने लगीं।

तुरिते ज्वालिया बाति, देखिलेन इति उति
कोन ठाँइ उद्देश ना पाञा।
विष्णुप्रिया बधूसने, पड़िया बहिराङ्गने
डाके शची निमाइ बलिया॥

सड़कपर खड़ी होकर सास और पुत्रबधू प्रदीप हाथमें लेकर प्रभुको खोज रही हैं--यह दृश्य बड़ा ही हृदयविदारक और मर्मभेदी है। शची देवीकी 'निमाई रे! बाप रे!' क्रन्दन-ध्वनि और आर्त्तनादसे नदिया नगरी प्रकम्पित हो उठी और नदियावासी जाग उठे। श्रीमती विष्णु-प्रिया देवी शची देवीका अञ्चल पकड़कर रो रही हैं। नयनाश्रुसे श्रीमतीजीका वक्षःस्थल डूब रहा है। शची देवी पगली-सी हो रही हैं, वे बाह्यज्ञान-शून्य हैं। वे पुत्र-बधूसे कहती हैं--"तुम भी पुकारो न?" श्रीमतीजी क्या कहकर प्राणवल्लभको पुकारें? वे मन-ही-मन प्रभुको पुकार रही हैं और अजस्र नयनोंसे क्रन्दन कर रही हैं। शची देवीके आर्त्तनादसे वनके पशु-पक्षी तक अधीर हो रहे हैं। उस समय काल-रात्रि व्यतीत हो प्रभात-सा होने लगा था। शची देवीके आकुल क्रन्दनसे पशु-पक्षी भी रो पड़े और शची देवी एवं विष्णुप्रियाके दुःखमें सहानुभूति दिखलाने लगे। दीर्घ निःश्वासके बहाने प्रभात-वायु जोरसे बहने लगी। दो-एक आदमी प्रातः-स्नान करनेके लिये गङ्गातटकी ओर जा रहे थे। शची देवी उनको देखकर कातर स्वरसे रोते-रोते कहने लगीं--"अरे! तुम लोगोंने मेरे निमाईको देखा है?" एक-एक करके सबसे यह बात पूछ रही हैं, किसीके द्वारा पुत्रका पता न पाकर शची देवी घरके द्वारपर आकर जड़वत् बैठ गयीं। प्रभात हुआ देखकर श्रीमतीजी सासको अञ्चल पकड़कर घर खींच लायी थीं। शची देवी घरके द्वार पर बैठी हैं और श्रीमतीजीने उनको पकड़ रक्खा है।

प्रभु चलिलेन मात्र शची जगन्माता।	प्रभुके चले जाते ही जगन्माता शची
जड़ हइलेन किछु नाहि स्फुरे कथा॥	देवी जड़वत् हो गयीं, उनके मुँहसे कोई
--चै० भा०	बात नहीं निकलती।

● भक्तोंका आगमन

प्रभुके भक्तगण प्रति दिन प्रातःकाल गङ्गास्नान करके शची देवीके घर आकर पहले प्रभुके दर्शन करके तब अपने-अपने घर जाते थे। नियम अनुसार वे आज भी एक-एक करके आ रहे हैं। वे लोग प्रभुके गृह-त्यागका दारुण समाचार सुनकर हाहाकार करके जमीन पर बैठ गये। श्रीवास, नित्यानन्द, वासु घोष आदि सभी आये हैं। शची देवीको बहिर्द्वार पर देखकर पहले ही श्रीवास पण्डितके मनमें सन्देह हुआ था।

प्रथमेइ बलिलेन श्रीवास उदार।
आइ केन रहियाछेन बाहिर दुयार ॥——चै० भा०

प्रभुके पुराने नौकर ईशान पुत्र-विरह-शोकातुर शची देवीको पंकड़कर बैठे हैं। लोगोंकी भीड़ देखकर श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको ईशान घरके आङ्गनमें पहुँचा आये हैं। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी अकेली घरके आङ्गनमें धूलमें मृतवत् पड़ी हैं।

विष्णुप्रिया मरा जेन रहिल पड़िया।——चै० मं०

शची देवी भक्तगणको देखकर उच्चस्वरसे रो पड़ीं। सबने समझ लिया कि सर्वनाश हो गया है, प्रभुने गृह-त्याग कर दिया है। कोई आदमी शची देवीसे कुछ पूछ नहीं पा रहा है। तथापि प्रभुके गृह-त्यागका विशेष विवरण जाननेके लिये सब उत्सुक हैं। ईशानसे पूछकर उनको कोई विशेष जानकारी न हो सकी। अन्तमें श्रीवास पण्डितने शची मातासे जाकर पूछा——"माँ! क्या हुआ है? खोलकर बताओ।" तब शची देवी रोते-रोते श्रीनित्यानन्दको लक्ष्य करके कहने लगीं——

शची कहे शुन मोर निताइ गुणमणि!
के वा आसि दिल मन्त्र
के शिखाइल कोन तन्त्र
कि वा हइल किछुइ ना जानि ॥

शची देवी कहती हैं——"हे मेरे गुणमणि निताई! सुनो। न जाने किसने आकर मन्त्र दिया, किसने क्या तन्त्र सिखलाया, क्या हो गया? मैं कुछ भी नहीं जानती।

गृह माझे शुयेछिनु भाल मन्द ना जानिनु कि वा करि गेलरे छाड़िया।	मैं घरमें सोयी थी, बुरा-भला कुछ नहीं जानती थी। वह कैसे मुझे छोड़ गया ?
केवा निठुराइ कैल पाथारे भासाञा गेल रहिब काहार मुख चाहिया।।	किसने निष्ठुरता की ? मुझे समुद्रमें डुबा गया। किसका मुँह देखकर मैं रहूँगी ?"

--वासु घोष

शची देवीके मुँहसे प्रभुके गृहत्यागकी बात सुनकर सब भक्तोंके सिर पर मानो बज्रपात हो गया।

बजर पड़िल जेन सभार माथाय।

सभी हाहाकार करने लगे। नित्यानन्द शची देवीके पास बैठ गये। ईशान अब भी शची देवीको पकड़कर बैठे हुए थे। सारे अङ्ग वस्त्रसे ढँककर आँगनमें पड़ी-पड़ी श्रीमती विष्णुप्रिया देवी चुपचाप रो रही हैं। मालिनी आदि पड़ोसकी स्त्रियाँ यह दारुण समाचार पाकर प्रभुके घर आयीं।

प्रभुके गृह-त्यागका समाचार अब सबने सुन लिया।

दुयेर रोदन-ध्वनि शुनिया सकले। व्यस्त हये शची-गृहे दौड़ा-दौड़ि चले।। शची-गृहे जाञा सबे करेन श्रवण। अलक्षिते पलायेछे शचीर नन्दन।। --वं० शि०	दोनोंके रोनेकी ध्वनि सुनकर सब घबराकर शची देवीके घरकी ओर दौड़ चले। शची देवीके घर जाकर सबने सुना कि शचीनन्दन चुपचाप भाग गये हैं।

● शची देवी और विष्णुप्रियाकी हालत

शची देवीको घेरकर बैठे हुए सब रो रहे हैं तथा उनको प्रबोध दे रहे हैं। काञ्चना आकर श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके पास बैठकर रो रही हैं। किसीके मुँहसे कोई बात नहीं निकल रही है, सभी व्याकुल होकर रो रहे हैं। प्रभुके गृह-त्यागका संवाद सुनते ही अनेकों मूर्छित होकर भूतल पर पड़ गयी हैं और उठनेमें अशक्त हैं। पृथ्वी पर पड़ी हुई तड़प-तड़प कर रो रही हैं। भक्तगण, शची देवी तथा विष्णुप्रियाकी तात्कालिक अवस्थाका वर्णन ठाकुर लोचनदासने एक वाक्यमें किया है--

परिजन पुरजन शची विष्णुप्रिया ।
मूर्च्छित हइया कान्दे अङ्ग आछाड़िया ।।

उनके शरीर केवल भूतल पर पड़े हैं। प्राण श्रीगौराङ्गके साथ चले गये हैं। शची देवी––"निमाई रे! बाप रे!" कहकर व्याकुल होकर उच्च-स्वरसे विलाप कर रही हैं। उनके हृदय मानो दहकती अग्निमें भस्म हो रहे हैं।

अवयव आछे प्राण गेलत छाड़िया ।
शची विष्णुप्रिया कान्दे भूमिते लोटाञा ।।

शरीरके अवयव केवल बचे हैं, प्राण छोड़कर चले गये हैं। शची देवी और विष्णुप्रिया भूमि पर लोटकर रो रही हैं।

शची देवी कान्दे डाके निमाइ बलिया ।
आगुने पुड़िल जेन धक् धक् हिया ।।
––चै० मं०

शची देवी "निमाई! निमाई!" पुकार कर रो रही हैं। उनका धक्-धक् करता हृदय, मानो अग्निसे जल गया है।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी अवस्था देखकर शची देवी स्थिर न रह सकीं, पगलीके समान दौड़कर उनके पास गयीं और उनको गोदमें लेकर बैठ गयीं। श्रीमतीजीकी अवस्था देखकर शची देवी व्याकुल होकर रोने लगीं।*

---

* श्रीशची माता और श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीके हृदयविदारक रुदनको सुनकर सारे नदिया-निवासियोंका धैर्य टूटा जा रहा था––सभी अश्रु-विगलित थे। इसी दुःखद प्रसंगको श्रीवंशीवदनजीने भी अपनी रचनामें यों व्यक्त किया है––

निदय केशव भारती आसिया,
माथाय पाड़िल बाज ।

निर्दयी केशव भारतीने आकर सिर पर वज्र गिरा दिया।

गौराङ्ग सुन्दर, ना देखि केमने,
रहिब नदीया माझ ।

गौराङ्ग सुन्दरको देखे बिना नदियामें कैसे रहा जायगा?

केवा हेन जन आनिबे एखन
आमार गौराङ्ग राय ।

ऐसा कौन व्यक्ति है, जो अब हमारे गौराङ्ग रायको ला देगा?

शाशुड़ी बधूर रोदन शुनिया
वंशी गड़ागड़ि जाय ।।

सास और वधूका ऐसा रुदन सुन वंशी-वदन लोट-पोट करता छट-पटा रहा है।

पञ्चविंश अध्याय––शची देवी और विष्णुप्रियाकी हालत

शची देवी कान्दे कोले करि विष्णुप्रिया।

श्रीमतीजीकी तात्कालिक अवस्था ठाकुर लोचनदासकी भाषामें सुनिये––

विष्णुप्रिया कान्दे हिया नाहिक सम्वित।
क्षणे उठे क्षणे पड़े उनमत चित।।

विष्णुप्रिया रोती हैं, उनके हृदयमें शान्ति नहीं है। उन्मत्त चित्त होकर क्षणमें उठती हैं, क्षणमें गिर पड़ती हैं।

वसन सम्बरे नाहि ना बाँधये चुलि।
हा कान्द कान्दना कान्दे उन्मति पागली।।
––चै० मं०

वस्त्र सँभलता नहीं है, न केश बाँधती हैं। उन्मत्त और पागलके समान हाहाकार करती हुई क्रन्दन करती हैं।

गत रात्रिका प्रभुका दिया हुआ प्रसाद, अङ्गकी माला आदि श्रीमतीजी यत्नपूर्वक उदर पर धारण किये हैं। उनके प्राणबल्लभने गत रात्रिमें उनको मनकी साधसे सजाया था। उसका चिह्न अब भी देवीके अङ्ग पर वर्तमान है। प्रभुके श्रीहस्तका वेणी-बन्धन अब तक शिथिल नहीं हुआ है, प्रभुके श्रीहस्तसे अंकित अलका-गुच्छ अब भी श्रीमतीजीके कपोल-देशमें प्रकाशमान हो रहा है। रसिक चूड़ामणि श्रीगौराङ्गकी रस-केलिके चिह्न श्रीमतीजीके सारे अङ्गोंमें विद्यमान हैं। पुत्र-शोकातुर शची देवीके समान श्रीमती विष्णु-प्रिया देवी विलाप करके रो नहीं पा रही हैं। क्योंकि वे कुलवधू हैं, वयोवृद्ध रमणीगणके बीचमें कैसे प्राणबल्लभकी गुणावली बखानकर विलाप करें? स्वाभाविक लज्जा आकर उनको बाधा देती है। श्रीमतीजी भीतर ही भीतर हृदयाग्निसे दग्ध हो रही हैं और आर्त्तनाद कर रही हैं।

प्रभुर अङ्गेर माला हृदये करिया।
ज्वालह आगुनि आमि मरिब पुड़िया।।

अग्नि जलाओ। मैं प्रभुके अङ्गकी माला हृदयमें धारण कर जल मरूँगी।

गुण बिनाइते नारे मरये मरमे।
सबे एक बोले देवी एइ छिल करमे।।

उनके गुणोंका बखान नहीं कर पा रहीं हैं। मर्म-व्यथासे मरी जाती हैं। सब लोग एक ही बात कहते हैं–– "देवि! यही कर्ममें था।"

अमिया अधिक प्रभु तोर जत गुण।
एखने सकल सेइ भैगेल आगुन।।

हे प्रभु! तुम्हारे जितने गुण थे, वे अमृतसे भी बढ़कर थे। अब वे सब अग्नि बन गये हैं।

रहस्य विनोद कथा कहिबारे नारे।
हियार पोड़नि पोड़े अति आर्त्तस्वरे ।।
—चै० मं०

उनके रहस्य-बिनोदकी बातें कही नहीं जा सकतीं। श्रीमती हृदयकी ज्वालासे दग्ध होती हुई अति आर्त्त-स्वर से विलाप कर रही हैं।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी राजरानी थीं। दो दण्ड पहले स्वामी-सोहागिनी सरला बाला स्वर्ग-सुखको तुच्छ मानकर प्राणवल्लभके सङ्ग-सुखका उपभोग कर रही थीं। आज वे एक जनके अभावमें पथकी भिखारिणी हो गयीं, संसारमें उनके समान दु:खिनी रमणी और कोई नहीं है। उनका सारा सुख चला गया है। एक मात्र गौराङ्गके बिना वे पथकी भिखारिणी हो गयी हैं। श्रीमतीजीका दु:ख वर्णनातीत है, उनके दु:खकी सीमा नहीं है। वे श्रीगौराङ्ग सुन्दरको पति-रूपमें प्राप्तकर जैसे सुखमें थीं, उनको अपने समान सौभाग्यवती रमणी जगतमें और कोई नहीं जान पड़ती थी, वैसे ही आज वे त्रिभुवन-पूज्य अपने प्राणवल्लभके वियोग-जनित दु:ख-समुद्रमें डूब रही हैं। श्रीमतीजीके कुसुम-कोमल बाल-हृदय पर कठिन आघात लगा है। बालिकाका हृत्पिण्ड मानो टुकड़े-टुकड़े हो रहा है। उस दु:खका वर्णन नहीं किया जा सकता, इसी कारण श्रीमतीजी चुपचाप रो रही हैं और स्वामीकी विरहाग्निमें जलकर भस्मसात् हो रही हैं और कह रही हैं—

ज्वालह आगुनि आमि मरिब पुड़िया।

अग्नि जलाओ, मैं जलकर मरूँगी।

शची देवी पुत्रके शोकमें अत्यन्त अधीर हो गिर पड़ी हैं। उनको निमाई चाँदके बिना चतुर्दिक अन्धकार दिख रहा है। मणिविहीन फणिके समान वृद्धा छटपटाती हुई, घरके प्राङ्गणकी धूलमें लोट रही हैं। शून्य घर-द्वार सब मानो उनको हा······करके निगलने आ रहा है। आत्मीय स्वजनोंकी बातें उनको मानो विषवत् लग रही हैं। वे केवल—'निमाई रे! बाप रे! कहाँ गया रे!'—कहकर उच्च-स्वरसे आर्त्तनाद कर रही हैं। शची देवीकी सकरुण विलाप-ध्वनिसे पाषाण भी द्रवित हो रहे हैं।

शून्य हैल दशदिग् अन्धकारमय।
केमने बञ्चिब मुइ घर घोरमय ।।

दशों दिशाएँ शून्य अन्धकारमय हो गयीं। घर भयानक लग रहा है, मैं कैसे जीऊँगी?

गिलिवारे आइसे मोरे ए घर करण । विष जेन लागे इष्टकुटुम्बवचन ।।	यह घर-बार मुझे निगलने आ रहा है। इष्टजन तथा कुटुम्बी लोगोंकी बातें विष जैसी लगती हैं।
मा बलिया आर मोरे ना डाकिबे केहो । आमारे नाहिक यम पासरिल सेहो ।।	अब मुझको 'माँ' कहकर और कोई नहीं पुकारेगा। मेरे लिये यमराज भी नहीं है, वह भी मुझको भूल गया।
किवा दुख पाइ पुत्र छाड़िला आमारे । हापुति करिया पुत्र गेला कोथाकारे ।।	हे बेटा! कौन दुःख पाकर तुमने मुझको छोड़ दिया? हे पुत्र! मुझे निपूती बनाकर तू कहाँ चला गया?
हाय! हाय! निदारुण निमाइ हइया । कोन् देशे गेला पुत्र के दिबे आनिया ।।	हाय! हाय! निमाई निष्ठुर होकर किस देश चला गया? हाय! मेरे बेटेको कौन लाकर देगा?
बुक फाटे तोर बाप् सोङरि माधुरी । मा बलिया आर ना डाकिब गौरहरि ।।	वत्स! तेरी माधुरीका स्मरण करके मेरा कलेजा फटा जाता है। हे गौरहरि! माँ कहकर मुझे तू अब नहीं पुकारेगा ?
अनाथिनी करिया कोथाय गेले बाप् । मने छिल जननीरे दिव आमि ताप ।।	अरे बेटा! तू मुझको अनाथिनी करके कहाँ चला गया? क्या तेरे मनमें यही था कि माताको सन्ताप दूँ?
पड़िया शुनिया पुत्र इहाइ शिखिला । अनाथिनी अभागिनी मायेरे करिला ।।	क्या पढ़-लिखकर तुमने यही सीखा? माँको तुमने अनाथिनी और अभागिनी बना डाला।
कोथा विष्णुप्रिया एड़ि पलाइया गेला । भकत जनार प्रेम किछु ना गणिला ।। --चै० मं०	विष्णुप्रियाको छोड़कर तू कहाँ भाग गया? भक्तोंके प्रेमको तुमने कुछ भी न समझा!

इस प्रकार पुत्र-विरहमें कातर होकर शची देवी गुण गा-गाकर विलाप कर रही हैं। मालिनी आदि स्त्रियाँ उनको घेरकर बैठी हुई रो रही हैं। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी मृतवत् निकट ही धूलमें पड़ी हैं, देहमें केवल प्राणमात्र हैं।

● श्री नित्यानन्दजीको प्रभुकी खोजमें भेजना

उसी समय नित्यानन्द शची देवीके पास आकर बैठ गये, वे उनके मुँहकी ओर देख न सके। आँखोंकी अश्रु-धारासे श्रीनिताई चाँदका वक्षःस्थल डूब रहा है। वे शची देवीको समझाने-बुझाने आये थे, पर स्वयं ही व्याकुल होकर अजस्र आँसू बहा रहे हैं। शची देवी श्रीनिताईको देखकर और भी कातर भावसे हाहाकार कर उठीं। श्रीनिताई कुछ सुस्थिर होकर शची माताको संबोधन करके बोले—"माँ! अब मत रोओ, जरा सुस्थिर हो जाओ! हम सब लोग मिलकर तुम्हारे पुत्रको खोजने जाते हैं। जहाँ निमाईको पावेंगे, पकड़कर तुम्हारे पास ले आवेंगे। माँ, तुम इतनी उतावली मत करो, तुम इस प्रकार हाहाकार करोगी तो तुम्हारी बालिका पुत्रवधूकी प्राणरक्षा न होगी। तुमको स्त्रीबधका भागी होना पड़ेगा।"

शची देवी श्रीनिताई चाँदकी बातें सुनकर कुछ आश्वासित होकर उठ बैठीं। श्रीनिताई चाँदको देखकर मानो उनका दुःख-समुद्र उमड़ उठा। श्रीनिताईको पहचान कर उनके पास जाकर बालकके समान उनका गला पकड़कर रोने लगीं। शची देवी पागलिनीके समान रोती हुई बोलीं—"बेटा निताई! तुझको देखकर मैं विश्वरूपको भूल गयी थी, मेरा निमाई तुझको बड़े भाईके समान मानता था। सारी बातें तुझसे कहता था। वह कहाँ गया है—निश्चय ही तुमसे कहकर गया होगा। तू सब कुछ जानता है, मुझको अब धोखा न दे। तुम सबने मिलकर मन्त्रणा करके मेरे निमाईको कहाँ भेज दिया? उसको यदि लाकर नहीं दिया तो तू स्त्रीबधका भागी बनेगा, केवल एकका ही नहीं, दोका। अब जहाँ मिले वहाँसे मेरे खोये हुए धन निमाईको ला दे।"

इतनी बात कहते-कहते शची देवीका शरीर अवसन्न हो गया। वे श्रीनित्यानन्दकी गोदमें मूर्च्छित होकर गिर पड़ीं। बहुत कठिनाईसे सबने मिलकर शची देवीकी मूर्च्छा भङ्ग की। श्रीनित्यानन्दके क्रोड़में शची देवी सोयी हैं, उनकी वाक्-शक्ति अवरुद्ध हो गयी, केवल एकटकसे नित्यानन्दके मुँहकी ओर ताक रही हैं। तब नित्यानन्दने अपने स्वभाव सिद्ध मधुर वचनोंसे शची देवीसे कहा—"माँ! तुम बुद्धिमती हो, धैर्य धारण करो, घबराओ मत। हम पाँच आदमी पाँच ओर निकलेंगे, हम अभी जायँगे,

देरी नहीं कर सकते। तुम्हारे निमाईको जहाँ पायँगे, वहाँसे पकड़कर तुम्हारा खोया धन तुम्हारे पास ला देंगे। तुम धैर्य धारण करके अपनी पुत्रबधूके मुँहकी ओर देखो, जिससे उस बालिकाकी प्राणरक्षा हो सके।"

शची देवीको उस समय वाह्य ज्ञान हो गया था। श्रीनित्यानन्दके आश्वासनसे स्थिर चित्त होकर बोलीं--"बेटा निताई! जाओ देर हो गयी है। निमाई भूखा होगा, कुछ प्रसाद लेते जाओ।" इतना कहकर वृद्धा आङ्गनसे उठकर ठाकुरवाड़ीसे कुछ प्रसाद लाकर श्रीनित्यानन्दके हाथमें दे दिया। श्रीनित्यानन्दने अनुभव किया कि प्रभुके ऊपर शची देवीका वात्सल्यभाव कितना प्रबल है। उन्होंने यह भी समझ लिया कि श्रीगौराङ्गके विरहमें वे अधिक दिन नहीं जियेंगी। शची देवीके दिये हुए प्रसादको हाथमें लेकर श्रीनित्यानन्द रोते-रोते विदा हुए। वे घरसे बाहर आकर भक्तगणके साथ परामर्श करके चन्द्रशेखर आचार्यके साथ प्रभुकी खोजमें तुरन्त निकल पड़े।

● प्रभुकी प्रतीक्षामें शची माता

शची देवी पुन: गृहद्वार पर बैठकर निमाई चाँदके आगमनकी प्रतीक्षा करने लगीं। द्वारपर बैठकर वृद्धा कातर कण्ठसे पुत्रके लिये विलाप करने लगीं। ग्रन्थकार-रचित 'शची विलाप' शीर्षक कविता यहाँ उद्धृत की जाती है।

(१)

निमाइ! निमाइ! कोथा गेले बाप्
दुखिनी जननी फेलिया।
(ओगो)
चारिदिके आमि, हेरि जे आँधार
कोथा गेल बाछा चलिया।।

(१)

निमाई! निमाई! अरे बेटा! तू अपनी दु:खिनी माताको छोड़कर कहाँ चला गया? अरे लोगो! मुझे चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार दिख रहा है। मेरा बच्चा कहाँ चला गया?

पलके ना हेरि वदन जाहार,
त्रिभुवन देखि घोर अन्धकार,

जिसका मुँह क्षण मात्र भी न देखने पर मेरे लिये त्रिभुवन घोर अन्धकारमय दीखता था।

कोथा गेल मोर नयनेर मणि,
(आमार) पराण जे गेल दहिया।
(तोरा) बल् ना आमाय कोथा गेल बाछा
आँधार करिया नदीया॥

वह मेरे नयनोंकी मणि कहाँ चला गया? मेरा हृदय जला,जा रहा है! तुम लोग बतलाओ तो मेरा बच्चा नदियाको अन्धकारमय करके कहाँ गया?

(२)

एइ जे छिल से निद्रित शयाने
कोथा चलि गेल गोपने।
(ओगो) केरे आसि तार घुम भाङ्गाइल
लये गेल का'र भवने॥

वह जो अभी नींदमें सोया था, छिपकर कहाँ चला गया? अरे किसने आकर उसकी निद्रा तोड़ी और उसको किसके घर ले गया?

(आमि) सारा पथ खुँजि नदीया नगरे,
निमाइ! निमाइ! डाकि उच्चैःस्वरे,

मैं नदिया नगरमें सारे रास्ते उच्चस्वरमें निमाई! निमाई! पुकारती हुई ढूंढती हूँ।

केउत बले ना कोथा गेल बाछा,
कि काज राखिया जीवने।
(आमि)
मणिहारा फणी जनम दुखिनी
(आमार) जुड़ाबे ए ज्वाला मरणे॥

कोई भी नहीं बता रहा है कि मेरा बच्चा कहाँ चला गया? अब इस जीवनको रखनेसे क्या लाभ? मैं मणिविहीन फणिके समान जन्म दुःखिनी हूँ, मेरी यह ज्वाला मरनेपर ही शीतल होगी।

(३)

(आमि) चिर-अभागिनी, बहु भाग्यबले
दियेछिला विधि बाछारे।
(ओगो) कि पापे हारानु हेन गुणनिधि
केवा बले दिबे आमारे॥

मैं चिर अभागिनी हूँ, बड़े भाग्यसे विधिने मुझे यह बालक दिया था। अरे! किस पापसे मैंने ऐसे गुणनिधानको खो दिया, यह कौन मुझे बतलायेगा?

(आमार) सोणार संसार ह'ल छारखार,
अनाथिनी ह'ल बउ मा आमार,

मेरा सोनेका संसार जलकर भस्म हो गया। मेरी बधू अनाथिनी हो गयी।

सकल सुखेर ह'ल अवसान, भेसेछि आमि जे पाथारे । (ओगो) अकूल समुद्र सन्मुखे आमार कि काज ए छार संसारे ।।	सब सुखोंका अन्त हो गया । मैं समुद्रमें डूब रही हूँ । अरे ! मेरे सामने अपार समुद्र है । इस छार संसारसे क्या काम है ?

(४) (४)

कुक्षणे आसिल केशव भारती चमकिल प्राण देखिया । कि मन्त्रणा दिल सोणार बाछारे ल'ये गेल फाँद पातिया ।।	केशव भारती कुसमयमें आया था, उसको देखते ही मेरे प्राण चौंक उठे थे । न जाने मेरे सोनेके बच्चेको क्या मन्त्रणा देकर अपना फन्दा डालकर ले गया ।
(ओगो) जखनइ ताँहारे देखिलाम द्वारे, तखनइ पराण डाकिल कातरे,	अरे ! उसको द्वार पर देखते ही, मेरे प्राण कातर हो उठे थे ।
चमकिल हृदि दारुण तरासे भावी अमङ्गल भाविया । (ओगो) आमार बाछारे कोथा ल'ये गेल कि काज जीवन राखिया ।।	भावी अमङ्गलको सोच दारुण भयसे मेरा हृदय चौंक उठा था । अरे ! मेरे बच्चेको कहाँ ले गया ? अब इस जीवनको रखनेसे क्या काम ?

(५) (५)

(बाछा) क्षीर-सर-ननि-दुग्धे पोषित दुखेर वारता जाने ना । (तारे) के दिबे आहार क्षुधार समय, तृष्णाय पानीय बल ना ?	मेरा बच्चा क्षीर, मलाई, नवनीत और दूधसे पोसा गया था । वह दुःखकी बात जानता ही नहीं । बताओ तो उसको भूख लगने पर कौन आहार देगा और प्यास लगने पर कौन पानी देगा?
कत व्यथा पाबे कोमल पदेते, दगध हइबे आतप तापेते,	कोमल पैरोंसे चलनेमें उसे कितनी व्यथा होगी ?

चाँद मुखखानि बाछार आमार, (ए कथा) स्मरिले पाइ जे बेदना। (ओगो) कि ह'ल कि ह'ल कोथा गेल बाछा करिये आमाय छलना ।।	मेरे बच्चेका चाँद-सा मुखड़ा है तपती धूपसे दग्ध हो उठेगा। इस बातकी याद आनेसे हृदयमें वेदना हो उठती है। अरे! क्या हुआ, क्या हुआ, मेरा बच्चा मुझे छल करके कहाँ गया ?
(६)	(६)
निमाइ ! निमाइ ! बापरे आमार (तोर) एत यदि छिल मनेते। संसार-बन्धने केन बद्ध ह'लि आमारे पागल करिते ?	निमाई ! निमाई ! मेरे बेटे ! यदि तुम्हारे मनमें यही था तो मुझे पागल करनेके लिये संसारके बन्धनमें बद्ध क्यों हुआ ?
(तोर) माता पागलिनी जाया अनाथिनी सोणार पुतली जनम-दुःखिनी,	तुम्हारी माता पागलिनी हो गई है, तुम्हारी स्त्री अनाथिनी हो गई है। वह सोनेकी पुतली आजन्म दुःखिनी हो गयी।
(ओरे) देखे जा' देखे जा' निठुर हृदय, कि शेल बिँधेछे बुकेते।	अरे निष्ठुर हृदय ! आकर देख तो जा कि तूने हृदयमें कैसा शेल बींध दिया है ?
(ओगो) कोथा गेले मोर ए ज्वाला जुड़ाय पार कि तोमरा बलिते ?	अरे ! क्या तुम लोग बतला सकते हो कि कहाँ जानेसे मेरी यह आग शीतल होगी ?
(७)	(७)
चिर-अनाथिनी सोणार पुतली विष्णुप्रिया एबे बालिका। किछु नाहि जाने बाछारे आमार (से जे) नवीन-कुसुम-कलिका ।।	चिर अनाथिनी, सोनेकी पुतली विष्णुप्रिया अभी बालिका है। मेरे बच्चे ! वह कुछ भी नहीं जानती है, वह तो नवीन-कुसुम-कलिका है।
पारि ना देखिते मुखखानि तार हताशेर छाया विषाद-आगार,	मैं उसका मुँह देखनेमें असमर्थ हूँ, वह नैराश्यकी छाया तथा विषादका घर बन गयी है।

पागलिनी-प्राय थाके निरन्तर, (तार) आहार मात्र कणिका ।। मुखे नाइ वाक् झरे दु'टी आखि (आहा!) कि ज्वाला सहिछे बालिका ।।	निरन्तर पागलिनीके समान रहती है और आहार केवल कणिका मात्र है। उसके मुँहसे बात नहीं निकलती, दोनों आँखें झरती हैं। अहा ! वह बालिका कैसा सन्ताप सहन करती है।
(८)	(८)
(आमि) जे दिके ताकाइ विषादेर छाया पड़ेछे भुवन भरिया। लतापाता-गाय जीवजन्तु-मुखे रयेछे कालिमा छाइया ।।	मैं जिस ओर देखती हूँ, त्रिभुवनमें विषादकी छाया-ही-छाया दीखती है। लता-गुल्म, जीव-जन्तु सबके ऊपर कालिमा छायी पड़ी है।
सकलि रयेछे एक नाइ सुधु, जीवेर जीवन जगतेर विधु,	सब कुछ है, केवल एकको छोड़कर जीवोंका जीवन, जगतको प्रकाशित करनेवाला चन्द्र—
निमाइ आमार जगत-जीवन, (ओगो) कोथा गेल बाछा चलिया। दुःखेरे पाथारे डुबाये सकले आँधार करिया नदीया ।।	मेरा निमाई, जगतका जीवन नहीं है। अरे ! सबको दुःखके समुद्रमें डुबाकर और नदियाको अन्धकारमय करके मेरा बच्चा कहाँ चला गया ?

● प्रियाजीकी अवस्था

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी इस समय घरके भीतर भूमि-शय्या पर सोयी हैं। समीपमें मर्मसखी काञ्चना बैठी हैं। अश्रुप्रवाहसे देवीका वक्षःस्थल निमज्जित हो रहा है। उन्होंने वेश-भूषा दूर फेंक दिया है, आहार-निद्रा त्याग दिया है। वे मुक्त-केशी हैं, सर्वाङ्ग धूलि-धूसरित हैं, केवल एक मलिन वस्त्र सारे शरीरको ढके हुए है। निराभरण विषादमयी देवीकी प्रतिमा भूतल पर लोट रही है। देवीका शरीर निष्पन्द, जड़वत हो रहा है। केवल बीच-बीचमें एक हताश दीर्घ निःश्वासका शब्द श्रवण-गोचर होता है। पूर्वरात्रिकी बात स्मरण करके देवी कभी-कभी सिसक-सिसककर रो उठती हैं। काञ्चना पास ही बैठी हैं, देवीकी पीठ पर हाथ रक्खे हुए हैं, मुँहसे कोई बात नहीं निकल रही है। घर निःशब्द है, बीच-बीचमें

देवीके दीर्घ निःश्वासके शब्दके सिवा और कोई शब्द नहीं सुनायी देता। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके तत्कालिक भावको लेकर माधव घोषने एक सुन्दर पदकी रचना की है, जिसे यहाँ उद्धृत किया जाता है। माधव घोष वासु घोषके भाई थे, उन्होंने अपनी आँखों देवीकी अवस्था देखी थी, पदमें देवीकी प्रधाना सखी काञ्चनाकी उक्ति जान पड़ती है—

गौराङ्ग ! झाट करि चलह नदीया।
प्राणहीना हइल अबला विष्णुप्रिया।

हे गौराङ्ग ! झटसे नदिया चलो, अबला विष्णुप्रिया प्राणहीन हो रही है।

तोमार चरित जत पूरब पिरित।
सोङरि सोङरि एबे भेल मूरछित।।

तुम्हारे चरित्र और पूर्व प्रीतिको स्मरण कर-करके अब मूर्च्छित हो रही है।

से हेन नदीयापुर से सब सङ्गिया।
धूलाय पड़िया कान्दे तोमा ना देखिया।।

उस नदिया नगरीमें जितने सब संगी-साथी थे, तुम्हें न देखकर धूलिमें पड़े क्रन्दन कर रहे हैं।

कहये माधव घोष शुन गौरहरि।
तिलेक विलम्बे आमि आगे जाब मरि।।

माधव घोष कहते हैं—"हे गौर हरि ! सुनो, क्षण मात्र विलम्बसे मैं आगे ही मर जाऊँगा।"

माधव घोषका एक और पद यहाँ उद्धृत किया जाता है। यह भी श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी किसी सखीकी उक्ति है—

अबला से विष्णुप्रिया,
तुया गुण सोङरिया
मूरछि पड़िल क्षितितले।

वह अबला विष्णुप्रिया तुम्हारे गुणोंका स्मरण करके भूतलपर मूर्च्छित पड़ी है।*

---

* नदियामें केवल शची माता, श्रीविष्णुप्रिया या उनकी सखियाँ ही शोक-विह्वल नहीं थीं, प्रत्युत सारे ही जड़-चेतन मूर्च्छित थे। सभी अपने प्राण-प्रियतम नदिया-विहारी श्रीगौराङ्गको पुनः अपने बीच देखना चाहते थे—उन्हें लौटा लाना चाहते थे—इसी कारुणिक प्रसङ्गको श्रीवासुदेव कवि महानुभावने नागरीगणके दुःख भरे हृदयसे यों व्यक्त करवाया है—

चौदिके सखी-गण, हेरि करे रोदन तुला धरि नासार उपरे ।।	चारों ओर सखियाँ उसकी नासिका पर रुई रखकर (प्राण-वायु चलती है या नहीं जाननेको) उसे देख रो रही हैं ।

हरि हरि कि ना हल नदीया नगरे । केशव भारती आसि, कुलिश पाड़िल गो रसवती प्राणेर घरे ।।	हरि ! हरि !! नदिया नगरीमें क्या हो गया ? केशव भारतीने आकर रसवतीके हृदय पर वज्र डाल दिया ।
प्रिय सहचरीगणे, जे साध करिल मने, से सब स्वपन सम भेल ।	प्रिय सहचरीगणने जो अभिलाषाएँ की थीं वे स्वप्नके समान हो गईं ।
गिरि पुरी भारती, आसिया करिल यति आँचलेर धन काड़ि नेल ।।	संन्यासी केशव भारतीने आकर अञ्चलके धनको छीनकर यति बना दिया ।
नवीन वयस वेश, किवा से चाँचर केश, मुखे हासि आछये मिशाञा ।	अहा ! नवीन वयश और सुसज्जा, वे घुँघराले केश और मुस्कान मिश्रित मुख कैसे लगते थे ?
आमरा परेर नारी, पराण धरिते नारि, केमने बञ्चिबे विष्णुप्रिया ।।	हम पर-नारी होकर प्राण-धारण नहीं कर पा रही हैं, विष्णुप्रिया कैसे बचेगी ?
सुरधुनि तीरे तरु, कदम्ब खण्डेने उरु, प्राण कान्दे केतकी देखिया ।	गंगाके किनारेके पेड़, विशाल कदम्ब खण्ड और केतकीकी हालत देखकर प्राण रोते हैं ।
नदीया आनन्दे छिल, एबे शोकाकुल हल, 'वासुदेव' मरये झुरिया ।।	जो नदिया आनन्दमें था अब शोकाकुल हो गया और झूर-झूरकर मर रहा है, वासुदेव कवि वर्णन करते हैं ।

तुया विरहानले अन्तर जर जर देह छाड़ा हइल पराणि।	तुम्हारी विरहाग्निमें हृदय जर्जर हो रहा है और प्राण शरीरको छोड़ना चाहते हैं।
नदीया निवासी जत तारा भेल मूरछित ना देखिया तुया मुखखानी।।	तुम्हारे मुखको न देख सकनेके कारण सारे नदियावासी मूर्च्छित हो रहे हैं।
शची अन्ध आधमरा देहे प्राण नाहि ताँरा ताँर प्रति नाँहि तोर दया।	शची देवी अन्धी और अधमरी हो रही हैं, शरीरमें प्राण नहीं है। क्या उनके प्रति तुममें दया नहीं है?
नदीयार सङ्गिगण केमने धरिबे प्राण केमने छाड़िले तार माया।।	नदियाके तुम्हारे सङ्गी-साथी कैसे प्राण धारण करेंगे? उनके प्रति मोह-माया तुमने कैसे छोड़ दी?
जत सहचर तोर सबाइ विरहे भोर श्वास बहे दरशन आशे।	तुम्हारे जितने सहचर थे, सभी तुम्हारे विरहमें विभोर हो रहे हैं, केवल तुम्हारे दर्शनकी आशासे जीते हैं।
हेंदे हे रसिकवर चलह नदीयापुर कहे ए दीन माधव घोषे।।	यह दीन माधव घोष कहता है—हे हे रसिकवर! नदिया नगरी चलिये।

● अन्न-जल-विहीन शची माता और प्रियाजी

जिस दिन श्रीगौराङ्गने नदियाको अन्धकारमय करके गृह-त्याग किया उसी दिनसे शची देवी और श्रीमतीजी उपवासी हैं, जल भी स्पर्श नहीं किया है। सब मिलकर अनुनय करके भी किसी प्रकारसे उनको जल ग्रहण करानेमें समर्थ नहीं हुए। वृद्ध श्रीवास पण्डित सदा प्रभुके घर पर उपस्थित रहे और बाहर बैठकर अन्यान्य भक्तोंके साथ प्रभुकी जननी और गृहिणीकी अवस्था पर्यवेक्षण करते रहे। उनको भय है कि दोनों देवियाँ आत्महत्या न कर लें। मालिनी देवी बाहर आकर बीच-बीचमें शची देवी और श्रीमतीजीकी शारीरिक अवस्थाका समाचार दे जाती हैं। सबने सुना कि दोनों देवियोंने

जल-स्पर्श तक नहीं किया है। वृद्ध श्रीवास पण्डित अब स्थिर न रह सके। वे घरके भीतर शची देवीके पास गये। उनकी इच्छा थी कि शची देवीको कुछ समझा दें। शची देवी उनको देखते ही हाहाकार कर उठीं। वृद्ध ब्राह्मण कुछ न कहकर वहाँसे रोते-रोते चले आये। सबकी एक-सी दशा है, समझावे-बुझावे कौन? वह दिन इसी प्रकार बीत गया। बहुत लोग उस दिन उपवासे रह गये। सारी रात मालिनी देवी शचीके पास रहीं। बाहरी घरमें श्रीवास आदि भक्तवृन्द रहे। किसीकी आँखोंमें नींद नहीं, रो-रोकर सबने सारी रात काटी। श्रीमतीजी भूमि शय्यासे उठी नहीं, वस्त्र नहीं बदला, जल-स्पर्श नहीं किया। काञ्चना श्रीमतीजीके पास आहार-निद्रा त्याग करके बैठी रहीं, एक दण्ड भी प्रिय सखीका सङ्ग न छोड़ा।

● प्रभुका समाचार लेकर चन्द्रशेखर आचार्यका प्रत्यागमन

तीन दिनके बाद चन्द्रशेखर आचार्य कटवा (कण्टक नगरी) से नवद्वीप लौटे और प्रभुके संन्यास-ग्रहणका दारुण समाचार भक्तोंको सुनाया। शची देवीके पास क्या मुँह लेकर जायँ, इस विचारसे वे रो-रोकर व्याकुल हो उठे। इस दारुण समाचारसे प्रभुके भक्तोंमें महा आर्त्तनाद हो उठा। श्रीश्रीअद्वैत प्रभु मूर्च्छित हो गये, श्रीवासजी मृतप्राय हो उठे। शची देवीके कानोंमें भी यह दारुण समाचार पहुँचा, वे जड़वत् हो गयीं, मानो उनके शरीरमें प्राण ही नहीं रहे। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको भी यह दारुण समाचार मिला, वे अवाक् और निष्पन्द होकर भूतल पर गिर पड़ीं। नेत्रोंकी अश्रुधारसे श्रीमतीजीका वक्षःस्थल डूबा जा रहा था। बीच-बीचमें वे केवल लम्बी साँस छोड़ती हैं। श्रीमतीजीका सारा अङ्ग वस्त्रसे आवृत है। शची देवीकी बगलमें ही श्रीमतीजी भूतल पर पड़ी हुई हैं।

तबे नवद्वीपे चन्द्रशेखर आइला। सभास्थले कहिलेन प्रभु वने गेला।।	तब नवद्वीपमें चन्द्रशेखर आये और सभीके निकट प्रभुके वन चले जानेकी बात कही।
श्रीचन्द्रशेखर-मुखे शुनि भक्तगण। आर्त्तनादे लागिलेन करिते क्रन्दन।।	चन्द्रशेखरके मुखसे सुनकर भक्त-गण आर्त्तनादसे क्रन्दन करने लगे।
शुनिया हइल मात्र अद्वैत मूर्च्छित। प्राणशून्य देह जेन पड़िला भूमित।।	सुनते ही अद्वैत मूर्च्छित हो गये, मानो प्राणशून्य देह भूमि पर पड़ा हो।

शची देवी शोके रहिलेन जड़ हैया।	शची देवी शोकके मारे जड़वत्
कृत्रिम पुतली जेन आछे दाँड़ाइया।।	हो गई मानो कृत्रिम पुतली खड़ी हो।
भक्तपत्नी सब जत पतिव्रतागण।	जितनी भक्तोंकी पतिव्रता
भूमेते पड़िया सबे करेन क्रन्दन।।	पत्नियाँ थीं सभी भूमिपर पड़ क्रन्दन
--चै० भा०	करने लगीं।

चन्द्रशेखर आचार्य रोते-रोते भग्न-हृदय हो अन्तमें शची देवीके पास गए। घरके द्वार पर जाकर उनके पैर आगे न बढ़ सके। शची देवी आचार्यके आगमनका समाचार सुनते ही पागलिनीके समान बिखरे केश रोती-कलपती घरके द्वारकी ओर दौड़ीं। शची देवीको देखकर चन्द्रशेखर आचार्य बालकके समान चिल्लाकर रोने लगे। शची देवीने रोते-रोते चन्द्र-शेखर आचार्यसे पूछा--"अरे! तुम मेरे निमाईको कहाँ रख आए? क्या तुम लोगोंका यही काम है?"

पूछिते ना पारे केह मुख नाहि राये।	कोई पूछ नहीं पा रहा है, मुखमें
शुनिया शची देवी आउदड़ चुले धाये।।	वाणी नहीं है, समाचार पाकर शची
	देवी बिखरे केशों दौड़ीं।
आचार्य्य बलिया डाके उन्मति पागली।	आचार्य कहकर उन्मत्त पगली-सी
ना देखिया गौराङ्गे हइला उतरोली।।	पुकारने लगीं। गौराङ्ग न देखकर
	उतावली हो उठीं।
आमार निमाइ कोथा थुइया आइला तुमि।	तुम मेरे निमाईको कहाँ रख
केमने मुण्डिला केश कोन देश भूमि।।	आये? किस देश, किस भूमिमें, किस
--चै० मं०	प्रकार केशोंका मुण्डन किया गया?

चन्द्रशेखर आचार्यके मुखसे बात नहीं निकल रही है। वे सिर झुकाकर शची देवीके पास बैठ गए। आँखोंसे झर-झर आँसू बह रहे हैं। शची देवीने फिर कहा--

कोन छार सन्न्यासी से हृदय दारुणा।	वह कौन निष्ठुर हृदयवाला मुँह-
विश्वम्भरे मन्त्र दिते ना कैल करुणा।।	जला संन्यासी था, जिसने विश्वम्भरको
	मन्त्र देते करुणा नहीं की?

से हेन सुन्दर केश लावण्य देखिया। कोन छार नापितेर निदारुण हिया।।	ऐसे सुन्दर केश और लावण्यको देखकर भी किस मुँहजले नाईका हृदय निष्ठुर बन गया।
केमने पापिष्ठ तेन केशे दिल खुर। केमने वा जील सेइ दारुण निठुर।।	किस प्रकार उस पापीने केशोंपर छुरेको रखा? वह दारुण निष्ठुर किस प्रकार जीवित रह सका?
आमार निमाइ कार घरे भिक्षा कैल। मस्तक मुड़ाञा पुत्र केमन वा हैल।। --चै० मं०	मेरे निमाईने किसके घर भिक्षा की? मस्तक मुँडवाकर पुत्र कैसा लगने लगा?

● प्रियाजीका आर्त्तनाद

शची देवी चन्द्रशेखर आचार्यको देखकर जब इस प्रकार करुण स्वरमें विलाप करने लगीं तो श्रीमती विष्णुप्रिया देवी घरके भीतर भूतल पर पड़ी सिसक-सिसककर रो उठीं। उनके उस करुण नीरव क्रन्दनकी ध्वनि चन्द्रशेखर आचार्यके कानोंमें पहुँची। वे उच्च स्वरसे रोते-रोते वहाँसे उठकर बाहर चले गये। उनके हृदयमें मानो शेल चुभने लगा। कतिपय पड़ोसी स्त्रियाँ श्रीमतीजीके पास गयीं।

एतेक विलाप जबे शची देवी कैल। विष्णुप्रिया प्रबोधिते जन कथो गेल।।	जब शची देवीने इतना विलाप किया तब विष्णुप्रियाको आश्वासन देने कुछ लोग गये।
विष्णुप्रियार कान्दनाते पृथिवी विदरे। पशु पक्षी लता तरु ए पाषाण झुरे।। --चै० मं०	विष्णुप्रियाके क्रन्दनसे पृथिवी फट रही है और पशु-पक्षी, लता-तरु तथा पाषाण भी रो रहे हैं।

श्रीमतीके दुःखसे तथा करुण आर्त्तनादसे सभी व्याकुल होकर रो पड़े। सबका हृदय मानो विदीर्ण हो गया। देवीके शुष्क और विषण्ण मुख-मण्डलकी ओर कोई ताक न सका। अब तक देवी चुपचाप रुदन कर रही थीं। शची देवीके कातर क्रन्दन और करुण विलापसे श्रीमती विष्णुप्रिया देवीका कोमल हृदय उन्मथित हो उठा। उनके घरसे सब लोग चले आये। वह हृदय-विदारक दृश्य किसीसे देखा न गया। परन्तु काञ्चनाने

क्षणभरके लिये भी श्रीमतीजीका सङ्ग न छोड़ा। श्रीमतीजीकी लज्जाका बाँध अब टूट गया। अब वे विलाप कर-करके रोने लगीं। बूढ़ी स्त्रियाँ शोक-ताप-ग्रस्त होनेपर इसी प्रकार क्रन्दन किया करती हैं। अतिरिक्त शोक होने पर बालिकाएँ और कुल-बधुएँ भी ऐसे समयमें लज्जा त्यागकर निज-जनके गुणोंका स्मरण कर विलाप करके रोती हैं। श्रीमतीजी अब तक मनके दुःखको दबाकर चुपचाप रो रही थीं। अब उनसे न रहा गया। इसका कारण उनकी यह मनकी आशा थी कि प्रभु फिर घर लौट आवेंगे। जब चन्द्रशेखर आचार्यके मुखसे उन्होंने अपने प्राणबल्लभके संन्यास-ग्रहणका दारुण संवाद सुना, तब श्रीमती विष्णुप्रिया देवी स्थिर न रह सकीं। श्रीलोचन दास रचित देवीकी विलाप कहानी यहाँ उद्धृत की जाती है। इसे पढ़ने पर महा पाखण्डीके नेत्रोंसे भी अश्रु-धारा निकलेगी, नयन-जलसे उसके सारे पाप धुलकर अन्तःकरण निर्मल हो जायगा। उसका कर्मबन्धन टूट जायगा। इसी कारण श्रीवृन्दावन दासने लिखा है——

शुन शुन अरे भाइ ! प्रभुर सन्न्यास।
से कथा शुनिले कर्मबन्ध जाय नाश ।।

अरे भाई ! प्रभुकी संन्यास-कथा सुनो, जिस कथाके सुननेसे कर्म-बन्धनका नाश हो जाता है।

फिर लिखते हैं——

मध्य खण्डे ईश्वरेर सन्न्यास ग्रहण।
इहार श्रवणे मिले कृष्णप्रेम-धन ।।

मध्य खण्डमें ईश्वरके संन्यास ग्रहणका वर्णन है, इसके सुननेसे कृष्ण-प्रेम-धन मिलता है।

श्रीमती विष्णुप्रियाका विलाप पढ़कर पाठक और पाठिकागण जी भरकर रोवें और अपने-अपने हृदयको निर्मल कर लें! हृदयके आवेगमें श्रीमतीजीने सारी बातें कह डालीं, कुछ बाकी नहीं रक्खा। मधुर-रस-भजन-निष्ठ ठाकुर लोचन दासने श्रीमतीजीके मुखसे उनके हृदयकी सारी ही बातें कहवा दीं——

हाहा प्राणनाथ ! छाड़ि गेले हे नदीया।
अनाथिनी विष्णुप्रियाय निठुर हइया ।।

हाय ! हाय ! हे प्राणनाथ ! तुम निष्ठुर होकर अनाथिनी विष्णु-प्रियाको छोड़कर नदियासे चले गये।

श्रीवासादि भक्तसङ्गे कीर्त्तने विहार।
नयन भरिया नृत्य ना देखिब आर ।।

अब मैं तुम्हारा श्रीवास आदि भक्तोंके साथ वह कीर्त्तन-विहार, नृत्यादि नयन भरकर न देख सकूंगी।

प्रेमावेशे गदगद बोल श्रीवदने।
ना शुनिया आभागिनी बाँचिब केमने ।।

तुम्हारे श्रीमुखसे प्रेमावेशके गद्गद वचन न सुनकर यह अभागिनी कैसे जीवेगी ?

कोन देशे कि रूपे आछह प्राणेश्वर।
स्मरिया स्मरिया प्राण हैल जर जर ।।

हे प्राणेश्वर ! तुम किस देशमें, किस रूपमें हो--यह स्मरण कर-करके मेरे प्राण जर्जर हो रहे हैं।

हाय रे कठिन प्राण ना बेरेह केने।
ज्वालह आगुनि आमि मरिब एखने ।।

हाय रे ! कठोर प्राण बाहर क्यों नहीं निकलते ? आग जलाओ, मैं अभी उसमें जलकर मरूँगी।

उद्वेगे दिवस मोर हैल कोटि युग।
ना देखिया प्राणनाथ तोर विधुमुख।

हे प्राणनाथ ! तुम्हारे चन्द्रमुखको देखे बिना, उद्वेगके कारण मेरा दिन कोटि-कोटि युगके समान बीत रहा है।

जीवमात्रे उद्वेग ना देय साधुजन।
तोर शोके शची माता छाड़ये जीवन ।।

साधुजन जीवमात्रको उद्वेग नहीं देते, तुम्हारे शोकमें शची माता अपने प्राण छोड़ रही हैं।

मुञि अभागिनी तोमार भकति ना जानि।
सेइ अपराधे बुझि हैलु अनाथिनी ।।

मैं अभागिनी तुम्हारी भक्ति नहीं जानती, जान पड़ता है इसी अपराधसे मैं अनाथिनी हो गयी।

चरण निकटे प्रभु बसिया तोमार।
रूप हेरि हेरि आमि ना जुड़ाव आर ।।

हे प्रभु ! मैं अब तुम्हारे चरणोंके पास बैठकर तुम्हारा रूप देख-देखकर मेरे प्राण शीतल न कर सकूँगी।

वदने तुलिया दिते कर्पूर ताम्बूले।
दशन मुकुता पाँति परशि अङ्गुले ।।

मुखमें कर्पूर मिश्रित पान उठाकर देना, मुक्ता रूपी दन्त-पंक्तिको अंगुलिसे स्पर्श करना।

अरुण नयान कोणे करुणाय चाञा ।
मधुर मधुर कथा बलिते हासिञा ।।

अरुण नयनोंके कोणसे करुण चितवन, हँस-हँसकर मधुर बातें करना,

अधर अरुण आर ताम्बूलेर रागे ।
दशन किरण मोर हिया माझे जागे ।।

अरुण अधरोंपर वह पानकी लालिमा तथा तुम्हारे दाँतोंकी किरण-छटा मेरे हृदयमें जाग रही है ।

ताहाते अमिया माखा श्रीमुखेर हास ।
श्रवण नयान मोर जीत सेइ आश ।।

उसपर अमृतसे सने हुए श्रीमुखकी हँसी, मेरे श्रवण और नयनको अधिकृत कर लेती है ।

अमिया अधिक प्रभु तोर जत गुण ।
सोङरिते एबे सेइ भैगेल आगुन ।।

हे प्रभु ! अमृतसे बढ़कर तुम्हारे जितने गुण हैं, वे ही अब स्मरण करते ही अग्निके समान दाहक हो गये हैं ।

विनोद विलास रस सुखमय से जे ।
से सब सोङरि विष्णुप्रिया प्राण तेजे ।।

विनोद, विलास-रसयुक्त सुखमय वे सब बातें स्मरण करते ही विष्णुप्रिया-के प्राण निकलने लगते हैं ।

हाय हाय किवा दैव हइल आमारे ।
गौर बिनु आमार सकल आन्धियारे ।।

हाय ! हाय ! मेरा दैव कैसा हो गया ? गौरके बिना मेरा सब कुछ अन्धकारमय हो गया ।

से हास्य लावण्य देह ना देखिब आर ।
ना शुनिब वचनचातुरी सुधासार ।।

वह हास्य और लावण्यमय शरीर अब मैं न देख सकूंगी और सुधामयी वह वचन-चातुरी अब न सुन पाऊँगी ।

अनाथिनी करिया कोथारे गेला तुमि ।
सोङरि तोमार गुण निवेदिये आमि ।।

तुम मुझको अनाथिनी बनाकर कहाँ चले गये ? तुम्हारे गुणोंका स्मरण करके मैं निवेदन करती हूँ ।

कोन भाग्यवती सब तोमारे देखिया ।
निन्दिल कतेक मोरे कान्दिया कान्दिया ।।

तुम्हें देखकर कितनी भाग्यवतियोंने रो-रोकर मेरी कितनी निन्दा की है !

कोन अभागिनी कोल छाड़िया आइला ।
खण्डव्रती अभागिनी केन ना मरिला ।।

किस अभागिनीका संग छोड़कर यह चला आया ? वह व्रत-खण्डित होनेवाली अभागिनी मर क्यों न गयी ?

पूजिल तोमार मुख अनङ्ग नयने। केमने धरिब इहा तोमा अदर्शने।।	मैंने इन अनङ्ग नेत्रोंके द्वारा तुम्हारे मुखमण्डलकी पूजा की है, अब तुमको बिना देखे इन नेत्रोंको कैसे धारण करूँगी?
विच्छेदे मरिल तोर जत वरनारी। आमि अभागिनी प्राण एतकाल धरि।।	जितनी श्रेष्ठ स्त्रियाँ थीं, वे तुम्हारे वियोगमें मर रही हैं, मैं ही अभागिनी हूँ जो अब तक प्राण धारण कर रही हूँ।
मरि मरि गौराङ्गसुन्दर कति गेला। आमि नारी अभागिनी सहजे अबला।।	हाय! गौराङ्ग सुन्दर कहाँ चले गये? मैं सहज अबला अभागिनी नारी हूँ,
कोन देशे जाब लागि पाब कोन ठाञि। जाइते ना दिब केहो मरिब एथाइ।।	कौनसे देश जाऊँ, जहाँ जाकर उनको पा सकूँ? कोई मुझे यहाँसे जाने न देगा, तो मैं यहीं मर जाऊँगी।
माये अनाथिनी करि गेला कोन देशे। केमने बञ्चिब तेंह तोमार हुताशे।।	माँको अनाथिनी बनाकर तुम किस देश चले गये? तुम्हारे बिछोहकी ज्वालामें वे कैसे बचेंगी?
पापिष्ठ शरीर मोर प्राण नाहि जाय। भूमिते पड़िया देवी करे हाय हाय।। --चै० मं०	मेरा यह शरीर पापिष्ठ है जो प्राण नहीं निकल रहे हैं। इस प्रकार श्रीमती विष्णुप्रिया देवी भूतलपर पड़ी हाय-हाय करके विलाप करती हैं।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी प्राणवल्लभके वियोगमें अत्यन्त कातर होकर इस प्रकार विलाप कर रही हैं। उनके सारे अङ्ग थर-थर काँप रहे हैं, बड़े जोरसे श्वास आ रहा है, सुन्दर मुख सूख गया है, मस्तकके केश, पहननेके वस्त्र धूलि-धूसरित हो रहे हैं। क्षण-क्षणमें मूर्च्छा आ रही है। हा नाथ! हा नाथ! हा प्रभु! हा प्रभु! कहकर बीच-बीचमें आर्त्तनाद कर उठती हैं। देवीके क्रन्दनसे सभी व्यथित हैं, जो समझाने-बुझाने आते हैं, वे भी रोते हुए चले जाते हैं। देवीकी अवस्था देखकर वे जलकर मरे जा रहे हैं। देवीकी मूर्च्छा दूर करनेका एक मात्र उपाय है उनके कानोंमें श्रीगौराङ्गका नाम श्रवण कराना। सब यही करते हैं तब देवीको चेतना होती है।

विरह अनल श्वास बहे अनिवार।
अधर सुखाय कम्प हय कलेवर।
केश वास ना सम्बरे धूलाय पड़िया।
क्षणे क्षीण हय अङ्ग रहे त फुलिया॥
क्षणे मूर्च्छा पाय राङ्गा चरण धेयाने।
सम्वेदन पाय क्षणे अनेक यतने॥
प्रभु प्रभु बलि डाके क्षणे आर्त्तनादे।
विष्णुप्रिया कान्दनाते सब्बंजन कान्दे॥
प्रबोध करिते जेइ जेइ जन गेल।
विष्णुप्रिया देखि हिया पुड़िते लागिल॥
गौराङ्ग गौराङ्ग बलि डाके तार काने।
कथोक्षणे विष्णुप्रिया पाइला चेतने॥——चै० मं०

● प्रियाजीको सान्त्वनाकी चेष्टा

श्रीमतीजीको कुछ चेतना होने पर सब मिलकर उनसे कहने लगीं——"माँ! तुमको समझाने योग्य कुछ भी नहीं है। तुम बुद्धिमती हो, तुम अपने आप स्थिर न होवोगी, तो कोई तुमको समझा-बुझाकर स्थिर न कर सकेगा। तुम्हारे पतिने पहले ही तुमसे कहा था कि वे चाहे जहाँ रहें, तुम जब उनको पुकारोगी वे तुम्हारे पास आ जावेंगे। तुम्हारे प्राणवल्लभका कार्य तुम्हारे लिये कुछ भी अविदित नहीं है। माँ! ये सब बातें समझकर तुम धैर्य धारण करो, अपनेको आप समझाओ। तुम्हारे स्वामी इच्छामय हैं, स्वतन्त्र प्रभु हैं। माँ! तुम भी इच्छामयी लक्ष्मीस्वरूपा श्रीभगवती हो। तुम एक दूसरेको भली भाँति जानते हो। हम और क्या कहें?"

सब जन बोले हेर शुन विष्णुप्रिया। कि दिब प्रबोध तोरे स्थिर कर हिया॥	सब लोग देखकर कहते हैं——हे विष्णुप्रिया! सुनो, तुमको क्या प्रबोध देवें? हृदयको स्थिर करो।
तोर प्रभु तोर आगे कहियाछे कथा। यथा तथा जाइ तोर निकटे सर्ब्बदा॥	तुम्हारे स्वामी तुमको कह गये हैं कि जहाँ भी जाऊँ, सर्वदा तुम्हारे निकट हूँ।

तोर अगोचर नहे तोर प्रभुर काज। बुझिया प्रबोध देह निज हिया माझ ।। --चैं० मं०	तुम्हारे स्वामीका कार्य तुमसे छिपा नहीं है। यह समझकर अपने हृदयको प्रबोध दो।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने अत्यन्त कष्टपूर्वक मुंह उठाकर सबकी ओर करुण नेत्रोंसे देखा। देखा कि वहाँ सभी हैं। प्रभुकी सारी गोष्ठी शची देवीके घर दिन-रात रहती है। रमणीगण घरके भीतर सदा दोनों देवियोंके समीप बैठकर उनको सान्त्वना देती हैं। पुरुष लोग घरके बाहर बैठकर प्रभुकी माता और गृहिणीकी खोज-खबर लेते हैं। श्रीमतीजीने काञ्चनाके मुखकी ओर करुण नेत्रोंसे देखकर अति मृदु स्वरमें धीरे-धीरे कहा--"सखि ! मेरे प्राणबल्लभका नाम लो, सबको श्रीगौराङ्ग नाम लेनेके लिये कहो। उन्होंने कहा था कि उनका नाम लेनेसे ही वे आवेंगे। सब मिलकर उनको पुकारो, वे आवेंगे।" यह बात कहते-कहते श्रीमतीका वक्षःस्थल आँसुओंसे भीग गया। काञ्चना भी रोकर व्याकुल हो उठीं। काञ्चनाने श्रीमतीजीके मनका भाव सबके सामने व्यक्त कर दिया। तब सब मिलकर प्रभुका नाम लेनेके लिये बैठे। शची देवी और श्रीमतीजी रोते-रोते श्रीगौरगोविन्दका नाम लेने बैठीं। शची देवीके घर एक अपूर्व दृश्य उपस्थित हो गया। ऐसे दुःखमें भी श्रीगौराङ्गका नाम लेते-लेते सबका मन प्रफुल्लित हो गया। श्रीमतीजी उठ बैठीं। घूंघटके भीतर बैठीं वे श्रीप्रभुका नाम ले रही हैं। बालक-बालिका, युवक-युवती, वृद्ध--सभी वहाँ हैं। सभी श्रीगौर भगवान्का नाम लेने बैठ गए।

तारेधिक दयाल ताँहार बड़ नाम। नाम हैते तारे पाइ एइ मुख्य काम ।।	उनसे अधिक दयालु और बड़ा उनका नाम है। नामके द्वारा उनको पाना--यही मुख्य काम है।
तार वाक्य आछे पूर्व्व मो सभार तरे। नाम जेइ लय सेइ पाइब आमारे ।।	हम सबोंके लिये उन्होंने पहले ही कह रखा है कि जो भी नाम लेगा, वही मुझको पावेगा।
एत चिन्ति नाम लैते बसिला सभाइ। शची विष्णुप्रिया आर जत जत जेइ ।।	ऐसा विचार करके शची देवी, श्रीविष्णुप्रिया तथा और जो-जो लोग थे, सभी नाम लेनेके लिये बैठ गये।

कि बालक वृद्ध किवा युवक युवती ।	क्या बालक-वृद्ध, क्या युवक-
नाम लइते बसिला गौराङ्ग करि गति ।।	युवती, सभी श्रीगौराङ्गको अपनी गति
--चै० मं०	मानकर नाम लेनेके लिये बैठ गये ।

● प्रभुकी स्थिति और शान्तिपुर-गमन

श्रीगौराङ्गको घर छोड़े तीन दिन हो गये हैं। कटवामें वह काण्ड करनेके बाद प्रभु राढ़ प्रदेशमें तीन दिन तक दौड़-दौड़कर घूमते रहे, उन्होंने जल तक स्पर्श नहीं किया। श्रीनित्यानन्द आदि भक्त उनके साथ हैं। प्रभुके साथ दौड़ते-दौड़ते वे लोग थक गये। श्रीधाम वृन्दावनके दर्शन करनेकी प्रभुकी कामना है। परन्तु उस ओर अग्रसर नहीं हो पा रहे हैं। केवल राढ़ देशमें ही घूम-फिर रहे हैं। वे दौड़ते-दौड़ते अचानक एक जगह खड़े हो गये, मानो उनकी गति भङ्ग हो गयी। नवद्वीपवासी भक्तोंके, विशेषत: शची-विष्णुप्रियाके आकुल क्रन्दनसे श्रीगौर भगवान्‌की गति भङ्ग हो गयी। भक्तोंका क्रन्दन श्रीभगवान्‌के कानोंमें पहुँचा। शची देवीके घर पर जो श्रीगौराङ्ग-नामका महायज्ञ अनुष्ठित हुआ है, उस नाम-संकीर्त्तन-यज्ञके यज्ञेश्वर श्रीगौराङ्ग-सुन्दरके कानोंमें भक्तोंके आकुल क्रन्दनकी ध्वनि पहुँची। प्रेमोन्मत्त श्रीगौराङ्ग-सुन्दरको नवद्वीप निवासियोंने नाम-पाशसे बाँध लिया।

"नामपाशे बान्धिल गौराङ्ग मत्त सिंह ।	गौराङ्ग मत्त सिंह नाम पाशमें बन्ध गये।
दाण्डाइल महाप्रभु गति हैल भङ्ग ।।"	महाप्रभु खड़े हो गये, गति भंग हो गई।
--चै० मं०	

प्रभु खड़े हो गये। श्रीनित्यानन्दके अङ्गसे श्रीअङ्गको सहारा देकर प्रभु त्रिभङ्गी होकर खड़े हो गये और श्रीनित्यानन्दके मुखकी ओर देखकर अजस्र आँसू बहाने लगे। उस समय प्रभुको नवद्वीप-रस याद आया। भिखारिणी गृहिणी और जननीकी दशा यादकर प्रभुके नयन-जलके प्रवाहसे वक्ष:स्थल डूब गया। नवीन संन्यासीके प्राण वृद्धा जननी और अनाथिनी तरुणी भार्याके लिये रो उठे। भक्तवत्सल श्रीगौर भगवान्‌ने भक्तोंके दु:खसे कातर होकर हृदयके आवेगसे नित्यानन्दको आदेश दिया--"तुम नवद्वीप जाओ, वहाँ जाकर सबको कह दो कि मैं शान्तिपुरमें सबके साथ साक्षात्कार करूँगा।"

नित्यानन्द अङ्गे अङ्ग हेलाञा रहिला ।
अझोर नयने प्रभु कान्दिते लागिला ।।
जाह नित्यानन्द नवद्वीपे आजि तुमि ।
शान्तिपुरे सभारे देखिये जेन आमि ।।--चै० मं०

प्रभुका यह आदेश पाकर श्रीनित्यानन्द मनमें बहुत प्रसन्न हुए। वे कुछ मुस्कराकर प्रभुसे विदा होने लगे। विदा होते समय श्रीनित्यानन्दको प्रभुने फिर कहा--

नवद्वीपे जाह तुमि शुनह वचन । नदीया नगरे मोर जत बन्धु जन ।।	तुम मेरी बात सुनो, नवद्वीपमें जाकर नदिया नगरमें जितने मेरे बन्धुजन हैं,
सभारे कहिओ नमो नारायण वाणी । अद्वैत आचार्य्य गृहे उत्तरिब आमि ।।	सबसे मेरा 'नमो नारायण' कहना। मैं अद्वैत आचार्यके घर ठहरूँगा।
सभारे लइया तुमि आइस तथाकारे । एकत्र हइब सभे आचार्य्येर घरे ।। --चै० मं०	तुम सबको लेकर वहाँ ही आना। हम सब आचार्यके घर एकत्र होंगे।

● श्रीनित्यानन्दका नवद्वीप-प्रत्यागमन

श्रीनित्यानन्दने प्रभुको शान्तिपुरमें अद्वैत प्रभुके घर रखकर नवद्वीपकी यात्रा की। प्रेमोन्मत्त श्रीनित्यानन्द प्रभुके शान्तिपुरसे इस उपलक्ष्यमें नवद्वीप आगमनका वृत्तान्त श्रीवृन्दावन दास ठाकुरने जो वर्णन किया है, वह यहाँ उद्धत किया जाता है। मैं सरल, सदानन्द, बालस्वभाव प्रभु नित्यानन्दके चरित्रके इस उज्ज्वल चित्रको तदीय भक्त पाठक-पाठिकाओंको उपहार देनेके प्रलोभनको छोड़ न सका।

प्रभुर आज्ञाय महानन्द नित्यानन्द । नवद्वीप चलिलेन परम आनन्द ।।	प्रभुकी आज्ञासे महा आनन्दी नित्यानन्द परम आनन्दसे नवद्वीपको चले।
प्रेमरसे महामत्त नित्यानन्द राय । हुङ्कार गर्ज्जन प्रभु करये सदाय ।।	प्रेमरसमें महामत्त नित्यानन्द राय प्रभु सदा हुंकार गर्जन करते हैं।

मत्तसिंह प्राय प्रभु आनन्दे विह्वल । विधि-निषेधेर पार विहार सकल ।।	मत्त सिंहकी तरह प्रभु आनन्दमें विह्वल हैं। उनके सब विहार विधि-निषेधके परे हैं।
क्षणेक कदम्बवृक्षे करि आरोहण । बाजाय मोहन वेणु त्रिभङ्गमोहन ।।	कभी कदम्ब वृक्ष पर चढ़कर त्रिभङ्गी मोहनी रूपसे मोहनी वेणु बजाते हैं।
क्षणेक देखिया गोष्ठे गड़ागड़ि जाय । वत्सप्राय हइया गाभीर दुग्ध खाय ।।	कभी गोष्ठ-देखकर पृथ्वीपर लोट पोट होते हैं, बछड़ेकी तरह होकर गायका दूध पीते हैं ।
आपना आपनि सर्व्व पथे नृत्य करे । बाह्य नाहि जाने डुबे आनन्द-सागरे ।।	अपने आप ही सब रास्तोंमें नृत्य करते हैं। बाहरी ज्ञान नहीं है । आनन्द-सागरमें डूबे हैं।
कखनो वा पथे बसि करेन रोदन । हृदय विदरे ताहा करिते श्रवण ।।	कभी पथमें बैठ रोदन करते हैं, जिसे सुन हृदय विदीर्ण हो जाता है।
कखनो हासेन अति महा अट्टहास । कखनो वा शिरे वस्त्र बान्धि दिग्वास ।।	कभी अट्टहास करके हँसते हैं, कभी सिरपर वस्त्र बांधकर दिगम्बर हो जाते हैं।
कखनो वा स्वानुभवे अनन्त आवेशे । सर्वप्राय हइया गङ्गार स्रोते आसे ।।	कभी स्वानुभवसे अनन्त (शेष नाग) के भावा-वेशमें सर्पकी तरह होकर गङ्गाके स्रोतमें बहते हैं।
अनन्तेर भावे प्रभु गङ्गार भितरे । भसिया जायेन अति देखि मनोहरे ।।	अनन्तके भावसे प्रभु गङ्गाके भीतर बहने लगते हैं और अति मनोहर दीखते हैं।
एइ मत गङ्गामध्ये भासिया भासिया । नवद्वीप प्रभु घाटे मिलिला आसिया ।।	इस प्रकार गङ्गामें बहते-बहते प्रभु नवद्वीपके घाट पर आ पहुँचे ।

—चै० भा०

श्रीनित्यानन्द प्रभुने नवद्वीपमें आकर जो देखा उससे उनका कोमल हृदय बड़ा ही कातर हो उठा ।

●

षड्विंश अध्याय

प्रभुका निषेध—'सबको लाना, एक जनको छोड़कर'

श्री विष्णुप्रिया देवी कहती हैं—

आमा लागि प्रभु मोर करिला सन्न्यास ।
फिरिया यद्यपि आइला अद्वैतेर वास ।।

मेरे ही कारण मेरे प्रभुने संन्यास ग्रहण किया। यद्यपि वे अद्वैतके घर लौटकर आये हैं,

स्त्री पुरुष बाल वृद्ध युवती युवक ।
देखिते आनन्दे धाञा चले सब लोक ।।

स्त्री-पुरुष, बाल-वृद्ध, युवा-युवती सब लोग उनको देखनेके लिये आनन्द-पूर्वक दौड़े जा रहे हैं।

कोन अपराध कइनु मुञि अभागिनी ।
देखिते ओ अधिकार ना धरे पापिनी ।।

मुझ अभागिनीने कौन-सा अपराध किया है जो इस पापिनीको दर्शन करनेका भी अधिकार नहीं है ?

प्रभुर रमणी यदि ना करित विधि ।
तथापि पाइतुँ देखा प्रभु गुणनिधि ।।
—चैतन्य चन्द्रोदय नाटक

विधाताने यदि मुझे प्रभुकी रमणी नहीं किया होता तो मैं भी गुणनिधि प्रभुके दर्शन कर पाती !

● प्रभुके वियोगमें शची माता

श्रीगौराङ्ग इस समय शान्तिपुरमें अद्वैत महाप्रभुके घर पर विराजमान हैं। उनका संन्यासी वेष है। प्रभुके आदेशसे श्रीनित्यानन्द नवद्वीपके सब भक्तोंको शान्तिपुर ले जानेके लिये आये हैं। श्रीगौराङ्गके वियोगमें भक्तगणकी शारीरिक और मानसिक अवस्था अत्यन्त शोचनीय हो गयी है। श्रीनित्यानन्द उनको देखकर मर्माहत और व्यथित हो उठे। श्रीलोचनदास ठाकुरने नवद्वीपवासी भक्त-वृन्दकी तत्कालीन अवस्थाका इस प्रकार वर्णन किया है—

नदीया नगरेर लोक जीयन्तेइ मरा ।	नदिया नगरके लोग जीवित भी
काटिले कुटिले रक्त-मांस नाहि तारा ।।	मृतकके समान हो रहे हैं, शरीर काटने पर भी रक्त-मांस नहीं मिलता ।
उदरे नाहिक अन्न टलमल तनु ।	उदरमें अन्न नहीं जाता, शरीर
सर्व्व अन्धकार तार गोराचाँद बिनु ।।	डगमग कर रहा है । श्रीगौरचन्द्रके बिना उनके लिये सब ओर अन्धकार है ।

श्रीनित्यानन्द जिस दिन नवद्वीप आये, उस दिनको लेकर बारह दिन श्रीगौराङ्गको गृह-त्याग किये हो गये थे। श्रीनित्यानन्द पहले प्रभुके घर जा पहुँचे।

आपना सम्वरि नित्यानन्द महाशय ।	अपनेको सम्हालकर नित्यानन्द
प्रथमे उठिला आसि प्रभुर आलय ।।	महाशय पहिले प्रभुके घर आ उपस्थित हुए ।
आसि देखे आइर द्वादश उपवास ।	आकर देखा शची माँके बारह
सबे कृष्ण-शक्ति-बले देहे आछे श्वास ।।	उपवास हो गये हैं। भगवान् कृष्णके
—चै० भा०	शक्ति-बलसे देहमें श्वास बचे हैं।

श्रीनित्यानन्दजी महाप्रभुके आदेशसे नवद्वीप आये हैं, सबको शान्तिपुर ले जायँगे। प्रभु शान्तिपुरमें अद्वैतके घर हैं। यह संवाद बिजलीकी तरह समस्त नवद्वीपमें फैल गया। सब आकर शची देवीके घर पर उपस्थित हुए। श्रीनित्यानन्दने देखा कि शची देवीको बाह्य ज्ञान नहीं है। वे कृष्ण-विरह-सागरमें डूबी हुई हैं। यशोदाके भावमें वे परम विह्वल हैं। दोनों आँखोंसे अविरत अश्रुधारा वह रही है। जिसको देखती हैं, उससे पूछती हैं—"तुम क्या मथुराके आदमी हो? मेरे राम-कृष्ण कैसे हैं?" क्षण-क्षणमें उन्हें मूर्च्छा आ रही है। ऐसी अवस्थामें शची देवीको श्रीनित्यानन्दने जाकर प्रणाम किया। शची देवीने उनको देखकर कहा—"राम-कृष्ण आ गये?" फिर श्रीनित्यानन्दके मुँहकी ओर देखकर बोलीं—"वह वंशी बजी। जान पड़ता है गोकुलमें अक्रूर फिर आ गये।" शची देवीको बाह्यज्ञान नहीं है। यह देखकर श्रीनित्यानन्द कुछ चिन्तित हुए। कुछ देरके बाद शची देवीको बाह्यज्ञान हुआ। तब वे श्रीनित्यानन्दको

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी सासका आँचल पकड़कर खड़ी हैं, इस हृदय-विदारक करुण दृश्यको सारी भक्तमण्डली देख रही है। देखकर सब चुपचाप सिसकने लगे। सबकी आँखोंसे अनवरत अश्रुधार बह निकली। शची देवी बिलकुल निस्पन्द, अवाक् कठपुतलीके समान खड़ी हैं। यह देखकर श्रीनित्यानन्द बड़ी विपद्में पड़े। प्रभुका गुप्त आदेश उन्होंने अब तक किसीको नहीं कहा था। श्रीगौराङ्गने संन्यास ग्रहण किया है। स्त्रीका मुख-दर्शन उनके लिये निषिद्ध है। श्रीमतीका शान्तिपुर जाना प्रभुको अभिमत नहीं है। देवीको लेकर जाना युक्तियुक्त नहीं है। श्रीनित्यानन्द अब अधिक विलम्ब न कर प्रभुका कठोर आदेश अन्तरङ्ग भक्तोंको सुनाकर बोले--"प्रभुने निषेध किया है, श्रीमतीजीका जाना नहीं होगा।" प्रभुके इस दारुण और कठोर आदेशको शची देवी और श्रीमतीजीके सामने कहनेका साहस श्रीनित्यानन्द नहीं कर सके। भक्त-मण्डलीको लक्ष्य करके प्रभुका आदेश कह सुनाया। शची देवी और श्रीमतीने भी प्रभुके कठोर आदेशको सुना। शची देवीके आर्त्तनादसे सारी भक्तमण्डली व्यथित होकर रोने लगी। काञ्चनाके अङ्ग पर भार देकर श्रीमती खड़ी थीं, अब आंगनमें बैठ गयीं। देवीकी अस्फुट् क्रन्दन-ध्वनिसे भक्तबृन्दका हृदय विदीर्ण होने लगा। उनके दुःखसे मानो पृथ्वी फटने लगी। पशु-पक्षी, तरु-लता भी देवीके दुःखसे रुदन करने लगे।

विष्णुप्रियार कान्दनाते पृथिवी विदरे।
पशु-पक्षी-तरु-लता ए पाषाण झुरे॥
--चै० मं०

● विष्णुप्रियाको छोड़कर सबका प्रस्थान

शची देवी तब साहस कर उठीं। गृह-वधू सबके सामने बाहर पड़ी-पड़ी रो रही हैं--यह दृश्य शची देवीकी आँखोंमें विपरीत जान पड़ा। उन्होंने श्रीमतीको हाथ पकड़कर उठाया और उनको घरमें ले गयीं। धीरे-धीरे रोते-रोते न जाने पुत्रवधूके कानोंमें क्या कहा कि कोई और न सुन सका। सास बहूके गले लगकर कुछ देर तक रोती रहीं। देवी घर पर ही रह गयीं। काञ्चना आदि कतिपय सखियाँ देवीकी सेवा-सुश्रूषा करने लगीं। शची देवीने भक्तोंके साथ शान्तिपुरकी यात्रा की।

फिर पायँगी--इस आशासे वे धैर्य अवलंबन करके उठ बैठीं। शची देवीके शरीरमें कुछ भी बल नहीं है, बारह दिनसे उपवासी हैं, शरीर अवसन्न हो गया है। खोये धन निमाई चाँदको देखेंगी, इस आशासे कलेजा थाम कर उठ बैठीं। अब तक शची देवीको कोई भोजन नहीं करा सका था--यह सुनकर श्रीनित्यानन्दने कहा--

शीघ्र गिया कर माता कृष्णेर रन्धन।
आनन्दित हउक सकल भक्तगण।।

हे माता! शीघ्र जाकर कृष्णके लिये रन्धन करो, जिससे सब भक्तजन आनन्दित हों।

तोमार हस्तेर अन्ने सभाकार आश।
तोमार उपासे हय कृष्ण उपवास।।

सब लोग तुम्हारे हाथके पकाये अन्नकी आशामें हैं, तुम्हारे उपवास करनेसे कृष्ण उपासे रह जाते हैं।

तुमि नैवेद्य कर करिया रन्धन।
मोहोर एकान्त ताहा खाइवार मन।।
--चै० भा०

तुम रन्धन करके नैवेद्य लगाओ, हम लोगोंका एक मात्र वह नैवेद्य खानेका मन हो रहा है।

इतने दुःख और यन्त्रणाके बीच भी, इतने शोक-ताप और ज्वालाके भीतर भी, बाल-स्वभाव श्रीनित्यानन्दके मधुर वचनोंसे शची देवीका मन कुछ शान्त हुआ। शरीर क्लिष्ट है, अनशनके कारण उठनेकी भी शक्ति नहीं है, तथापि न जाने कहाँसे वृद्धाके शरीरमें उस समय बल आ गया। श्रीनित्यानन्दके मृतसञ्जीवन मधुर वचनोंसे शची देवीका सारा शारीरिक कष्ट दूर हो गया। तब उन्होंने रन्धन करके ठाकुरको भोग लगाया। श्रीनित्यानन्द तथा अन्यान्य भक्तगणोंको भोजन कराकर स्वयं थोड़ा प्रसाद पाया।

तबे आइ शुनि नित्यानन्देर वचन।
पासरि विरह गेला करिते रन्धन।।

शची माँ नित्यानन्दके वचन सुनकर विरहको भूलकर रन्धन करने गयीं।

कृष्णेर नैवेद्य करि आइ पुण्यवती।
अग्रे दिया नित्यानन्द स्वरूपेर प्रति।।

पुण्यवती शची माँने श्रीकृष्णको नैवेद्य अर्पण कर पहिले नित्यानन्द स्वरूपको दिया।

तबे आइ सर्व्व वैष्णवेरे आगे दिया।	तब शची माँने पहिले सब वैष्णवोंको
करिलेन भोजन सभारे सन्तोषिया।।	भोजन कराके फिर स्वयं किया।
परम आनन्द हइलेन भक्तगण।	भक्तगणको परम आनन्द हुआ
द्वादश उपासे आइ करिला भोजन।।	कि माँने बारह उपवासोंके बाद भोजन
--चै० भा०	कर लिया।

● शान्तिपुरको प्रस्थानकी तैयारी

अब सब लोग शान्तिपुर जानेकी तैयारी करने लगे। मालिनी देवी आदि पुर-नारियाँ भी जायँगी और सब भक्त गण जायँगे। शची देवीकी आन्तरिक इच्छा है कि पुत्र-वधूको साथ लेकर जायँ, परन्तु मनमें डर है कि वह पुत्रके संन्यास-वेशको कैसे देखेगी और वे भी पुत्रवधूको कैसे दिखलायँगी—इस प्रकार सोचती हैं और फिर सोचती हैं कि श्रीमतीजीको न ले जाना ही ठीक है। फिर विचार करती हैं--"यह कैसे होगा? अपनी सोनेकी पुतलीको किसके पास रखकर जाऊँगी? दुःखिनीके मनकी साध तो मिटेगी। इस जन्मके अपने जीवन-सर्वस्वको एक बार तो देखकर जीवन सार्थक करेगी।" इस प्रकार सोच-विचार कर ही रही थीं कि घरके सामने डोली आ खड़ी हुई। सभी तैयार हैं, शची देवीको लेने आये हैं। श्रीवास पण्डितने आकर शची देवीसे कहा--"माँ! चलो अपने निमाईको देखने शान्तिपुर चलो। सब तैयार हैं।"

शची देवी क्या करें, कुछ सोच-विचार कर स्थिर नहीं कर पा रही हैं। पति-विरह-विधुरा श्रीमती विष्णुप्रिया देवी घरके भीतर भूमिशय्या पर सोयी हुई हैं। श्रीनित्यानन्द उनके प्राण-वल्लभका संवाद लेकर आये हैं—यह देवीके सुननेमें आया है। सब प्रभुके दर्शन करने शान्तिपुर जा रहे हैं—यह बात भी श्रीमतीजीके कानोंमें पहुँची है। उनके लिये क्या आदेश होता है, वे सासके साथ शान्तिपुर प्राणवल्लभको देखनेके लिये जा सकेंगी या नहीं, इसीकी प्रतीक्षामें हैं। इस चिन्तामें श्रीमतीजी अधीर हो रही हैं। क्या करें—कुछ निश्चय न कर सकनेके कारण शची देवी दुबिधामें पड़ी हैं। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी घरके भीतर काञ्चनाके साथ

बाँचिब त्यजिया आमि भूषण भोजन ।।	भूषण भोजन भी तज मैं जीवित रह लूँगी।
सुखेते करिब आमि माटिते शयन ।।	सुखसे पृथ्वीके ऊपर मैं शयन करूँगी ।।
लोके बले तुमि नाकि आमार लागिया ।	कहते हैं सब लोग कि तुम बस मेरे कारन।
गार्हस्थ्य छाडिया गेले सन्न्यासी हइया ।।	चल दिये कर त्याग गृहस्थी संन्यासी बन ।।
केन आमि तोमार कि करिलाम क्षति ।	कहो ! भला मैंने क्या तुमको क्षति पहुँचायी ?
कोन दिन सङ्कीर्त्तने करेछि आपत्ति ?	संकीर्त्तनमें कब किस दिन आपत्ति उठायी ?
आछाड़े तोमार सर्व्व अङ्गे लागे व्यथा ।	खा पछाड़ गिर आहत होते अङ्ग-अङ्ग तव ।
बल देखि कोन दिन कहियाछि कथा ?	कहो कही क्या फिर भी तुमको कभी बात लव ?
खाट ह'ते भूमे गड़ागड़ि दिते तुमि ।	भूपर होते लोट- पोट शय्यासे गिरकर ।
बल कोन दिन राग करियाछि आमि ?	किया प्रकट क्या रोष किसी दिन भी मैंने पर ?
पाषाण गलित तोमार करुण रोदने ।	करुण रुदन तव पत्थरको पिघलानेवाला ।
मोर दुःख राखिलाम आपनार मने ।।	देख दबा रखती मनमें ही निज दुःख ज्वाला ।।
आमारे देखिले यदि धर्म्म नष्ट हय ।	मुझे देखनेसे यदि होता तव धर्म क्षय ।
आमि नय रहिताम बापेर आलय ।।	मैं अपने दिन काटूँगी रहकर पितुरालय ।।

पहचान सकीं। "निताई! मेरे निमाईको कहाँ रख आया? मेरा निमाई कहाँ है? मेरा निमाई कहाँ है?"—इतना कहकर उच्च स्वरसे क्रन्दन करते-करते वे मूर्च्छित होकर भूतल पर गिर पड़ीं। तुरन्त श्रीनित्यानन्द उनको गोदमें लेकर बैठ गये। त्यागी-शिरोमणि अवधूत नित्यानन्दके नयन-जलसे वक्षःस्थल डूब गया। बहुत कठिनाईसे शची देवीकी मूर्च्छा भंग की। श्रीनित्यानन्दकी गोदमें शयन करते हुए शची देवीने उनके मुँहकी ओर देखकर कहा––"बेटे निताई! तुमने कहा था कि मेरे निमाईको लेकर आओगे, मेरा सर्वस्वधन निमाई चाँद कहाँ है? कहाँ उसको रख आये?" इतना कहकर शची देवी उन्मादिनीके समान जोरसे अपनी छाती पीटने लगीं। श्रीनित्यानन्दने शची देवीके दोनों हाथ पकड़ लिये।

आर्त्तनादे डाके शची आरे अवधूत।
कोथा थूञा आलि मोर निमाइ सोणार पूत।।
इहा बलि कान्दे शची बुके कर हाने।
टलमल करे, नाहि चाहे पथ पाने।।
––चै० मं०

● शची देवीको प्रभुके शान्तिपुर पहुँचनेका संवाद

नित्यानन्द शची देवीके नयन-जलको पोंछकर बहुत धीरे-धीरे बोले–– "माँ! रोओ मत, तुम्हारे निमाईको मैं शान्तिपुरमें ले आया हूँ। वहाँ अद्वैत प्रभुके घर वे कुशलसे हैं। तुम लोगोंको वहाँ ले जानेके लिये मुझको भेजा है। चलो, तुम लोग वहाँ चलो।"

बलिलेन नित्यानन्द चल शान्तिपुरे।
तोमार निमाइ आछे अद्वैतेर घरे।।
आमारे पाठाइया दिला तोमा लइबारे।।
––चै० भा०

श्रीगौराङ्गको श्रीनित्यानन्द पकड़कर लाये हैं––यह समाचार सुनकर शची देवीके शरीरमें मानो प्राण आ गये। शची देवीको फिर पुत्रका मुख देखनेको मिलेगा। वे फिर निमाईके चन्द्रमुखको देखेंगी––खोया हुआ धन

शास्त्रीय वर्णन तो नहीं है, लेकिन जनश्रुति है कि श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने शान्तिपुरमें अपने प्राणनाथके श्रीचरणोंमें किसी भक्तिमती स्त्रीके हाथ एक पत्र प्रेषित किया था। महात्मा शिशिरकुमार घोषने अपने 'श्री अमिय निमाइ-चरित' ग्रन्थके तृतीय खण्डके प्रथम अध्यायमें इस पत्रके भावका मार्मिक वर्णन स्वरचित कवितामें किया है, जो पाठकोंके आस्वादनार्थ यहाँ उद्धृत किया जाता है—

जे अवधि गेछ तुमि	तुम जिस दिनसे गये छोड़
ए घर छाड़िया।	जिस क्षणसे यह घर।
से ह'ते आछेन माता	उसी समयसे बस माता
उपोस करिया।।	उपवास रहीं कर।।
सदा ताँर सङ्गेते	सदा मालिनी मौसी
मालिनी ठाकुराणी।	रहतीं साथ उन्हींके।
नैले प्राणे एत दिन	न तो दिये तज होतीं
मरितेन तिनि।।	अब तक प्राण कभीके।।
खाओयाइते करि	उन्हें खिलानेकी जितनी
जत साध्य साधन।	ही चेष्टाएँ होतीं।
मोरे कोले करि	मुझे गोदमें ले वे
करेन द्विगुण रोदन।।	उतनी दूनी रोतीं।।
मोर हाते मा राखिया	मैयाको तुम मेरे
चले गेले तुमि।	करमें सौंप सिधारे।
अकुल पाथारे देख	पड़ी सिन्धुमें मैं
पड़िलाम आमि।।	जिसके जलमग्न किनारे।।
पिता चेये छिलेन	मुझे पिताजीकी इच्छा
मोरे बाड़ि लइबारे।	थी घर जायें ले।
ताकि आमि जेते पारि	जा सकती थी पर क्या
माके एका छेड़े।।	माँको छोड़ अकेले ?
सन्न्यासी-घरणीर नियम	संन्यासीकी पत्नीका
किछुइ ना जानि।	कुछ नियम न मालुम।
कि खाइब कि परिब	क्या खाऊँगी, क्या
लिखिबेन आपनि।।	पहनूँगी, देना लिख तुम।।

हातेर कङ्कण फेलिबारे हल भय। पाछे बा तोमार किछु अमङ्गल हय ।।	लगा फेंकनेमें उतार कर कंकण यह डर। कहीं अमङ्गल हो न तुम्हारा आगे चलकर ।।
तोमार पाटेर जोड़ गलार चादर । तोमार गलार हार चरण नूपुर ।।	उत्तरीय, रेशमकी धोती तथा तुम्हारी। कण्ठ - हार तव, चरणोंका नूपुर रवकारी ।।
कि करिब ए सकल सामग्री लइया ।। राखिब कि गङ्गा माझे दिब भासाइया ।।	सामग्रियाँ करूँ क्या मैं ये सारी लेकर। रक्खूँ पास, बहा दूँ या गङ्गाके भीतर ।।
ए सब बारता आमि काहारे सुधाइ । माके सुधाइले मरि जाबेन निश्चय ।।	यह सब बातें किससे पूछूँ कौन बताये ? तजें प्राण निश्चय यदि माँसे पूछा जाये ।।
मार काछे थाक यदि बड़ भाल हय । आमि काछे ना जाइब ना करिह भय ।।	बड़ा भला हो पास अगर माँके रह जाओ । मैं न निकट आऊँगी मत मनमें भय खाओ ।।
ता ह'ले से शान्त हबेन दुःखिनी जननी । ताँरे बले दिओ नियम कि पालिब आमि ।।	दुखिया माँका दुःख शान्त हो कर लो जो यह। नियम निभाने मुझको जो, देना उनको कह ।।
आपनि जे सब तुमि नियम पालिबे । ताहाते कठोर नियम ए दासीरे दिबे ।।	जितने सारे नियम स्वयं तुम अपने साधो। मुझको नियमोंमें कठोर उनसे भी बाँधो ।।

धीरे-धीरे कुछ बातें कर रही हैं। इसी विषयको लेकर दोनों जनी परामर्श कर रही हैं।

शची देवी आङ्गनमें खड़ी होकर श्रीवास आदि भक्तोंके साथ शान्तिपुर जानेकी तैयारीमें हैं। जिस घरमें श्रीमतीजी हैं, शची देवी उसी घरकी ओर बार-बार देखती हैं। यद्यपि मनकी बात अब तक किसी पर प्रकट नहीं की तथापि भावसे सब लोग समझ रहे हैं कि शची देवीकी इच्छा पुत्र-बधूको साथ लेकर शान्तिपुर जानेकी है।

● विष्णुप्रियाका गमनोद्योग और निषेध

प्रभुके गृहके प्राङ्गणमें लोगोंकी भीड़ लगी है, प्रभुके सारे भक्तगण तथा सब नदियावासी वहाँ एकत्रित हुए हैं। शची देवीके साथ सभी लोग प्रभुके दर्शन करने शान्तिपुर जायँगे।

सारा प्रबन्ध हो गया है। डोली प्रभुके घरके द्वार पर बाहर तैयार है। श्रीनित्यानन्द शची देवीको शीघ्र प्रस्थान करनेके लिये अनुरोध कर रहे हैं, मालिनी देवी आदि पुर-नारियाँ तैयार खड़ी हैं। जब श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने देखा कि सब लोग उनको छोड़कर जा रहे हैं, तो वे घरके भीतर स्थिर न रह सकीं। मलिन वस्त्रा, रुक्ष-केशी, सर्वाङ्ग धूलि-धूसरिता, दुःखिनी श्रीमती विष्णुप्रिया देवी सखी काञ्चनाके अङ्ग पर भार देकर घूँघटमें मुँह छिपाये शची देवीका अञ्चल पकड़कर महा अपराधिनीके समान सबके सामने आङ्गनमें आकर खड़ी हो गयीं। उनको देखकर शची देवीके हृदयका अन्तस्तल मानो तुषानलसे दग्ध हो उठा। सबकी समझमें आ गया कि श्रीमतीजी भी प्रभुके दर्शन करने शान्तिपुर जानेके लिये तैयार हैं। शची देवीका सिर घूमने लगा, उनकी आँखोंके सामने अन्धेरा हो गया, वे और खड़ी न रह सकीं। दो स्त्रियाँ——मालिनी देवी और शची माँकी बहिन——चन्द्रशेखर आचार्यकी पत्नी——दोनों ओरसे शची देवीकी दोनों बाँहें पकड़कर खड़ी हो गयीं।

शची देवी सम्मुखे दाँड़ाते नारे थिया।
दाँड़ाइला दु'जनार दु'बाहु धरिया॥
——चै० मं०

कान्दि विष्णुप्रिया कहे बाणी।
बासु कहे ना रहे पराणि॥

श्रीविष्णुप्रिया इस प्रकार रो-रोकर कह रही हैं। बासु घोष कहते हैं--अब प्राण नहीं रहेंगे।

(२)

कह सखि ! जीवन उपाय।
छाड़ि गेला गोरा नटराय॥

हे सखि ! जीनेका उपाय बताओ। मुझे छोड़कर नटवर गौर चले गये।

झुरि झुरि तनु भेल क्षीण।
ए दुःखे बञ्चिब कत दिन॥

झूरते-झूरते शरीर क्षीण हो गया। अब इस दुःखसे कितने दिन बचूँगी ?

यदि जाइ सुरधुनी घाटे।
कत कि देखिया हिया फाटे॥

यदि गङ्गा-घाट पर जाती हूँ, तो देखकर छाती फट जाती है।

आन गिये गोरा गल - माला।
अनले पशिब जुड़ाइब ज्वाला॥

जाकर गौरके गलेकी माला ले आओ। मैं अग्निमें प्रवेश करके अपनी ज्वाला शान्त करूँगी।

कहे बासु ना सरे बयान।
गोरा बिने ना बाँचे पराण॥

बासु घोष कहते हैं--वाणी नहीं निकलती है। गौर बिना प्राण नहीं बचेंगे।

(३)

सन्न्यासी हइया गेला
पुन यदि बाहुड़िला
ना आइला नदीया नगरे।

वे संन्यासी हो चले गये। फिर लौटे भी, लेकिन नदिया नगरीमें नहीं आये।

हृदये हृदये धरि
निज पर एक करि
चाँद मुख देखिबार तरे॥

मैंने चन्द्रमुख देखनेके लिये हृदयमें हृदय मिलाकर अपना पराया एक कर डाला।

हरि ! हरि ! गौराङ्ग एमन केने हैला॥

हरि ! हरि ! गौराङ्ग ऐसे क्यों हो गये ?

भूमि ते पड़िया देवि करे हाय हाय।
—चै० मं०

● विष्णुप्रियाकी स्थिति

वासु घोषने देवीकी तत्कालीन अवस्थाको अपनी आँखों देखा था। उनका रचा हुआ निम्नलिखित पद 'वंशी शिक्षा' ग्रन्थसे यहाँ उद्धृत किया जाता है। श्रीमती रो रही हैं और कह रही हैं—"रामचन्द्र सीताको लेकर वनवासी हुए थे, प्रभु क्यों नहीं वैसा ही करते हैं? श्रीकृष्णने भी गोप-बालाओंको छोड़कर मथुरा जाकर राजा होकर भी उनका सन्देश लेनेके लिये उद्धवको भेजा था। इससे ही गोपियोंके प्राण बचे थे। मेरे प्रभु भी तो ऐसा कर सकते थे, क्यों नहीं किया?" श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी उक्तिके इस अति सुन्दर पदका रसास्वादन करके कृपालु पाठक प्राण भर कर थोड़ा रो लें। देवीके दुःखसे रो लेने पर हृदय निर्मल हो जायगा, साथ-साथ चित्तशुद्धि होगी, यह बात ध्रुव-निश्चय है।

कान्दे देवी विष्णुप्रिया
निज अङ्ग आछाड़िया
लोटाञा लोटाञा छितितले।

विष्णुप्रिया देवी रोती हैं। अपने अङ्ग पछाड़कर भूमि पर लोट-पोट होती हैं।

ओहे नाथ! कि करिले
पाँथारे भासाये गेले,
कान्दिते कान्दिते इहा बले॥

रोते-रोते कहती हैं—"हे नाथ! तुमने यह क्या किया? मुझको समुद्रमें डुबा गये।

ए घर जननी छाड़ि
मोरे अनाथिनी करि
कार बोले करिला सन्न्यास।

इस घर तथा माताजीको छोड़ कर और मुझे अनाथिनी बनाकर किसके कहनेसे तुमने संन्यास लिया?

वेदे शुनि रघुनाथ
लइया जानकी साथ
तबे से करिला वनवास॥

वेदमें सुनती हूँ कि रामचन्द्रजीने सीताको साथ लेकर वनवास किया था।

पूरबे नन्देर बाला
जबे मधुपुरे गेला
एड़िया सकल गोपीगणे।

पूर्वकालमें जब नन्दके बालक श्रीकृष्ण सब गोपियोंको त्याग कर मथुरा गये—

उद्धवेरे पाठाइया निज तत्त्व जानाइया राखिलेन ता सबार प्राणे ।।	तब उन्होंने उद्धवको भेजकर अपना तत्त्व ज्ञान समझाकर उन सबकी प्राण-रक्षा की।
चाँद मुख ना देखिब आर पद ना सेविब ना करिब से सुख-विलास।	अब यदि मैंने तुम्हारे चन्द्रमुखको नहीं देखा, तुम्हारे चरणोंकी सेवा न की और तुम्हारे सङ्गका वह सुख-विलास मुझे नहीं मिला
ए देहे गङ्गाय दिब तोमार शरण निब वासुर जीवने नाहि आश ।।	तो इस देहको गङ्गामें डुबाकर तुम्हारी शरण लूँगी।" (इस दृश्यसे) बासु घोषके जीवनमें और कोई आशा नहीं रह गयी है।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने प्राणवल्लभकी तुलना श्रीरामचन्द्र और श्रीकृष्णके साथ की है। वे श्रीभगवान्के अवतार हैं, वे जो कुछ कर गए हैं, वही सबका आदर्श धर्म-कर्म है। श्रीगौराङ्गने ऐसा क्यों नहीं किया? श्रीमतीके मनका भाव यह है कि उनके प्राण-वल्लभ भी श्रीभगवान्के अवतार हैं। पूर्व अवतारोंके समान उनको भी अपनी प्रेमाकांक्षिणी दासीके प्रति कृपाकर एक बार स्मरण करना उचित था। श्रीगौराङ्ग-अवतार सर्वापेक्षा श्रेष्ठ है, इसके अनेक प्रमाण हैं, परन्तु यह विषय यहाँ प्रासङ्गिक नहीं है। दूसरे अवतारोंके समान श्रीगौराङ्ग-अवतारमें रस-माधुर्य और ऐश्वर्यभावका समावेश नहीं है। ऐश्वर्यभाव दिखाकर श्रीगौराङ्गने भक्त-वृन्दको परितुष्ट नहीं किया। वे भक्त-वृन्दको प्रीतिपूर्ण दृष्टिसे देखते थे, परन्तु उनके सङ्गसे दूर रहनेकी चेष्टा करते थे। इससे भक्तवृन्दकी--उनके दर्शनके अभावमें--विरह-वेदना क्रमशः वृद्धिगत होती थी और साथ ही उनकी प्राप्तिकी आशा भी बलवती होती थी। विरहके बिना अनुरागकी वृद्धि नहीं होती। प्रिय जन यदि खोज-खबर न लें तो उनका समाचार पानेके लिये तथा उनको अपना समाचार देनेके लिये मन बड़ा व्यग्र होता है। प्रिय जन यदि खोज-खबर न लें तो मैं भी नहीं लूँगा--यह प्रेमीका धर्म नहीं है, यह तो स्वार्थीका काम है। श्रीगौराङ्ग, श्रीविष्णुप्रिया देवीकी खोज-खबर नहीं लेते थे--यह बात नहीं कही जा सकती, वे स्वयं श्रीभगवान् भक्तोंके

उठ बोस करि कत क्षिति माहा लुण्ठत
पवन अनल दह अङ्ग।

कितनी उठ-बैठ करते हुए (छटपटाते हुए) पृथ्वी पर लोट-पलोट करती हूँ ? पवन अग्निकी तरह शरीरको जलाता है।

कि करब का देइ समवाद पाठाओब
मिलब किये तछु सङ्ग॥

क्या करूँ ? किसके द्वारा संबाद भेजूँ, जिससे उसके साथ मिलन हो।

वेथित वेदन जन बोझायत अनुक्षण
धैरज धर हिया माझ।

मेरी वेदनासे व्यथित जन बार-बार मुझे समझाते हैं कि हृदयमें धैर्य धारण करो।

निरवधि सो गुण करि अवलम्बन
साधइ आपनक काज॥
—माधव घोष

उनके असीम गुणोंका निरन्तर अवलम्बन करके अपना (जीवन) निर्वाह करते रहो।

(६)

जनमहि गौरक गरबे गोङायनु,
सो किये ए दुख सहयि।
उरु बिनु शेष परश नाहि जानत
सो तनु अवसही लुटयि॥

गौरके गर्वसे जिसने जीवनयापन किया, अब वह कैसे इस दुःखको सहे ? जिसने हृदयके स्पर्शके सिवा और स्पर्शको जाना ही नहीं, वह शरीर अवश होकर भूमि-लुण्ठित हो रहा है।

वदन - मण्डल चाँद - झलमल
सो अति अपरूप शोहे।
राहु - भये शशि भूमि पड़ल खसि
ऐछन उपजल मोहे॥

अत्यन्त तेज-कांतिमय मुखमण्डल चाँदके समान अपरूप शोभा पा रहा था। वही चन्द्रमुख मानो राहुके भयसे भूतल पर गिर पड़ा है, मुझे ऐसा लगता है।

पद अङ्गुलि देइ क्षिति पर लिखइ
जैछन बाउरि पारा।
घन घन नयने निझरे वारि झरु
जैछन शाओन धारा॥

पदनखसे पृथ्वीपर लिख रही है मानो बावली हो। आँखोंसे घनी अश्रुधारा इस प्रकार प्रवाहित है मानो सावनकी झड़ी लगी हो।

विष्णुप्रिया पत्र लिखे	रहीं पत्र लिख विष्णु-
काँदिया काँदिया ।	प्रिया देवि रो-रोकर ।
* **'बलराम' देखे पाछे**	देख रहे 'बलराम'
थाकि दाड़ाइया ।।	खड़े पीछे चुप होकर ।।

नदिया जन-शून्य हो गया। सभी प्रभुके दर्शन करनेके लिये गये। बालक-बालिका, युवक-युवती, वृद्ध आदि सभी शची देवीके साथ शान्तिपुर चले। रह गयीं केवल एक श्रीमती विष्णुप्रिया देवी। उन्होंने सोचा कि यदि उनको न देखनेसे उनके प्राणवल्लभकी धर्म-रक्षा होती है, मनमें सुख होता है तो वही हो, वह क्यों प्राणवल्लभके धर्मपथका कण्टक बनेगी, सुखमें बाधक बनेगी? प्राणवल्लभको जिससे सुख मिले, उसके लिये वही कर्त्तव्य है। यह सोचकर श्रीमतीजी घर पर रह गयीं। परन्तु उनकी आँखोंकी अश्रुधारा न रुकी। वे भूतल पर गिरकर छटपटाती हुई क्रन्दन करने लगीं। उस समय जो भी देवीको समझाने-बुझाने आयीं, वे भी रो-रोकर व्याकुल होने लगीं। श्रीमतीजीके मुखसे—'हाय! क्या हुआ'—इस बातके सिवा और कोई बात नहीं निकलती।

---

* 'श्रीअमिय-निमाइ-चरित' श्रीग्रन्थके प्रणेता महात्मा श्रीशिशिरकुमार घोषके श्रीअनाथनाथ बसु प्रणीत बङ्ग भाषाके जीवन चरित ग्रन्थमें दशवें अध्यायके पृष्ठ ३५५ पर उल्लेख है कि ग्रन्थकार (श्रीअनाथनाथ बसु) ने महात्मा श्रीशिशिरकुमार घोषके अनुज श्रीमोतीबाबूके मुँहसे सुना था कि 'अमिय-निमाइ-चरित' श्रीग्रन्थके लिखते समय जब-जब श्रीशिशिर बाबूके सामने कोई समस्या उपस्थित होती थी, तब-तब वे ग्रन्थकी पाण्डुलिपि अलग रखकर ठाकुर-गृहमें प्रवेश कर, द्वार बन्द कर श्रीमन्महाप्रभुजीके सम्मुख धरना देकर पड़े रहा करते थे और जब बाहर आकर फिर लेखन कार्य आरम्भ करते, उस समय उनके मुँह पर अभूतपूर्व भाव दृष्टिगोचर होते थे; अतः उनकी सम्पूर्ण लिपि भगवत् प्रेरित है; उसमें कहीं भी सन्देह करना उचित नहीं।

—प्रकाशक

सबारे सदय हैया मुञि नारीरे बञ्चिया ए शोक - सागरे भासाइला।	सबके ऊपर तो दया की और मुझ नारीको वञ्चित कर शोक-समुद्रमें डुबा दिया।
ए नव - यौवन काले मुड़ाइया चाँचर चूले ना जानि साधिल कोन सिद्धि।	इस नव-यौवनमें घुंघराले केश मुंड़ाकर न जाने कौन-सी सिद्धिको साधा ?
कि छार पुराण से पशुवत् पण्डित जे गौराङ्गेर सन्न्यास दिला विधि।।	वह कैसा असार पुराण है और वह पण्डित पशुवत है जिसने गौराङ्गको संन्यासकी विधि दी।
अक्रूर आछिल भाल राजा बोले लैया गेल राखिला से मथुरा नगरी।	उससे तो अक्रूर अच्छे थे, जो राजाकी आज्ञा कहकर कृष्णको ले गये और मथुरा नगरीमें रक्खा।
निति लोक आइसे जाय ताहाते सम्वाद पाय भारती करिल देशान्तरी।।	नित्य लोग आते-जाते थे और उनसे संवाद मिलता था। परन्तु भारतीने तो गौराङ्गको देशान्तरी बना दिया।
एत बलि विष्णुप्रिया मरमे वेदना पाञा धरणीरे मागये विदाय।	इतना कहकर श्रीविष्णुप्रिया देवी मर्म-व्यथित होकर पृथ्वीसे विदा माँगती हैं।
वासुदेव घोष कय मो सम पामर नाइ हिया नाहि विदरिया जाय।।	वासु घोष कहते हैं कि मेरे समान कौन पामर होगा, जिसका हृदय विदीर्ण नहीं होता।

(४)

गैल गौर ना गेल बलिया। हाम अभागिनि नारी आकुले भासाइया।।	गौर चले गये, पर कुछ कह नहीं गये। मुझ अभागिनी नारीको दुःखमें डुबा गये।

हायरे दारुण विधि निदय निठुर। जन्मिते ना दिलि तरु भाङ्गलि अंकुर।।	हाय रे दारुण विधाता! तुम कितने निठुर हो, जो तरुको जन्मने भी नहीं दिया और अंकुर ही तोड़ डाला।
हायरे दारुण विधि कि बाद साधिलि। प्राणेर गौराङ्ग आमार कारे निया दिलि।।	हाय रे दारुण विधि! तुमने कौन-सा बैर साधा? मेरे प्राण-गौराङ्गको लेकर किसको दे दिया?
आर के सहिबे आमार यौवनेर भार। विरह अनले पुड़ि हब छार खार।।	मेरे यौवनका भार और कौन सहेगा? मैं विरह अनलमें जलकर क्षार-भस्म हो जाऊँगी।
बासु घोष कहे आर कारे दुःख कब। गौराचाँद बिना प्राण आर ना राखिब।।	बासु घोष कहते हैं कि और किसको दुःख सुनाऊँ? अब गौरचन्द्रके बिना प्राण और नहीं रक्खूँगी।

(५)

गौर- गरबे हाम जनम गोङायलुं अब काहे निरदय भेल। परिजन वचनहि गरले गरासल गेह दहन सम केल।। सजनि अब दिन विफलहिं भेल।।	गौरके गर्वसे हमने जन्म बिताया, वह अब निर्दयी क्यों हो गया? परिजनोंके विषसे सने हुए वचनोंने घरको अग्नि-कुण्डके समान बना दिया। हे सजनि! अब ये दिन विफल ही हो गये।
सोङरिते सो मुख हृदय विदारत पाँजरे बजरक शेल।।	उस मुखका स्मरण आते ही हृदय फटने लगता है और शरीरमें वज्रके शेल-सा लगता है।

प्राण हैं। श्रीमतीजीके भीतर बैठकर वे यह लीला कर रहे हैं। श्रीमतीजी यह बात समझते हुए भी समझ नहीं पा रही हैं, यह भी उनकी विचित्र लीला है। श्रीभगवान्‌के ऊपर जीवके प्रेम और प्रीतिकी वृद्धि करनेके लिये ही उनका इतना कौशल-जाल-विस्तार है। श्रीरामचन्द्र सीताजीको लेकर वनवासी हुए थे, श्रीश्रीगौरचन्द्र विष्णुप्रिया देवीको घर पर रखकर संन्यासी हुए। लोक-शिक्षाके निमित्त उन्होंने वैराग्यकी पूर्ण पराकाष्ठा दिखलाकर जीवके अन्त:करणको द्रवित कर दिया। अधिक महत्व किसमें है? श्रीगौरलीला-रस-लोलुप कृपामय पाठकगण इसका विचार करें।

● काञ्चनादि सखियों सहित श्रीविष्णुप्रिया

श्रीमतीजी अकेली घर रह गयीं। शची देवीको लेकर सब भक्तगण शान्तिपुर चले। काञ्चना आदि कुछ समवयस्का मर्मी सखियोंसे परिवेष्टित होकर श्रीमतीजी दिन-रात गौर-विरहकी बातें कहती हैं और रोती हैं। जी खोलकर हृदयकी वेदना सखियोंको कह सुनानेसे श्रीमतीजीका दु:ख कुछ शान्त हो रहा है। इसी प्रसङ्गकी श्रीमतीजीकी उक्तिके कुछ प्राचीन पदोंका मैंने संग्रह किया है, उनको प्रेमोपहाररूपमें पाठक-पाठिकाओंको प्रदान करता हूँ। पाठ करके रसास्वादन करें, तो यह अधम ग्रन्थकार कृतार्थ हो जायगा। ये पद बड़े ही मर्मभेदी हैं। देवीके हृदयकी बातें इन पदोंमें प्रकाशित हुई हैं। पाठ करने पर रोये बिना नहीं रहा जा सकता।

(१)

हेंदे रे पराण निलजिया।	अरे मेरे निर्लज्ज प्राण ! अभी
एखनओ ना गेलि तनु तेजिया।।	तक तुम शरीर छोड़कर नहीं गये !
गौराङ्ग छाड़िया गेछे मोर।	गौराङ्ग मुझे छोड़कर चले गये,
आर कि गौरव आछे तोर।।	अब तेरा क्या गौरव रह गया है?
आर कि गौराङ्ग चाँदे पाबे।	क्या तुम फिर गौराङ्ग चाँदको प्राप्त
मिछा प्रीति - आश आशे रबे।।	करोगे? झूठी प्रीतिकी आशामें पड़े हो।
सन्न्यासी हइया पहुँ गेल।	प्रभु संन्यासी होकर चले गये,
ए जनमेर सुख फुराइल।।	मेरे इस जन्मके सुख समाप्त हो गये।

खेने मुख गोइ पानि अवलम्बइ
घन घन बहये निश्वास।
सोइ गौर हरि पुनहि मिलायब
नियड़हि माधव दास।।

कभी मुँहको छिपा लेती हैं, कभी हाथका सहारा लेती हैं, लम्बे दीर्घ साँस लेती है। माधवदास कहते हैं कि उन्हीं गौर हरिकी मैं फिर शीघ्र ही प्रियाजीसे भेंट करा दूँगा।*

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी भीषण विरह-दशा देखकर उनकी सखियाँ विशेष व्यथित हुईं। उनमें श्रीमतीजीकी श्रेष्ठ अन्तरङ्गा मर्म-सखी काञ्चना देवीके दुःखको सह न सकनेके कारण पगलीके समान गङ्गातीरकी ओर निकल गयीं। गङ्गाके तीर पर प्रभु भक्तोंके साथ जहाँ शास्त्र-चर्चा किया करते थे, कृष्ण-कथा कहते थे, काञ्चना वहाँ जाकर धड़ामसे बैठ गयीं। श्रीमतीजीकी असह्य विरह-यातना और भीषण विरह-दशा स्मरण करके काञ्चना सखी श्रीगौराङ्गको लक्ष्य करके नाना प्रकारके प्रलाप वाक्य कहने लगीं। काञ्चनाकी दोनों आँखोंसे झर-झर आँसुओंकी धारा बह रही है। वेश-भूषा पगलीके समान है। लोक-लज्जा नहीं है। वे गङ्गातट पर बैठीं बिल्कुल बेसुध हो रही हैं। सखीके दुःखसे काञ्चना पगलीके समान विलाप कर रही हैं। उनकी करुण विलापध्वनि गगनको भेदन कर रही है। गङ्गाकी तरंगें भी निस्तब्ध होकर वहाँ गौर-विरहकी कहानी सुन रही

---

* राष्ट्रकवि स्वर्गीय श्रीमैथिलीशरणजी गुप्तने भी अपने लघुकाव्य 'श्रीविष्णुप्रिया' में एक स्थल पर इसी प्रसंगका वर्णन करते हुए श्रीविष्णुप्रियाके भाव यों व्यक्त किये हैं—

"अबलाके भयसे भाग गये
वे उससे भी निर्बल निकले,
नारी निकले तो असती है
नर यति कहाकर चल निकले।"
कहती है मेरी शुभा सखी—
"क्या आशा थी, क्या फल निकले?
लुट गये पलोंके युग मेरे,
अब फूट युगोंके पल निकले!"

हैं। तीर पर रहनेवाले पशु-पक्षी भी व्याकुल हैं, मनुष्यकी तो बात ही क्या, पाषाण तक द्रवित हो रहे हैं।

तछु दुःखे दुःखी एक प्रिय सखि गौर - विरहे भोरा। सहिते नारिया चलिले धाइया जे - मत बाउरि पारा।।	उनके दुःखसे दुःखी एक प्रिय सखी गौर-विरहमें बेसुध होकर, सह न सकनेके कारण, पगलीके समान भाग चली।
नदीया नगरे सुरधुनि-तीरे जे खाने बसिता पहुँ। तथाय जाइया गदगद हैया कि कहये लहु लहु।।	नदिया नगरमें गङ्गाजीके तटपर जहाँ प्रभु बैठते थे, वहाँ जाकर गद्गद होकर वह धीरे-धीरे कुछ बोलने लगी।
से सब प्रलाप वचन शुनिते पाषाण मिलाञा जाय। नीलाचल पुरे जैछन गौड़े जाइया देखिते पाय।।	उन सब प्रलाप वचनोंको सुनकर पाषाण द्रवित हो उठे। ठीक गौड़देश जैसा ही दृश्य नीलाचलपुर जानेसे देखनेको मिलता है।
आँखि झर झर हिया गर गर कहये कान्दिया कथा। माधव घोषेर हिया बियाकुल शुनिते मरमे व्यथा।।	आँखें झर-झर हो रही हैं, हृदय गरगर हो रहा है, क्रन्दन करते हुए बात करते हैं। मर्म व्यथा सुनकर माधव घोषका हृदय व्याकुल है।

दूसरी सखियाँ देवीकी अनुमति लेकर गङ्गातटसे काञ्चनाको पकड़कर घर ले आयीं। काञ्चना श्रीमतीकी प्रधाना सखी हैं, श्रीमतीजी सारी बातें उनको कहती हैं। काञ्चनाको देखकर श्रीमतीजी स्थिर हो गयीं। गौर-विरह-दुःख सह न सकनेके कारण सखी पगलीके समान हो गयी, इससे देवीके मनमें बड़ा दुःख हुआ और उस दुःखको वे हृदयमें दबाकर नहीं रख सकीं। देवी काञ्चनाके गले लिपट कर अनवरत अश्रु बहाने लगीं। अन्यान्य सखियोंके नाना प्रकारकी बातें करके श्रीमतीजीको सान्त्वना देनेकी चेष्टा करने पर देवीने कहा—"सखि! इस समय अन्य कोई बात न बोलो। मेरे पाणबल्लभकी ही बात बोलो। वही बात मुझे बहुत अच्छी लगती है।

दूसरी बात मैं नहीं सुनूंगी।" देवीकी उक्तिका अधम ग्रन्थकार-रचित पद यहाँ उद्धृत किया जाता है।

(१)

सजनि! कहलो गौरकथा। पराण भरिया से कथा शुनिया जुड़ाइ मनेर व्यथा।।	हे सखि! गौर-कथा कहो। जी भरकर उस कथाको सुनकर मैं मनकी व्यथाको शान्त करूँ।
कहलो सजनि रसमय वाणी गौरकथा रसे भरा। हिया माझे मोर विराजे गौर गौरारूप मनहरा।।	हे सखि! रसमयी वाणीमें रससे भरी गौर-कथा कहो। गौर मेरे हृदयमें विराजते हैं, गौररूप बड़ा मनोहर है।
पराण सम्बल गौर-कथा बल आन् कथा शुनिब ना। प्रेममय गाथा हय गौर-कथा से कथा मोरे बल ना।।	मेरे प्राणोंका सहारा गौर-कथा कहो, मैं दूसरी बात नहीं सुनूंगी। गौर-कथा प्रेममयी गाथा है, वही कथा मुझसे कहो न!
पियास मिटिबे आनन्द छुटिबे दगध हृदय माझे। मानस मुगध गौर शबद पराणे मधुर बाजे।।	इससे मेरी प्यास मिट जायगी और दग्ध हृदयमें आनन्दका उद्रेक होगा। मनोमुग्धकारी गौर शब्द हृदयमें मधुर ध्वनि करता है।

(२)

सखि! चरणे तोमार धरि। गौर-कथा कओ पराण जुड़ाओ गोरार विरहे मरि।	हे सखि! मैं तुम्हारे पैर पकड़ती हूँ। गौर-कथा कहकर मेरा हृदय शीतल करो। मैं गौरके वियोगमें मर रही हूँ।
सकल समय कथा रसमय शुनाओ आमार काने। बाँचाओ पराणे सुधा वरिषणे जुड़ाओ तापित प्राणे।।	सदा ही यह रसमयी कथा मेरे कानोंको सुनाओ। सुधा-वृष्टि करके मेरे प्राणोंकी रक्षा करो और सन्तप्त प्राणोंको शीतल करो।

(३)

सखि ! रूपेर माधुरी कह ।
कि वा से वदन कि वा से नयन
कि वा सुवलित देह ।

हे सखि ! उनके रूपकी माधुरीका वर्णन करो । कैसा वह वदन है ! कैसे वे नयन हैं ! कैसी सुगठित देह है !

रूपेर छटाय उछले हियाय
नवानुराग - लहरी ।
जगत भुलिया से रूप स्मरिया
रयेछि जीवन धरि ।।

उस रूपकी छटासे हृदयमें नव-नव अनुरागकी लहरें उछलती हैं । उस रूपका स्मरण करके मैं संसारको भूलकर जीवन धारण किये हूँ ।

सोणार वरण गौर रतन
किवा से मोहन हासि ।
रूपेर काहिनी कहलो सजनि
शुनि आमि दिवानिशि ।।

सुनहले वर्ण वाले मेरे गौर-रत्नकी वह कैसी मोहनी हँसी है ? हे सखि ! उनके रूपकी कहानी कहती रहो और मैं दिन-रात सुनती रहूँ ।

(४)

सखि ! सुनाओ श्रीगौर नाम ।
पराण जुड़ान परम रतन
मधुसम रस - धाम ।।

हे सखि ! श्रीगौर-नाम सुनाओ, जो प्राणोंको शीतल करनेवाला, परम रत्न, मधु सदृश रस-धाम है ।

आखरे आखरे कत मधु झरे
गोरा नामे माखा सुधा ।
ए नाम शुनिले प्रेम जे उथले
दूर हय भव-क्षुधा ।।

प्रति अक्षरमें कितना मधु झरता है ? श्रीगौर-नाम अमृत मिश्रित है । इस नामको सुनते ही प्रेम उझल उठता है और भव-क्षुधा दूर हो जाती है ।

(५)

सखि ! नाहि कह आन कथा ।
चरणेते धरि छाड़ह चातुरी
लये चल गौर यथा ।।

हे सखि ! दूसरी बात मत कहो । तुम्हारे चरण पकड़ती हूँ, चतुराईको छोड़ो, जहाँ गौर हों, वहाँ ले चलो ।

जीवने आमार गोरा धन सार
नाहि जानि गोरा भिन्न ।
गौर जीवन गौर पराण
नाहिक भावना अन्य ।।

मेरे जीवनमें गौर-धन ही सार हैं, मैं गौरके सिवा कुछ नहीं जानती । मेरे गौर ही जीवन हैं, गौर ही प्राण हैं, दूसरी और कोई भावना नहीं है ।

(६)

सखि ! जुड़ाओ मनेर व्यथा । बियाकुल मन करिते श्रवण मधुमाखा गौर - कथा ।।	हे सखि ! मेरे मनकी व्यथा शान्त करो। मधुमय गौर-कथा सुननेके लिये मेरा मन व्याकुल हो रहा है।
कहलो सजनि अमियार खनि रसमय गौर - लीला । जे कथा श्रवणे जीवेर पराणे उथले प्रेमेर खेला ।।	हे सजनि ! अमृतकी खान, रसमय गौर-लीला कहो। जिस कथाके सुननेसे जीवके प्राणोंमें प्रेमका खेल उझल पड़े।
रसेर सागर गौर नागर सुधार कलस नाम । गौर लीला-रस सदाइ सरस सर्व्व रसेर धाम ।।	गौर नागर रसके सागर हैं। उनका नाम अमृतका कलश है। गौर-लीला सदा ही सरस है, सब रसोंका धाम है।

(७)

सखि ! बाँचाओ पराण मोर । शुनाओ मधुर नाम गौर देखाओ से चित-चोर ।।	हे सखि ! मेरे प्राण बचाओ। मधुर गौर नाम सुनाओ और वह चित्त-चोर दिखाओ।
जनम गोँयानु तबु ना पाइनु से मन - चोरार मन । विरहे ताँहार ज्वले अनिवार हिया मोर अनुक्षण ।।	जन्म खो दिया तब भी उस मन चोरका मन नहीं पा सकी। उनके विरहमें मेरा मन बरबस क्षण-क्षण जला जा रहा है।
भणे हरिदास करि अभिलाष तोमार चरण - धूलि । शयने स्वपने जीवने मरणे गोरा जेन्न नाहिं भुलि ।।	हरिदास कहते हैं—तुम्हारी ही चरण धूलिकी अभिलाषा करता हूँ। शयनमें, स्वप्नमें, जीवनमें, मरणमें गौरको नहीं भूलूँ।

मालिनी, चन्द्रशेखर आचार्यकी पत्नी आदि बड़ी बूढ़ी रमणीगण शची देवीके साथ श्रीगौराङ्गके दर्शन करने शान्तिपुर गयी हैं। श्रीमती विष्णु-प्रिया देवीके पास कोई बड़ी बूढ़ी आत्मीय स्त्री नहीं रही, यह कहना ही पर्याप्त है। प्रभुके पुरातन भृत्य ईशानके ऊपर श्रीमतीजीकी देख-भालका

भार है। ईशान प्रभुके दर्शन करने शान्तिपुर नहीं गये, उनके ऊपर प्रभुके घरकी रक्षाका भार है। शची देवी चली गयी हैं, वह कैसे जाता? श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको अन्तरङ्ग सखियोंके सामने दिल खोलकर अपनी मनोव्यथा प्रकट करनेका अवसर मिला है। सभी सखियाँ देवीके दुःखसे दुःखी हैं। क्षणमात्रके लिये भी वे श्रीमतीजीका सङ्ग नहीं छोड़ती हैं। दिन-रात श्रीमतीजीको नाना प्रकारसे समझाती-बुझाती और सान्त्वना देती हैं। किसी भी प्रकारसे उनके मनको प्रबोध नहीं हो रहा है, वे निरन्तर रोती रहती हैं और धूलिमें लोटकर भूतल पर पड़ी रहती हैं। बीच-बीचमें मूर्च्छित हो जाती हैं, मूर्च्छा छूटने पर देवी हा-हाकार करके सिर पीटती हैं और रोती हुई कहती हैं—"हा नाथ! दासीको दर्शनोंसे बञ्चित क्यों किया? तुम्हारे सामने तुम्हारी दासी सैकड़ों अपराध करने पर भी है तो तुम्हारी ही दासी। अबला स्त्रीको इतना कष्ट देकर तुम क्या सुख पा रहे हो?"

देवीके क्रन्दनसे सभी अशान्त हैं, सभी सन्तप्त हैं। श्रीनित्यानन्दके प्रति प्रभुके उस कठोर आदेशकी बातको स्मरण करके श्रीमतीजी जब छाती पीट-पीटकर उच्च स्वरसे क्रन्दन करने लगीं, तब कोई उनको निवारण न कर सका। यदि कोई कुछ कहता है तो श्रीमतीजी कातर कण्ठसे आक्षेप करके कहती हैं—"मैं अभागिनी प्रभुकी स्त्री होकर क्यों पैदा हुई? यदि मैं उनकी पत्नी न होती, तो उनके दर्शनोंसे बञ्चित न होना पड़ता। उन्होंने नदियाके सब लोगोंको शान्तिपुर ले जानेकी अनुमति दी है और निषेध केवल इस हतभागिनी चिर दुःखिनी दासीके लिये किया है। उन्होंने सब पर दया की, बञ्चित हुई केवल अभागिनी विष्णुप्रिया। इस अभागिनीने उनके सामने ऐसा कौन-सा गुरुतर अपराध किया है जो उन्होंने इसे अपने दर्शनोंके सुखसे भी बञ्चित कर दिया?" अधम ग्रन्थकार रचित देवीके विलापका एक पद यहाँ समयोपयोगी होनेके कारण उद्धृत किया जाता है—

ओहे जगतेर नाथ!	हे जगतके स्वामी!
जगत तारिते एसे मोरे छाड़िले।	जगतको तारनेके लिये आकर भी तुमने मुझको बञ्चित कर दिया।
अभागो पापिनी बले दुःखे डारिले॥	अभागिनी पापिनी समझकर दुःखमें डाल दिया।

मो सम दुःखिनी नाइ, ताइ हे दिले ना ठाँइ, दुःखहारी सुशीतल चरणतले । जगत तारिते एले मोरे छाड़िले ॥१॥	मेरे समान कोई दुःखिनी नहीं है, कारण कि तुमने मुझे अपने दुःखहारी सुशीतल चरण-तलमें भी स्थान नहीं दिया। संसारको तारनेके लिये आकर भी तुमने मुझको बञ्चित कर दिया ॥१॥
ए दुःख काहारे बलि ता'त जानिने । दिवा निशि ज्वलि ताइ हृदि-दहने ॥ त्रिजगत - नाथ तुमि, चरणेर दासी आमि, कि सुख पाइले नाथ ! ठेलि चरणे । ए दुःख काहारे बलि ता'त जानिने ॥२॥	मैं इस दुःखको किससे कहूँ, यह समझमें नहीं आता । इसी कारण हृदयाग्निसे दिन-रात जलती रहती हूँ । तुम तीनों लोकोंके स्वामी हो और मैं चरणोंकी दासी हूँ । हे नाथ ! मुझे चरणोंसे ठेलकर तुम्हें क्या सुख मिला । इस दुःखको किससे कहूँ, समझमें नहीं आता ॥२॥
दयार सागर केन बले तोमारे । कि दया देखाले प्रभु बल आमारे ॥ बञ्चित दरशने करिले दासीरे केने कि पापे एमन ताप दिले दासीरे । (केन) दयार सागर नाथ! बले तोमारे ॥३॥	लोग तुमको दयाका सागर क्यों कहते हैं ? हे नाथ ! बताओ तो तुमने मुझपर क्या दया दिखायी ? दासीको दर्शनोंसे बञ्चित क्यों किया ? किस पापसे इस दासीको ऐसा सन्ताप दिया ? हे नाथ ! तुमको लोग दयाका सागर क्यों कहते हैं ? ॥३॥
दासीर कपाले नाथ! ए कि लिखिले । पदसेवा अधिकारे केन बञ्चिले ॥	हे नाथ ! दासीके भाग्यमें यह तुमने क्या लिख दिया? अपने चरणोंकी सेवाके अधिकारसे मुझे क्यों वञ्चित किया ?
कि सुखे बाँचिया रबे, पतिपद सेवाभावे,	पतिके चरणोंकी सेवाके अभावमें जीवित रहनेमें क्या सुख है ?

तोमार चरणदासी
ता कि भाविले।
दासीर कपाले नाथ!
ए कि लिखिले ।।४।।

मैं तो तुम्हारे चरणोंकी दासी हूँ। तुमने यह क्या सोचा? हे नाथ! इस दासीके कपालमें यह तुमने क्या लिख दिया ।।४।।

शान्तिपुरे एसे नाथ! सबे डाकिले।
दरशन दिये तुमि कृपा करिले।।
नित्यानन्दे निषेधिले,
दुःखिनी पापिनी बले,
स्थान दिते अधिनीरे चरण तले।
शान्तिपुरे एसे नाथ! सबे डाकिले ।।५।।

हे नाथ! शान्तिपुर आकर तुमने सबको बुलाया और दर्शन देकर कृपा की। श्रीनित्यानन्दके द्वारा इस अधीनाको चरण तलमें स्थान देनेसे निषेध किया। हे नाथ! शान्तिपुरमें आकर तुमने सबको बुलाया ।।५।।

ए दुःख जीवने मोर कभू जाबे ना।
(तुमि)
देशे एसे ए दासीरे देखा दिले ना।।
ना हता'म यदि आमि
तोमार रमणी मणि
दरशन दिते तुमि, ए कि छलना।
ए दुःख जीवने मोर कभु जाबे ना ।।६।।

मेरे जीवनमें यह दुःख कभी नहीं जायगा। तुमने देशमें आकर भी इस दासीको दर्शन नहीं दिया। यदि मैं तुम्हारी रमणी-मणि न होती तब तो तुम मुझे दर्शन देते—यह कैसी बिडम्बना है? जीवनमें मेरा यह दुःख कभी दूर न होगा ।।६।।

उच्च पद दिये तुमि नीचे फेलिले।
से कथा भाविया भासि आँखि-सलिले।।

तुमने मुझे उच्च-पद देकर नीचे ढकेल दिया, यह बात सोचकर मैं अश्रु-जलमें डूब जाती हूँ।

कि करि जीवन धरि,
बल बल गौरहरि,
कि दोषे दासीरे तुमि पदे ठेलिले।
उच्च पद दिये नाथ!
नीचे फेलिले ।।७।।

हे गौर हरि! बताओ, बताओ, अब मैं जीवन किस प्रकार धारण करूँ? तुमने किस अपराधसे दासीको पैरोंसे ठुकरा दिया? हे नाथ! तुमने उच्चपद-प्रदानकर नीचे ढकेल दिया ।।७।।

देखे जाओ गुणमणि हेथा आसिया।
राजराणी भिखारिणी
से विष्णुप्रिया।।

हे गुणमणि! यहाँ आकर देख जाओ कि वही राजरानी विष्णुप्रिया भिखारिणी हो रही है।

(सुधु) कान्दाते राखिले तारे,	उसको दुःखमय संसारमें केवल
दुःखभरा ए संसारे,	रोनेके लिये ही रखा है,
दुःख दिले मनोसाधे	तुमने उसको जी भरकर दुःख
हृदि भरिया।	देकर अपनी साध पूरी कर ली।
देवी दुःखे कैंदे मरे	यह हरिदासिया देवीके दुःख देख-
हरिदासिया ।।८।।	देखकर रो-रो मर रहा है ।।८।।

श्रीमतीजीकी सखियाँ इस बातका उत्तर और क्या देंगी? सब मिलकर प्रभुकी वज्रके समान कठोर हृदयकी बातें याद करके देवीके गलेमें बाँहें डालकर करुण स्वरसे रोने लगीं। श्रीमतीजीके अश्रुजलसे सखियोंकी आँखोंके आँसू मिलकर सबके वक्षःस्थलको निमज्जित कर दिया, गङ्गा जाकर सागरमें मिल गयी, प्रभुका घर सागर-सङ्गम हो गया। श्रीमतीजीके नयन-जलके साथ नदियाकी नागरिकाओंके नयन-जल मिलकर महा तीर्थोदकमें परिणत हो गये। इस पवित्र तीर्थोदकमें कलिहत जीवोंके सारे पाप धोनेके लिये ही प्रभुने इसका सृजन किया था। श्रीमतीजी विष्णुप्रिया देवीके नयन-जलसे कलिक्लिष्ट जीवोंके सब पाप धुल गये। कलिके सारे पापी जीव निष्पाप हो गये। प्रभुके मनोरथ पूर्ण हो गये। श्रीमतीजीका नयन-जल कलिके जीवका पञ्चम पुरुषार्थ है। श्रीगौराङ्ग-लीलाका यह रहस्य, यह रस-माधुर्य जिसने समझा है, वह आजीवन रोएगा, नयन-नीरसे उसका वक्षः-स्थल निमज्जित हो जायगा। क्रन्दन करना ही कलिका भजन है। गौर-भक्तके नयन-जलसे कलिके जीवकी पाप-राशि धुल जायगी। अतएव अधम ग्रन्थकारका विनीत निवेदन है कि पाठक-पाठिकागण गौर-लीला पाठ करके खूब रोएँ। इससे आप लोगोंका मन तो निर्मल होगा ही, साथ-साथ कलिके जीवोंका महान उपकार भी होगा।

●

सप्तविंश अध्याय

शान्तिपुरसे शची देवीका घर लौटना और श्रीमतीजीका विषम विरह

आमार द्वितीय केहो नाहि ए संसारे ।
विष्णुप्रिया शेलमात्र रहिल अन्तरे ।।
—(शची देवीकी उक्ति) चै० मं०

मेरा तो अब दूसरा कोई इस संसारमें रहा नहीं, केवल विष्णुप्रिया अन्तरकी शूल रह गई ।

● शची देवीकी अनुपस्थितिमें विष्णुप्रिया देवीकी भावना

शची देवी तीन दिन हुए प्रभुको देखने शान्तिपुर गयी हैं। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी सासके आगमनका रास्ता देख रही हैं; मनमें सोचती हैं कि सम्भव है प्राणबल्लभका पुनः दर्शन हो जाय। सास पुत्रको छोड़कर कभी आ नहीं सकतीं, अवश्य एक बार साथ लेकर आवेंगी। घर पर न भी रख सकें, तो भी एक बार मुझको दिखानेके लिये तो लावेंगी ही। सास मुझको साथ लेकर जा नहीं सकीं, इसका उन्हें बड़ा दुःख है। माताकी बात प्रभु टाल नहीं सकेंगे, उनको एक बार आना ही पड़ेगा। परन्तु यदि नहीं आये तो यह अभागिनी गङ्गामें डूब मरेगी या विष खाकर प्राण त्याग देगी। श्रीमतीजी इस प्रकार महा मानसिक उद्वेगसे दिन काट रही हैं। एक-एक दिन मानो उनको कोटि युग-सा जान पड़ रहा है।

उद्वेगे दिवस मोर हैल कोटी युग ।
—चै० मं०

श्रीमतीजीके मनमें बड़ी आशा तथा दृढ़ विश्वास है कि सास अपने गृह-त्यागी पुत्रको पकड़ लावेंगी। एक बार भेंट होने पर क्या छोड़ सकेंगी? श्रीमतीजी अपने मनके इस भावको किसीके समक्ष प्रकट नहीं कर पा रही हैं। स्वामीने संन्यासी होकर गृह-त्याग किया है। संन्यासीके लिये

स्त्रीका मुख-दर्शन निषेध है। वे फिर घर लौटेंगे और स्त्रीको दर्शन देंगे, यह बात विश्वास-योग्य नहीं है। यह आशा दुराशा मात्र है। यह बात किसीके सामने बोलनेकी नहीं है, तथापि प्रधाना सखी काञ्चनासे वे कभी कोई बात या मनका भाव छिपाती नहीं हैं। श्रीमतीने काञ्चनाको बहुत छिपे तौर पर मनके इस भावको, हृदयकी इस गुप्त बातको कहा। काञ्चनाने सुनकर जान लिया कि श्रीमतीजीका विरह अत्यन्त भीषण है; गौर-विरह-व्याधि अति उत्कट हो चली है। काञ्चना सखीको प्रबोध-वाक्यों द्वारा सन्तुष्ट करती हुई बोलीं--"सखि! तुमने ठीक ही कहा है। तुम्हारी सास कभी पुत्रको छोड़कर नहीं आ सकतीं। वे या तो तुम्हारे प्राणवल्लभको लेकर आवेंगी या वे उनके सङ्ग चली जायँगी।" सखीकी बातसे श्रीमतीजीके मनमें आशाका कुछ सञ्चार तो हुआ, परन्तु उनके मनमें एक और भाव उदय हुआ। उन्होंने सोचा कि स्वामी तो गृह-त्यागी हो गये हैं, उनके घर लौटनेकी आशा बहुत कम है, अब यदि सास भी पुत्रके साथ गृह-त्यागिनी होती हैं, तो ऐसी हालतमें उसके मर जानेमें ही कल्याण है।

● शची माताका शान्तिपुरसे प्रत्यागमन

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी इस प्रकार सोच रही हैं, उसी समय समाचार मिला कि शची देवी शान्तिपुरसे अकेली लौट आयी हैं, उनके साथ प्रभु नहीं आये हैं। श्रीमतीजीने यह भी सुना कि उनकी सासने पुत्रको सदाके लिये विदा कर दिया है, वे इच्छा होने पर पुत्रको घर ला सकती थीं, परन्तु पुत्रका धर्म नष्ट होनेके भयसे उन्होंने ऐसा नहीं किया। श्रीमतीजीका सब आशा-भरोसा एकबारगी दूर हो गया, मस्तक पर आकाश टूट पड़ा, आँखोंमें अँधेरा छा गया। शची देवीकी डोली द्वार पर आकर खड़ी हो गयी। उच्च स्वरसे क्रन्दन करती हुई शची देवी डोलीसे उतरीं। कानमें सासके करुण रुदनकी ध्वनि पड़ते ही श्रीमतीजी मूर्च्छित हो गिर पड़ीं। शची देवीके साथ अनेकों कुल-नारियाँ आयी हैं। मालिनी और चन्द्रशेखर आचार्यकी पत्नी भी आयी हैं। उन्होंने वृद्धा शची देवीको हाथ पकड़ कर उठाया और घरमें ले गयीं। श्रीमतीजीकी सखियोंने बड़े कष्टसे उनकी मूर्च्छा दूर की। श्रीमतीजीको चेतना आते ही सास और पुत्रवधूकी चार आँखें

हुई, आँखोंके झर-झर अश्रु-प्रवाहसे दोनोंका वक्षःस्थल डूब गया। दोनों ही मौन हैं। शची देवी श्रीमतीजीको गोदमें लेकर बैठ गयीं। वे मृतवत् सासके गोदमें पड़ी रहीं।

शची देवी कान्दे कोले करि विष्णुप्रिया।
विष्णुप्रिया मरा जेन रहिल पड़िया।।
—चै० मं०

शची देवी पुत्रको स्वच्छन्दतापूर्वक विदा करके आयी हैं। वे यदि एक बार भी कहतीं कि तुम्हें घर लौटना होगा तो मातृभक्त श्रीगौराङ्ग जननीके अनुरोधको टाल नहीं सकते। लोग कहते हैं कि प्रभुने अद्वैत महाप्रभुके घर सबके सामने कहा था—"माँ जो कहेंगी, वही मैं करूँगा। यहाँ तक कि यदि वे पुनः संसारमें प्रवेश करनेके लिये भी कहेंगी तो वह भी मैं करूँगा।" शची देवीने इस भयसे कि पुत्रका धर्म नष्ट हो जायगा, इस बातका कुछ भी उत्तर नहीं दिया। 'मौनं सम्मतिलक्षणं' के अनुसार अनुमति दे दी। उनके स्वामी जगन्नाथ मिश्रने भी विश्वरूपको संन्यासाश्रमसे लौटा लानेकी बात उठने पर सबके सामने यही कहा था। शची देवीके मनमें उन्हीं साधु पुरुषकी बात जागृत हो उठी थी। इसी कारण उन्होंने अपने निमाई चाँदको घर लौट आनेका अनुरोध करके पुत्रके धर्मको नष्ट करनेके पापका भागी अपनेको नहीं बनाया। नवद्वीपमें अनाड़ी लोग इस विषयको लेकर नाना प्रकारकी बातें कहते हैं। प्रभुके भक्तोंमें भी कोई-कोई शची देवीके कार्यसे क्षुब्ध और क्रुद्ध हो गये हैं। प्रभुको नीलाचल गमन करनेके लिये शची देवीने आदेश दिया है। शची देवी यदि उनको घर लौटनेके लिये कहतीं तो अवश्य ही प्रभु नवद्वीपमें लौट आते। नदियाके चाँद नवद्वीपमें लौटकर नदिया-वासियोंके हृदयके अँधेरेको दूरकर पुनः उसे आलोकित कर देते। क्योंकि, भक्तगण विशेष रूपसे जानते थे कि प्रभु माताकी आज्ञा उल्लंघन नहीं कर सकते, इस कारण उन्होंने अत्यन्त दुःख-पूर्वक उस समय शची मातासे कहा था—

हेन वाक्य केन माता कहिले आपने।
श्रुतिवाक्य सम इहा खण्डे कोन जने।।

हे माता! आपने ऐसे वाक्य क्यों कहे? ये तो श्रुति-वाक्यके समान हैं। इनको कौन टाल सकता है?

नीलाचले जाइते आपने आज्ञा दिले ।	नीलाचल जानेकी आपने आज्ञा
दुर्लङ्ध्य तोमार वाक्य केन बा कहिले ।।	दे दी, आपके वाक्य तो दुर्लङ्घ्य हैं।
--चैतन्य चन्द्रोदय नाटक	आपने ऐसे क्यों कह दिया ?

क्रमशः यह बात श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके कानोंमें आयी। श्रीमतीने पहले विश्वास करना नहीं चाहा। देवीने सोचा--"क्या ऐसा कभी हो सकता है? क्या यह संभव है ? माँ होकर क्या कभी कोई पुत्रको इस प्रकार विदा कर सकती हैं? यह असम्भव बात है। लोगोंने केवल एक झूठी अफवाह फैला दी है।"

श्रीमतीजीने मन-ही-मन स्थिर किया कि एक बार साससे ही क्यों न पूछ देखें। फिर सोचा, नहीं यह ठीक नहीं है। यह बात पूछने पर शोक-ग्रस्ता वृद्धा सासके हृदय पर करारी चोट लगेगी। उनके मनमें बड़ी व्यथा होगी। यह बात उनके सामने कही नहीं जायगी। इस प्रकार विचार करके श्रीमतीजी विष्णुप्रिया देवीने साससे इस सम्बन्धमें कुछ भी नहीं पूछा। श्रीमतीजीने बड़ी बुद्धिमानीका काम किया।

माताकी सम्मति लेकर प्रभुका नीलाचलकी ओर जाना, सबके सामने माताका सम्मान रखते हुए यह कहना कि तुम यदि पुनः घर लौटनेके लिये कहो, तो मैं वही करूँगा--यह प्रभुकी विचित्र लीला है। लोकशिक्षाके लिए उन्होंने दिखला दिया कि माताका क्या कर्त्तव्य है। श्रीकृष्णका भजन करनेके लिये उन्होंने गृह त्यागा है। जीवमात्र कृष्णके दास हैं; प्रभुकी माता भी एक जीव हैं। श्रीभगवान्‌के संसारमें दासत्व करनेके लिये जीवका जन्म हुआ है। संसार मायाका बन्धनमात्र है। श्रीकृष्णका भजन जीवका मुख्य लक्ष्य है। जीव इस लक्ष्यसे भ्रष्ट होकर भव-सागरमें गोते खा रहा है। प्रभुने माताको लक्ष्य-भ्रष्ट होते देखकर सावधान कर दिया, पुत्रके उपयुक्त कार्य किया। पुत्रके श्रीकृष्ण-भजनमें बाधा न देकर शची देवीने माताके उपयुक्त कार्य किया। प्रभुकी माता क्या सामान्य स्त्रीके समान धर्म-विरुद्ध कार्य कर सकती हैं? श्रीगौर भगवान्‌की माताने आदर्श माताका ही कार्य किया है। श्रीगौराङ्ग-लीलारस-लोलुप कृपालु पाठक-पाठिकागण ! शची देवीके कार्यमें दोषारोपण करके पापके भागी न बनें। शची देवी जगन्माता हैं, उनके कार्य पर कटाक्ष करनेसे नरकगामी होना पड़ेगा।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके मनमें जो भाव उदय हुआ था, प्रभुके किसी-किसी भक्तने भी अपने हृदयमें उस भावको पोषण किया था। श्रीमतीजीके मनका भाव मुखसे प्रकट नहीं हुआ, मनमें आते ही उन्होंने उसको मनसे हटा दिया था। भक्तोंमें किसी-किसीने उस समय शची देवीके ऊपर क्रोध प्रकट किया था। परन्तु शची देवीने दृढ़ संकल्प होकर सबके सामने पुत्रको विदा किया। पुत्रको घर पर ले जानेसे उसका धर्म नष्ट होगा, ऐसा कार्य श्रीभगवान्की माता कैसे कर सकती हैं? शची देवीका कार्य देख कर सभी विस्मित हो उठे, परन्तु शची देवीका संकल्प अटल, स्थिर था। ऐसी माता न होतीं तो उनके गर्भसे श्रीगौर भगवान् जन्म ही क्यों लेते?

शान्तिपुरसे विदा होते समय श्रीगौराङ्गने सबके सामने कहा था—

किवा भक्त, किवा विष्णुप्रिया, माता शची।
जे भजये कृष्ण, तार कोले आमि आछि।।—चै० मं०

प्रभुका श्रीकृष्ण-प्रेम अतुलनीय है। उन्होंने कृष्ण-प्रेममें उन्मत्त होकर देश-देश भ्रमण किया है। 'हा कृष्ण! हा कृष्ण! कृष्ण रे! कृष्ण रे!' कहकर अजस्र अश्रु बहाते हुए रोते-रोते व्याकुल भावसे द्वार-द्वार भिखारीके समान भ्रमण किया है। जिसने एक बार भी उनके प्राणेश्वर, हृदय-रत्न कृष्णका नाम लिया है, प्रभुने उनको जी भरकर हृदयसे आलिंगन करके कृतार्थ किया है। प्रभुकी उपर्युक्त वाणी प्रत्येक गौर-भक्तको कण्ठका हार बना लेना चाहिए। हृदय-पटल पर स्वर्णाक्षरोंमें दृढ़रूपसे अंकित कर रखनी चाहिए। ऐसे दयालु प्रभुकी ऐसी कृपामयी वाणी और कहीं सुननेके लिये नहीं मिल सकती।

● शची माँका पुत्र-विरह

श्रीशची देवी पुत्रकी बातका भरोसा करके ही उनको विदा कर सकी थीं। उन्होंने नवद्वीप लौटकर पुत्रबधूको साथ लेकर श्रीकृष्ण-भजनका कठोर व्रत ग्रहण किया। श्रीकृष्ण-भजनको उपलक्ष्य करके शची देवी पुत्र-भजन करने लगीं। वात्सल्य-रसमें अभिषिक्त होकर उन्होंने श्रीभगवान्को पुत्ररूपमें ग्रहण करके स्नेह-ममताकी आँखोंसे देखा। वे जब कभी श्रीकृष्णको

पुकारती हैं, उनके मुँहमें पुत्रका नाम आ जाता है। 'हा निमाई! निमाई रे!' कहकर वे श्रीभगवान्‌को पुकारती हैं और श्रीभगवान् उस मधुर पुकारसे परम आनन्दपूर्वक उनके समीप आकर 'माँ! माँ!' कहकर मधुर संभाषणसे जननीको परितुष्ट करते हैं और उनको दर्शन देते हैं।

अतएव शची देवीके दुःख-समुद्रमें भी कभी-कभी सुखकी तरङ्गें लक्षित होती हैं। निरानन्दके भीतर भी आनन्द अनुभव होता है। घोर निराशाकी छायामें भी आशाका आलोक दिखता है। इतना-सा सुख, इतनी-सी आशा यदि न होती, तो शची देवीके प्राण बचने कठिन थे। इतने दुःखमें भी वृद्धा सुखी हैं। इस सुखको दूसरा कोई नहीं समझ सकता। उसको समझ सकनेकी क्षमता दूसरेमें नहीं है। वे जब कभी 'बेटा निमाई!' कहकर पुत्रको पुकारतीं, श्रीगौर भगवान् उसी समय माताके सामने आकर उपस्थित हो जाते और मधुर स्वरमें उनको 'माँ' कहकर सम्बोधन करते।

शची देवीके मनमें है कि निमाई चाँद उनको कह गये हैं कि अनुरागसे पुकारने पर वे आवेंगे। विरहमें अनुरागकी वृद्धि होती है। निमाई चाँद जब घरमें थे, तब शची देवी निश्चिन्त होकर सो सकती थीं। अब निमाई चाँद घरमें नहीं हैं, देश-देशमें भ्रमण कर रहे हैं, उनके सिरपर कितनी विपत्-आपद् पड़ती होगी—इस बातके मनमें उठते ही माताके प्राण सूख जाते हैं। पुत्रके विरहमें शची देवीका पुत्रके प्रति अनुराग सौ गुना बढ़ गया है। निमाई चाँदको जब वे सदा देख पाती थीं, तब इतना अनुराग नहीं था। अब पुत्रके अदर्शनसे पुत्रका गुणानुकीर्त्तन करते-करते वृद्धा मानो अपने आपको भूल गयी हैं। श्रीकृष्ण-कीर्त्तन-तरङ्गमें डूबने पर जीवका सारा दुःख नष्ट हो जाता है। शची देवी पुत्रके रूप-गुण-कीर्त्तन-रस-सुधाका पान करके उन्मत्त हो गयी हैं। दिन-रात श्रीगौर-कथासे हृदयको शीतल करती हैं। पुत्र-भजन ही शची देवीका श्रीकृष्ण-भजन है। यही उनकी श्रेष्ठ साधना है। साधनाका फल अवश्य फलेगा।

शची देवी इस समय कुछ सुस्थिर हो गयी हैं। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको साथ लेकर ईशानके सङ्ग गङ्गा-स्नान करने जाती हैं। गृह-देवताकी

पूजाके लिये पुष्प-चयन करती हैं। ठाकुरके भोगके लिये पूर्ववत् नाना प्रकारके अन्न-व्यञ्जन तैयार करती हैं। निमाई चाँदके मङ्गलके लिए नित्य भगवान्के पूजा-गृहमें हाथ जोड़कर प्रार्थना करती हैं। पुत्रको जो-जो पदार्थ भोजन करनेमें रुचिकर लगते थे, उन्हीं पदार्थोंको जुटा कर ठाकुरको भोग लगाती हैं। प्रभुके भक्तवृन्दको प्रसाद वितरण करती हैं। इसी प्रकार शची देवीके दिन बीतते हैं।

● विरह-विधुरा विष्णुप्रिया

कृपालु पाठक-पाठिकाश्रो! शची देवीको ग्रापाततः इस स्थान पर छोड़कर एक बार श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके पास चलिए। शची देवीके शान्तिपुरसे लौटनेके दिन ग्रापने श्रीमतीजीको मृतवत् सासकी गोदमें शयन करते देखा था। श्रीगौर-वक्ष-विलासिनी स्वामी-सोहागिन विरह-विधुरा दुःखिनी विष्णुप्रिया इस समय किस ग्रवस्थामें हैं—एक बार कल्पनाकी दृष्टिसे देखें। श्रीमतीजी शोक ग्रौर दुःखसे ग्रत्यन्त शीर्ण हो गयी हैं। सदा ही सासके साथ-साथ रहती हैं। कहीं शची देवीके मनमें कष्ट न हो इस भयसे उच्च स्वरसे कभी रोती नहीं हैं। परन्तु देवीके मनमें रञ्चमात्र शान्ति नहीं है। श्रीगौर-विरहाग्निमें उनका हृदय सर्वदा दग्ध होता रहता है। वह ग्रग्नि कभी बुझनेवाली नहीं है। देवीने मन-ही-मन यह निश्चय किया कि वे सोहागिनका कोई लक्षण ग्रब नहीं रखेंगी। क्योंकि वे इस समय सदाके लिये स्वामीके सङ्गके सुखसे बञ्चित हो गयी हैं ग्रौर इस कारण सधवा होते हुए भी विधवा हैं। ग्रब उनको वस्त्रालंकारसे क्या प्रयोजन है? उनके लिये कठोर ब्रह्मचर्य व्रत ही पालनीय है, क्योंकि उनके प्राणवल्लभ गृह-त्यागी हो गये हैं—दण्ड-कमण्डलु धारण करके संन्यासी हो गये हैं। भिक्षासे प्राप्त साधारण सामग्रीसे वे जीवन यापन करते हैं। वृक्षतले उनका वास है। कौपीन ग्रौर कन्था उनका सम्बल है। दीन-दुःखीके समान शीत-ग्रीष्म ग्रौर धूपमें देश-देश पैदल घूमते हुए वे न जाने कितना कष्ट भोगते हैं! उनके प्राणवल्लभके शिरीष कुसुमके समान सुकोमल दोनों चरणोंमें, जिनको कष्ट होनेके भयसे वे हाथ नहीं लगाती थीं, न जाने कितने ग्राघात लगते होंगे!

केमने हाँटिया जाबे पथे।	मार्गमें वे कैसे पैदल चलकर
शिरीष कुसुम जेन सुकोमल चरण	जायँगे ? शिरीष-कुसुमके समान
परशिते डर लागे हाथे।।	सुकोमल उनके चरण हैं जिनको
--चै० मं०	हाथसे छूनेमें भी डर लगता था।

उनकी दासी क्या वस्त्रालंकार परिधान करके दिव्य शय्या पर शयन और दिव्य आहार भोजन करेगी? यह कार्य तो शास्त्रानुमोदित नहीं है। श्रीमतीजी मन-ही-मन इस प्रकार सोच रही हैं और प्राणवल्लभके संन्यास वेशका स्मरण करके निरन्तर आँसू बहाती हुई रोती हैं। अपनेको सैकड़ों बार धिक्कार देती हैं और सिर पीट कर मन-ही-मन कहती हैं--"प्रभु इस हतभागिनी-पापिनीके कारण ही गृह-त्यागी हुए हैं। धिक्कार है इस जीवनको! इस पापी जीवनको रखनेसे क्या लाभ? मैं अब किस मुँहसे वस्त्रालंकार धारण करूँगी?" श्रीमतीजी मन-ही-मन इस प्रकार उधेड़-बुन कर रही थीं, उसी समय मानो किसीने उनके कानोंमें कहा--

तोमार अङ्गे शाटी परा,	तुम तो अङ्गमें साड़ी पहनती हो
तार कौपीन परिधान,	और वे कौपीन पहनते हैं।
तुमि थाको गृह माझे,	तुम घरमें रहती हो और वे शीत
शीत ग्रीष्म रौद्रे से जे,	और ग्रीष्मकी धूपमें रहते हैं।
निशिदिन प्रभुर आमार,	हमारे प्रभुका रात-दिन वृक्षके
वृक्ष तले अवस्थान।	नीचे अवस्थान रहता है।
--बलराम दास	

श्रीमतीजी भूतल पर सोयी हुई उठ बैठीं। घरमें दूसरा कोई नहीं है। वे अकेली हैं। एक-एक करके अङ्गके सारे आभूषण फेंक दिये। श्रीअङ्गमें भस्म लगा ली है, केवल हाथके कङ्गनको नहीं खोल सकी हैं। श्रीमतीजीके मनमें भय हुआ कि प्राणवल्लभका अकल्याण होगा, वृद्धा सासके मनमें दारुण व्यथा होगी। पहने हुए रेशमी वस्त्रको खोलकर एक गेरुआ वस्त्रसे अङ्ग ढँक लिया और धूलि शय्या पर फिर पड़ गयीं। अतुलनीय केश-पास रूखा और बिखरा भूमिमें लोट रहा है। श्रीमतीजी संन्यासिनी बन गई हैं।

● काञ्चना द्वारा विष्णुप्रियाका संन्यास-वेश परिदर्शन

पहले ही वर्णन आ चुका है कि श्रीमतीजी अकेली घरमें हैं। शची देवी दूसरे घरमें ठाकुरकी सेवामें व्यस्त हैं। काञ्चना कुछ देरके लिये अपने कार्यसे गयी हैं। घर निर्जन देखकर श्रीमतीजी अपने मनकी साधसे संन्यासिनी बन गयी हैं। श्रीमतीजी संन्यासिनी बनकर अब रो नहीं रही हैं। दृढ़ व्रत होकर भूमि-शय्यासे उठकर बैठी हुई प्रभुके श्रीचरणोंके ध्यानमें मग्न हैं। ऐसे समय काञ्चनाने आकर घरमें प्रवेश किया और देवीका वेष-परिवर्तन देखकर, भीत होकर, चकित नेत्रोंसे एक टक उनके मुँहकी ओर ताकने लगीं। देवीकी आँखोंमें अश्रुबूंद नहीं है, यह नवीन दृश्य है। प्रभुके गृह-त्यागके बाद श्रीमतीकी आँखोंके आँसू बन्द नहीं हुए थे। अब तक कभी किसीने देवीकी सूखी आँखें नहीं देखी थीं। श्रावणकी वारि-धाराके समान अविरत अश्रु प्रवाह श्रीमतीजीकी आँखोंमें दीखता था। यहाँ तक कि निद्रित अवस्थामें भी उनके नयन-जलसे अङ्गके वसन और उपाधान भीग जाते थे। ऐसी अवस्थामें काञ्चना श्रीमतीकी आँखोंमें जल बिन्दु न देखकर डर गयीं।

बीच-बीचमें शची देवीकी ऐसी अवस्था होती थी। सबने देखा है कि शची देवी बीच-बीचमें जड़वत् पागलिनीके समान एक टक होकर किसीको देखने लगती हैं, मुँहसे कुछ बोलती नहीं हैं। इससे किसीके मनमें उतना भय नहीं होता। परन्तु श्रीमतीजीकी आँखोंमें जल नहीं है, निस्पन्द भावसे बैठकर क्या सोचती हैं? आँखोंकी पलकें कदाचित ही गिरती हैं। मुखके भावसे उन्मादके लक्षण दिखलायी पड़ते हैं। अतएव काञ्चना शंकिता हो उठीं। श्रीमतीजीसे बिना कुछ कहे, बिना उनका अङ्ग स्पर्श किये वे एकबारगी शची देवीके पास दौड़ गयीं और रोते-रोते कहने लगीं, "माँ! एक बार अपनी पुत्रबधूको तो देखो! वह चुप बैठी है, मुँहसे बोलती नहीं, आँखोंमें आँसू नहीं, जड़वत् ताक रही है, मानो पागलिनी हो। वस्त्रालंकार सब खोलकर फेंक दिये हैं, सारे अङ्गमें भस्म लगा रक्खी है।"*

---

* श्रीगौराङ्गके वियोगमें श्रीविष्णुप्रियाजीकी आन्तरिक और वाह्य दोनों स्थितियाँ ही अलौकिक थीं—विरह-कातर वे जैसे सारी सुध-बुध खो बैठी हों, किसीका प्रबोध, किसीकी सान्त्वना जैसे उन पर कोई प्रभाव ही

● शची देवी और विष्णुप्रिया

शची देवी बुद्धिमती हैं, सब कुछ समझ गयीं। अधीर नहीं हुईं। उनको अपनी अवस्था याद पड़ी। वृद्धाकी कोटरवत दृष्टिहीन दोनों आँखें जलसे भर गयीं। अत्यन्त कष्टपूर्वक मनके दुःखको दबाकर धीरे-धीरे काञ्चनाका हाथ पकड़कर श्रीमतीजीके घरकी ओर चलीं। शची देवीने श्रीमतीजीको देखते ही उनकी प्रकृत अवस्थाको समझ लिया। उन्मादके लक्षण उनको स्पष्ट दीख पड़े। शची देवीको देखते ही श्रीमती विष्णुप्रिया देवी घूँघट काढ़ती थीं; इस बार वैसा नहीं किया। श्रीमतीजी सिरका कपड़ा फेंक कर बैठी हैं, शची देवीको देखकर मस्तक पर कपड़ा नहीं रक्खा और एक टकसे शची देवीके मुँहकी ओर देखती रहीं। शची देवी अब स्थिर न रह सकीं, वे पुत्रबधूको गोदमें लेकर उस स्थान पर बैठ गयीं।

नहीं डालती हो--ऐसी जड़ मूर्तिवत् विष्णुप्रियाजीकी दशाका वर्णन व्यथित-हृदय प्रेमदासजीने यों किया है--

जे दिन हइते गोरा छाड़िल नदीया। तदवधि आहार छाड़िल विष्णुप्रिया॥	जिस दिनसे गौराङ्गने नदिया छोड़ा तभीसे श्रीविष्णुप्रियाने आहार छोड़ दिया।
दिवा निशि पिये गोरा नाम सुधा खनि। कभु शचीर अवशेषे राखये पराणी॥	दिन-रात गौर-नाम-सुधाका पान करतीं और कभी शची माँके अवशेष (बची हुई जूठन) मात्रसे प्राण रखतीं।
वदन तुलिया कार मुख नाहि देखे। दुइ एक सहचरी कभु काछे थाके॥	मुख उठाकर किसीका मुख नहीं देखतीं; कभी-कभी एक-दो सखियाँ पासमें रहतीं।
हेन मते निवसये प्रभुर घरणी। गौराङ्ग विरहे कान्दे दिवस रजनी॥	इस प्रकार प्रभुकी गृहिणी रहतीं और गौराङ्गके विरहमें दिन-रात रोया करतीं।
सङ्गिनी प्रबोध करे कहि कत कथा। प्रेमदास हृदये रहिया गेल व्यथा॥	सखियाँ उन्हें कितनी ही बातें सुनाकर प्रबोध करतीं। प्रेमदासके हृदयमें यह व्यथा रह ही गयी।

बहुत कष्टसे हृदयके आवेगको संवरण करके उन्होंने पुत्रवधूको आदरपूर्वक कहा—"बेटी! तुम ऐसा क्यों कर रही हो? तुम तो सयानी हो! अबूझ लड़की नहीं हो। तुम्हारे स्वामी जगतके जीवोंके मङ्गलके लिये हमको रुलाकर गृहत्यागी हो गये हैं। हम लोगोंके नयनोंके जलसे कलिग्रस्त जीवोंके सारे पाप धुल जायँगे, जीवोद्धार होगा, यही उस इच्छामयकी इच्छा है। बेटी! उनकी इच्छामें बाधा मत देना! तुम जी भरकर रोओ। मैं भी तुम्हारे साथ रोऊँगी। इसीसे हमको सुख मिलेगा, इसीसे हमारे सभी दुःख दूर होंगे, जगतका मङ्गल होगा। रुदन ही हमारा भजन है, बेटी यह भजन तुमने क्यों छोड़ा?"

शची देवीके मुखसे जब ये बातें निकल रही थीं, उस समय उनके मुखके भाव दिव्य ज्योतिपूर्ण जान पड़ते थे। जगन्माता शची देवीने जगतके जीवोंकी मङ्गल-कामनासे अपने अञ्चलकी निधि पुत्ररत्नको विसर्जन कर दिया है, निःस्वार्थ-भावकी पराकाष्ठा दिखलायी है। ऐसी उपदेशपूर्ण हितकर बात उन्हींके मुँहसे शोभा देती है। पुत्र-वधूके उन्मादका लक्षण देखकर भी शची देवी अपना कर्त्तव्य न भूलीं। भुवन-मङ्गल श्रीगौराङ्गकी जननी जगतके जीवोंके मङ्गलके लिए, जीवोद्धारके लिये, कटिबद्ध हो गयी हैं। यह दृश्य अति महान, अति पवित्र है।

● विष्णुप्रियाके रोगकी महौषध

सासके गम्भीर तत्त्वोपदेश-पूर्ण प्रबोध-वचन श्रीमतीजीके कानोंमें प्रविष्ठ हुए या नहीं, पता नहीं। परन्तु जब तक शची देवी ये बातें बोलती रहीं, श्रीमतीजी शान्तिपूर्वक मनोयोगके साथ सुनती रहीं। देवी सासके मुँहकी ओर देखती रहीं। जैसे ही शची देवीकी बात समाप्त हुई, वैसे ही श्रीमतीजी मूर्च्छित हो गिर पड़ीं। तब काञ्चना आदि सखियाँ मिलकर श्रीमतीजीके कानोंके पास उनके प्राणवल्लभका नाम लेने लगीं। शची देवीने भी इस नाम-कीर्त्तनमें योग दिया। सबके मुँहसे 'हा गौराङ्ग! हा गौराङ्ग!' शब्दके सिवा और कुछ नहीं निकलता है। श्रीमतीजीके कानोंमें श्रीगौराङ्ग मधुर नामके प्रवेश करते ही उनकी मूर्च्छा भङ्ग हो गयी।

गौराङ्ग गौराङ्ग बलि डाके ताँर काने ।
कथोक्षणे विष्णुप्रिया पाइल चेतने ।। --चै० मं०

इस रोगकी यही औषध है, रोगके उपयुक्त औषधि पड़ने पर ही उसका शमन होता है। गौर-विरह-व्याधिकी गौर-नाम ही महौषधि है। इस व्याधिके चिकित्सक हैं श्रीमतीजीकी अन्तरंग सखियाँ। वे नदियाकी नागरी हैं। श्रीगौराङ्ग उनके भजन-धन हैं। ब्रजकी सखी और नदिया-नागरीमें कोई भेद नहीं। श्रीधाम नवद्वीप गौर-जन्मभूमि--नव वृन्दावन है। शची-नन्दन और नन्दनन्दन एक ही वस्तु हैं। एक पदमें मैंने अपने मनकी साधसे लिखा था--

नव वृन्दावन नवद्वीप धाम	नवद्वीप धाम नव वृन्दावन है
नन्द - नन्दन गोरा ।	और गौराङ्ग नन्दनन्दन हैं ।
इथे जार हय संशय मनेते	इसमें जिसके मनमें सन्देह हो
हृदि तार दुःखे भरा ।।	उसका हृदय दुःखसे भरा है ।

उपरोक्त यथार्थ है। संशय और कुतर्कके वशीभूत होकर जो लोग श्रीगौर भगवान्‌को और उनकी भगवत्ताको विचार और तर्कके भीतर खींच कर लानेका वृथा प्रयास करते हैं, उनके प्रति यह जीवाधम हाथ जोड़कर निवेदन करता है कि कुतर्कको छोड़कर तथा सारा संशय हृदयसे दूर हटा कर प्रकृत अनुराग पूर्वक हमारे हृदय-देवता--कङ्गालोंके दयालु ठाकुर--प्राणगौरको एक बार हृदय खोलकर पुकार कर देखें। वे सर्व-दुःखहारी, मङ्गलमय, कलि-क्लिष्ट जीवोंके परित्राता श्रीगौर-गोविन्द स्वयं सब संशय दूर करके अपने रूपको दिखलावेंगे। मोहान्ध जीव ! देख, वे चिर-दयालु, अनाथ-शरण, पतित-पावन गौर-हरि तुम्हारे लिए व्याकुल होकर द्वार-द्वार रोते हुए घूम रहे हैं। कलिग्रस्त जीवोंका दुःख देखकर श्रीगौर भगवान्‌का कुसुम-कोमल हृदय द्रवित हो रहा है। देखो ! श्रीगौर-सुन्दर भुजा फैला कर तुम्हें प्रेमालिङ्गन देना चाहते हैं। प्रभुके हाथमें हरिनाम रूप अमृत घट है। बाँटनेके लिये बैठे हैं। इस अमृतको पान करनेमें किसीके लिये निषेध नहीं है। आओ भाई ! सब कोई दौड़कर आओ ! संसारकी दुःख-ज्वालाको दूर फेंक कर एक बार श्रीश्रीगौर-गोविन्दके चरणोंमें शरण

लो। एक बार सब कुछ भूलकर उनको प्राणपणसे पुकारो और दयालु प्रभुके हाथोंसे अमृत लेकर आस्वादन करो। आत्मीय-स्वजन, भाई-बन्धु सबको उस अमृतका भाग देकर सुखी करो और स्वयं भी सुखी होओ। यह सुयोग न छोड़ना, जीवके भाग्यमें ऐसा सुयोग फिर नहीं मिलेगा।

श्रीगौर-नामसे श्रीमतीजीकी मूर्च्छा भङ्ग हुई। वे उठकर बैठ गयीं। गौर-प्रेम-तरङ्ग हृदयमें एक बार उठने पर वह उच्छलित होकर सारे अङ्गमें व्याप्त हो जाती है—नेत्र, मुख, हस्त, पाद आदि सारे अङ्ग आनन्दसे नाच उठते हैं, कोई स्थिर नहीं रह सकता। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी उठ बैठीं और मस्तक पर घूँघट खींच लिया। अपनी वेश-भूषाकी ओर देखकर वे लज्जित हो उठीं और मनमें सोचा—वृद्धा सासके मनमें यह संन्यासिनी वेष देखकर न जाने कितना दुःख हुआ होगा? उसने ऐसा क्यों किया? वृद्धा सासको व्यर्थ क्यों कष्ट दिया? यह सोचते-सोचते श्रीमतीजीके कमल-नयन जलसे छलछला उठे। तब वे मुँह नीचा करके बैठी-बैठी अजस्र आँसू बहाने लगीं। देवीकी आँखोंमें जलकी धारा देखकर शची देवी और काञ्चना आदि सखियोंको आश्वासन प्राप्त हुआ कि श्रीमतीजी अब प्रकृतिस्थ हो गयी हैं। शची देवी उनको खींचकर गोदमें ले कर बैठ गयीं। सासकी गोदमें मुँह छिपाकर श्रीमतीजी सिसक-सिसक कर रोने लगीं। इस रुदनका मर्म शची देवीके समझनेसे बाकी नहीं रहा। बाह्य-ज्ञान-शून्य होकर श्रीमतीजीने मनके आवेगसे संन्यासिनी वेष सजाया था।

जिसका पति संन्यासी है उसकी स्त्रीको भी संन्यासी होना पड़ता है—यही समझकर श्रीमतीजी संन्यासिनीके वेशमें पागलिनी बनी हैं। यह देख कर शची देवीका हृदय विदीर्ण हो रहा है। पुत्रवधूके इस वेशको देखकर वृद्धाके मनमें नया शोक पैदा हो गया है, उनके हृदयमें निमाई चाँदकी विरहाग्नि नये रूपमें दूनी प्रज्वलित हो उठी है। हृदयाग्निमें जलकर वे भस्म हो रही हैं; परन्तु श्रीमतीजीको अपने मनका भाव समझने नहीं देतीं। वृद्धा शची देवी सहनशीलताकी पराकाष्ठा दिखलाकर श्रीगौराङ्ग-जननी नामकी सार्थकता सम्पादन कर रही हैं। लेखकके अभिन्न हृदय बन्धुवर वैष्णव-कवि श्रीमान् सत्यकिंकर कुण्डु महाशयके कुछ पदोंमें शची देवीके तत्कालीन मनोभाव विशेष रूपसे व्यक्त हुए हैं, अतएव उन्हें यहाँ उद्धृत करते हैं—

(१)	(१)
*बउ मा! बउ मा! हये पागलिनी, कि वेष ध'रेछ जननी! (आहा) सोणार कमल बल मा आमाय केन गो सेजेछ योगिनी!	हे बहु माँ! पागलिनी बनकर तुमने यह कैसा वेष धारण कर रखा है? हे स्वर्ण कमलकी प्रतिमा-सी बेटी! बतलाओ तो तुम योगिनी क्यों बनी हो?
खुलिया फेलेछ कनक-भूषण, परणे केन मा गैरिक वसन,	सोनेके आभूषणोंको खोलकर फेंक दिया है, पहनावेमें गेरुआ वस्त्र क्यों है?
ननीर शरीरे विभूति मेखेछ, हेरिया फाटे गो पराणि।। (आहा) हियार माणिक बल मा आमाय केन गो सेजेछ योगिनी।।	नवनीत जैसे मृदुल शरीरमें भस्म लगा रखी है, उसे देखकर कलेजा फटा जाता है। अहा हृदयकी माणिक! बतलाओ बेटी! तुम योगिनी क्यों बनी?

(२)	(२)
कुटिल कुन्तल रुखु रुखु ह'ये केन मा प'ड़ेछ वदने। (आहा) कार अनुरागे हेन दशा तोर बल् मा आमार सदने।	बेटी! कुटिल केश रूखे-सूखे होकर मुँह पर क्यों पड़े हैं? अहा! बेटी! मेरे निकट बतलाओ तो किसके अनुरागमें तुम्हारी ऐसी दशा हो रही है?
करे जपमाला गाये नामावली, सजल नयन हरि हरि बलि,	हाथमें जपमाला और शरीरपर नामावली धारण करके सजल नयनोंसे हरि-हरि बोलती हो।
के काँदाले तोय सुखेर कोरके, पराण बाँधिया पाषाणे, (आहा) कार अनुरागे हेन दशा तोर बल मा आमार सदने।	इस सुखकी कली तुमको पाषाणमें प्राण बाँधकर किसने रुलाया? अहा! बेटी! मेरे निकट बतलाओ तो किसके अनुरागमें तुम्हारी ऐसी दशा हो रही है?

---

* बंगालमें स्त्री मात्रको 'माँ' कहकर पुकारनेकी प्रथा है।—प्रकाशक

(३)

कमल आनने स्वरगेर ज्योति
उठेछे जेन मा फुटिया।
(आहा) गोलोकेर प्रेम झलके झलके
जेन मा आसिछे छुटिया ।।

उजलित दिशि महिमा-किरणे,
गृह आलोकित सुपीत-वरणे,

शान्तिर शीकर रुपेर झलसे
संसार गियाछे भुलिया।
(आहा) गोलोकेर प्रेम झलके झलके
जेन गो आसिछे छुटिया ।।

(३)

बेटी ! तुम्हारे मुख-कमलपर मानो स्वर्गीय ज्योति फूटी पड़ती है। अहा ! प्रति झलकमें मानो गोलोकका प्रेम दौड़कर आ रहा है।

महिमाकी किरणोंसे दिशाएँ उज्ज्वल हो रही हैं। सुन्दर पीत-वरणसे गृह आलोकित हो रहा है।

रूपके आलोकमें शान्तिकी बूँदें झलक रही हैं ; संसारकी सुधि-बुधि नहीं है। अहा ! प्रति झलकमें मानो गोलोकका प्रेम दौड़कर आ रहा है !

(४)

मने हय तुमि नह मा मानवी
स्वरगेर देवी आसिया।
(आहा) गाओ हरिनाम मधुर ररावे
दुखिनी भवने पशिया।

जत चाइ मागो तोर मुखपाने,
तत जाइ भुले आपनार प्राणे,

के तुमि के तुमि नवीना योगिनी
बल मा सन्ताप नाशिया।
(आहा) नाम शुने तोर निटोल बदने
पुलके जेतेछि भासिया ।।

(४)

बेटी ! मनमें लगता है कि तुम मानवी नहीं हो, स्वर्गसे देवी आकर-- इस दुःखिनीके घरमें प्रविष्ट होकर मधुर स्वरसे हरिनाम गाती हो !

बेटी ! तुम्हारे मुँहकी ओर जितना ही देखती हूँ, उतनी ही आत्म-विस्मृत होती हूँ।

हे नवीना योगिनी ! तुम कौन हो, मेरे सन्तापको नाश करनेवाली, बताओ ? अहा ! तुम्हारे सुगठित मुखसे नामोच्चारण सुनकर मैं अत्यन्त पुलकित हो मग्न हो जाती हूँ।

(५)	(५)
सम्वर सम्वर ओरूप जननि ! ओ रूपे पराण चमके। (आहा) ऐ रूपे साजि निमाइ आमार छाड़िया गियाछे पलके,	माँ ! अपने इस रूपको संवरण करो, इस रूपको देखकर मेरे प्राण काँप उठते हैं। अहा ! इसी रूपमें सजकर मेरा निमाई क्षणमात्रमें हमको छोड़कर चला गया।
तोमारे पाइया भुलेछि ताहारे, तुमिओ कि जाबे छाड़िया आमारे,	तुमको पाकर मैं उसको भूल गई हूँ। क्या तुम भी मुझको छोड़कर चली जाओगी ?
खोल् मा! खोल् मा! योगिनीर साज एस मा ! हृदय - फलके। (आहा) ज्वले जाय बुक, बऊ मा आमार विषाद-अनल झलके।	माँ ! यह योगिनीका बाना खोल फेंको और मेरे हृदय-पटलमें आ जाओ। अहा ! बहू माँ ! विषादकी अग्निकी झलकसे मेरा हृदय जला जा रहा है।

(६)	(६)
देवी चेये भाल मानवी आमार संसार - सागर - तरणी। (आहा) गोरा माखा आछे तनुते तोमार पागली आमार जननी।	देवीकी अपेक्षा भी मेरी यह मानवी बहू कहीं अच्छी है। यह संसारसागरकी तरणी है। अहा ! अरी मेरी पगली बेटी ! तुम्हारे शरीरमें गौर व्याप्त है !
पीयूष - चुम्बित पापियार स्वरे, मा! मा! मा! मा! बले डाक गो आमारे।	अमृत चुम्बित पपीहेके स्वरमें मुझे माँ ! माँ ! माँ ! माँ ! कहकर पुकारो तो--
भुले जाइ ज्वाला क्षणिकेर तरे शोन मा सुचारुहासिनी, (आहा) गोरा-माखा आछे तनुते तोमार पाग्ली आमार जननी।	जिससे, हे सुचारु-हासिनी माँ ! मैं क्षणभरके लिये तो सारे सन्तापको भूल जाऊँ। अहा ! हे मेरी पगली माँ ! तुम्हारे शरीरमें सर्वत्र गौर व्याप्त है।

(७)

आय मा ! आय मा ! आय मा ! बुकेते
आर ना छाड़िब भुलिया ।
(आहा) देख मा! देख मा! विषाद-अनले
पराण जेतेछे ज्वलिया ।।

आय मा ! पराइ सुनील वसन,
आय मा ! पराइ कनक-भूषण,

आय क'रे दिइ कबरी बन्धन
गैरिक वसन खुलिया ।
(आहा) जुड़ा मा! आमार व्यथित जीवन
जननि ! जननि ! बलिया ।।

(७)

माँ ! मेरे हृदयमें आओ, आओ, आओ ! अब मैं भूलकर भी तुझे न छोड़ूँगी । अहा ! माँ ! देखो, देखो ! विषादकी अग्निमें प्राण जले जा रहे हैं ।

माँ ! आओ, मैं तुझे सुन्दर नीले वस्त्र पहनाऊँ, आओ तुझे स्वर्णके आभूषण पहनाऊँ ।

आओ, गेरुआ वस्त्र खोलकर तुम्हारे केशोंका जूड़ा बाँध दूँ । अहा ! अरी माँ ! मुझे माँ ! माँ ! कह कर मेरा व्यथित जीवन शीतल करो ।

शची देवी श्रीमतीजीके पास अधिक देर न रह सकीं। श्रीमतीजीकी संन्यासिनी मूर्ति उनसे देखी नहीं जाती। शची देवी उठकर रोते-रोते घरके भीतर चली गयीं। श्रीमतीजीने समझा कि वृद्धा सासके मनमें बड़ी व्यथा उत्पन्न हो गयी है, इसलिए वे स्थिर न रह सकीं, तुरन्त वेश बदल कर सासके पास गयीं और देखा कि वे भूमि-शय्या पर सोयी हुई एकान्तमें रो रही हैं। श्रीमतीजी उनके पास बैठकर सासकी पीठ पर हाथ रखकर सहलाने लगीं। शची देवी उठ न सकीं। सोये-सोये ही दाहिना हाथ फैलाकर पुत्रवधूका गला जकड़ कर पकड़ लिया। श्रीमतीजीके उष्ण अश्रु-जलसे शची देवीके शरीरका वस्त्र भीग गया और उनके अङ्गमें जा लगा। तब वे स्थिर न रह सकीं। वृद्धाने बैठकर अपने मलिन वस्त्रके अञ्चलसे श्रीमतीजीके आँसू पोंछ दिये। देवीकी आँखें पोंछते हुए उन्होंने कहा—"बेटी ! हम लोग जन्मभर रोनेके लिये ही आये हैं। रोते-रोते जीवन बिता देंगे। पहले ही कह चुकी हूँ कि रोदन ही हमारा भजन है। तुम भी रोओ, मैं भी रोऊँ, हमारे रोनेसे जगतके जीव रोवेंगे, उनका उद्धार होगा ! मेरा निमाई जब घर पर था, बेचारा रात-दिन रोता रहता, आँखोंके अश्रु-जलमें उसका वक्षःस्थल डूबा रहता था। मैं सोचती थी, मेरा निमाई

इतना रोता क्यों है? स्वयं आचरण करके निमाई चाँद जीवोंको धर्म-शिक्षा देनेके लिये गृह-त्याग करके संन्यासी हो गया है। स्वयं रोकर औरोंको रोना सिखलाया है। बेटी! तुम्हारा पति मनुष्य नहीं है, उसने जो शिक्षा दी है, वही करो। रो-रोकर उसको पुकारो, मैं भी पुकारती हूँ, इसीसे वह मिलेगा।"

शची देवीकी बातें सुनकर श्रीमती विष्णुप्रिया देवी चुपचाप रुदन करने लगीं। शची देवीने भी पुत्रवधूके साथ योग दिया। शची और विष्णु-प्रियाके अश्रु-जलसे कलिग्रस्त जीवोंके पाप धुल गये। प्रभुकी मनोकामना पूर्ण हुई। श्रीगौराङ्गने एक दिन श्रीश्रीनित्यानन्दसे कहा था--

"व्रजेर खेला वन भ्रमण। व्रजका खेल कुसुम वन विहरण।
नदेर खेला एबार केवल रोदन॥" नदियाका है दृग - जल - वर्षण॥

●

अष्टाविंश अध्याय

शची, विष्णुप्रिया और दामोदर पण्डित।

पाषाणे कुटिब माथा अनले पशिब।
गौराङ्ग-सुखेर निधि कोथा गेले पाब।।
—चै० मं०

● गौराङ्ग विरह और श्रीविष्णुप्रियाजी

श्रीगौराङ्गको गृह-त्याग किए प्रायः पाँच वर्ष हो गये। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी अवस्था इस समय १८–१९ वर्ष है। देवी अब पूर्ण युवती हो गयी हैं। रूप-राशि निखर रही है, बाल्य-स्वभाव अब नहीं है। श्रीमतीजी स्थिरचित्त और गम्भीर हैं, अधिक या व्यर्थकी बातें नहीं करतीं, कभी-कभी किसी मर्मी सखीके साथ एक-दो मनकी बातें कर-कर अपना हृदय शीतल करती हैं। पाँच वर्ष तक प्राण-वल्लभके लिये वे दिन-रात रोती रही हैं और सब कुछ त्याग दिया है। श्रीगौर-कथा, प्राण-बल्लभकी गुण-गाथा, प्राणनाथका रूप-चिन्तन, उनके श्रीचरणोंका ध्यान—इन कार्योंमें श्रीमतीजीको विशेष अनुराग है। श्रीमतीजीकी प्रधाना सखी काञ्चना सदा उनके पास रहती हैं। एक दिन श्रीमतीजीने सखीको संबोधन करके कहा—"सखि ! एक-एक दिन करके कितने महीने और कितने वर्ष बीत गये ? मेरे प्राणबल्लभ तो आये नहीं ? मैं अब भी आशापूर्वक उनकी बाट जोह रही हूँ। इस तुच्छ जीवनको उनके दर्शनकी आशासे ही रक्खा है। रो-रोकर मैं अन्धी होनेके लिये बैठी हूँ। क्या ये सब बातें मेरे प्राणवल्लभ कुछ भी नहीं जानते ? ये सब समाचार क्या कोई उनको नहीं देता ? श्रीराधिकाकी उक्तिवाले विद्यापतिके एक पदमें श्रीमतीजीके मनके भाव बहुत ही स्पष्ट रूपसे व्यक्त हुए हैं, अतएव वह पद यहाँ उद्धत किया जाता है—

सजनि ! को कहु, आग्रोव माधाइ ।

हे सजनि ! कौन कहता है कि माधव आवेंगे ?

विरह-पयोधि, पार किये पाग्रोब,
मझु मने नाहि पतियाइ ।

इस विरह सागरको मैं कैसे पार करूँगी? मेरे मनमें विश्वास नहीं होता ।

एखन तखन करि, दिवस गोङायलु,
दिवस दिवस करि मासा ।

अब तब करते दिन बीत गये और दिन-दिन करके महीने ।

मास मास करि वरिख गोङायलु
खोयलु ए तनुक आशा ।।

महीना-महीना करके वर्ष चले गये और शरीरकी आशा खो दी ।

वरिख वरिख करि, समय गोङायलु
खोयलु जीवनक आशे ।

वर्ष-वर्ष करके समय गँवा दिया और जीवनकी आशा खो दी ।

हिमकर किरणे, नलिनी यदि जारब
कि करिब माधवि मासे ।।

यदि हिमकरकी किरणें नलिनीको जला देंगी तो मधु मास क्या करेगा ?

अंकुरे-तपन तापे, यदि जारब,
कि करब वारिद मेहे ।

यदि सूर्यका ताप ही अंकुरको जला देगा तो जलधर मेघ क्या करेगा?

इह नव यौवन, विरहे गोङायब
कि करब सो पिया लेहे ।।

यदि यह नवयौवन विरहमें ही बीतेगा तो पीछे वह प्रीतमको प्राप्त कर क्या करेगी ?

भनये विद्यापति, शुन वर-युवति,
अव नाहि होत निराश ।

विद्यापति कहते हैं—हे वर-युवति ! सुनो, अब निराश न हो ।

सो ब्रजनन्दन, हृदय आनन्दन,
झटिते मिलब तुआ पाश ।।

वे आनन्दकन्द व्रज-नन्दन शीघ्र तुम्हारे पास आ मिलेंगे ।

● प्रभुके नवद्वीप पधारनेकी सूचना

काञ्चनाने लोगोंके मुँहसे सुना है कि श्रीगौराङ्ग एक बार जननी और जन्मभूमिका दर्शन करने नवद्वीप आवेंगे । सखीको इसी आशा-रज्जुसे झुलाकर बाँध रक्खा है । इस समय वसन्त काल है, वृक्ष-लताएँ नव पल्लवसे सुशोभित हैं । मृदु-मन्द मलय समीरण विरहिणीके प्राणोंको आकुल कर रहा है । पूर्णिमाका चन्द्र निर्मल गगनमें विराजमान होकर भूतलपर मधुर

हास्यकी राशि विखेर रहा है। सन्ध्या-कालीन रात्रिमें सुस्निग्ध ज्योत्स्नाके आलोकमें बैठकर श्रीमतीजी और काञ्चना गौर-विरह-कथा कह रही हैं। श्रीमतीजी वाण-विद्ध मृगीके समान गौर-विरह-वाणसे घायल होकर छटपटा रही हैं। पास बैठकर सखी इस विरह-व्याधिकी औषधका प्रयोग कर रही हैं। औषधके गुणसे समय-समय पर अवश्य व्याधिका उपशमन होता है। परन्तु व्याधि पुरानी हो रही है, उत्कट और दुःसाध्य होनेके कारण औषधका फल उतना नहीं हो रहा है। व्यवस्थित औषधियाँ बड़ी श्रेष्ठ हैं। कविराज भी विज्ञ और चतुर हैं, रोगिणीका मन देखकर समयोपयोगी औषधका प्रयोग करते हैं। देवीकी इस गौर-विरह व्याधिकी चिकित्सा करने वाली काञ्चना विशेष दक्षताके साथ चिकित्सा करती आ रही हैं। इस व्याधिकी चिकित्सक श्रीमती काञ्चना देवी हैं। इसकी औषध है—गौर-कथा, इस व्याधिका पथ्य है—गौर-लीलामृतपान। इस व्याधिकी औषधका अनुपान है—गौर-रूप-गुण-वर्णन। चिकित्सा ठीक ही हो रही है। जैसा रोग है, वैसी औषध पड़ रही है। अतएव रोग बहुत कुछ शान्त होने लगा है।

शची देवी अपनी पुत्र-वधूकी व्याधिकी चिकित्साके लिये कविराज-शिरोमणि श्रीमती काञ्चना देवीको नियुक्त करके निश्चिन्त हैं। तथापि बीच-बीचमें रोगिणीकी शुश्रूषाके लिये वृद्धाको श्रीमतीके निकट जाना पड़ता है। पथ्य आदिकी व्यवस्था करनी पड़ती है। शची देवीको भी कभी-कभी कविराज बनना पड़ता है। कभी-कभी काञ्चना श्रीमतीजीके पास नहीं रहतीं और सास-पुत्रबधू जब एकान्तमें बैठकर गौर-कथा प्रारम्भ करती हैं, तो उसकी समाप्ति शीघ्र नहीं होती। सारी रात जागरणमें कट जाती है। अतएव व्याधि बढ़ जाती है। रोगिणीको मूर्च्छाकी सम्भावना होती है। शची देवीको व्याकुल होकर कविराज काञ्चनाको बुलाना पड़ता है।

इस प्रकार एक-एक वर्ष करके पाँच वर्ष बीत गये, तथापि श्रीमतीजीके रोगमें कोई विशेष उपकार नहीं दीख पड़ा। वरं रोग दिन-दिन बढ़ने लगा। रोगिणीका शरीर क्रमशः शीर्ण होने लगा। यह देखकर शची देवी और वैद्यराज काञ्चनाके मनमें विषम भय उपस्थित हो गया। श्रीमतीजीके शरीरमें वह कान्ति नहीं है, वदनमें वह शोभा नहीं है, प्रफुल्ल

कुसुमके समान अति सुन्दर मुखमण्डल मानो शुष्क हो गया है। परिधानके मलिन वस्त्रसे सारी देह ढँककर श्रीमतीजी भूतल पर सोयी हुई हैं और बीच-बीचमें "हा नाथ! हा गौराङ्ग!" कहकर लम्बी साँस लेती हैं। शची देवी पास नहीं हैं, काञ्चना हैं। उन्होंने सखीको खूब समझाते हुए कहा—"सखि! रोना मत। तुमको प्राणवल्लभका दर्शन प्राप्त होगा। वे शीघ्र ही जननी और जन्मभूमिके दर्शनोंके लिये नवद्वीप आवेंगे।" श्रीमतीने सुनकर मन-ही-मन सोचा—"इससे मेरा क्या? प्रभु तो इस अभागिनीको दर्शन नहीं देंगे, इस पापिनीका मुख देखनेसे उनका धर्म नष्ट जो हो जायगा।" देवीने मनकी बात मनमें ही रखकर काञ्चनाको बहुत धीरे-धीरे कहा—"सखि! ऐसा दिन कब होगा? प्राणवल्लभने इस अभागिनीके कारण गृह-त्याग किया है। इस पापिनीके जीवित रहते वे नवद्वीपमें आएँगे, यह विश्वास नहीं होता।" श्रीमतीजीको समझाते हुए काञ्चनाने कहा—"प्रभुका संवाद लेकर दामोदर पण्डित आये हैं। प्रभुने कहला भेजा है कि वे शीघ्र ही नवद्वीप आवेंगे।"

इधर शची देवी पुत्र-विरहके शोकमें दिन-रात रो-रोकर दोनों आँखें खोनेको बैठी हैं। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीका रूप-यौवन उनके कलेजेमें शेलके समान लगता है। श्रीगौराङ्गने यह शेल माताके वक्षःस्थल पर मारा है। शची देवी यशोदाके भावमें उन्मत्त रहती हैं। निमाई चाँद नीलाचल गये हैं। शची देवी सोचती हैं कि श्रीकृष्ण मथुराके राजा होकर सब कुछ भूल गये हैं। जो योगी, संन्यासी, अवधूत दिखलायी देते हैं, वे उनके पीछे-पीछे दौड़कर पूछती हैं—"क्या आप लोगोंने एक सुनहले रङ्गका बालक संन्यासी देखा है? उसका नाम श्रीकृष्ण-चैतन्य है। वह सदा ही मुखसे कृष्ण नाम उच्चारण करता रहता है, कच्चे स्वर्ण समान उसके शरीरका वर्ण है। उसकी आँखोंसे सदा आँसुओंकी धारा बहती है। वह मेरा सोनेका बालक निमाई चाँद है, क्या आपने उसे देखा है?"

नीलाचल पुरे, गतायात करे,
सन्न्यासी वैरागी जारा।
ताहा सभाकारे, कान्दिया सुधाय,
शची पागलिनी पारा॥

तोमरा कि एक, सन्न्यासी देखेछ ?
श्रीकृष्णचैतन्य नाम, तारे कि भेटेछ ?
वयस नवीन, गलित काञ्चन
जिनि तनुखानि गोरा।
हरेकृष्ण नाम, बोलये सघने,
नयने गलये धारा ।।

शची देवी पागलिनीके समान दौड़ी जाकर सबसे यही पूछती हैं। परन्तु कोई नहीं बतलाता कि इस प्रकारका नवीन संन्यासी कहीं देखा है। वृद्धा बीच-बीचमें दौड़कर श्रीवास पण्डितका घर देख ग्राती हैं कि उनका खोया धन निमाई चाँद वहाँ ग्राया है या नहीं ? कभी गङ्गाके तटपर जाकर––"निमाई रे ! बाप रे ! कहाँ गया रे !" कहकर उच्च स्वरसे रो-रोकर नवद्वीपके निवासियोंके हृदयको उन्मथित करती हैं। शची देवीके करुण रुदनसे पशु-पक्षी, वृक्ष-लता ग्रादि भी व्याकुल हो उठते हैं। भागीरथी दारुण मनस्तापसे उछल-उछल कर फुंकार मार कर रोती हैं। नदियाके निवासियोंकी तो बात ही क्या ? वे लोग शची देवीके दु:खसे व्याकुल होकर झट-पट जाकर उनको गोदमें उठाकर घर ले जाते हैं।

इस प्रकार वृद्धा शची देवी ग्रौर उनकी पुत्र-वधूके दिन कटते हैं, एक-एक करके पाँच वर्ष बीत गये, तब भी दु:खका घटना तो दूर, बल्कि बढ़ता ही जा रहा है। प्रभुका पुराना सेवक वृद्ध ईशान दोनों देवियोंकी देख-भाल करता है। प्रभुके गृहके कर्त्ता दामोदर पण्डित प्रभुकी माता ग्रौर गृहिणीका पर्यवेक्षण करते रहते हैं। वे प्रत्येक वर्ष दूसरे भक्तोंको साथ लेकर प्रभुका दर्शन करनेके लिये नीलाचल जाते हैं। वे ही शची-विष्णुप्रियाका समाचार प्रभुको देते हैं तथा प्रभुका सारा समाचार लाकर दोनों देवियोंको सूचित करते हैं। शची देवीके दिये हुए सामानको परम ग्रानन्द तथा समादर-पूर्वक दामोदर पण्डित सिरपर उठाकर प्रभुके पास ले जाते हैं तथा प्रभुको देकर कृतार्थ होते हैं।

भक्तोंके साथ उनका परिवारवर्ग भी बीच-बीचमें श्रीक्षेत्रके दर्शनको लक्ष्य करके प्रभुके चरणोंका दर्शन करनेके लिये जाता है। उनमें श्रीवासकी पत्नी मालिनी तथा प्रभुकी मौसी––चन्द्रशेखर ग्राचार्य-रत्नकी स्त्री––मुख्य

हैं। ये लोग प्रभुकी माता और गृहिणीकी सारी बातें प्रभुको सुनानेकी चेष्टा करती हैं तथा नीलाचलमें प्रभुके प्रत्येक कार्यको देखकर या सुनकर घर लौटती हैं और यहाँ दोनों देवियोंको सुनाकर परितृप्त होती हैं। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी और शची देवी इन दोनोंसे प्रभुके संन्यास-जीवनकी सारी बातें सुन पाती हैं। दामोदर पण्डितके मुखसे सारी बातें नहीं सुन पातीं, क्योंकि दोनों देवियोंको सुनकर दुःख होगा, यह सोचकर वे प्रभुके उत्कट और कठोर वैराग्यकी सारी बातें खोलकर उनको नहीं बताते।

दामोदर पण्डित प्रति वर्ष नीलाचल जाते हैं लेकिन मालिनी और शची देवीकी बहिन ऐसा नहीं कर पातीं। इस कारण दामोदर पण्डित ही शची-विष्णुप्रियाके पास नियमपूर्वक प्रति वर्ष प्रभुका संवाद लाते हैं। एक वर्ष तक प्रभुके संवादकी आशामें दोनों देवियोंको राह देखनी पड़ती है। बीच-बीचमें प्रभु दामोदर पण्डितके हाथ माताके लिये श्रीश्रीजगन्नाथजीके प्रसादके साथ अन्यान्य वस्तुएँ भेजते हैं।

● राजा प्रतापरुद्र द्वारा प्रदत्त प्रसादी वस्त्र

राजा प्रतापरुद्र प्रति वर्ष रथयात्राके समय प्रभुके मस्तक पर एक बहु-मूल्य रेशमी वस्त्र बाँध देते हैं। प्रभु राजाके दिये हुए उस रेशमी वस्त्रको सिर पर धारण कर रथके आगे नृत्य करते हैं। राजा प्रतापरुद्र जानते हैं कि प्रभु वह वस्त्र कभी व्यवहारमें नहीं लायँगे, प्रभुके भक्तगण भी उसका व्यवहार नहीं करेंगे, फिर वे बहुमूल्य रेशमी वस्त्र प्रति वर्ष प्रभुको किस लिये देते हैं? राजा जानते हैं कि प्रभुकी जननी और गृहिणी नवद्वीपमें हैं, प्रति वर्ष प्रभुके देशके लोग प्रभुके श्रीचरणोंका दर्शन करनेके लिये नीलाचल आते हैं। उनके हाथ प्रभु प्रसाद और द्रव्यादि भेजते हैं। राजा प्रतापरुद्र मन-ही-मन सोचते हैं कि यदि अन्य द्रव्यादि और प्रसादके साथ यह रेशमी वस्त्र किसी प्रकार प्रभुके घर पहुँच जाय और उनकी गृहिणीके श्रीअङ्ग पर पड़ जाय, तो इससे उनका जीवन सार्थक हो जायगा। वे कृतार्थ हो जायँगे। राजा प्रतापरुद्र जानते हैं कि प्रभु महा विरक्त संन्यासी हैं। **मिट्टीका करवा, फटा कौपीन और कम्बल उनका सम्बल है।** उनको राजवेशमें सजानेकी जो बड़ी साध है, वह पूरी होनेकी नहीं, इस लिये प्रभुकी पत्नीको

यदि वस्त्रालंकारसे सजा सकें, उसीकी चेष्टामें रहते हैं। इसी कारण यह वस्त्र दिया करते हैं।

राजा निश्चय ही अपने मनका यह भाव किसीको कहनेका साहस नहीं करते। मनकी बात मनमें ही रखते हैं। प्रभु हमारे अन्तर्यामी हैं। भक्तके मनकी वासनाको जान लिये हैं। चतुर-शिरोमणि श्रीगौर भगवान् भक्तके मनकी अभिलाषा पूर्ण करनेके लिये राजाके द्वारा प्रदत्त रेशमी वस्त्र प्रति वर्ष दामोदर पण्डितके द्वारा माताके पास भेजते हैं। प्रभु मुँहसे कुछ नहीं बोलते, प्रभुके भक्त लोग सब वस्तुओंकी रक्षा बहुत यत्नपूर्वक करते हैं। प्रभु मानो कुछ भी नहीं जानते, तथापि उनकी इच्छाके अनुरूप कार्य होते हैं। इसे ही श्रीभगवान्की चातुरी, कौशलीका कौशल कहते हैं। वे चतुरोंके शिरोमणि हैं, किसीकी विसात नहीं जो उनकी चातुरीमें हस्तक्षेप करे। श्रीगौराङ्ग श्रीमतीजीके लिये वस्त्र-प्रसाद भेजते हैं इसमें आश्चर्यकी कोई बात नहीं है।

● पं० जगदानन्द द्वारा प्रभुके सम्मुख नवद्वीपका हाल वर्णन

प्रभु खुल कर कुछ नहीं बोलते हैं, किन्तु नवद्वीपके लोगोंके आने पर घरके सारे समाचार ध्यानसे सुनते हैं। विशेषतः श्रीमतीजीकी बातें उनको बहुत अच्छी लगती हैं। इसी कारण जब जगदानन्दजी श्रीक्षेत्रमें जाकर प्रभुको प्रणाम करके सबके दुःखकी बातें कहने लगे, तो उन्होंने पहले नदियाकी बात सुननी चाही। जब जगदानन्द शची माता और श्रीमतीकी बातें विशेष रूपसे वर्णन करने लगे तो प्रभुने निविष्ट-चित्तसे श्रीमतीजीकी सारी बातें सुनीं। जगदानन्द कह रहे हैं और रो रहे हैं, प्रभु चुपचाप अवनत मुख होकर सुन रहे हैं।

तबे कर जोड़ेते पण्डित क्रमे बोले। नदीयार भक्तगण आछये कुशले।।	तब हाथ जोड़कर पण्डित जगदानन्द क्रमसे कहने लगे—नदियाके सब भक्तगण कुशल हैं।
शचीमातार वत्सलता निरुपम हय। तोमार मङ्गल लागि देवे आराधय।।	शची माताकी पुत्र-वत्सलता अनुपम है, वे तुम्हारे कल्याणके लिये देवाराधन करती हैं।

साधुस्थाने आशीर्व्वाद लहये मागिया । आशीष करये निजे ऊर्ध्ववाहु हञा ।।	साधुओंसे आशीर्वाद माँगती हैं और स्वयं ऊर्ध्वबाहु होकर आशीर्वाद देती हैं ।
विष्णुप्रिया मातार कथा कि कहिमु आर । तान भक्ति निष्ठा देखि हैनु चमत्कार ।।	श्रीमती विष्णुप्रिया माताकी तो बात ही मैं क्या कहूँ ? उनकी भक्ति-निष्ठा देखकर तो चकित होना पड़ता है ।
शचीमातार सेवा करेन विविध प्रकार । सहस्रेक जने नारे ऐछे करिवार ।।	वे नाना प्रकारसे शची माताकी सेवा करती हैं । सहस्रों आदमी मिलकर भी ऐसी सेवा करना चाहें तो नहीं कर सकते ।
प्रत्यह प्रत्यूषे गिया शचीमाता सह । गङ्गास्नान करि आइसेन निज गृह ।।	प्रति दिन ऊषाकालमें शची माताके साथ जाकर गङ्गा स्नान करके घर आती हैं ।
दिनान्तेह आर कभु ना जान वाहिरे । चन्द्रसूर्यो तान मुख देखिते ना पारे ।।	सायंकाल तक फिर कभी बाहर नहीं निकलती हैं । चन्द्र-सूर्य भी उनका मुँह नहीं देख पाते ।
प्रसाद लागिया जत भक्तवृन्द जाय । श्रीचरण बिना मुख देखिते ना पाय ।।	प्रसादके लिये जितने भक्तवृन्द जाते हैं, वे केवल श्रीचरणोंके सिवाय मुँह नहीं देख पाते ।
तान कण्ठध्वनि केह शुनिते ना पारे । मुखपद्म म्लान सदा चक्षे जल झरे ।।	उनकी कण्ठ-ध्वनि कोई सुन नहीं सकता । सदा मुख-कमल म्लान रहता है और आँखोंसे आँसू बहते रहते हैं ।
शचीमातार पात्रशेष मात्र से भुञ्जिया । देहरक्षा करे ऐछे सेवार लागिया ।।	वे शची माताके पात्रका अवशेष मात्र अन्न खाकर उनकी सेवाके हेतु ही अपने शरीरकी रक्षा करती हैं ।
शची-सेवाकार्य सारि पाइले अवसर । विरले वसिया नाम करे निरन्तर ।।	शची माताका सेवा-कार्य कर लेनेके बाद यदि अवसर पाती हैं तो एकान्तमें बैठकर निरन्तर नाम-जप करती हैं ।

हरिनामामृते तान महारुचि हय। साध्वी-शिखा-मणि शुद्ध प्रेम-पूर्ण काय।।	हरिनामामृतमें उनकी महान रुचि रहती है, वे साध्वी-शिरोमणि हैं। उनका शरीर शुद्ध प्रेमसे परिपूर्ण है।
तव श्रीचरणे ताँर गाढ़ निष्ठा हय। ताहान कृपाते पाइनु ताँर परिचय।।	तुम्हारे श्रीचरणोंमें उनकी प्रगाढ़ निष्ठा है। उनकी कृपासे ही मैंने यह परिचय पाया है।
तव रूप-साम्य चित्रपट निर्म्माइला। प्रेम-भक्ति महामन्त्रे प्रतिष्ठा करिला।।	तुम्हारे रूपके जैसा ही चित्रपट बनवाकर प्रेम-भक्ति महामन्त्र द्वारा उसकी प्रतिष्ठा की है।
सेइ मूर्ति निभृते करेन सुसेवन। तव पादपद्मे करि आत्म-समर्पण।।	तुम्हारे पाद-पद्मोंमें आत्मसमर्पण करके उसी मूर्तिकी एकान्तमें भली भाँति सेवा करती हैं।
तान सद्‌गुण श्रीअनन्त कहिते ना पारे। एक मुखे मुञि कत कहिमु तोमारे।। —अ० प्र०	उनके सद्‌गुणोंका वर्णन सहस्र-मुख श्रीशेषनाग भी नहीं कर सकते हैं, मैं एक मुँहसे कहाँ तक तुमसे वर्णन करूँ?

प्रभु अन्तरङ्ग भक्त-मण्डलीसे घिर कर बैठे हुए हैं—इस बातको वे श्रीमतीजीकी बात सुनते-सुनते भूल गये। प्रभु सोच रहे थे कि वे एकान्तमें बैठे हैं और जगदानन्द उनको प्रियाजीकी कथा सुना रहे हैं एवं दूसरोंको पता नहीं है। प्रभुकी दोनों आँखोंसे जल-बिन्दु गिर रहे हैं—इसको कोई देख नहीं पाया, परन्तु वे जगदानन्दको धोखा न दे सके। श्रीमतीजीकी बात समाप्त होने पर प्रभु कुछ लज्जित होकर वाह्य-विरक्तिके साथ जगदानन्दसे बोले—

महाप्रभु कहे आर ना कह एइ बात।
शान्तिपुरे आचार्य्येर कह सुसम्वाद।।
—अ० प्र०

चतुर-शिरोमणि श्रीगौराङ्गकी चातुरी देखकर जगदानन्द मुस्कराये और श्रीअद्वैत प्रभुकी बात कहने लगे।

● राजा प्रतापरुद्र द्वारा प्रदत्त प्रसादी वस्त्र और श्रीविष्णुप्रियाजी

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने राजा प्रतापरुद्रके दिये हुए रेशमी वस्त्रको पहना या नहीं, यह ज्ञात नहीं है। प्रभुके भेजे हुए पदार्थ श्रीमतीजीको शिरोधार्य हैं। श्रीमतीजी उनको सिरपर धारण करके अपनेको कृतार्थ समझती हैं। दासीको प्रभुने याद किया है, यह सोचकर वे प्रेमाश्रु बहाती हैं। उनकी दु:ख-राशिमें केवल यही एक बिन्दु सुख है। श्रीमतीजी वस्त्रोंकी बहुत यत्नपूर्वक रक्षा करती हैं। प्रभुकी भेजी हुई सामग्री श्रीमतीजीका महा मूल्यवान धन है। वृद्धा सासकी आज्ञाकी अवहेलना श्रीमतीजी नहीं कर सकतीं। शची देवी कभी-कभी आह्लादपूर्वक पुत्र-वधूको वह वस्त्र पहना देती हैं। अलंकार पहनाती हैं, परन्तु केवल घरके भीतर। वस्त्र-अलंकार पहनकर श्रीमतीजी घरके बाहर कभी नहीं निकलतीं। शोक-तापसे जर्जरित वृद्धा सासके आदेशकी अवहेलना श्रीमतीजी नहीं कर सकतीं, परन्तु वस्त्रालंकार धारण कर उनको तनिक भी सुख नहीं मिलता। जितना शीघ्र अवसर पाती हैं, वस्त्रालंकार उतार कर रख देती हैं। नीलाचलमें बैठकर प्रभु मनश्चक्षुसे देखते थे कि उनकी प्राण-प्रिया रेशमी वस्त्र पहने हैं। राजा प्रतापरुद्र भी देखते थे कि उनकी प्रभु-पत्नी वस्त्र और अलंकारसे आभूषित हुई हैं, प्रभु और प्रभुके भक्त--दोनोंके मनकी साध पूरी होती। श्रीमती विष्णुप्रिया यदि इसे जानतीं या समझ पातीं कि इस कार्यमें रसिक-चूड़ामणि श्रीगौराङ्गकी सम्मति है और वे इससे सुख अनुभव करते हैं तो वे अपने श्रीअङ्गसे वस्त्रालंकार उतार नहीं सकती थीं। प्राणवल्लभ जिससे सुखी हों, वही श्रीमतीजीके लिये कर्त्तव्य है। बलरामदास रचित शची देवीकी उक्तिका एक पद प्रभु-प्रेरित साड़ीके सम्बन्धका यहाँ उद्धृत किया जाता है--

कोथा गेलि विष्णुप्रिया **शीघ्र आय मा चलिया** **क्षेत्र ह'ते समाचार एलो।**	अरी विष्णुप्रिये ! तू कहाँ गयी ? शीघ्र चली आओ बेटी। श्रीक्षेत्रसे समाचार आया है।
निमाइ मोर स्मरियाछे **कत किना पाठायेछे** **शची पाछे बधू दाँड़ाइल॥**	मेरे निमाईने याद किया है, कितना क्या-क्या भेजा है ! शचीके पीछे वहू आ खड़ी हुई।

दामोदर शची आगे श्रीमहाप्रसाद राखे आर राखे बहुमूल्य साड़ी।	दामोदर पण्डितने शची माताके आगे श्रीमहाप्रसाद रखा और बहुमूल्य साड़ी रख दी।
नन्दोत्सव दिने राजा वस्त्रे करे प्रभु - पूजा प्रभु उहा पाठायेछेन बाड़ी।।	नन्दोत्सवके दिन राजा वस्त्रके द्वारा प्रभुकी पूजा करते हैं। प्रभुने वह घर भेजा है।
शची बोले विष्णुप्रिया धर साड़ी पर गिया पाठायेछे निमाइ तोर लागि।	शची माताने कहा--"विष्णुप्रिये! साड़ी ले लो और जाकर पहनो, निमाईने इसे तुम्हारे लिये भेजा है।
बाड़ीते आसिते नारे सदा तोमा मने करे से तोमार सुख दुःख भागी।।	वह घर तो नहीं आ पाता, पर सदा तुझे याद करता है। वह तुम्हारे सुख-दुःखका भागी है।"
देवी साड़ी करि बुके बलिलेन जननीके साड़ी तुमि विलाइया दाओ।	देवी श्रीविष्णुप्रियाने साड़ीको हृदयसे लगाकर मातासे कहा--"इस साड़ीको तुम वितरण कर दो।"
बले बलराम दास छाड़ गो दुःखिनी वेश साड़ी परि आगेते दाँड़ाओ।।	बलराम दास कहते हैं--मा! दुःखिनीका वेश छोड़िये साड़ी पहनकर दर्शन देनेको आगे खड़ी होइए।

● दामोदर पण्डित द्वारा नीलाचलका हाल वर्णन

नीलाचलसे सम्वाद आया कि प्रभु दक्षिण-देश भ्रमण करके स्वस्थ शरीरसे पुनः नीलाचल लौट आये हैं और अच्छी तरहसे हैं। दामोदर पण्डित प्रभुके दूत हैं। वे नीलाचलसे आये हैं, शची देवीको प्रभु-दत्त प्रसाद देकर उनको पुत्रके सारे समाचार कह सुनाये। शची देवी एक-एक करके पुत्रकी सारी बातें दामोदर पण्डितसे पूछ रही हैं और उत्तरमें वे जो बोलते हैं उसे मनोयोगपूर्वक सुन रही हैं। "निमाई कैसा हो गया है? शरीर दुर्बल तो नहीं है? जान पड़ता है मेरा बच्चा अच्छी तरह भोजन भी नहीं करता है। रातमें सोता है या नहीं? कौन उसे पकाकर खिलाता है? रातमें कौन निमाई चाँदके पास सोता है? निमाई उनका नाम लेता है या नहीं?"—

आदि वात्सल्यभाव-पूर्ण स्नेह-मिश्रित वार्तालापमें दामोदर पण्डितके साथ शची देवीने बहुत समय बिताया। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी आड़में खड़ी हो, कान लगा, सारी बातें सुनती हैं। दामोदर पण्डितने एक-एक करके शची देवीके सब प्रश्नोंके उत्तर देते हुए कहा——"प्रभु बड़े आनन्दसे हैं। निमाई चाँद स्वस्थ हैं, सुखसे हैं, नीलाचलमें आनन्द करते हैं। सारा भारतवर्ष उनके निमाई चाँदका यशोगान करता है। 'जय! नवद्वीप-चन्द्रकी जय!' कहकर सारे गौड़के निवासी उनके पुत्रका जय-गान करते हैं।" इससे शची देवीके मनमें आनन्द होता है। उन्होंने सुना कि उनके पुत्रकी कृपासे अनेक पाप-ग्रस्त जीवोंका उद्धार हुआ है, सैकड़ों महापातकी त्राण पाये हैं, कलि-क्लिष्ट जीवोंके उद्धारका एक सहज-साध्य साधन-पथ खुल गया——यह सोचकर वृद्धाके मनमें अपार आनन्दकी अनुभूति होती है। वे अब अधिक अपनी स्वार्थ-परताकी ओर देखना नहीं चाहतीं। उनके गर्भसे उत्पन्न पुत्रके द्वारा कलि-ग्रस्त जीवोंके भव-बन्धनसे मुक्त होनेका पथ परिष्कृत हो रहा है, जीवोंका उद्धार हो रहा है——यह सुनकर शची देवीके मनमें बड़ा सुख हुआ।

● विष्णुप्रियाजीकी हालत

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी अब भी पूर्ववत् कातर, विषण्ण और मर्माहत होकर दिन काटती हैं। पति-विरह-विधुरा श्रीमती विष्णुप्रिया देवी मनको इतने दिनोंमें भी प्रबोध न दे सकीं। उनका मन किसी प्रकार भी नहीं मानता। किसी प्रकारके सुखसे सुखी होना नहीं चाहता। चाहता है केवल प्राणवल्लभके सङ्गका सुख, प्राण-गौरके दर्शन और उनके श्रीचरणोंकी सेवा। परन्तु श्रीमतीजीके भाग्यमें यह बदा नहीं है, इसको वे जानती और समझती हैं। इसी दुःखसे श्रीमतीजी जीते जी मृतवत् हो रही हैं। किसी भी विषयसे उनका मन आनन्दित नहीं हो पाता है। शची देवी वृद्धा हो गयी हैं, संसारके सारे तत्त्वोंको समझ चुकी हैं। पुत्रके प्रसादसे उनके ज्ञान-चक्षु उन्मीलित हो चुके हैं। वे मनको स्थिर कर सकती हैं। श्रीमतीजीकी बात अलग है। वे सोचती हैं——उनके प्राणवल्लभने कृपा करके सबका उद्धार किया है, जगतके सारे पापी-तापी उनकी कृपा प्राप्त कर कृतार्थ हो गये हैं, केवल उनकी भिखारिणी दासी उस कृपासे वञ्चित है। वह केवल एक बार प्राणवल्लभके दर्शनकी भिखारिणी है, जो कृपा करके उन्होंने उसे

प्रदान नहीं किया। प्रभुके दर्शन करके सभी पाप-मुक्त हो गये, सभी उनके पद-रज-स्पर्शके अधिकारी हैं, बञ्चित है केवल हतभागिनी यह विष्णुप्रिया। श्रीमतीजीका यह दुःख जानेवाला नहीं है। इस दुःखकी बात याद आते ही श्रीमतीजीका कलेजा फट जाता है। इस जगतके सुखके सर्वोच्च स्थान पर अधिकार करके श्रीमती विष्णुप्रिया देवी इस समय सबसे नीचे आ गिरी हैं। राजरानी भिखारिणी हो गयी हैं। भिखारिणी भी उनकी अपेक्षा सौ गुणी सुखी है। क्योंकि उसको भी श्रीगौराङ्गके दर्शनमें बाधा नहीं है। श्रीमतीजी अनन्त दुःख समुद्रमें पतित होकर कहीं किनारा नहीं पा रही हैं। इस दुःख-राशिमें उनको केवल एक सुख है, प्राणबल्लभका नाम स्मरण करते ही—'हा नाथ! हा गौर! हा गौराङ्ग!' कहकर अनुरागपूर्वक पुकारनेसे वे अपने प्राणबल्लभको सामने देख पाती हैं। यह ठीक है कि चर्म-चक्षुओंसे उनके दर्शन नहीं होते, वाह्येन्द्रिय द्वारा सेवा नहीं कर पातीं, परन्तु श्रीमतीजी मनश्चक्षुसे उस भुवन-मोहन रसिक-चूड़ामणि श्रीगौर भगवान्‌को सदा ही देख पाती हैं और सिद्ध देहमें उनकी सेवा करके कृतार्थ होती हैं। दोनों आँखें मूँदकर श्रीमतीजी जब प्राणबल्लभके ध्यानमें बैठती हैं, तभी वे अपनी हृदय-गुफामें प्राण-धन श्रीगौराङ्गके दर्शन करके अपार आनन्दका अनुभव करती हैं। यह प्रभुका वर है, प्रभु जब गृह-त्याग करनेकी इच्छा कर रहे थे, उस समय एक दिन श्रीमती विष्णुप्रिया देवीसे बोले थे—

सुन देवि विष्णुप्रिया तोमारे कहिल इहा
जखन जे तुमि मने कर।
आमि जथा तथा जाइ थाकिब तोमार ठाइ
एइ सत्य करिलाम दृढ़॥

—चै० मं०

प्रभुने सत्यकी रक्षा की है। श्रीमतीजी जब रोकर पुकारती हैं तब वे सामने आकर खड़े हो जाते हैं। जान पड़ता है कि देवीके नेत्रोंमें जल देखना उनको बड़ा अच्छा लगता है। श्रीमतीजीके अनिन्द्य मुख-चन्द्र पर झर-झर अश्रु-धार बहते देखकर जान पड़ता है प्रभुके मनमें अधिक सुख होता है। इस लिए जब श्रीमतीजी 'हा नाथ! हा गौराङ्ग!' कहकर क्रन्दन

करती हैं, जब देवीके नयन-जलसे वक्षःस्थल डूब जाता है, तब प्रभु अपने कर-कमलोंसे उनके नयन-जलको पोंछनेके लिये आते हैं। श्रीगौराङ्गने मातासे भी कहा था--

जे दिन देखिते मोरे चाह अनुरागे।
सेइ क्षण तुमि मोर दरशन पाबे।।
--चै० मं०

यहाँ 'अनुराग' शब्दके प्रयोगका एक तात्पर्य है। प्रभु प्रेमके अवतार हैं। करुण रस ही प्रभुको अति प्रिय है। प्रेम-भक्ति करुणा-मिश्रित होती है। श्रीगौराङ्ग करुणामय हैं। करुणाके प्रगाढ़ आवेगमें प्रभु सर्वदा विह्वल रहते थे। किसीने कभी उनकी आँखें शुष्क होते नहीं देखीं। श्रीगौराङ्ग स्वयं अनुरागी भक्तके रूपमें आचरण करके जीवोंको अनुराग-भजनकी शिक्षा दे गये हैं। प्रेम भक्तिपूर्ण भक्तका नयन-जल ही अनुराग भजनका मूल-मंत्र है। प्रेमाश्रु-जलसे भक्तिपूर्वक श्रीगौर भगवान्के पाद-पद्मोंको धोना पड़ेगा, नयन-जलसे उनके श्रीचरणोंको अर्घ्य देना होगा, ऐसा करने पर ही उनके दर्शन मिलेंगे। प्रेम-भक्ति गौर-भक्तके नयन-जलसे पुष्ट होती है। जब तक भगवत्प्रेममें हृदय द्रवित नहीं होता, नयनोंमें जल नहीं आता। जो रो सकते हैं, वे हृदय रखते हैं, जिसकी आँखोंमें आँसू नहीं आते, उसके पास हृदय ही नहीं है, हृदय नहीं है तो द्रवित क्या हो? आँखोंमें आँसू कैसे आवें?

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी प्राणवल्लभके आदेशको यथार्थरूपसे पालन करती आ रही हैं। इसी कारण वे इतनी रोती हैं और सदा नयन-जलसे पाद-पद्मोंको धोती रहती हैं। इस अनुराग-भक्तिके फलस्वरूप प्रभु श्रीमतीजीको दर्शन देते हैं और अपने हाथों देवीके नयन-जलको पोंछ देते हैं। यह सब अनुराग-भजनका फल है, अति गुह्य बात है, इसे कोई जान नहीं सकता, श्रीमतीजी भी किसीसे नहीं बोलतीं। यह सब बातें श्रीमतीजी अपनी अत्यन्त मर्मी सखी काञ्चनाको भी नहीं बतलातीं। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी श्रीगौराङ्ग सुन्दरकी इस प्रकार अनुराग-भक्ति करके मनमें सुख पाती हैं। इतना-सा सुख है इसीसे वे जीवित हैं। शची देवीकी अनुराग-भक्ति और ही प्रकार की है।

कभी-कभी श्रीमतीजीके मनमें होता है कि उनके प्राण-वल्लभ सर्वजन पूज्य, जगन्मान्य संन्यासी हैं। उनकी कृपाके लेश मात्रकी प्राप्तिके लिये प्रार्थी होकर न जाने कितने पण्डित, कुलीन ब्राह्मण, राजा, महाराजा उनके शरणापन्न हुए हैं, लाखों-लाखों नर-नारी उनके प्राणवल्लभके नामसे आनन्द-पुलकित होकर जय-ध्वनि करते हैं, उनकी अपरूप रूप-राशिसे मुग्ध होकर उनका अनुगमन करते हैं। जिसके पति इस प्रकारके जगत्पूज्य हैं, वह रमणी निश्चय ही परम सौभाग्यवती है। ऐसे पतिको प्राप्तकर गृहस्थी कैसे चलायी जाती? क्योंकि वे तो बहु-वल्लभ हैं, जगतके स्वामी हैं, त्रिभुवन-पति हैं। उनको घर पर बाँधकर कौन रखेगा?

ये सब बातें जब श्रीमतीजीके मनमें उदय होती हैं, तब इतने दुःखोंके बीचमें भी उनके मनमें एक प्रकारके सुखकी अनुभूति होती है। श्रीमतीजीने अब समझ लिया है कि श्रीगौराङ्ग केवल उनके ही प्राण-वल्लभ नहीं हैं। वे नर-नारी दोनोंके स्वामी हैं, अखिल ब्रह्माण्डपति, अनन्त कोटि ब्रह्माण्डके अधीश्वर हैं। वे पतित, अधमके पिता हैं, दीन-दुःखीके पालक हैं। उनको घर पर बाँधकर रखनेसे कैसे चल सकता है? ऐसा होनेसे जगतका मङ्गल कैसे होगा? जीवोद्धारका कार्य कैसे सुसिद्ध होगा? श्रीगौराङ्ग यदि घर पर रहते तो श्रीगौराङ्गावतारका मूल उद्देश्य कैसे सिद्ध होता?

प्रभुने कृपा करके यह ज्ञान श्रीमतीजीको दिया है। प्रभु ही इस दिव्य ज्ञानके दाता हैं। परन्तु श्रीमतीजीको सबसे बड़ा दुःख यह है कि सब लोग प्रभुके दर्शन पाते हैं, उनके सङ्गके सुखसे अपना मानव-जीवन चरितार्थ करते हैं, उनकी सेवाका अधिकार प्राप्त किया है, प्रभुने श्रीमतीजीको इन सुखोंसे क्यों बञ्चित कर रखा है? इसका मर्म अब भी वे समझ नहीं पाती हैं, इसी कारण इतनी दुःखी हैं। श्रीगौर भगवान् ही श्रीमतीजीको इस दुःखके दूर करनेका उपाय बतलावेंगे, श्रीमतीजीका दुःख वही दूर करेंगे।

सर्वदुःखहारी विष्णुप्रिया-वल्लभ श्रीगौर भगवान्के श्रीचरणोंमें यह अधम अकृती ग्रन्थकार हाथ जोड़कर निवेदन करता है कि श्रीमतीजीके दुःखको दूर करके अपने भक्तोंके प्राणोंकी रक्षा करें। श्रीमतीजीके दुःखसे पाषाण भी द्रवित हो उठते हैं। श्रीमतीजीके दुःखको मैं सहन नहीं कर पाता हूँ। उनका श्रीचरित जबसे लिखने लगा हूँ दिन-रात रोता रहता हूँ। जब तक इस शरीरमें प्राण रहेंगे तब तक रोता रहूँगा। हे सर्वदुःखहारी गौर

भगवान् ! हे विष्णुप्रिया-वल्लभ ! तुम्हारे पास हृदय खोलकर यह निवेदन मैंने किया है। अधमकी प्रार्थना कौन सुनेगा ? तुमको तुम्हारे भक्त-वृन्द निज-जन-निष्ठुर कहा करते हैं। हे दीनदयाल ! भक्तवत्सल ! दीन-शरण ! निज-जनको तुम इतना कष्ट क्यों देते हो ? इससे तुमको क्या सुख मिलता है ? निज-जन क्या तुम्हारे भक्त नहीं हैं ? वे तो तुम्हारे सिवा अन्य किसीको जानते भी नहीं हैं। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके क्रन्दनसे क्या तुम्हारा हृदय द्रवित नहीं होता ? तुम लोक-शिक्षाके लिये स्वयं आचरण करके जीवको धर्म-शिक्षा देनेके लिये इतनी निठुराई कर रहे हो ! ठीक है ! निज-जनके प्राण लेनेसे क्या लाभ ? प्रभो ! एक बार श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी अवस्था आकर तो देखें ! उनकी क्या दशा हो रही है ? यदि प्राण लेनेकी ही इच्छा है तो खुलकर क्यों नहीं बोलते ? जिससे सारी ज्वाला सदाके लिये दूर हो जाती। प्रभो ! अधमाधम लेखककी धृष्टता, अपराध क्षमा करें। बड़े दुःखसे हृदय खोलकर तुम्हारे चरणोंमें अपने मनकी बात मैंने निवेदन की है, अपराध मत मान लेना।

●

ऊनत्रिंश अध्याय

प्रभुका जन्म-भूमि-दर्शन

पुन नवद्वीपे आइल आमार निमाइ।	मेरा निमाई पुनः नवद्वीप आया
धरिया राखह लोक किछु दोष नाइ।।	है, हे लोगो! उसको पकड़ रखो,
(शची देवीकी उक्ति) चै० मं०	इसमें कोई पाप नहीं है।

● प्रभुका कुलियामें आगमन

श्रीगौराङ्ग सुन्दरको नवद्वीप अन्धकारमय करके गृह त्याग किये पाँच वर्ष बीत गये। संन्यास-धर्मके नियमोंके अनुसार जननी और जन्मभूमि प्रत्येक संन्यासीके जीवनमें केवल मात्र एक बार दर्शनीय है। इसी कारण श्रीकृष्ण चैतन्य देव जननी और जन्मभूमिके दर्शन करने नवद्वीप आ रहे हैं—यह बात सर्वत्र प्रचारित हो चुकी है। वे गङ्गाजीके दूसरे तट पर कुलिया गाँवमें आये हुए हैं।

गङ्गास्नान करि प्रभु राढ़ देश दिया।	गङ्गा स्नान करके, राढ़ देश होते
क्रमे क्रमे उत्तरिला नगर कुलिया।।	हुए, क्रमसे कुलिया नगर पहुँचे।

जन्मस्थान देखिब ए सन्न्यासीर धर्म्म।	एक बार जन्म-स्थान देखना
नवद्वीप निकटे गेला एइ तार मर्म्म।।	संन्यासीका धर्म है। वे नवद्वीपके
—चै० मं०	निकट गये, इसमें यही रहस्य है।

नवद्वीप तथा उसके निकटके गाँवोंके लाखों-लाखों आदमी आकर प्रभुको घेरे हुए हैं। चारो ओर कोलाहल हो रहा है, कुलकी कुलवधुएँ सभी श्रीगौराङ्गके दर्शनोंके लिये चली हैं। हरिध्वनिसे दिशाएँ परिपूर्ण हैं। "जय! नवद्वीप-चन्द्रकी जय!—जय! श्रीगौराङ्गकी जय!"—सबके मुँह पर है। नदियाके आबाल-वृद्ध-वनिता गंङ्गा-तीर पर प्रभुके दर्शनोंके लिये आये हैं। उनके सारे दुःख-शोक दूर हो गये हैं।

प्रभु आगमन शुनि नदीयार लोक।
पुन लेउटिला सभे पासरिल शोक।।

प्रभुका आगमन सुन नदियाके लोग उलट पड़े और सभी शोकको भूल गये।

हा हा गोराचाँद बलि अनुरागे धाय।
कुलबधू धाय तारा पाछु नाहि चाय।।
--चै० मं०

हा गौरचन्द्र! बोलकर अनुरागसे दौड़े। कुल-बधुएँ भी दौड़ीं, वे पीछे नहीं ताकतीं।

● शची माता और विष्णुप्रियाजीका प्रभुके दर्शनार्थ निर्गमन

शची माता और श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने यह शुभ सम्वाद पाया है। शची देवीके आनन्दकी सीमा नहीं है। वे आनन्द-विह्वल होकर ऊपर सिर किये चल पड़ी हैं। वे बेखबर होकर चली जा रही हैं--

विह्वल चेतन शची धाय ऊर्ध्व मुखे।
ए भूमि आकाश जार डुबियाछे शोके।।
--चै० मं०

बहुत दिनोंके बाद आज निमाई चाँदका मुख देखेंगी--इस आनन्दसे शची माताका हृदय नाच रहा है। निमाई चाँदका मुँह उन्होंने बहुत दिनोंसे नहीं देखा है। निमाई चाँदको दुःखिनी माता याद आवेगी, माताको देखने या दर्शन देने वे फिर नवद्वीपमें आवेंगे--ऐसी आशा शची देवीने कभी नहीं की थी। श्रीगौराङ्गके दर्शन करनेके लिये दलके दल नदिया-वासी गंङ्गा तीरकी ओर जा रहे हैं। नवद्वीपके सब लोग इकट्ठे हो गये हैं। रास्ता-घाट जनाकीर्ण है। नदियाके पथपर मानो जन-समूहका स्रोत बह चला है। रास्ता मिलना कठिन है।

पथ नाहि पाय केह लोकेर गहने।
वन जल भाङ्गि जाय प्रभुर दर्शने।।
--चै० भा०

लोगोंकी भीड़के कारण रास्ता नहीं मिलता, वन और जलको चीरते हुए सब प्रभुके दर्शनको जा रहे हैं।

वृद्धा शची देवी पुत्र-वधूको साथ लेकर गङ्गा-स्नानके बहाने उसी जन-समूहके स्रोतमें नदियाके पथपर बाहर निकली हैं। सहस्रों आदमी बातें कर रहे हैं कि प्रभु जननी और जन्मभूमिके दर्शन करने आये हैं, वे स्वयं

आकर जननीको दर्शन देंगे। परन्तु शची देवीको यह विश्वास नहीं हो रहा है। आशाके ऊपर निर्भर हो वे घर पर न रुक सकीं। श्रीमती विष्णु-प्रिया देवीको लेकर इस जन-स्रोतमें बाहर निकली हैं। श्रीमती अब पूर्ण युवती हो गयी हैं। इस जनताकी भीड़में उनको लेकर रास्तेमें निकलना बड़ा ही दुःसाहसका कार्य है। शची देवी इसको खूब जानती हैं। जान-बूझकर वे क्यों इस दुःसाहसके कार्यमें पड़ रही हैं, इसका एक तात्पर्य है। संन्यासीके लिये स्त्रीका मुँह देखना निषिद्ध है, इस कारण स्त्री क्यों संन्यासी पतिके चरण-दर्शनके सुखसे वञ्चित रहे? वृद्धा शची देवी जान-बूझकर श्रीमतीजीको साथ ले जा रही हैं। वृद्धाके मनमें भय है कि कहीं निमाई चाँद जन्मभूमि और जननीके दर्शन करके ही न भाग जाय और अनाथिनी विष्णुप्रिया अपने पति देवताके श्रीचरणोंके दर्शनसे वञ्चित रह जाय, यह सोचकर ही वे इस दुःसाहसके कार्यमें प्रवृत्त हुई हैं। साथमें प्रभुके पुराने सेवक ईशान हैं। वे सबके आगे चल रहे हैं। श्रीमतीजी सासका हाथ पकड़कर चल रही हैं। वृद्धाके एक हाथमें एक लाठी है। ईशान और शची देवीके बीचमें श्रीमतीजी हैं। उनकी दोनों आँखें सासके दोनों पैरों पर लगी हैं। अन्य किसी ओर उनकी दृष्टि नहीं है। वृद्धा सासके दुःखको देखकर बीच-बीच में श्रीमतीजी अपने अङ्गके ऊपर शची देवीका समस्त भार ले लेती हैं। अधिक जनसमूहको देखते ही रास्तेमें किनारे कुछ देर खड़ी होकर वे फिर चलने लगती हैं। परिचित आदमीको देखते ही श्रीमतीजी लज्जासे घूँघट और खींच लेती हैं।

● गङ्गा-पारसे प्रभुके दर्शन

घरसे बाहर होकर इस प्रकार लोगोंकी भीड़ ठेलते-ठेलते सारा रास्ता चलकर तीनों जने गङ्गाके घाटपर आये। एक ऊँची जगहपर खड़े होकर उन्होंने देखा कि गङ्गाके इस पार और उस पार पिपीलिकाओंकी पंक्तिके समान जन-स्रोत उमड़ा रहा है और उसके कलरवसे दिगन्त कम्पित हो रहा है। लाखों-लाखों नर-नारियोंके मुँह पर केवल एक ही बात है। लाखों-लाखों नेत्रोंका एक ही लक्ष्य है। उस पारके लोगोंमें स्त्रियोंकी संख्या कम है। कारण यह है कि कुल-ललनाएँ गङ्गाको पार करके उस पार नहीं जा सकतीं। नदियाके सब लोग गङ्गातट पर आये हैं। महती नदिया नगरी जन-शून्य

हो गयी है। बाल-वृद्ध, युवक-युवतियाँ, सब गङ्गाके तीरपर आकर प्रभुके दर्शनोंकी लालसामें खड़े हैं। धूपमें कुछ भी कष्ट नहीं जान पड़ता। जनताके बीचसे कोटि-कोटि कण्ठोंसे एक स्वरमें 'जय! नवद्वीप चन्द्रकी जय', 'जय! श्रीकृष्ण-चैतन्य देवकी जय', 'जय! श्रीगौराङ्गकी जय!' इत्यादि जय-ध्वनियाँ हो रही हैं। कोटि-कोटि मुखोंसे निकली गगन-भेदी जय-ध्वनिसे पुण्य-सलिला भागीरथीकी उच्छलित तरङ्गें सुर-लयमें श्रीगौर भगवान्‌की जय-गीति गाते-गाते आकुल प्राणसे आनन्दपूर्वक नृत्य कर रही हैं। कल-नादिनी सुरसरिकी उस उद्वेलित तरङ्ग-भङ्गिमाके आनन्द-नृत्यका दर्शन करके अगणित दर्शक-मण्डलीके प्राणोंमें एक अभिनव आनन्दोच्छ्वास उठ रहा है, जिसका वर्णन नहीं किया जा सकता। उस आनन्दकी कोई तुलना नहीं है। लाखों-लाखों नर-नारियोंके बीच खड़े होकर प्रभुकी माता और गृहिणी इस अपूर्व प्रेमानन्दका अनुभव और उपभोग कर रही हैं। प्रभुकी आकर्षण शक्तिकी जो अद्‌भुत क्षमता है, वह वर्णनातीत है। ठाकुर श्रीवृन्दावनदासने लिखा है—

कुलिया आकर्षण ना जाय वर्णन।
केवल बलिते पारे सहस्र वदन॥

—चै० भा०

इस कार्यमें श्रीगौर भगवान्‌ने अपनी आकर्षणी शक्तिकी पराकाष्ठा दिखलायी है। जो सर्वचित्ताकर्षक है, वही श्रीकृष्ण है। श्रीगौर भगवान् यहाँ सर्व जीवोंके चित्तको आकर्षण करके गङ्गातट पर खींच लाये हैं। अतएव वे ही श्रीकृष्ण हैं। 'नौमि कृष्णस्वरूपं'—इसी कारण महाजन लिख गये हैं—

हेन आकर्षिल मन श्रीचैतन्यदेवे।
एहो कि ईश्वर बिने अन्येते सम्भवे॥
—चै० भा०

इस प्रकार श्रीचैतन्य देवने सबका मन आकर्षित कर लिया। क्या यह ईश्वरके विना और किसी द्वारा सम्भव है?

● गौराङ्ग-अवतारकी श्रेष्ठता

एक संन्यासीके रूप और गुणसे आकृष्ट होकर इतने लक्ष नर-नारियोंका एकत्र समावेश साधारण बात नहीं है। श्रीकृष्ण-चैतन्य देव संन्यास-वेशमें

श्रीभगवान्‌के षड्-गुणोंमें श्रेष्ठ वैराग्य गुणका पूर्ण विकास दिखला गये हैं। श्रीभगवान्‌का वैराग्य ऐश्वर्यमें परिगणित होता है। श्रीभगवान्‌के वैराग्यका दर्शन करनेके लिये सारे जीव दलके दल आकर गङ्गाके तटपर एकत्रित हो गए हैं। षडैश्वर्य-पूर्ण श्रीगौर भगवान्‌की संन्यास-मूर्त्ति वैराग्यका पूर्ण विकसित रूप है।

ऐश्वर्यस्य समग्रस्य वीर्यस्य यशसः श्रियः।
ज्ञानवैराग्ययोश्चैव षण्णां भग इतीङ्गना ॥
—श्रीविष्णु पुराण ६।५।७४

श्रीगौराङ्ग अवतारमें श्रीभगवान् अपने वैराग्यके गुणका पूर्ण विकास दिखलाकर श्रीभगवान्‌के प्रति जीवके स्नेह और प्रीतिके बन्धनको दृढ़ कर गये हैं। दूसरे अवतारोंमें श्रीभगवान्‌के वैराग्य गुणका विकास दृष्ट नहीं होता है। अतः कलि-विलष्ट जीवोंके दुःखसे कातर होकर श्रीगौर भगवान्‌ने घर-द्वार छोड़कर संन्यास ग्रहण किया और जीवोंके मङ्गलके लिये वैराग्यकी पराकाष्ठा दिखलाकर उन्हें श्रीभगवान्‌के सर्वश्रेष्ठ गुणका परिचय देना पड़ा। कलियुगके अधम पातकी लोगोंके उद्धारके लिये इतना ही बाकी था। कलिग्रस्त जीवोंके दुःखसे श्रीगौर भगवान्‌का करुण हृदय उन्मथित हो गया था। इसी कारण जीवोंका उद्धार करनेके लिये उन्होंने भिखारीके वेशमें द्वार-द्वार भिक्षा करके भवरोगकी महौषध हरिनाम बाँटी थी। नव यौवनमें तरुणी भार्याके प्रेम-पाशको छिन्न-भिन्न करके, वृद्धा जननीके हृदयमें शेल मारकर, प्राणापेक्षा प्रियतम अन्तरङ्ग भक्तोंको अश्रु-प्रवाहमें निमज्जित कर, शची देवीके सोनेके संसारको मिट्टीमें मिलाकर संन्यास-धर्मका आश्रय लिया था। इसी कारण श्रीगौराङ्ग अवतार सर्वश्रेष्ठ अवतार है, इसी कारण श्रीगौर भगवान्‌के नामकी इतनी महिमा है।

सर्व्व अवतार-सार गोरा-अवतार।	सब अवतारोंमें श्रेष्ठ श्रीगौराङ्ग
एमन दयाल प्रभु ना देखिये आर ॥	अवतार है। ऐसे दयालु प्रभु और कहीं नहीं दीखते।

● शची माता और विष्णुप्रियाजीके भाव

पहले वर्णन आ चुका है कि इस विशाल जन-समूहके बीचमें प्रभुके अति निकट सम्पर्कके दो आत्मीय हैं—प्रभुकी माता और गृहिणी। दोनोंके

ही हृदयमें आज बड़ा आनन्द है। शची देवी सोचती हैं--उनका पुत्र एक साधारण संन्यासी नहीं है। उनके पुत्रके दर्शनोंकी लालसामें लक्ष कोटि नर-नारियाँ आहार-निद्रा त्यागकर उद्ग्रीव हो रहे हैं और हृदयके आवेगसे, उनके पुत्रके प्रेमाकर्षणसे गृह-कार्य छोड़कर इतनी देरसे गङ्गाके तीर पर आकर उत्सुक चित्तसे खड़े हैं। कुल-बालाएँ गोदके बच्चोंको घर पर रखकर लाज-शर्मका बाँध काटकर पुरुषोंके साथ एक जगह ठेला-ठेली करके, खड़ी होकर उनके पुत्रके चरणोंके दर्शनोंकी कामनासे एक टक दूसरे पारकी ओर ताक रही हैं। उनके पुत्रके परम पवित्र नामके गानमें उन्मत्त होकर बहुतसे लोग भुजाएँ उठाकर आनन्दसे नृत्य कर रहे हैं। अपना सर्वस्व भूलकर उनके पुत्रको वे लोग सर्वान्तःकरणसे आत्म-समर्पण कर रहे हैं। इससे बढ़कर शची देवीके लिये और सौभाग्यकी बात क्या हो सकती है? यह सोचकर शची देवीके मनमें बड़ा आनन्द हो रहा है। यहाँ वे पुत्रके ऐश्वर्य-गुण पर मुग्ध हो रही हैं।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी देखती हैं--"उनके प्राणवल्लभ जगतके जीवन हैं, बहु-जन-वल्लभ हैं, सर्व जीवोंकी आराध्य वस्तु हैं, साधन-धन हैं। ये लक्ष-कोटि नर-नारियाँ जो गङ्गाके दोनों पार एकत्रित हुए हैं, वे उनके प्राण-वल्लभके केवल एक बार दर्शनकी लालसासे। इसके सिवा वे और कुछ नहीं चाहते। एक बार प्रभुके दर्शन पाकर ही वे कृतार्थ हो जायँगे। आहा! उनके प्राण-बल्लभको कैसे गम्भीर प्रेम और प्रीतिके बन्धनसे इन्होंने बाँधा है! कैसी प्रेममयी दृष्टिसे ये लोग उनको देखते हैं!" श्रीमतीजी अपने साथ इन लाखों नर-नारियोंकी एक-एक करके मन-ही-मन तुलना कर रही हैं और सोच रही हैं कि अपनेमें और इस अगणित जीव-समूहमें तो कोई भेद नहीं है। इन लाखों-लाखों जीवोंका जो लक्ष्य है, उनका अपना भी वही लक्ष्य है। उन लोगोंके मनकी जो कामना है, वही कामना उनकी अपनी भी है। वे लोग जिस इच्छासे प्रेरित होकर गङ्गाके तटपर इकट्ठे हुए हैं, वह स्वयं भी इसी उद्देश्यसे घरसे बाहर हुई है। उसके स्वामी जगतके स्वामी हैं, इससे बढ़कर स्त्रीके लिये और सौभाग्यकी बात क्या हो सकती है? इस प्रकार विचार करनेसे श्रीमतीजीके मनमें बड़ा सुख हो रहा है, आनन्दका स्रोत बह रहा है। इस आनन्दके बीच कभी-कभी नैराश्यकी

छाया ग्राकर श्रीमतीजीके ग्रनिन्दित मुख-कमल पर पड़कर उसको म्लान कर देती है। तब वे म्रियमाण हो जाती हैं। वह क्या है? ये लाखों नर-नारियाँ सभी प्रभुके दर्शन ग्रौर सेवाके ग्रधिकारी हैं, केवल मात्र वे स्वयं ही इससे बञ्चित हैं। यह बात याद पड़ते ही श्रीमतीजीका मुँह सूख जाता है। लक्ष-कोटि नर-नारियोंके साथ तुलनामें श्रीमतीजी ग्रपनेको ग्रपराधिनी समझकर मन-ही-मन ग्रसह्य क्लेश पाती हैं। देवीके इस मनस्तापको दूर करनेका उपाय नहीं है। जीवन भर उन्होंने इस दारुण क्लेशको सहा ग्रौर ग्रपने ग्रश्रु-जलसे कलि-क्लिष्ट जीवोंके सारे पापोंको धो दिया है।

● कलिग्रस्त जीवोंका उद्धार करनेवाली जगन्माता

कलिग्रस्त जीवोंका उद्धार करनेवाली जगन्माता श्रीमती विष्णुप्रिया देवी हैं। श्रीगौराङ्ग ग्रवतारमें श्रीगौर भगवान्ने ग्रपनी ग्रंकवासिनी महालक्ष्मी स्वरूपा श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके ग्रश्रुजलसे कलि-क्लिष्ट जीवोंका पाप धोकर ग्रपने पतित-पावन नामको सार्थक किया है। जगज्जननी श्रीमती विष्णु-प्रिया देवी पतितोद्धारिणी ग्रौर पतित-पावनी हैं। माँ! इस जीवाधमके ऊपर एक बार कृपा-कटाक्ष करो। तुम्हारी कृपा हुए बिना पापोंका क्षय सम्भव नहीं है। तुम्हारे प्राण-वल्लभ श्रीगौराङ्ग-सुन्दरकी कृपाकी प्राप्ति ग्रति दुर्लभ है। माँ पतित-पावनी! पतित-ग्रधमका उद्धार करके जगन्माता पतितोद्धारिणी नामको सार्थक करो। तुम्हारी ग्राश्वासनवाणी सुन पा रहा हूँ, इसी कारण एक दिन हृदयके ग्रावेगमें मैंने लिखा था——

प्रेम ग्रवतार गौर ग्रामार **प्रेममयी विष्णुप्रिया।** **मिलियाछे भाल मूरति युगल** **माखामाखि सुधा दिया।।**	प्रेमावतार हमारे गौराङ्ग ग्रौर प्रेममयी विष्णुप्रिया ग्रच्छे मिले हैं। मानो सुधारसमें बोरी युगल मूर्त्तियाँ हैं।
युगल-मिलन प्रेम ग्रावाहन **पीरितेर छड़ाछड़ि।** **कृपानिधि गोरा प्रेम रसे गड़ा** **तनुखानि मनोहारि।।**	युगल-मिलन प्रेमका ग्रावाहन है, प्रीतिका विस्तार है। कृपानिधि गौराङ्ग मानो प्रेम-रससे गढ़े गये हैं, उनका शरीर ग्रत्यन्त मनोहर है।

प्रेममयी देवी पीरितेर छबि
आँका जेन तुलि दिया।
अमियार खनि हृदयेर मणि
आछे जेन जड़ाइया॥

विष्णुप्रिया देवी प्रेममयी हैं, मानो प्रीतिका चित्र तूलिकासे चित्रित किया हो। वे मानो अमृतकी खान हैं तथा हृदयकी जड़ी हुई मणि हैं।

तरल तरङ्गे चलियाछे रङ्गे
प्रेमधारा अविरत।
मिलिया मिशिया चले उछलिया
लहरी-लीलार मत॥

चञ्चल तरङ्गोंकी तरह मतवाली चालसे प्रेमधारा अविरत बहती है। परस्पर मिलकर उछलती हुई लीलाकी लहरके समान चल रही है।

विश्व विधाता जगतेर माता
मिलियाछे एक सङ्गे।
भावना कि आर पापी दुराचार
हास' खेल' सब रङ्गे॥

विश्वके विधाता तथा जगन्माता एक साथ मिले हैं। अब क्या चिन्ता है? पापी दुराचारी! सब आनन्दसे हँसो-खेलो।

पिता देबे कोल बल हरिबोल
माये दिबे चुमो मुखे।
कि भय तोदेर मर जगतेर
भुले जाओ शोक दुःखे॥

पिता तुम्हें गोदमें लेंगे। बोलो 'हरि बोल'। माता तुम्हारा मुख चूमेगी। तुम्हें अब मृत्युलोकका डर क्या है? दुःख-शोकको भूल जाओ।

जगत-जननी विष्णुप्रिया धनि
पतितेर पिता गोरा।
पातकी तराते एसेछे धराते
आय सबे आय तोरा॥

जगत-जननी विष्णुप्रिया और पतितोंके पिता गौरचन्द्र धन्य हैं। ये लोग पातकी जनको तारनेके लिये पृथ्वी पर आये हैं। तुम सब आओ-आओ।

सङ्गे लये जास् पापी हरिदास
पतित-पावनी पाशे।
बलिस् तोदेर नदेर चाँदेर
पदरज दिते दासे॥

इस पापी हरिदासको भी अपने साथ-साथ पतित-पावनीके पास ले चलो। तुम लोग अपने नदियाके चाँदको कहना कि इस दासको भी पद-रज प्रदान करें।

● प्रभु-दर्शन-दृश्य

नवद्वीप वासी असंख्य नर-नारीवृन्द इस पार प्रभुके दर्शनोंकी प्रतीक्षामें खड़े हैं, सबकी दृष्टि गङ्गाके उस पार एक ही तरफ है। इसी समय एक

विषम कलरव उठा—"यही प्रभु हैं, यही प्रभु हैं!" कहती हुई उस असीम जन स्रोतमेंसे एक महान ध्वनि उठकर दिगन्तमें व्याप्त हो गयी। वे अगणित नर-नारी वृन्द—'जय! श्रीगौराङ्गकी जय!', 'जय! नवद्वीपचन्द्रकी जय!' गाते-गाते आनन्दसे विह्वल होकर नृत्य करने लगे।

श्रीश्रीकृष्ण-चैतन्य देवका श्रीअङ्ग साढ़े चार हाथ लम्बा था। लाखों लोगोंके बीचमें खड़े होने पर भी उनको उनके भक्तवृन्द पहचान सकते थे। कृपामय प्रभु गङ्गाके दूसरे पार कुलिया ग्राममें भक्तवृन्दके मनोरञ्जनके निमित्त लोगोंकी उस भारी भीड़में आकर खड़े हैं। उस पारके सब लोग प्रभुके दर्शन करके आनन्दसे हरि-ध्वनि कर रहे हैं। इस पारके लोग भी प्रभुके दीर्घ आकृतिके श्रीअङ्गका दर्शन करके कृतार्थ हो रहे हैं। प्रभुके मुण्डित श्रीमस्तकको देखकर सभी आकुल होकर क्रन्दन कर रहे हैं। एक सिर मुंडाये, दीर्घाकार संन्यासी गङ्गाके तीर दण्ड-कमण्डलु हाथमें लेकर जन-स्रोतके बीचमें खड़े हैं। उनको घेरकर उन्मत्त भावसे लाखों-लाखों आदमी आनन्दित हो नृत्य कर रहे हैं और उनकी जय-ध्वनिसे दिशाएँ गूंज रही हैं।

यह अपूर्व दृश्य शची देवी और श्रीमतीके नयन-गोचर हुआ। श्रीगौराङ्गको सिर मुंड़ाये देखकर शची देवी और श्रीमतीजी हा-हाकार करके क्रन्दन करने लगीं। दूरसे भली भाँति नहीं देख पा रही हैं। परन्तु लोग बोल रहे हैं—"वह प्रभुका मुंड़ा सिर दीख पड़ता है।" यह सुनकर शची देवी और श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके हृदयमें शेल चुभ रहा है, दोनों चुपचाप रो रही हैं।

● श्रीमतीजीकी स्थिति

कुछ देरके बाद प्रभु आँखोंसे ओझल होकर अदृश्य हो गये। सब लोग हताश होकर अपने घरकी ओर लौट चले। जन-स्रोतके कम होने पर धीरे-धीरे शची देवी और श्रीमतीजी ईशानके साथ घर लौटीं। घर आकर सास और पुत्र-वधू मिलकर हृदयके आवेगसे बहुत देर तक रोती रहीं। श्रीबलरामदास रचित श्रीमतीजीकी उक्तिका एक अति सुन्दर पद यहाँ

उद्धृत किया जाता है। गङ्गाके तीर खड़ी होकर श्रीमतीजी सासको सम्बोधन करके कहती हैं--

ओ मा ! आमारे धर धर ! केन वा आनिले सुरधुनीतीरे, ओपारे कुलिया देख नयन भरे, लक्ष लक्ष लोक हरि हरि बले, केन मा जननि ! बल आमारे !	अरी माँ ! मुझे पकड़ो, पकड़ो ! यहाँ गङ्गाके किनारे मुझे क्यों लायीं ? उस पार कुलियाकी ओर आँखें भरकर देखो, लाखों-लाखों आदमी 'हरि-हरि' क्यों बोल रहे हैं ? माँ ! मुझे बतलाओ।
लक्ष लक्ष लोक हरि ब'ले नाचे, बुझि तोर पुत्र ओखाने विराजे, उहू मरि मरि देखिवारे नारि ए दुःख आमार कहिब कारे।	लाखों-लाखों आदमी हरि-हरिबोल-कर नाचते हैं। जान पड़ता है तुम्हारे पुत्र वहाँ विराज रहे हैं। आह ! कितना दुर्भाग्य है कि मैं देख नहीं सकती। मेरा अपना यह दुःख किससे कहूँ ?
पापी तापी ह'लो श्रीचरण-भोगी, जगते विष्णुप्रिया से वियोगी। दासीरे दण्ड दिवार लागि एइ अवतार।	पापी और तापी लोग उनके श्रीचरणोंका उपभोग कर रहे हैं, संसारमें एक विष्णुप्रिया ही वञ्चित है। इस दासीको दण्ड देनेके लिये ही यह अवतार है।
चल चल मागो ! आमाय निया चल, लुकाइया चल झाँपिया अञ्चल, ऐ जे देखा जाय दीघल अङ्ग ऐ त आमार प्राणनाथ श्रीगौराङ्ग।	माँ ! चलो, चलो, मुझको ले चलो। अपने अञ्चलकी आड़में छिपा-कर ले चलो। वह जो लम्बा शरीर दीख पड़ता है, वही तो मेरे प्राणनाथ श्रीगौराङ्ग हैं।
सोणार अङ्गेते कौपीन परेछे, चिर दिन दुःख अवधि पेयेछे, तोमार मायाय मा आवार एसेछे, बाड़ी डाकि आन।	सोनेके समान अङ्गमें कौपीन पहने हुए हैं। चिर दिनके लिये दुःखको वरण किया है। तुम्हारे स्नेहके कारण फिर आये हैं, उन्हें घर बुला लाओ।

बलराम दासेर विदरे बुक
जीवेर लागिया प्रभुर एइ दुःख
धिक् धिक् धिक् जीव तोरे धिक्
हेन दुःख देह चिरबन्धु-जने ।।

बलरामदासका हृदय विदीर्ण हो रहा है, जीवके कल्याणके लिये प्रभु यह दुःख उठा रहे हैं, धिक्कार है ! धिक्कार है ! ऐ जीव तुझको धिक्कार है ! तू अपने चिरबन्धु गौराङ्गको इतना दुःख दे रहा है !

● माता और प्रियाजीके घर लौटने पर

शची देवीकी अवस्था इस समय ७२ वर्ष है, वे बड़े कष्टसे चल पाती हैं। गङ्गातटसे घर लौटकर वे भूतल पर सोयी हैं और उठ नहीं पाती हैं। श्रीमतीजी सासके पास बैठी रो रही हैं। सब कह रहे हैं कि प्रभु माताके दर्शन करने आये हैं, परन्तु वे तो नवद्वीपमें नहीं आये। अतएव सभी प्रभुके दर्शनोंकी लालसामें उत्कण्ठित हैं। वृद्धा शची देवी--"निमाई रे ! तू कहाँ है रे ? एक बार सामने आकर प्राणको जुड़ा दे रे"--कहकर उच्च स्वरसे रुदन कर रही हैं। गङ्गाके तटसे लौट आनेका उनका मन न था। केवल एक मात्र श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके लिये शची देवीको घर लौटना पड़ा। पुत्र-बधू साथ न होतीं तो वे गङ्गाके उस पार जाकर निमाई चाँदको पकड़ लातीं। उनका पुत्र घर आकर उनको दर्शन दे जायगा--इस बातमें शची देवीको बिल्कुल ही विश्वास नहीं होता। पुत्रके लिये वे पागलिनी होकर बाह्य ज्ञान-शून्य हो गयी हैं। वे पुत्र-बधूसे पूछती हैं--"मेरा बेटा निमाई क्या तेरे घरमें सोया है ? एक बार उसे बुला तो दे।" श्रीमतीजी यह बात सुनकर स्थिर न रह सकीं, उनका मस्तिष्क घूमने लगा। वे शोकसे व्याकुल हो गयीं और धूलमें पड़कर पछाड़ खाकर क्रन्दन करने लगीं। शची देवीने जब पुत्र-बधूकी यह अवस्था देखी तो उनको अपने भ्रमका ज्ञान हुआ तथा श्रीमतीजीके मनमें व्यर्थ ही कष्ट पैदा करनेके कारण कुछ लज्जित होकर कहने लगीं--"बेटी ! मेरी भूल हो गयी है। वृद्धा हो गयी हूँ। मन ठीक नहीं। क्या कहना है, क्या कह जाती हूँ। मेरा माथा खराब है।"

शची देवी पुत्रका मुख देखनेकी लालसामें छटपटा रही हैं। अधिक विलम्ब सह्य नहीं हो रहा है। श्रीमतीजीको अङ्कमें लेकर वे कहती हैं--

"बेटी ! तुम घरमें सुस्थिर रहो। मैं उस पार जाकर निमाई चाँदको लेकर घर आती हूँ। मेरे गये बिना जान पड़ता है वह नहीं आयेगा।" शची देवी इतना कहकर फिर सोचती हैं, मेरे जानेसे यदि मुझसे भेंट करके ही बेटा भाग जायगा तो अभागिनी विष्णुप्रियाके भाग्यमें स्वामीके दर्शनोंका सुख घटित नहीं होगा। मेरे न जाने पर निमाई चाँद अवश्य आयेगा। मेरा निमाई बड़ा मातृभक्त बालक है। इतनी दूर आकर मुझसे भेंट किये बिना क्या वह जा सकता है? इस प्रकार सोचकर वृद्धा शची देवी अपने मनको सान्त्वना देती हैं। परन्तु श्रीमतीजी अपने मनको किसी भी प्रकार आश्वासन नहीं दे पातीं। वे सोचती हैं, उसीके कारण प्रभु नवद्वीपमें आकर माताको दर्शन नहीं दे रहे हैं। वही वृद्धाके पुत्र-मुख-दर्शनके सुखमें बाधक हो रही हैं। वह घर पर न होती तो उसके संन्यासी स्वामी अनायास ही नवद्वीपमें आकर माताके साथ भेंट करते। कहीं संन्यासीको स्त्रीका मुख देखना न पड़े और धर्मका नाश न हो, इसी भयसे वे आ नहीं पाते हैं। यह ज्ञात हो जाता तो वे पिताके घर चली जातीं--

आमारे देखिले यदि धर्म्म नष्ट हय।
आमि नय रहिताम बापेर आलय।।
--बलराम दास (महात्मा शिशिर कुमार घोष)

श्रीमतीजी कभी-कभी सोचती हैं कि उनके भाग्यमें जो वदा है, उसका तो कोई उपाय ही नहीं है। उनके कारण वृद्धा सासको क्यों क्लेश उठाना पड़े? उन्होंने पिताके घर जानेके लिये साससे पूछा। मनकी गुप्त बात भी कहे बिना उनसे न रहा गया। यह सुनकर शची देवीके मनमें बहुत सन्ताप हुआ। पुत्र-वधूका गला पकड़कर रोते हुए बोलीं--"बेटी ! तुम पितृगृह चली जाओगी, तो मैं किसको लेकर रहूँगी? तुम्हीं इस समय मुझ अन्धीकी लाठी हो। तुमको देखकर मैं निमाई चाँदके दुःसह शोकको सह लेती हूँ। मेरा निमाई तुमको भी दर्शन देगा।" श्रीमतीजी फिर और कुछ न बोल सकीं।

●

त्रिंश अध्याय

प्रभुका नवद्वीपमें आगमन

शचीर आङ्गिना उजल करिया। केगो तुमि आछ, द्वारे दाँड़ाइया।।	शचीके आङ्गनको उज्जवल करके तुम द्वार पर कौन खड़े हो जी!
दण्ड कमण्डलु, धरियाछ करे। परेछ कौपीन, जीवोद्धार तरे।।	दण्ड-कमण्डलु हाथमें धरे हो, जीवोद्धारके लिये कौपीन पहने हो।
के गो तुमि यति प्रशान्त मूरति। स्थिर नयने चाह् कार प्रति।।	हे प्रशान्त मूर्ति यति! तुम कौन हो? स्थिर नयनोंसे किसकी ओर देखते हो?
बहितेछे वारि उछलि नयन। भासिया वक्ष तितिछे वसन।।	नयनोंसे उछलकर जल बह रहा है और वक्ष:स्थलसे वहकर वस्त्र भिजा रहा है।
बुझेछि बुझेछि तुमि गौरहरि। नदीयार चाँद नदीया-विहारी।।	समझा समझा, तुम गौर हरि हो, नदियाके चाँद नदिया-बिहारी हो।
देखिते जननी जनम - भूमि। नीलाचल ह'ते आसियाछ तुमि।।	जननी और जन्मभूमि देखने नीलचलसे तुम आये हो।
चेये देख प्रभु कि दशा मायेर। शुन शुन ओइ रोल रोदनेर।। —ग्रन्थकार	आँख उठाकर देखो! प्रभु! माँकी कैसी दशा है? उधर सुनो रोनेकी आवाज।

● माताका स्वप्न, प्रियाजीकी छटपट और काञ्चनासे वार्तालाप

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको शची देवीकी बात सुनकर कुछ आश्वासन प्राप्त हुआ। कुछ देरके बाद काञ्चना आकर श्रीमतीजीके पास बैठ

गयीं, यह देखकर शची देवी निश्चिन्त होकर दूसरे घरमें जाकर सो गयीं। सोनेपर तन्द्रा आते ही स्वप्न देखा कि उनका निमाई चाँद द्वार पर खड़ा होकर उनको 'माँ' कहकर बुला रहा है। तुरन्त वृद्धाने झटपट उठकर बाहर द्वारपर जाकर देखा, कहीं कोई नहीं है। निराश होकर वे फिर घरमें जाकर सो रहीं। श्रीमती विष्णुप्रिया या काञ्चनाको इसकी कोई खबर नहीं थी।

प्रिय सखी काञ्चनाको देखकर श्रीमती रो पड़ीं और अपने मनकी बात खोलकर बताई, जिससे मन कुछ शान्त हुआ। सखीके गले लिपटकर श्रीमतीजी चुपचाप रुदन कर रही हैं और कहती हैं––"सखि! मैं और क्या बताऊँ? तुम तो सब कुछ जानती हो। इस अभागिनीके कारण ही प्राणवल्लभ गृह-त्यागी हुए हैं। मेरे ही कारण वे इतनी दूर आकर भी माताको दर्शन देनेमें हिचकिचा रहे हैं। मेरे समान पापिनी संसारमें और कौन है? मेरे लिये मरना ही मङ्गलप्रद है।" अन्तःकरणके भीतरसे मानो कोई देवीसे कह रहा है––"ऐसी बात मुँहसे न निकालो, मरने पर तो सब लुप्त हो जायगा, आशा भी नष्ट हो जायगी।" तब फिर श्रीमतीजीने काञ्चना सखीसे कहा––"नहीं सखी, मैं नहीं मर सकूँगी। मरनेके बाद तो प्राणवल्लभकी गुण-गाथा और लीला-कथा भी नहीं सुन पाऊँगी। उनके श्रीचरणोंके दर्शन न सही, उनकी कथा सुनकर ही मैं कृतार्थ हो जाती हूँ। उनका मधुमय नाम सुनकर मैं कितनी सुखी होती हूँ! मैं इस सुखको छोड़कर मर नहीं सकूँगी। सखि! सखि! मेरा मरना नहीं होगा।" ग्रन्थकार-रचित श्रीमतीजीकी उक्तिका एक पद यहाँ उद्धृत किया जाता है––

(१)

(सखि !)
गौर-विरह पयोधि, किसे हब पार,
ताइ भावि निरवधि।
दिन दिन करि, बरिष गोंयायनु,
ना मिलल गौर-निधि।।
गौर गौर करि जनम बहि गेला,
दरशन नाहि भेले।

[१]

(सखि!)
गौर-विरह-सागरको कैसे पार करूँगी? यही मैं निरन्तर सोचती हूँ।
एक-एक दिन करके वर्ष बीत गये, लेकिन गौर-निधि न मिले।
गौर-गौर कहते-कहते जन्म बीत गया, परन्तु दर्शन नहीं हुए।

सुधु हिया दगदगि, हलो मोर सार पराणे विधिल शेल ।।	मेरा हृदय जलकर राख हो गया, मेरे प्राणोंमें शेल चुभ गया ।
मरणे कि पाब तारे । गौर-विरह-नदी, बहे खर धार, कि करि जाइब पारे ।।	क्या मरकर मैं उसे पा जाऊँगी ? गौर-विरह-नदीकी धार तीव्रतासे बह रही है, मैं कैसे पार जाऊँगी ?
(२)	[२]
सखि ! मरिते त पारिब ना । कि जानि यदि वा भुलि गोरा रूप भषम हइबे साधना ।।	हे सखि ! मर तो मैं नहीं सकती । (मरनेसे) कदाचित मैं गौर-रूप भूल गयी तो सारी साधना नष्ट हो जायगी ।
(ओगो) मरिले आमि जे काँदिते पाब ना साधिते पाब ना गौर ।	अरी ! मर जाने पर न तो मैं रो सकूँगी और न गौरकी साधना कर सकूँगी ।
काँदिया काँदिया जा' किछु क'रेछि सकलि जाइबे मोर ।।	रो-रोकर जो कुछ किया है, वह सब मेरा नष्ट हो जायगा ।
(३)	[३]
सखि ! चाहि ना आमि मरण । (ओगो) मरिले जे आमि पूजिते पाब ना गौरधनेर चरण ।।	हे सखि ! मैं मृत्यु नहीं चाहती । मरने पर मैं अपने गौर-धनके चरणोंकी पूजा न कर पाऊँगी !
चिर दिन आमि काँदिया साधिव दीरघ जीवन धरिया ।	मैं दीर्घ जीवन प्राप्त करके सदा रोते-रोते साधना करूँगी ।
निशि दिन पिब, पियाइब आर गौर - विरह अमिया ।।	रात-दिन गौर-विरहरूपी अमृत पीऊँगी और पिलाऊँगी ।
बिनाइया गाब गौरगुण गान कान्दिया भासाब धरा ।	मैं विलाप करके गौर-गुण गान करूँगी और रो-रोकर भूतलको बहा दूँगी ।
(सखि !) गौर-विरह छाड़िते नारिब हबे ना आमार मरा ।।	सखि ! गौर-विरहको मैं छोड़ नहीं सकूँगी, मेरा मरना नहीं हो सकेगा ।

(४)	[४]
मरणेर सङ्गे यदि गौर-विरह जाय तबे आमि पारि मरिते।	मरने पर यदि गौर-विरह भी साथ-साथ रहे, तो मैं मर सकती हूँ।
ना पेलाम गोरा यदि, पेयेछि विरह तार नाहि पारि तारे छाड़िते ।। (ओगो सखि!) पारिब ना आमि मरिते।।	यदि मैंने गौराङ्गको नहीं पाया, तो उनके विरहको तो पाया है, उसे मैं छोड़ नहीं सकती । अरी सखि! मैं मर नहीं सकती!

काञ्चना श्रीमतीजीकी अति प्रिय मर्मी सखी हैं। श्रीमतीजी कोई भी बात सखीसे नहीं छिपातीं। हृदयकी सारी वेदनाएँ प्राण खोलकर सखीसे कह देती हैं। श्रीमतीजीके मनमें आज दारुण दुःख है, इसके कारणका पहिले उल्लेख हो चुका है। अपने प्राणवल्लभके श्रीमुखके दर्शनकी आशा अपने लिये असंभव समझकर सखी काञ्चनाको सम्बोधन करती हुई श्रीमतीजी कहती हैं--

सजनि ! अब कि हेरब गोरा मुख। गणि गणि माह, बरिष अब पूरल, इथे पुन बिदरये बुक।। तोमारे कहिये पुन, मरमक वेदन चित्त माहा कर विशोयास। गौर-विरह ज्वरे, त्रिदोष हइया जारे, ताहे कि औषध अवकाश।। --भुवनदास।	हे सजनि ! अब क्या गौर-मुख देख पाऊँगी ? महीने गिन-गिनकर वर्ष पूरा हो गया। इधर फिर हृदय फटा जा रहा है। तुमको मर्म वेदना फिर सुनाती हूँ, चित्तमें उस पर विश्वास करो। गौर-विरहके ज्वरमें त्रिदोष होकर (हृदय) जल रहा है, उसके लिये क्या कोई औषध और अवकाश है ?

काञ्चना श्रीमतीजीको समझाकर कहती हैं--"सखि ! तुम्हारे प्राणवल्लभने तुम्हारी माससे एक दिन कहा था--

किवा भक्त किवा विष्णुप्रिया किवा तुमि।
जे भजिबे कृष्ण तार कोले आछि आमि।।
--चै० मं०

अतएव सखि ! तुम सर्वदा श्रीकृष्णका भजन करो। तुम्हारे प्राणबल्लभ स्वयं आकर दर्शन देंगे। आओ, हम दोनों मिलकर माला गूँथें। देखो

कितने जूही, जाति और मालतीके पुष्प चयन करके लायी हूँ। सुन्दर माला गूँथकर आज श्रीकृष्णके गलेमें पहना दो। श्रीकृष्णके भजनमें ही तुम अपने प्राण गौराङ्गके दर्शन पाओगी, उनके उपदेशानुसार श्रीकृष्णका भजन करो।"

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने धीरेसे उत्तर दिया—

सखि हे! हाम इह कछु नाहि जानि।
गौर-चरण-युग विमल सरोरुह
हृदि करि अनुखण ध्यान॥
—भुवनदास

हे सखि! मैं यह कुछ नहीं जानती। गौरके युगल चरण विमल कमल हैं, उन्हींका हृदयमें निरन्तर ध्यान करती हूँ।

श्रीमतीजी बोलीं—"मैं अपने प्राणबल्लभ श्रीगौराङ्गके सिवा और किसीको नहीं जानती। वे ही मेरे श्रीकृष्ण हैं, वे ही मेरे भजन-धन हैं। मेरी स्वामि-भक्ति ही श्रीकृष्ण-भक्ति है।"

काञ्चना और कुछ न बोल सकीं। समझ लिया कि श्रीमतीजीके हृदयमें गौर-विरहानल प्रज्वलित हो उठा है। इस समय अन्य कोई बात उनके कानोंमें प्रवेश न करेगी। काञ्चना अत्यन्त चतुर हैं, तुरन्त अपनी बात पलट कर बोलीं—

"सखि! तुम्हारे प्राणबल्लभ ही तो स्वयं श्रीकृष्ण हैं। क्या तुम आज तक यह नहीं समझ पायी हो? दूसरेके सामने वे अपनेको गुप्त रख सकते हैं, तुम्हारे सामने नहीं रख सकते। इसी कारण गृहत्याग करनेके कुछ दिन पूर्व उन्होंने तुमको अपना स्वरूप दिखाया था। तुम उस चतुर्भुज शङ्ख-चक्र-गदा-पद्मधारी श्रीभगवान्की मूर्तिका दर्शन करके क्या नहीं समझ पा रही हो कि तुम्हारे प्राणबल्लभ साधारण मनुष्य नहीं हैं? वे त्रिलोकीके स्वामी, जगन्नाथ, साक्षात् श्रीकृष्ण हैं। वे स्वयं आत्मगोपन करके चतुराईसे तुमको श्रीकृष्ण-भजन करनेके लिये कह गये हैं।"

प्रिय सखी काञ्चनाकी बात देवीने अतिशय मनोयोगपूर्वक सुनी और धीरे-धीरे उत्तर दिया—"सखि! अपने पतिदेवताको, अपने जीवन-सर्वस्व प्राण-बल्लभको मैं मनुष्य रूपमें ही जानती हूँ। लोग उनको चाहे जो कहें, वे मेरे प्राणबल्लभ शचीके दुलारे गौरहरि हैं। सखि! मेरे प्राण-गौरको

तुम भगवान् मत कहना। उससे मुझे सुख नहीं मिलता। श्रीभगवान्को पाना बड़ा ही कठिन है। मेरे हृदयके धन प्राणवल्लभको ही जब मैं न पा सकी, मेरे अपने धन, मेरे घरके धन, जब पराये हो गये, तब उस अमूल्य धन श्रीभगवान्को कैसे पाऊँगी ? मैं पतिके सिवा और किसीको नहीं जानती ; मेरे पतिदेवता ही सर्वस्व धन हैं। वे श्रीकृष्ण हों, चाहे श्रीभगवान् हों, परन्तु मेरे सामने वे वही नवीन-नागर, रसिक-शेखर, नटवर, प्राणवल्लभ हैं, दूसरे नहीं।"

काञ्चना देखती हैं कि श्रीमतीजीके मुख-मण्डल पर दिव्य ज्योति प्रस्फुटित हो रही है। उनके दोनों विशाल नेत्रोंमें पुलकाश्रु भर गये हैं। मुक्ताफलके समान दो आँसुओंकी बूँदोंने श्रीमतीजीके वक्षःस्थल पर गिरकर उनके आँचलको आर्द्र बना दिया है। उनकी बोलनेकी शक्ति नहीं रही। सखीके अङ्गपर अपना श्रीअङ्ग रखकर श्रीमतीजी अनेक क्षणों तक मूर्च्छित-सी पड़ी रहीं। काञ्चनाने समय जानकर गौर-कथा प्रारम्भ की। इस व्याधिकी यही औषध है, काञ्चना इसको खूब जानती हैं। इस व्याधिकी चिकित्सा वे बहुत दिनोंसे करती आ रही हैं। श्रीगौराङ्गके नटवर-वेषके एक पदका स्वर पकड़कर काञ्चना श्रीमतीजीको धीरे-धीरे सुना रही हैं--

गौररूप सदाह पड़िछे मोर मने। **निरवधि थुइया बुके** **से रस धाधस सुखे** **अनिमिखे देखउ नयाने।।**	गौराङ्गका रूप सदा ही मुझे याद आता है। सदा हृदयमें धारण करके प्रिय-विरह-चिन्ताके सुखमें उसको मैं अनिमेष नयनोंसे देखती हूँ।
परिया पाटेर जोड़ **बान्धिया चिकुर ओर** **ताहे नाना फुलेर साजनि।**	वे रेशमकी धोती पहने हैं, सिरके केश बाँधकर नाना प्रकारके फूलोंसे सजाये हुए हैं।
परिसर हिया धन **लेपियाछे चन्दन** **देखिया जिउ करिनु निछनि।।**	हृदय पर चारों ओर चन्दनका घना लेपन है, जिसको देखकर मैं प्राण निछावर करती हूँ।

मृगमद चन्दन
कुंकुम चतुःसम
साजिया के दिल भाले फोंटा।

कस्तूरी, चन्दन, कुंकुम आदि सामग्रीसे किसने ललाटपर बिन्दी सजा दी है?

आछुक अन्येर काज
मदन मुगध भेल
रहल युवती कुलेर खोंटा॥

औरकी तो बात ही क्या, देखकर मदन भी मुग्ध हो जाता है और कुल-युवतियोंके मनमें दोष उत्पन्न होता है।

सरबस देह
अवश सकल सेह
ना पालटे मोर आँखि पाप।

वे अवश होकर सर्वस्व न्योछावर करती हैं। मेरी आँखका पाप दूर नहीं होता।

हियाय गौराङ्ग रूप
केशर लेपिया गो
घुचाइमु जत मनेर ताप॥

हृदयमें केसर-लिप्त गौराङ्गके रूपका ध्यान करके मैं मनके सारे तापको दूर करूँगी।

कामिनी हइया
कामना करिया
काम सरोवरे मरि।

मैं कामिनी होकर, कामना करके, काम सरोवरमें मरती हूँ।

गोविन्द दासे
कहये तवे से
दुखेर सागरे तरि॥

गोविन्द दास कहते हैं कि तभी मैं उस दुःख-समुद्रको पारकर सकूंगी।

● श्रीमतीजीकी रसोल्लास-कल्पना

काञ्चनाके सुमधुर कण्ठ-स्वरके गौर-गुण-गानने श्रीमतीजीके कानोंमें अमृत-वृष्टि की। वे जड़वत सखीके अङ्गपर गिरकर प्राणवल्लभके रूप-रसका सुधा-पान कर रही हैं और मन-ही-मन सोचती हैं, यही तो समय है। प्रभु यहाँ ही हैं। नवद्वीप-चन्द्र नवद्वीपमें विराजमान हैं। रसोल्लासका यही उपयुक्त समय है। प्राणवल्लभ प्रवासमें थे, अभी घर आये हैं, इसी आनन्दमें श्रीमतीके हृदयमें रसोल्लासकी तरङ्गें उठ रही हैं। काञ्चनाके रस-सङ्गीतसे श्रीमतीजीके सारे अङ्ग पुलकित हो रहे हैं। दोनों सखियाँ मिलकर निर्जनमें श्रीगौर-लीलाका रसास्वादन करने लगीं। सखीके साथ श्रीमतीजी तब निगूढ़ प्रेम-रस-तत्त्वकी बातें करने लगीं।

मनके आनन्दमें दोनों अपने आपको भूल गयीं। उनके प्राण-बल्लभ संन्यासी हैं, इस बातको श्रीमतीजी बिल्कुल ही भूल गयी हैं। प्रवासी पतिके घर लौटने पर जैसे विरहिणी स्त्री पतिके दर्शनोंकी लालसामें उद्विग्न होती है और उत्कण्ठित चित्तसे राह देखती है, श्रीमतीजीकी भी वही दशा है। पति-देवता के घर आने पर क्या करूँ, क्या बोलूं—कुछ भी निश्चय नहीं कर पा रही हैं। काञ्चना प्रिय सखीके मनकी अवस्था समझ कर श्रीमतीजीसे कहती हैं--"सखि! अपने मन-चोरको इस बार घरमें पाकर छोड़ मत देना। वे अवश्य ही तुम्हारे पास आवेंगे। तुम उनका दर्शन करके एकबारगी प्रेमसे द्रवित होकर प्राणबल्लभके साथ हिल-मिलकर एक न हो जाना। थोड़ा अभिमान करना। दो-चार बातें सुना देना। उन्होंने तुमको बहुत दुःख दिया है।" काञ्चनाके मनका भाव विद्यापतिके एक प्राचीन पदमें बहुत ही स्पष्ट रूपमें व्यक्त हुआ है। वह पद यहाँ उद्धृत किया जाता है--

शुन शुन सुन्दरि ! हित उपदेश। **हम सिखायब वचन विशेष।।**	हे सुन्दरि! हितकर उपदेश सुनो, मैं विशेष व्याख्यासे तुमको सिखाती हूँ।
पहिलहि बैठबि शयनक सीम। **आध नेहारबि बङ्किम गीम।।**	शैयाके किनारे पहिलेसे ही बैठी रहना, बंकिम ग्रीवा करके आधी आँखोंसे देखना।
जब पिये परशव ठेलबि पाणि। **मौन धरबि कछु ना कहबि वाणी।।**	जब प्रिय स्पर्श करें तो हाथ झटक देना और मौन रखना, वाणीसे कुछ बोलना मत।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी सखी काञ्चनाकी रसकी बातें सुनकर बहुत दिनोंके बाद जरा मृदु-मृदु मन्द-मन्द मुस्कराईं। हृदयमें प्रबल आनन्दका वेग आ गया है। वे आनन्दकी तरङ्गें सखी काञ्चनाके हृदयमें भी घात-प्रतिघात कर रही हैं। पूर्ण-आनन्दमें तल्लीन होकर दोनों ही अपने आपको भूल गयी हैं। श्रीमतीजी संन्यासीकी पत्नी हैं, पति-सङ्गके सुखसे वे सदाके लिये बञ्चित हो गयी हैं--ये सारी बातें मानो कुछ भी उनको याद नहीं हैं। उनके मनमें पूर्वस्मृति उदय हुई है। श्रीगौराङ्ग-वक्ष-विलासिनी स्वामी-

सोहागिनी श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके मनमें ग्राज ग्रानन्द समा नहीं रहा है। वे सखीसे कहती हैं—"सखि ! मैं ग्राज चारों ग्रोर शुभ-चिह्न देख रही हूँ। ऐसा लग रहा है मानो ग्राज मेरे प्राणवल्लभ मेरे पास ग्रावेंगे। ग्राने पर मैं क्या करूँगी ? क्या बोलूँगी ? तुम्हारे कहे ग्रनुसार क्या मैं काम कर सकूँगी ?" श्रीमतीजीकी उक्तिका श्रीबलराम दास रचित सुन्दर पद यहाँ उद्धृत किया जाता है—

कि लागि बल ना, ग्रानन्द धरे ना
ग्रङ्ग काँपे थर थर।

बतलाग्रो, किस कारण ग्रानन्द समाता नहीं है ग्रौर ग्रङ्ग थर-थर काँप रहे हैं ?

चारि दिके सखि शुभचिह्न देखि
बुझि एल प्राणेश्वर।
ग्राङ्गिनाय दाँड़ाबेन हरि ।।

हे सखि ! चारो ग्रोर शुभ चिह्न देख रही हूँ, जान पड़ता है कि प्राणेश्वर ग्रा गये। प्रभु ग्राङ्गनमें ग्राकर खड़े होंगे ।

घोमटा टानिब द्रुत घरे जाब
रुणु रुणु रव करि।

मैं घूँघट निकाल कर, रुन-झुन, रुन-झुन झंकार करती हुई जल्दीसे घरमें चली जाऊँगी ।

घरे लुकाइया श्रीमुखे चाहिया
देखिब पराण भरि ।।

मैं घरमें छिपकर श्रीमुखको निहारती हुई जी भरके देखूँगी ।

देखिबारे मोरे उकि बारे बारे
मारिबेन गौरहरि।

मुझको देखनेके लिये गौर हरि बारम्बार ग्राड़से झाकेंगे।

नयने नयन हइले मिलन
बल कि करिब सखि।

ग्राँखों-ग्राँखोंमें जब मिलन होगा, तो हे सखि ! मैं क्या करुँगी ? बतला दो।

बलराम बले हइबे ता' हले,
लज्जाय नमित मुखी ।।

बलराम दास कहते हैं कि ऐसा होने पर तुम लज्जासे नतमुखी हो जाग्रोगी।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी ग्रौर उनकी प्रिय सखी काञ्चना दोनों ही प्रेम-रसमें डूब गयी हैं। श्रीमतीजी सब कुछ भूल चुकी हैं। मर्मी ग्रन्तरङ्गा

सखी काञ्चनाके साथ श्रीगौराङ्ग-लीलाका निगूढ़ रसास्वादन कर रही हैं। बहिरङ्ग लोगोंके साथ इस प्रकार रसास्वादनका सुख नहीं प्राप्त होता, ऐसा करना भी नहीं चाहिए।

अन्तरङ्ग सङ्गे कर
रस - आस्वादन।

अन्तरंगके साथ रसास्वादन करना चाहिए।

इसीसे श्रीमतीजी हृदय खोलकर सखी काञ्चनाके साथ मनकी बातें करके विमल प्रेमानन्दका उपभोग कर रही हैं।

● पुत्र-विरह-कातरा शची माँ

प्रभुके नवद्वीप आगमनके उद्योग-पर्वमें काञ्चना-विष्णुप्रिया-संवादका प्रथम अध्याय समाप्त हुआ। अब कृपालु पाठक एक बार वृद्धा शची देवीके पास चलें। वृद्धाको बहुत देर तक अकेली रखकर निश्चिन्त रहना उचित नहीं है। उनकी खोज-खबर सदा लेते रहना ही ठीक है, क्योंकि वे इस समय अति वृद्ध हैं, पुत्र-विरहमें कातर हैं और अत्यन्त दुःखिनी हैं।

श्रीगौराङ्ग नवद्वीपमें आये हैं। शुक्लाम्बर ब्रह्मचारीके घर ठहरे हैं। सारे नवद्वीपके लोगोंको यह समाचार मिल गया है। शची देवी और श्रीमतीजीको भी यह शुभ-संवाद प्राप्त हुआ है। शची देवी आनन्द-विह्वल होकर पगलीके समान मुँह उठाकर शुक्लाम्बर ब्रह्मचारीके घरकी ओर चल पड़ीं। रास्तेमें जिससे भेंट होती है, उसीसे कहती हैं—"अजी! नवद्वीपमें फिर मेरा निमाई चाँद आया है। तुम लोग दया करके उसे पकड़ कर रक्खो। फिर जाने नहीं देना।" इतना कहकर दौड़ती-दौड़ती शची देवी जहाँ प्रभु ठहरे थे, वहाँ जाकर उपस्थित हुई।

एइ मने कहिते कहिते गेला तथा।
देखिलत गौरचन्द्र बसि आछे यथा॥
—चै० मं०

शची देवीने पाँच वर्षोंके बाद आज पुत्रका मुँह देखा। प्रभुके मुण्डित श्रीमस्तक और संन्यास-वेशको उन्होंने शान्तिपुरमें अद्वैत-भवनमें एक बार पहले भी देखा था। वह आज पाँच वर्ष पहलेकी बात है। उस समय प्रभुका

नया संन्यास वेश था। वे निमाई जैसे ही थे, केवल वेश-परिर्वतन ही हुआ था। इस समय प्रभुके अवयवोंमें बहुत परिवर्तन हो गया है। उनका श्रीअङ्ग धूलि-धूसरित है, मुख-मण्डल प्रशान्त है, देह कुछ क्षीण हो गयी है, आँखोंमें दिव्य ज्योति है तथापि गम्भीर दुःख व्यञ्जित हो रहा है। शची देवी एकटक पुत्रके अङ्ग-प्रत्यङ्गको देख रही हैं और पहलेकी बातें याद करके व्याकुल हृदयसे रोती हैं। प्रभु चुप हैं। शची देवीने पुत्रसे कहा—"बेटा, निमाई! अब तुझे संन्याससे मतलब नहीं। जितना कर लिया, उतना बहुत है। पता नहीं, मातृ-बध करनेसे तेरा क्या धर्म-साधन होगा? पहले मुझे मार डाल, फिर तेरी जो इच्छा हो वही करना।"

शची बोले मोर बोल शुन रे निमाइ।
घर आइस आमार सन्न्यासे काज नाइ।।

शची माता कहती हैं—अरे निमाई! मेरी बात सुन, अपने घर आ जा, अब और संन्याससे मतलब नहीं।

सन्न्यास करिया धर्म्म राखिबि त पाछु।
मोर बध आगे लागे आर सब आछु।।

संन्यास करके धर्म पालना तो पीछे होगा पहले मेरा वध होगा और सब धरा रहेगा।

विह्वल चेतन शची कान्दे उभराय।
सकल शरीर खानि एक दृष्टे चाय।।

इस प्रकार शची माता विह्वल हो चेतन अवस्थामें जोरसे क्रन्दन करने लगीं और एक दृष्टिसे प्रभुका सम्पूर्ण शरीर देखती रहीं।

बापु बापु बलि अङ्ग परशिते चाय।
आर सब थाक् बापु हात देओ गाय।।

बेटा! बेटा! कहती हुई अङ्ग स्पर्श करना चाहती हैं और कहती हैं—बेटा! और सब बातें पीछे होंगी, पहिले शरीरपर हाथ फेरने दो।

श्रीअङ्गे लेगेछे धूला फेलाओ झाड़िया।
ए बोल बलिया पड़े अङ्ग आछाड़िया।।
—चै० मं०

तुम्हारे श्रीअङ्ग पर धूल लगी है, उसको झाड़ फेंकूं। इस प्रकार कहती हुई पछाड़ खाकर गिर पड़ती हैं।

शची देवी श्रीगौराङ्गके अङ्गमें धूलि देखकर पछाड़ खाकर रोने लगीं। प्रभु गम्भीर भावसे चुपचाप बैठे हैं। शची देवी भूमि-शय्यासे उठकर पुत्रसे कहने लगीं--

पुन उठि बोले बापु शुन मोर बोल।	शची माता पुनः उठकर बोलीं--
पालाउ हियार साध धरि दाम्रो कोल।।	बेटा! मेरी बात सुनो। मेरी गोदमें
--चै० मं०	बैठकर मेरे जीकी साध पूरी करो।

शची देवीके क्रन्दनसे समस्त उपस्थित भक्तवृन्द शोकसे विह्वल होकर रुदन करने लगे। यह देखकर परम गम्भीर श्रीगौराङ्ग भी विचलित हो उठे। जननीकी करुण क्रन्दन-ध्वनिसे प्रभुका हृदय द्रवित हो गया।

शचीर कान्दना देखि पृथिवी विदरे।	शचीका रोना देखकर पृथिवी
आछुक मानुषेर काज ए पाषाण झुरे।।	फटी जा रही है, मनुष्यका तो कहना
	ही क्या, पाषाण तक द्रवित हो रहे हैं।

चतुर्द्दिके सब लोक कान्दिया विकल।	चारों ओर सब लोग रो-रोकर
काछ ना छाड़ये केह पासरिल घर।।	व्याकुल हो रहे हैं, सब लोग पास नहीं
	छोड़ रहे हैं, अपना घर-द्वार भूल गये हैं।

लोकेर कान्दना देखि मायेर व्यग्रता।	लोगोंका रोना और माताकी
मने अनुमाने प्रभु कि कहिब कथा।।	व्यग्रता देखकर प्रभु मनमें विचार
--चै० मं०।	रहे हैं कि मैं क्या बात कहूँ?

● माताको प्रभु द्वारा प्रबोध और माँका वात्सल्य

उस समय प्रभु यह निश्चय न कर सके कि माताको क्या कहें? बहुत देर तक चुप रहकर गम्भीर भावसे मधुर वचनोंसे माताको सम्बोधन करके कहने लगे--"माँ! तुम रोओ मत। तुमसे अनुमति लेकर ही तुम्हारे पुत्रने संन्यास ग्रहण किया है। मुझमें पुत्रज्ञानकी अब भी तुम्हारी मिथ्या माया नहीं गयी, यह बड़े ही दुःख और आश्चर्यकी बात है। इस संसारमें मायाका ऐसा ही प्रभाव है।"

मायेर प्रबोध दिते प्रभु भावे मने।
ना कान्द ना कान्द बोले मधुर वचने।।
सन्न्यास करिते आज्ञा करिला आपने।
एखन विकल हैञा कान्द कि कारणे।।
पुत्र बलि मिछा माया ना घूचिल तोर।
ऐछन दुरन्त माया ए संसारे घोर।।
—चै० मं०

शची देवीने पुत्रकी उपदेशपूर्ण बातें ध्यान देकर सुनीं। सुनकर कुछ देर निस्तब्ध रह गयीं। निमाई चाँदके मुँहकी ओर देखकर कुछ सोचने लगीं। उनका पुत्र कह रहा है—"उसमें पुत्र-ज्ञानकी मिथ्या माया क्यों कर रही हो?" इसका अर्थ क्या है? तो क्या निमाई मेरा पुत्र नहीं है? तब वह है कौन? मैं तो उसको पुत्रके सिवा और कुछ नहीं जानती। इस प्रकारकी एक चिन्ताकी लहर प्रबल वेगसे शची देवीके हृदयके ऊपर दौड़ गयी। थोड़ी देरके बाद वे चित्त स्थिर करके निमाई चाँदके मुँहकी ओर ताककर मनका भाव प्रकट करती हुई कहने लगीं—

मोर पुत्र बलि जन्म लइले पृथिवीते।
जगतेर लोक मोरे करित पूजिते।।

तुमने मेरे पुत्र होकर पृथ्वी पर जन्म लिया है, जगतके लोग मेरी पूजा करते हैं।

तुमि सब लोक-बन्धु त्रिजगते पूजि।
तोमार से स्नेह माया शास्त्रे भाल बुझि।।

तुम सर्वलोकके बंधु हो, त्रिजगतमें पूजित हो, तुम्हारी वह स्नेह-माया शास्त्रमें भली प्रकार वर्णित है।

जे हउ से हउ मोर तुमि हञो पुत्र।
जन्मे जन्मे रहु मोर एइ कर्म्म-सूत्र।।
—चै० मं०

चाहे जो भी हो, मेरे तो तुम पुत्र ही होते हो, जन्म-जन्ममें मेरा यही कर्मबन्ध बना रहे।

शची देवी प्रभुको कह रही हैं—"बेटा निमाई! तुम जो हो सो हो, तुमको चाहे कोई कुछ कहे, तुम मेरे ही पुत्र हो। जन्म-जन्मान्तरमें यह हमारा सम्बन्ध, यह कर्म-सूत्र बना रहे। मैं तुमको जन्म-जन्मान्तरमें पुत्ररूपमें प्राप्त करूँ। तुम्हारी ही माताके रूपमें मैं जगतमें पूजिता हूँ।

तुम्हारी ही माँ होनेके कारण मैं जगन्माता हूँ। एक बार तुम माँ कहकर पुकारते हो तो यह अभागिनी कृतार्थ हो जाती है, स्वर्गका चाँद मानो मेरे हाथमें आ जाता है। तुम्हारी यह माया मैं कदापि छिन्न-भिन्न नहीं कर सकती। तुम्हारी इस मायाका बन्धन ही मेरा धर्म-कर्म है। अरे निमाई! अरे बेटा! तुम मुझको उपदेश देते हो कि मैं इस मायापाशको छिन्न-भिन्न कर दूँ? यह नहीं हो सकता। तुम्हारी माया ही मेरी साधना है। तुम्हारी मायाको मैं छिन्न-भिन्न नहीं कर सकूँगी। वैसा करनेसे मैं लक्ष्य-भ्रष्ट हो जाऊँगी, मेरे चिर-जीवनका साधन-फल नष्ट हो जायगा, मैं पातक-ग्रस्त हो जाऊँगी। यह परामर्श तुम मुझको न देना।"

श्रीगौराङ्गने स्थिर चित्तसे कान लगाकर जननीकी दृढ़ तथा वात्सल्य-भावपूर्ण तत्त्वकी बातें ध्यानपूर्वक सुनीं। प्रभु उस समय कुछ अन्य-मनस्क हो गये। इस बातको और कोई न समझ सका। माताकी इस बातका प्रभुने कुछ भी उत्तर न दिया, अथवा दे न सके। अपत्य-स्नेहके बन्धनके सामने ऐश्वर्य पराजित हो गया। तब माताके प्रति प्रभुकी दयाका उद्रेक हुआ। वे मातासे बोले--"माँ! तुमको जिसमें सुख मिले, वही करो। एक रात मैं तुम्हारे पास हूँ। मुझको जो कुछ तुम कहना चाहती हो, सब कहो। तुम अपने सुखके लिये जो इच्छा हो, कर सकती हो।"

मायेर वचने प्रभु अस्त-व्यस्त हैआ। मायाये जिनिते नारे उभारये दया।।	माँके वचनोंसे प्रभु अस्त-व्यस्त हो उठे, मायाको जीत न सके और दयाका उद्रेक हो आया।
जे तोर आछये इच्छा कर निज सुखे। एक रात्र-शेष, आमि निवेदिब तोके।। --चै० मं०	जो तुम्हारी इच्छा हो अपने सुखके लिये करो। मैं एक रात तुम्हारे पास हूँ--यही मेरा निवेदन है।

● माँका अभिमान एवं प्रभुका गृहद्वार पर पधारनेका आश्वासन

शची देवीके मनमें बड़ा दुःख हुआ। पुत्रके ऊपर अभिमान हुआ। वह एक रात रहकर चला जायेगा। जननीके कातर क्रन्दनको उसने नहीं सुना। शची देवीने सोचा कि वह और विष्णुप्रिया दोनों उसके पुत्रके चिर शत्रु हैं। हमारे ही कारण निमाई चाँदने गृह-त्याग किया है।

शची बोले नवद्वीप छाड़ि जाह तुमि ।
नवद्वीपे दुष्ट विष्णुप्रिया आर आमि ।।
--चै०मं०

शची माता बोलीं--तुम नवद्वीप छोड़कर चले जाओ, नवद्वीपमें दुष्टा मैं और विष्णुप्रिया रहती हैं।

शची देवीकी यह बात सुनकर प्रभुके मनमें बड़ा कष्ट हुआ। हृदयमें व्यथा हुई। श्रीमतीजीका मधुर नाम कानमें पड़ते ही मानो वे सिहर उठे। दूसरा कोई इसको नहीं समझ सका। परन्तु शची देवीने देखा कि उसके पुत्रका मुख-मण्डल लाल हो उठा है और उसका वह प्रशान्त भाव नहीं रह गया है। प्रभुने अपने मनके उद्वेगपूर्ण भावको दबा दिया। माताको अत्यन्त स्नेहपूर्ण मधुर प्रेममय वचनोंसे सम्बोधन करते हुए बोले--"माँ! मैं तुम्हारे दर्शन करके कृतार्थ हो गया। मैं जन्मस्थानका दर्शन किये बिना न जाऊँगा। तुम्हारे घरके द्वार पर कल प्रातः अपने पुत्रको पुनः देख सकोगी।"

शची देवीकी मनोकामना सिद्ध हुई। वे यही चाहती थीं। इसी लिये उन्होंने श्रीमतीजीका नाम लिया था। पुत्र गृहद्वार पर गये बिना श्रीमतीजीके भाग्यमें पतिके दर्शनकी प्राप्ति नहीं हो सकती थी। पुत्रके आश्वासन-वाक्य पर निर्भर करके समयानुसार पुत्रसे विदा होकर शची देवी रोते-रोते घर लौटीं। उनके साथ पुराने सेवक ईशान थे। ईशान शची देवीका सङ्ग नहीं छोड़ते हैं। आते समय शची देवीने पुनः पुत्रसे कहा--"बेटा, निमाई! आज मैं सारी रात तेरे लिये द्वार पर बैठी रहूँगी। तुम मुझको भुलावा देकर न चले जाना।" श्रीगौराङ्गने सत्कारपूर्वक माताको प्रणाम करके उत्तर दिया--"माँ! तुम्हारा पुत्र कभी तुमको धोखा नहीं देता। जब जो कुछ किया है, तुमसे कहकर किया है।"

● शची माँका घर लौटना और प्रियाजीकी कल्पना

शची देवी धीरे-धीरे घर लौटीं। घर आकर पुत्र-बधूको सारी बातें कह सुनायीं। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी प्राणबल्लभके घर आनेकी बात सुनकर पहले कुछ विस्मित हुईं। मन-ही-मन सोचने लगीं, उनका संन्यासीका धर्म तो पालन हो गया, जननी और जन्मभूमिके दर्शन तो उन्होंने कर लिये, तब अपने घरके द्वार पर आनेका क्या मतलब है? कभी-कभी सोचती

हैं--जान पड़ता है, उनकी लालसा जन्म-स्थानके दर्शन करनेकी हो गयी है। फिर सोचती हैं--नहीं, दूसरा कोई कारण है। वह कारण क्या है, इस बातको श्रीमतीजी मन-ही-मन समझती हैं, परन्तु साहसपूर्वक विश्वास नहीं कर पा रही हैं। तो क्या, इस अभागिनी चिर-दु:खिनी दासीको प्रभुने याद किया है ? तो क्या वे इस पापिनीको दर्शन देने आ रहे हैं ? इस सुखदायी भावके मनमें आते ही एक दूसरी चिन्ता आकर श्रीमतीके दग्ध हृदयको और भी दग्ध करने लगी। वह चिन्ता यह थी कि उसके प्राणवल्लभ संन्यासी हैं, उसके कारण ही वे गृह-त्यागी हुए हैं, स्त्रीका मुख देखना संन्यासीके लिये धर्म-विरुद्ध है, सभी प्रभुके दर्शनकी प्राप्तिके अधिकारी हैं, केवल यह दु:खिनी विष्णुप्रिया उससे बञ्चित है। यह दु:ख श्रीमतीजीके जीवन-पर्यन्त मिटने-वाला नहीं है। परन्तु कृपामय श्रीगौराङ्ग कृपाकर एक बार दर्शन देने आ रहे हैं, यह श्रीमतीजीका परम सौभाग्य है।

उनके प्राणवल्लभ उनको देखने आ रहे हैं--इस बातको वे साहस करके मनमें टिका नहीं पा रही हैं। अभागिनी दासीके प्रति प्रभुकी अयाचित दयाकी बात मनमें आते ही वे आनन्द-सिन्धुमें गोते लगाने लगती हैं, परन्तु श्रीगौर भगवान्के मनका भाव और ही है। वे प्रियाको बिना देखे नवद्वीप छोड़ नहीं पाते हैं। इसी कारण जननीके सामने कहा है कि घरके द्वार पर उनको देख पाओगी। श्रीगौर भगवान् भक्त-वत्सल हैं, श्रीमती विष्णुप्रिया देवी उनकी श्रेष्ठ भक्त हैं, प्रीति-भक्तिमें श्रीगौर भगवान्को प्रेम-सूत्रके चिर-बन्धनसे बाँध रक्खा है। यह बन्धन अटूट है। श्रीभगवान् क्या इसको तोड़ सकते हैं ? श्रीभगवान्में यह क्षमता नहीं है। वे सब कुछ कर सकते हैं, पर यह कार्य वे नहीं कर सकते। क्योंकि वे भक्तके पूर्ण आधीन हैं। उन्होंने अपने श्रीमुखसे कहा है--"अहं भक्तपराधीनः।" श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको श्रीगौराङ्ग देखने आ रहे हैं, यह बात ठीक है। केवल दर्शन देने नहीं आ रहे हैं।

श्रीमतीजी अपने मनकी बात सखी काञ्चनासे कहे बिना न रह सकीं। काञ्चनाने हँसकर उत्तर दिया--"सखि ! मैंने तो पहले ही कह दिया था कि तुम्हारे प्राणवल्लभ तुमको विना देखे न जा सकेंगे। देखो, मेरी बात सच निकली न ?"

● प्रभुकी प्रतीक्षामें माँ और प्रियाजी एवं प्रभुका गृहद्वार-दर्शन

सास और पुत्र-बधू उस रातको सो न सकीं। उत्कण्ठा तथा हर्ष-विषादमें दोनोंमें किसीकी आँखोंमें नींद नहीं आयी। हर्षका कारण यह था कि प्रभुके दर्शन मिलेंगे। विषादका कारण यह था कि प्रभु चले जायँगे। सारी रात सास और पुत्र-बधूने बैठकर इस सम्बन्धमें नाना प्रकारकी आलोचनाएँ कीं। चार दण्ड रात रहते दोनों देवियाँ शय्यासे उठीं और बाहर द्वारपर जाकर एक बार देख आयीं कि कोई द्वार पर खड़ा तो नहीं है। किसीको भी न देखकर निराश मनसे पुनः गृहमें आकर बैठ गयीं।

रास्तेमें कलरव सुनकर वे पुनः घरके द्वार पर गयीं। इस समय माघ बीत रहा था। कुलियामें प्रभु सात दिन रहकर दशमी तिथिमें नवद्वीपमें आये थे। एकादशीके दिन वे जननी-जन्मभूमिके दर्शन करके फिर नवद्वीप छोड़कर चले जायँगे। माघ मासमें प्रातः-स्नान करनेके लिये दलके दल नदियावासी भक्तवृन्द शची देवीके घरके द्वारके सामनेसे होकर जा रहे हैं। इसी लिये इतना कलरव है। दूसरा कारण यह है कि सबने सुना है श्रीगौराङ्ग आज प्रातःकाल जन्मभूमिके दर्शन करके नवद्वीप छोड़कर चले जायँगे। इसी कारण दलके दल भक्तवृन्द और नदियावासी नर-नारियोंने आकर प्रभुके घरको घेर लिया। शची देवी द्वारपर बैठी हैं। श्रीमतीजी आड़में खड़ी हैं। समस्त उपस्थित नर-नारी-वृन्द विषण्ण हैं। एक दिनके लिये प्रभुको पाकर सब दुःख-सन्तापको भूल गये थे।

शुक्लाम्बर ब्रह्मचारीके घरके पास भी बहुत लोग एकत्रित हुए हैं। प्रभु दण्ड-कमण्डलु हाथमें लेकर नदियाके मार्गपर खड़े हैं। उनके प्रशान्त मुख-मण्डलसे दिव्य ज्योति विकीर्ण हो रही है। वे स्थिर और गम्भीर हैं। चारों ओरसे सब लोग उनको घेरकर एक साथ दल बाँध-बाँध कर कीर्त्तन कर रहे हैं। आज बहुत दिनोंके बाद कीर्त्तनकी तरङ्गमें नदियामें चहल-पहल मची है। प्रभुकी इच्छा एकान्त भावसे चुप-चाप जाकर जन्मस्थान दर्शन करनेकी थी, लेकिन वह नहीं हुआ। सब भक्तगणोंसे परिवेष्टित होकर जन-स्रोतके बीचसे लम्बे खुले बदन, कौपीन धारण किए तथा दण्ड-कमण्डलु हाथमें लिये प्रभु अपने घरके द्वार पर आकर खड़े हो गये और सब मिलकर हरि-हरि ध्वनि करने लगे।

प्रभु स्थिर रूपसे गृहद्वारके सामने रास्ते पर खड़े हैं। उनकी ज्योतिपूर्ण विशाल दोनों आँखें जन्मभूमिकी प्रत्येक वस्तुके ऊपर पड़ रही हैं। अन्तरङ्ग भक्तोंके आदेशसे महा संकीर्त्तनयज्ञ कुछ देरके लिये स्थगित रक्खा गया। शची देवी बहुत व्याकुल-सी आकर पुत्रका हाथ पकड़कर खड़ी हो गयीं। एक बार पुत्रके गम्भीर बदनकी ओर देखकर, हाथ छोड़कर, सिर अवनत कर, उच्च स्वरसे क्रन्दन करने लगीं। शची देवीकी इच्छा थी कि पुत्रका हाथ पकड़ कर घरमें ले जायें। प्रभुके गम्भीर मुखकी ओर देखते ही उनको वह इच्छा हृदयसे दूर करनी पड़ी। शची देवीने देखा कि पुत्रके मुखमण्डल पर अपूर्व दिव्य ज्योति प्रकाशित हो रही है। विशाल दोनों नेत्र स्वर्गीय तेज-पुञ्जसे परिपूर्ण हैं। सुन्दर प्रशान्त मुख-मण्डल दृढ़ता व्यञ्जक है। मानो वे उनके निमाई चाँद हैं ही नहीं। वृद्धा शची देवीने भीत और चकित नेत्रोंसे पुत्रके मुँहकी ओर देखा। परन्तु एक बारसे अधिक उधर ताक न सकीं। उन्होंने मन-ही-मन सोचा कि यह वस्तु तो घरमें रखनेकी नहीं है। यह तो घरकी वस्तु नहीं है, एक आदमीकी सम्पत्ति भी नहीं है। शची देवी दिव्य चक्षुओंसे देखती हैं कि उनके पुत्र जगतके स्वामी हैं, निखिल ब्रह्माण्डके पति हैं। अतएव शङ्कित होकर पुत्रका हाथ छोड़कर मुँह अवनत कर खड़ी हो रुदन करने लगीं। वह रुदन दुःखका नहीं था। पुत्रके विश्व-विमोहन रूपकी ज्योतिका दर्शन करके शची देवीकी आँखोंसे झर-झर पुलकाश्रु बह रहे हैं। बीच-बीचमें उनके मनमें होता है, मानो पुत्र पराया हो गया। किसकी विसात है जो श्रीभगवान्‌की लीलाके रहस्यको समझे! शची देवी मन-ही-मन सोच रही हैं कि क्या उनका पुत्र मनुष्य नहीं है? ऐसा रूप तो मनुष्यमें नहीं होता। ऐसी दिव्य ज्योतिर्मय कान्तिपूर्ण सुन्दर मुख-छवि तो पृथिवीपर खोजनेसे कहीं देखनेको न मिलेगी। इस परम रत्नको, समस्त जगतके जीवोंके साधन-धनको वह कैसे घर पर रखेगी? दर्शन मिल गया, यही उनका परम सौभाग्य है।

शची देवी यह सब मन-ही-मन सोच रही हैं और उनकी दोनों आँखोंसे अविरल अश्रुधारा प्रवाहित होकर उनके वक्षःस्थलको निमज्जित कर रही है। लोग देखते हैं कि शची देवी पुत्र-शोकसे रो रही हैं। अतएव

लाखों-लाखों नर-नारियाँ वृद्धाके दु:खसे आँसू बहा रहे हैं। प्रभुके गृह-द्वारपर सारे नदियावासी एकत्रित होकर शची देवीके दु:खसे रुदन कर रहे हैं। सबकी आँखोंमें जलधारा है और मुखमें हाय! हाय!——परन्तु प्रभु अविचलित, स्थिर और गम्भीर भावसे खड़े हैं।*

माताकी वह चिर-विषादमयी पागलिनी मूर्ति देखकर संन्यासी प्रवर श्रीकृष्ण चैतन्य देवका मन विचलित नहीं हुआ। वे एक बार धूलि-धूसरित स्नेहमयी माताकी ओर देखते हैं और एक बार गृह-द्वारकी ओर। प्रभुकी दृष्टि जननीसे जन्मभूमिके ऊपर पड़ रही है। लोग समझते हैं कि वे जन्म-स्थानको जन्म भरके लिये भली भाँति देख रहे हैं। जननी और जन्मभूमिसे सदाके लिये विदा ले रहे हैं। प्रभुके मनका भाव कृपामय रसज्ञ पाठक-पाठिकागण समझे बिना न रहे होंगे।

● प्रियाजीका दर्शन

एक मलिन वसना, आभूषण-विहीना, बिखरे केशोंवाली, रोती हुई ज्योतिर्मयी सुन्दरी, दु:खिनी, अष्टादश वर्षोंकी रमणी द्वारकी आड़में खड़ी होकर जन्म भरके लिये केवल एक बार प्रभुके श्रीचरणोंके दर्शनोंकी लालसामें उत्सुक है। प्रभुके मुख-चन्द्रकी ओर उसकी दृष्टि नहीं है, प्रभुकी दीर्घ आकृतिके किसी अङ्ग पर उस सौन्दर्यमयी रमणीका लक्ष्य नहीं है, उसकी अनिमेष दृष्टि केवल भवाराध्य शिव-विरञ्चिवन्दित दो श्रीचरणोंके ऊपर है।

---

* यह पुस्तक यहाँतक लिखी जाने पर श्रीश्रीविष्णुप्रिया पत्रिकाके सुयोग्य कार्याध्यक्ष मेरे प्राणतुल्य दादा श्रीयुत् मृणालकान्ति घोषको जब्बलपुरमें पढ़नेके लिये दी गयी थी। यह पुस्तक उनके पास कई दिन रही, अतएव प्रभुको इन कई दिनोंतक गृह-द्वार पर खड़े रहना पड़ा। सामने रोती हुई वृद्धा जननी और अन्तरालमें विषादमयी प्रेम-प्रतिमा गृहिणी थीं। चारों ओर व्याकुल चित्त भक्तवृन्द थे। प्रभु कैसे चले जायँगे? अतएव वे अविचलित भावसे अपने गृह-द्वारपर खड़े हैं। इससे प्रभुको कष्ट तो बहुत हुआ, परन्तु शची माता और श्रीमती विष्णुप्रिया देवी कई दिनों तक प्रभुको देख सकीं। इससे मेरे मनमें बड़ा सुख हुआ। मृणाल दादा इस सुखके कारण बने।

——ग्रन्थकार।

श्रीगौराङ्ग अपनी विरहिणी प्राणप्रियाके दर्शन करने आये हैं, जन्मभूमिका दर्शन एक बहाना मात्र है। जननी और जन्मभूमिके दर्शन तो उनको हो ही गये हैं। तब प्रभु अपने गृह-द्वार पर क्यों खड़े हैं? उनके संन्यास-धर्मका तो पालन हो गया है। तब वे किस लिये द्वार-देशमें खड़े हैं? क्यों और किसकी प्रतीक्षा कर रहे हैं? संन्यास-धर्मसे बढ़कर एक दूसरा उच्च धर्म है। उसका नाम है प्रेम-धर्म। श्रीगौर भगवान् मानव तन धारण करके इसी प्रेम-धर्मके अवतारके रूपमें भूतल पर अवतीर्ण हूए हैं। उस धर्मका वे कैसे उल्लङ्घन कर सकते हैं? प्रेमावतार प्रेममय श्रीगौराङ्ग इसी कारण कौशलसे प्रेम-जाल फैलाकर अपनी प्रेममयी प्राणप्रिया देवी-प्रतिमा नवद्वीपमयीका दर्शन करने आये हैं। प्रेममय श्रीगौराङ्गकी आन्तरिक वासना है कि प्रेममयी प्रियाको एक बार सदाके लिये देख जायँ।

लज्जामयी, विषादमयी, प्रेममयी श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने प्राण-बल्लभके मनोगत भावोंको समझा है। इसी कारण आज लज्जाके बन्धनको छिन्न-भिन्न करके, सब लाज-शर्म त्यागकर, कुलकी कुल-बधूने सबके सामने वस्त्रसे सर्वाङ्ग आवृत करके, बहु-जन-संकुल राज-पथमें जाकर, स्वयं प्रभुको दर्शन दिये।

भक्तने श्रीभगवान्की इच्छा पूर्ण की। श्रीभगवान् जैसे भक्तकी कामना पूर्ण करते हैं, भक्त भी उसी प्रकार श्रीभगवान्की इच्छा पूर्ण करके उनसे प्रीति करता है। भक्त और श्रीभगवान्का सम्बन्ध ही ऐसा है। भक्त और भगवान् एक ही वस्तु हैं। दोनोंके प्राण एक दूसरेके लिये क्रन्दन करते हैं। भक्त जैसे श्रीभगवान्के चरणोंका भिखारी है, श्रीभगवान् भी उसी प्रकार भक्तके सङ्गके भिखारी हैं। जहाँ भक्त रहता है, वहीं श्रीभगवान् रहते हैं। भक्तकी पुकारपर उनको वैकुण्ठ छोड़कर भक्तके पास आना पड़ता है।

नाहं वसामि वैकुण्ठे योगिनां हृदये न च।
मद्भक्ता यत्र गायन्ति तत्र तिष्ठामि नारदः॥

यह बात उन्होंने श्रीमुखसे स्वयं कही है। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके करुण रुदनको सुनकर श्रीगौर भगवान् स्थिर न रह सके, उनको देखनेके लिये नीलाचलसे आये हैं। दर्शन देने आये हैं--यह उनका मुख्य उद्देश्य नहीं है। यह गौण उद्देश्य है।

● प्रभुके श्रीचरणोंमें प्रियाजी

श्रीगौराङ्गने स्वयं धर्मका ग्राचरण करके लोक-शिक्षा देनेके लिये संन्यास ग्रहण किया है। इसी कारण उनको मनके भाव छिपाने पड़ते हैं। प्रच्छन्न ग्रवतार श्रीगौराङ्ग प्रभुके चरणोंमें श्रीमती विष्णुप्रिया देवी जा पड़ीं। भक्त ग्रौर भगवान्‌का मिलन हुग्रा। प्रभु स्त्री-मूर्ति देखकर मुँह फिराकर कुछ पीछे हट गये। केवल लोकशिक्षाके लिये प्रभुके ये केवल बाहरी भाव थे। नदियावासी नर-नारियाँ तथा उपस्थित भक्तवृन्द श्रीमतीजीके इस विषम दुःसाहसके कार्यको देखकर स्तम्भित ग्रौर विस्मित हो उठे। शची देवी जड़वत खड़ी हैं। सबकी दृष्टि प्रभुके मुख-चन्द्रकी ग्रोर है। ग्रगणित जन-समुद्र नीरव ग्रौर निस्तब्ध है। बीच-बीचमें केवल दीर्घ श्वासका ग्रस्फुट शब्द तथा नीरव क्रन्दनकी कातर ध्वनि श्रवणगोचर हो रही है।

श्रीगौराङ्ग स्वयं उस गम्भीर निस्तब्धताको भङ्ग करके श्रीमतीजीकी ग्रोर देखकर बोले—"तुम कौन हो ?" मानो वे कुछ भी जानते ही नहीं। महाचक्रीके चक्रको कौन समझेगा ? सदासे ही वे भक्तोंके साथ इसी प्रकारका व्यवहार करते ग्रा रहे हैं। यह उस महा कौशलीका कौशल मात्र है। श्रीमतीजीके कानोंमें बहुत दिनोंके बाद ग्राज उनके प्राणवल्लभकी मधुर कण्ठ-ध्वनिने प्रवेश करके मानो सुधा ढाल दी। उनके हृदय, मन, प्राण सभी मानो प्राणवल्लभके वचन-सुधा-रसमें गल गये। वे प्रभुके चरणोंमें छिन्न लतिकाके समान पड़ी हैं। दोनों ग्राँखें मानो प्रभुके श्रीचरण-सरोजमें लगी हैं। प्रभुकी सुमधुर वाणी सुनकर श्रीमतीजी उठकर ग्रपने प्राण-वल्लभके चरणोंमें घूँघट काढ़कर बैठ गयीं। बैठकर शत-ग्रपराधिनीके समान हाथ जोड़कर सिर ग्रवनत करके घूँघटके भीतरसे धीरे-धीरे रोती हुई बोलीं—"यह ग्रभागिनी तुम्हारे श्रीचरणोंकी त्याज्या दासी विष्णुप्रिया है।"

नाम सुनते ही प्रभु मानो सिहर उठे। उनके प्रशान्त मुखमण्डल पर विषादकी घोर छाया दीख पड़ी। प्रभुका प्रफुल्ल मुखमण्डल मानो मलिन हो गया। बहुतोंने इसे देखा। प्रभुने मनके भावको छिपाकर दो शब्दोंमें उत्तर दिया—"तुम्हारी प्रार्थना क्या है ?" श्रीमतीजीने रुँधे कण्ठसे रोते-रोते कहा—

सकलेइ जुड़ाइल चरण पाइया,
सकले कृतार्थ ह'लो ओ रूप देखिया,
पाइल ना सुधु राङ्गा चरणेर छाया,
त्रिजगते एका विष्णुप्रिया ।।१।।

चरणोंको प्राप्त कर सभी शीतल हो गये, वह रूप देखकर सभी कृतार्थ हो गये। अरुण चरणोंकी छाया न प्राप्त हुई तो तीनों लोकोंमें केवल एक विष्णुप्रियाको ।।१।।

तुमि प्रभु कृपामय सन्न्यास करिले
ए जगत जुड़ाइया दिले,
दुःखीरे तापीरे कोले निले,
सुधु नाथ जुड़ाइले ना तुमि
शीतल चरण-छाया दिया
त्रिजगते एका विष्णुप्रिया ।।२।।

कृपामय प्रभु ! तुमने संन्यास ग्रहण किया, इस जगतको शीतल कर दिया, दुःखी और सन्तप्तको गोदमें ले लिया। हे नाथ ! अपने शीतल चरणोंकी छाया देकर तुमने नहीं शीतल किया तो त्रिजगतमें केवल एक विष्णुप्रियाको ।।२।।

शान्तिपुरे सबे दिले देखा,
बञ्चिता से विष्णुप्रिया एका,
सबा ह'ते आपन तोमार,
ताइ तारे एत अत्याचार ?
ओहे नाथ कोन अपराधे,
सबे अधिकारी जेइ पदे,
सुधु आछे बञ्चिता हइया
तोमार दुःखिनी विष्णुप्रिया ।।३।।
--पुरातन विष्णुप्रिया-पत्रिका

शान्तिपुरमें सबको दर्शन दिये, केवल वह विष्णुप्रिया ही अकेली बञ्चित रही, जो सर्वापेक्षा तुम्हारी अपनी है, क्या इसीसे उसके ऊपर इतना अत्याचार है ? हे नाथ ! किस अपराधके कारण जिन चरणोंके सब अधिकारी हैं, उनसे केवल तुम्हारी दुःखिनी विष्णुप्रिया बञ्चित है ।।३।।

श्रीमतीजीकी मर्म-भेदी विलाप-ध्वनि सुनकर भक्तोंके बीच भयानक क्रन्दनका रोल मच गया। सबके मुखसे हा-हाकार ध्वनि, सबकी आँखोंसे अश्रुधारा निकल पड़ी। परन्तु श्रीगौराङ्ग गम्भीर हैं, उनकी आँखोंमें अश्रु-बिन्दु भी नहीं है। दृष्टि पूर्ण दृढ़ता व्यञ्जक है। उनका मुख-मण्डल प्रशान्त है, दीर्घ शरीर स्थिर है, मुखचन्द्र तनिक अवनत है। श्रीमतीजीको लक्ष्य करके वे बोले--

तोर नाम विष्णुप्रिया, **सार्थक करिह इहा,** **मिछा शोक ना करिह चित्ते।**	तुम्हारा नाम विष्णुप्रिया है, इसको सार्थक करो। चित्तमें व्यर्थ शोक न करो।
ए तोरे कहिनु कथा, **दूर कर आन चिन्ता,** **मन देह कृष्णेर चरिते।।** **—चै० मं०**	तुझे यह बात कहता हूँ कि दूसरी चिन्ता हटाकर कृष्णके चरितमें मनको लगाओ।

श्रीमतीजी हाथ जोड़कर धीरे-धीरे बोलीं—"मैंने कृष्णको नहीं देखा है, तुम्हें देखा है। कृष्णका ध्यान करने बैठती हूँ तो तुम्हीं दिखाई देते हो। तुम्हीं मेरे कृष्ण हो! प्रभो! छल करके मुझे दूर न हटाओ।"

अवला आमि, चक्री तुमि, **चरणे नमि, ठेलना पाय।**	मैं अबला हूँ, तुम चक्री हो, पैरों पड़ती हूँ, मुझे ठुकराओ मत।
(नाहि) ज्ञान-गरिष्ठ, ना बुझि कृष्ण, **तोमा भिन्न, ना देखि ताँय।।**	न मैं ज्ञान-गरिष्ठ हूँ, न कृष्णको जानती हूँ, तुमसे अलग वह दिखता ही नहीं।
तुमि भव-धव, आमि दासी तव, **एइ जानि शुधु, जीवन ध'रे।**	तुम जगत्-पति हो, मैं दासी हूँ, केवल यही जानकर जीवन धारण किये हूँ।
करिबे करुणा, चरणे ठेलना, **कि हबे धर्म्म, अबला मेरे।।** **—ग्रन्थकार।**	मुझ पर करुणा करना, ठुकराना मत। क्या धर्म होगा अबलाको मारकर?

● चरण-पादुका दान

श्रीगौराङ्गने स्थिर होकर श्रीमतीजीके कातर कण्ठसे निकली विलाप-ध्वनिको सुना, लेकिन कोई उत्तर नहीं दिया। जान पड़ता है कि उनकी दोनों आँखें एक बार धूलि-धूसरित, घूँघट काढ़े, चरणतलमें पड़ी, विषादमयी उस स्वर्ण-प्रतिमाके ऊपर पड़ी। तत्काल क्षणमात्रमें उन्होंने आँखोंको फेर लिया। वह सकरुण दृष्टि किसीके देखनेमें नहीं आयी। प्रभुने आँखें फेरकर सब लोगोंके सामने सुस्पष्ट मधुर स्वरमें श्रीमतीजीको लक्ष्य करके

कहा--"साध्वि ! तुम मानवी नहीं हो, तुम देवी हो। मैं पथका भिखारी संन्यासी हूँ। करङ्क-कौपीन मेरा सम्बल है। तुमको देने योग्य मेरे पास कुछ नहीं है। तुम मेरी चरण-भिखारिणी हो, इसलिये तुमको मैंने अपने चरणोंकी काष्ठ-पादुकाएँ दीं।* मेरे प्रति तुम्हारी अचला भक्तिके निदर्शन स्वरूप मेरी इन काष्ठ-पादुकाओंके द्वारा तुम मेरे अदर्शन-जनित दुःखको दूर करना।"

---

*राष्ट्रकवि श्रीमैथिलीशरणजी गुप्तने भी अपनी "विष्णुप्रिया" पुस्तकमें इस हृदयवेधी प्रसंगको बड़े ही करुण एवं मर्मस्पर्शी शब्दोंमें व्यक्त किया है, जिसे सन्दर्भकी दृष्टिसे यहाँ दिया जा रहा है--

उस दिन भीड़ हुई ऐसी नवद्वीपमें,
मानो जन-सिन्धुमें निमग्न हुई अवनी !
कीर्त्तनके साथ-साथ जय-जयकारसे
भर उठा अम्बर, अपार हर्ष छा गया।
देव अभी द्वार पर पहुँच न पाये थे,
आगे बढ़ विष्णुप्रिया पैरों पड़ी उनके।
तन्वंगी व्रतोंसे कृश हो गई थी और भी,
और परिधान भी मलिन-सा था उसका।
दीप्त-सी थी दीप-शिखा अंचलकी ओटमें !
किंवा बदलीके बीच चन्द्रकला कोमला।
हट गये दो पद वे पीछे देख उसको।
बोले--"तुम कौन हो ?" उठी वह तुरन्त ही--
क्षुब्ध फणिनी-सी नहीं, आकुल हिलोर-सी !
स्तब्ध होके दृश्य वह देखने लगे सभी।
"जानती नहीं मैं अब कौन, किन्तु पहले
एक दूसरेको जानते थे हम दोनों ही।
भूले तुम, हाय ! मैं ही भूल नहीं पाई क्यों ?"
सकुचे-से एक पल मौन रह बोले वे--
"भूल हुई विष्णुप्रिये, मुझको क्षमा करो।
मैं हूँ निःस्व, किन्तु कहो, चाहती हो तुम क्या ?"
"हाय स्वामी, मेरी क्षमाका क्या अब मूल्य है ?

मत्पादुके गृहीत्वाथ गृहिणी याहि ते गृहम्।
स्वर्णात्मिके इमे पूज्ये सदा शुद्धे शुचिस्मिते ।।
--श्री चैतन्य-तत्त्व-दीपिका

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने प्रभुकी दी हुई दोनों काष्ठ-पादुकाएँ अत्यन्त आदरपूर्वक और परम भक्तिके सहित पहले मस्तक पर धारण कीं, फिर मस्तकसे नीचे लाकर अपने वक्षःस्थल पर धारण कीं और अन्तमें उनको

फिर भी बता दो मुझे, कैसे रहूँ, क्या करूँ ?"
"करता हूँ मैं जो, वही ध्यान भगवान्‌का।"
"देते नहीं करने कृपण तुम वह भी !
आ-आकर बीचमें स्वयं ही बैठ जाते हो !!"
"ओहो ! क्या प्रबल ऐसा है स्वकीया भाव भी ?"
सुन सब लोग हाय-हाय करने लगे।
प्रभुने भी कर लिया नीचा सिर अपना।
बोले वे प्रयास कर निजको संभालके--
"कर सकती है यह नारी ही तुम्हारी-सी।
भूषण-वसन-हीन भिक्षु एक अब मैं;
क्या है, जिसे आदरसे भेंट करूँ तुमको ?
नंगे पैर मैं तुम्हारे आगे खड़ा होता हूँ !"
अपनी खड़ाऊँ वहीं प्रभुने उतार दीं।
लेकर बधूने उन्हें सिरसे लगा लिया।
"काठके ये टुकड़े तुम्हारे किस कामके ?"
"तारक, तुम्हारे पद-चिह्न बने इनमें,
पोत बन पार कर देंगे यही मुझको।"

बोली जनताने जय विष्णुप्रिया-गौरकी।
करके प्रणाम जननीको, जन्मभूमिको,
त्वरित वहींसे प्रभु लौटके चले गये।
बेला तक आके यथा अब्धि लौट जाता है।
आई नहीं नींद उस रात एक पल भी,
विष्णुप्रिया लेट-लेट उठ-उठ बैठती !

सैकड़ों बार चूमकर कृतार्थ हो गयीं। प्राणवल्लभकी पदरजके स्पर्शसे श्रीमतीजीके सारे अङ्ग पुलकायमान हो उठे। नयनोंके प्रेमाश्रुओंसे वक्षःस्थल डूब गया। लाखों नर-नारीगण इस अपूर्व दृश्यको देखकर हरि-ध्वनि करने लगे। जय-ध्वनिसे नदिया नगरी मानो प्रकम्पित हो उठी।

● अपूर्व दृश्य

उस अपूर्व दृश्यका जिन्होंने दर्शन किया, उनके समान भाग्यवान जगतमें दूसरे कौन हैं? जीवनमें वे लोग यह दृश्य कभी नहीं भूलेंगे। श्रीगौर-विष्णुप्रियाकी अन्तिम विदाई, नवद्वीपमें अन्तिम दिनका भक्तबृन्दके साथ पुनर्मिलन, प्रभुके ये अन्तिम जननी और जन्मभूमिके दर्शन उनके संन्यासी जीवनकी प्रधान घटनाएँ हैं। इन घटनाओंको लक्ष्य करके दीन ग्रन्थकारने एक पद-रचना की थी। उसे यहाँ उद्धृत करते हैं—

दुयारेर पाशे मलिन वदने।
आर कारे देखि, विषादित मने।।

द्वारके पास मलिन मुख और विषादित मन लिये और किसको देख रहा हूँ?

दाँड़ाये नीरवे, कि देखिछे सति।
अनिमिष आँखि, दृष्टि कार प्रति।।

हे सती! चुपचाप खड़ी क्या देख रही हो? अपलक आँखें और दृष्टि किसके प्रति है?

कि भाविछे मने सदा विषादिनी।
नयनेर नीरे तितिछे मेदिनी।।

हे सर्वदा विषादित रहनेवाली! मनमें क्या सोच रही हो? नयनोंके नीरसे पृथ्वी तर हो रही है।

जाइ जाइ करे ना पारे चलिते।
बलि बलि करे ना पारे बलिते।।

जाऊँ-जाऊँ कर रही है, परन्तु चला नहीं जाता। बोलूँ-बोलूँ करती है, पर बोला नहीं जाता।

कि कथा कहिबे मरमेर व्यथा।
सरमे जड़ित अबला अनाथा।।

क्या बात कहेगी? व्यथा तो अन्तरकी है। अहा! अबला अनाथा लज्जासे जकड़ी है।

लक्ष लोक घेरि प्राणनाथे ताँर।
निज जन सब दाँड़ाये दुयार।।

लाखों लोग उसके प्राणनाथको घेरे हैं, सब अपने परिजन द्वार पर खड़े हैं।

केमने जाइबे लोके कि कहिबे । निरजने ताइ मने मने भावे ।।	कैसे जाय ? लोग क्या कहेंगे ? यही एकान्तमें मन-ही-मन सोच रही है ।
भाङ्गिया लाजेर कठिन बन्धन । छुटिला रमणी नाथेर सदन ।।	लज्जाका कठिन बन्धन तोड़कर रमणी अपने स्वामीके पास दौड़ चली ।
पड़िला चरणे गलाय वसन । वाह्य - ज्ञान - हीन आवृत वदन ।।	*गलेमें वस्त्र धारे चरणोंमें गिर पड़ी, बाह्य ज्ञान नहीं है, वदन ढँका है ।
चमकि गौराङ्ग चकिते चाहिला । के तुमि बलिया दुइ पा हटिला ।।	श्रीगौराङ्गने चमककर चकित हो देखा । 'तुम कौन हो ?'––कहकर दो पैर पीछे हट गये ।
नीरव क्रन्दन अबला नारीर । शुनिया सकले अवश शरीर ।।	अबला नारीका नीरव क्रन्दन सुनकर सब अवश शरीर हो गये ।
केह ना कहिला एकटिओ कथा । रमणी तखन प्रकाशिला व्यथा ।।	किसीने एक भी बात नहीं कही । तब रमणीने अपनी व्यथा प्रकाशित की ।
बले विष्णुप्रिया आमि तव दासी । तोमार विरहे आँखि-नीरे भासि ।।	श्रीविष्णुप्रिया बोलीं–"मैं तुम्हारी दासी हूँ, तुम्हारे विरहमें रो-रो कर अश्रुओंमें बही जा रही हूँ ।
जगत तारिले बाकि हतभागी । उपाय कि हबे बल ओहे योगी ।।	जगतका उद्धार किया, केवल मैं हतभागी बञ्चित रही । हे योगी ! बताओ मेरे लिये क्या उपाय होगा ?"
नीरव जगत नीरव आकाश । स्तब्ध जीवगण नाहि बहे श्वास ।।	जगत नीरव है, आकाश नीरव है, सब जीवगण स्तब्ध हैं, श्वास नहीं चलते ।
धीरे धीरे तबे कहिलेन यति । थाके जेन तव कृष्णे रति मति ।।	तब यतीने धीरे-धीरे कहा–– "श्रीकृष्णमें तुम्हारी रति-मति बनी रहे ।"
कहे विष्णुप्रिया कृष्ण नाहि जानि । तोमा छाड़ा कृष्ण आमि नाहि चिनि ।।	श्रीविष्णुप्रियाने कहा–"मैं कृष्णको नहीं जानती, तुम्हारे सिवा मैं किसी और कृष्णको नहीं पहचानती ।

*गलेमें वस्त्र, दाँतो तले तृण––ये दीनताके चिह्न हैं ।

तुमि मोर गति तोमा बिने आर ।
त्रिजगते प्रभु के आछे आमार ।।

तुम्हीं मेरी गति हो । हे प्रभु ! तुम्हारे बिना मेरा त्रिभुवनमें और कौन है ?"

शुनि प्रभु कहे सम्बोधि सतीरे ।
आमि जे सन्न्यासी कि दिब तोमारे ।।

यह सुन प्रभुने सतीको संबोधन कर कहा--"मैं संन्यासी हूँ, तुमको क्या दूं ?

काष्ठ - पादुका दिनु उपहार ।
चिर शान्ति इथे हइबे तोमार ।।

ये काष्ठ-पादुकाएँ उपहार देता हूँ, इससे तुमको चिर शान्ति मिलेगी ।"

हृदय - नाथेर पदरज माखा ।
वक्षे धरि सति चरण - पादुका ।।

अपने हृदय-नाथकी पद-रजसे सनी हुई चरण पादुकाएँ सतीने वक्षपर धारण कर,

करिया चुम्बन धरिला मस्तके ।
हरि हरि ध्वनि उठिला चौदिके ।।

चुम्बन कर मस्तकपर धारण कीं, तब चारों ओर 'हरि-हरि' ध्वनि गूँज उठी ।

जय जय रवे नदीया काँपिल ।
गौराङ्ग - महिमा भुवन भरिल ।।

जय-जयकारकी ध्वनिसे नदिया नगरी कम्पित हो उठी, गौराङ्ग-महिमासे भुवन भर उठा ।

नदीया नगरे एल हारा-धन ।
गाय हरिदास पुनर्म्मिलन ।।

नदिया नगरमें खोया धन आया । उस पुनर्मिलनका हरिदास गान करते हैं ।

लिखिते लिखिते प्राण उठे केँदे ।
जा किछु कहिनु चरण - प्रसादे ।।

लिखते-लिखते प्राण रो उठते हैं । जो कुछ वर्णन किया है सब श्रीचरणोंकी कृपासे हुआ है ।

जननी और जन्मभूमिको अन्तिम प्रणाम करके अलक्षित रूपसे प्राण-प्रियतमा विष्णुप्रियाके प्रति अन्तिम कटाक्ष-पात करके, भक्तवृन्दसे अन्तिम विदा लेकर नवद्वीपचन्द्र पुनः नवद्वीप छोड़कर चले । जाते समय मातासे प्रभुने बारम्बार कहा--

माये नमस्करि प्रभु बोले बारम्बार ।
ना छाड़िह कृष्ण, ना भजिह ए संसार ।।--चै० मं०

शची देवीने मार्गके किनारे बैठे-बैठे सब कुछ देखा। पुत्रके साथ बातें करनेका उन्हें और अवसर नहीं मिला। तथापि एक बात कहे बिना वे न रह सकीं। उन्होंने कहा--"बेटा निमाई! तुम मुझको श्रीकृष्णका भजन करनेका जो उपदेश देते हो, वह ठीक है, परन्तु हाथमें माला लेकर कृष्ण-नाम जपनेके लिये बैठती हूँ तो तुम्हारा नाम मुँहमें आ जाता है। तुम्हारे नाममें जो मधुरता मिलती है वह कृष्ण-नाममें मैं नहीं पाती।" प्रभु और कोई बात न कहकर माताकी प्रदक्षिणा करके जानेका उद्योग करने लगे। यह देखकर शची देवीने करुण क्रन्दन करते हुए कहा--"बेटा निमाई! मेरी बातका उत्तर देता जा।" प्रभुने तब भी वही बात कही--

जे भजिबे कृष्ण तार कोले आछि आमि।

● प्रभुकी विदाई

नवद्वीप-चन्द्र नवद्वीपको अन्धकारमय करके चल दिये। यह नवद्वीपमें उनका अन्तिम दिन था। यही श्रीगौराङ्गकी अन्तिम विदा थी। नवद्वीपके चन्द्र नवद्वीपको अन्धेरा करके अन्तिमरूपसे अस्तमित हो गये। नवद्वीप-गगनमें दिनमें ही महाअमावस्याकी रात्रि उदय हो गई। एकादशी तिथिमें अमावस्या लग गयी। असम्भव सम्भव हो गया। फिर नवद्वीप-आकाशमें श्रीगौरचन्द्र उदय न होंगे, जान पड़ता है, इसी कारण ऐसा हुआ। सब भक्तवृन्द प्रभुके साथ-साथ चल पड़े। शची देवी भी जानेके लिये तैयार हो गयीं ; परन्तु मालिनी आदि पड़ोसी स्त्रियोंने हाथ पकड़कर रोक लिया। शची देवी और श्रीमतीजी घरके द्वार पर बैठकर जब तक प्रभु दिखायी देते रहे तब तक एक टकसे उनकी ओर देखती रहीं। जब प्रभुकी वह दीर्घ काया उनकी दृष्टिसे ओझल हुई, तब वे दोनों हा-हाकार करके उच्च स्वरसे रुदन करती-करती आङ्गनमें आकर पछाड़ खाकर गिर पड़ीं।

शचीर कान्दना देखि पृथिवी विदरे।--चै० मं०

लाखों लोग प्रभुके साथ जा रहे थे--

चलिला ठाकुर पाछे धाय भक्त सब।

सबके नेत्रोंसे अविरल अश्रुधारा बह रही है, वदन पर घोर विषादकी छाया है, हृदयमें दारुण दुःख है। शान्तिपुर नगर तक सभी प्रभुके साथ-साथ चले। कई आदमी प्रभुके साथ नीलाचल तक गये।

शची देवी और श्रीमतीजीके पास श्रीवास आदि कुछ प्रभुके अन्तरङ्ग भक्त लोग खड़े होकर क्रन्दन करने लगे। उनमें दामोदर पण्डित भी थे। वे प्रभुके साथ नहीं गये, शची देवी और श्रीमतीजीकी देख-भाल करने लगे। पुराने सेवक ईशान दोनों देवियोंके एक पार्श्वमें बैठकर सिर नीचा किये रो रहे हैं। बहुत देरके बाद सब लोग मिलकर रोती हुई दोनों देवियोंको पकड़ कर घरमें ले गये। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने प्रभुकी दी हुई काष्ठ-पादुका-द्वयको कलेजेसे लगाकर रोते-रोते घरमें प्रवेश किया और उनको कलेजेसे न हटाया। वे प्रभुकी चरण-पादुकाओंकी नित्य पूजा करने लगीं।

●

एकत्रिंश अध्याय

वंशीवदन और श्रीमतीजी । काञ्चनाका नीलाचल गमन

प्रसाद मागिला वंशी जाह्नवीर ठाँइ ।
विष्णुप्रिया-दास भावि ना दिला गोसाञि।।
--वंशी-शिक्षा

● ईशानके साथ सेवाकार्यमें वंशीवदनका संयोग

श्रीगौराङ्गको बिदा करके शची देवीका दुःख और शोक दूना बढ़ गया। उन्होंने खोया हुआ धन हाथमें पाकर फिर उसे खो दिया। यह दुःख उनके लिये बड़ा ही दुःसह हो उठा। आत्मीय स्वजनोंको अब शची देवीके जीवनकी आशा न रही। शची माताको सान्त्वना देनेका कोई उपाय नहीं है। रात-दिन रोते रहनेसे वृद्धाकी आँखोंकी ज्योति समाप्त हो रही है। दुःख और शोकसे वृद्धाका भग्न शरीर और भी भग्न हो उठा। उनकी उठनेकी शक्ति जाती रही, वे घरके भीतर शय्या पर सोयी रहती हैं। बहुत कष्टपूर्वक कभी-कभी बाहर द्वारपर आकर बैठती हैं और जिससे भेंट होती है, उसीसे यशोदाके भावमें निमाई चाँदके सम्बन्धमें दो-चार बातें करती हैं। अधिक बात करनेकी शक्ति उनमें नहीं रही। उच्च स्वरसे रोनेकी क्षमता भी नहीं है। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी सासकी अवस्था देखकर शङ्कित हो गयीं। वे सर्वान्तःकरणसे अत्यन्त यत्नपूर्वक वृद्धा सासकी सेवा करती हैं; कहीं उनको कष्ट न हो, इस कारण श्रीमतीजी अब रोती नहीं हैं। प्रभुके पुराने सेवक ईशान दोनों देवियोंकी विशेष रूपसे सेवा करते आ रहे हैं। वे भी वृद्ध हो गये हैं। प्रभुके विरह-वाणसे उनका हृदय भी जर्जरित है, शोकसे शरीर भग्न हो रहा है। बुढ़ापेके कारण ईशानके द्वारा दोनों देवियोंकी भली भाँति देख-भाल तथा सेवाका

कार्य सम्यक् रीतिसे सम्पादित होना सम्भव नहीं है। वृद्ध पुराने सेवक ईशान जहाँ तक सकते हैं, वहाँ तक प्राणपणसे सेवा करते हैं। ईशानके समान महा भाग्यवान कौन है ?

सेविलेन सर्व्वकाल आइरे ईशान।	ईशानने सर्वकाल शची माँकी
चतुर्द्दश लोक मध्ये महाभाग्यवान्॥	सेवा की। वे चौदहों लोकोंमें महा भाग्यवान हैं।

शची देवी ईशाने यतेक स्नेह कैल।	शची देवीने जो स्नेह ईशानके
कहिते कि जानि ताहा साक्षाते देखिल॥	प्रति किया, वह वर्णन नहीं किया जा
--चै० भा०	सकता, मैंने साक्षात् देखा था।

इसी समय प्रभुके एक दूसरे अति प्रिय भक्त वृद्ध ईशानके साथ दोनों देवियोंके सेवा-कार्यमें योग देने लगे। इस महाभाग्यवान महापुरुषका नाम है श्रीवंशीवदन। वे प्रभुके आदेशसे उनकी माता और गृहिणीकी सेवा और परिचर्याका भार लेने आये हैं। सर्वप्रथम वंशीवदनका परिचय ईशानके साथ हुआ। ईशानने प्रभुका आदेश सुना। दोनों देवियोंकी सेवाका कार्य एक मात्र ईशानके ऊपर था। अब उनको हिस्सा देना पड़ा। इससे ईशानको सुख न मिला। परन्तु करते क्या, प्रभुका आदेश था। वंशीवदनने ईशानसे कहा--

महाप्रभु एइ आज्ञा करिला आमाय।	महाप्रभुने मुझे यह आज्ञा दी है
सेविते माताय आर श्रीविष्णुप्रियाय॥	कि मैं माता और श्रीविष्णुप्रियाकी
--वं० शि०	सेवा करूँ।

ईशानने कहा कि प्रभुका आदेश सर्वथा पालनीय है।

आज्ञा बलवान एइ वेदेर विधान।

वंशीवदनको साथ लेकर ईशान घरके भीतर गये और शची देवी तथा श्रीमतीजीको सारी बातें निवेदन करके उनका परिचय दिया तथा प्रभुका आदेश बताया। शची देवी शय्या पर सोयी हुई थीं। यह सुनते ही कि निमाई चाँदके पाससे आदमी आया है, वे उठ बैठीं तथा वंशीवदनको देखकर, उनके दोनों हाथ पकड़कर रोते-रोते पूछने लगीं--

तबे श्रीवंशीर कर धरि कन आइ।	तब श्रीवंशीवदनका हाथ पकड़
तोरे कि बलिया गेछे आमार निमाइ।।	कर शची माता बोलीं कि मेरा निमाई
--वं० शि०	तुमको क्या कह गया है ?

वंशीवदनने शची माताके चरणोंकी वन्दना करके रोते-रोते प्रभुका सारा संवाद कह सुनाया और नाना प्रकारके प्रबोध वचनोंसे शची देवीको सान्त्वना दी। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको वंशीवदनने दूरसे ही गलेमें वस्त्र धारण कर कोटि-कोटि प्रणिपात किये। ईशान और वंशीवदन दोनों मिलकर अब दोनों देवियोंके सेवा-कार्यमें लग गये।

प्रभु आज्ञा अनुसारे ईशान वदन।
करिते लागिला उभयेर सुसेवन।।
--वं० शि०

यहाँ वंशीवदनका संक्षेपमें परिचय दूंगा। ये परम कुलीन ब्राह्मण-सन्तान थे। पिताका नाम था छकड़ि चट्टराज। आदिम निवास नवद्वीपके निकट पाटुली ग्राम था। श्रीश्रीमहाप्रभुके आदेशसे ये श्रीधाम नवद्वीपमें आकर प्रभुके घरके निकट वास करने लगे। वंशीवदन प्रभुके अति प्रिय अन्तरङ्ग भक्तोंमें थे। इन्हीं महापुरुषने विल्वग्राममें श्रीश्रीगौराङ्ग-मूर्ति तथा देवीके आदेशसे श्रीधाम नवद्वीपमें श्रीश्रीमहाप्रभुकी दारु-मूर्तिकी प्रतिष्ठा तथा देवमूर्तिकी नित्य पूजा और सेवाकी व्यवस्था की थी।

ईशान और वंशीवदन दोनों ही प्रभुके घरमें रहकर दोनों देवियोंकी देख-भाल और सेवा-परिचर्या करने लगे।

● काञ्चनाकी नीलाचल-यात्रा

काञ्चना क्षण भरके लिये भी श्रीमतीजीका सङ्ग नहीं छोड़तीं। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके आदेशसे शची माताकी अनुमति लेकर काञ्चना एक बार प्रभुके दर्शन करने नीलाचल गयीं। प्रति वर्ष नवद्वीपसे अनेकों नर-नारी प्रभुके दर्शन करने नीलाचल जाते थे। उनके ही सङ्ग काञ्चना भी गयीं। दामोदर पण्डित साथमें थे। सखीके लिये देवीका यह आदेश था कि वह उनके प्राण-बल्लभके साथ एक बार साक्षात्कार कर आवे। केवल साक्षात्कार करनेसे काम न चलेगा, देवीके पक्षमें प्रभुसे दो-एक दुःखकी बातें

कहकर आना ठीक होगा। देवीका यह आदेश बड़ा कठिन था। क्योंकि सब लोग जानते थे कि प्रभु स्त्रीजनका मुँह नहीं देखते, उनके समीप स्त्रीजनके जानेकी आज्ञा ही नहीं है। परन्तु प्रभुकी मौसी श्रीचन्द्रशेखर आचार्यकी स्त्री तथा श्रीवास पण्डितकी पत्नी मालिनी आदि दो-एक बड़ी - बूढ़ी स्त्रियोंको प्रभुके पास जानेकी मनाही न थी। उनके साथ काञ्चना भी गयी थीं। दामोदर पण्डित काञ्चनाके नीलाचल जानेका वृत्तान्त जानते थे। श्रीगौराङ्गके साथ उनकी प्रियाकी प्रिय सखी काञ्चनाकी कोई बात हुई या नहीं, इसे प्रभु ही जानें। गोलोकवासी महात्मा श्रीशिशिर कुमार घोषकी गौर-गत-प्राणा परम वैष्णवी कनिष्ठा भगिनीके रचे एक पदमें सखी काञ्चनाके प्रति देवीकी आदेश-वाणी अति सुन्दर और सुललित भाषामें वर्णित है। वह पद कृपालु पाठक-पाठिकागणके चित्त-विनोदार्थ यहाँ उद्धृत किया जाता है--

देवीकी उक्ति--

सखि ! दिन गणि गणि, दिन फुराइल **आर कत काल जीव।**	हे सखि ! दिन गिनतें-गिनते दिन बीत गये, अब और कितने दिन जीऊँगी ?
थाकिते जीवन, श्रीगौराङ्ग धन **आर कि देखिते पाव ।।**	जीवन रहते क्या श्रीगौराङ्ग धनको कभी देख पाऊँगी ?
पथ चाहि चाहि, आँखि आँधा ह'ल **जीयन्ते हइनु मरा।**	राह देखते-देखते आँखें अन्धी हो गयीं, मैं जीती ही मर गयी।
शोन मोर वाणी, पराण-सजनि ! **नीलाचले जाओ त्वरा ।।**	हे प्राण-सजनि ! मेरी बात सुनो, जल्दी नीलाचल चली जाओ।
करिये जतन, धरिये चरण **कहिओ सजनि ! तारे।**	यत्न करके पाँव पकड़के, हे सजनि ! उनसे कहना--
तोमार लागिया, मरे विष्णुप्रिया **चल त्वरा नदेपुरे ।।**	तुम्हारे लिये विष्णुप्रिया मर रही है। शीघ्र नवद्वीप चलो।

प्रभुके प्रति काञ्चनाकी उक्ति--

करुणा करिया, एइ अवतारे **तारिले जगतवासी।**	तुमने करुणा करके इस अवतारमें संसारके लोगोंको तार दिया।

तव चरणामृते, केवल बञ्चिता एका विष्णुप्रिया दासी ।।	तुम्हारे चरणामृतसे बञ्चित है केवल एक विष्णुप्रिया दासी ।

यह बात सुनकर श्रीगौराङ्गने क्या किया—

काञ्चनार वाणी, सुनि गुणमणि छल छल आँखे चाय ।	काञ्चनाकी बात सुन गुणमणि श्रीगौराङ्ग छलछलाती आँखोंसे देखने लगे ।
करुणा - निधिर, करुणा बाड़िल त्वरा नदेपुरे धाय ।।	करुणानिधिकी करुणा बढ़ी और वे नवद्वीपको दौड़ चले ।
त्यजिला कौपीन, त्यजि छेंड़ा-काँथा, त्यजिल काङ्गालवेश ।	कौपीन, फटा कन्था, कङ्गालका वेश त्याग दिया ।
नव नटवर, गौराङ्ग सुन्दर आइल आपन देश ।।	नव नटवर श्रीगौराङ्ग सुन्दर अपने देश आये ।
आवार नदेय, फुटिल कुसुम भ्रमर धरिल तान ।	फिर नदियामें कुसुम विकसित होने लगे तथा भ्रमर तान देने लगे ।
आवार भकत, आनन्दे मातिल कोकिल धरिल गान ।।	फिर भक्तगण आनन्दसे मतवाले हो उठे, कोयलने गाना शुरू किया ।
आवार न'देय, बहु दिन परे उदिल न'देर चाँद ।	फिर नदियामें बहुत दिनोंके बाद नदियाके चाँदका उदय हुआ ।
आँधार नदीया, हलो आलोमय पूरिल बलाइर साध ।।	अन्धकारमय नदिया आलोकित हो गया और बलरामकी साध पूरी हो गयी ।

अधम ग्रन्थकार रचित इस सम्बन्धमें सखि-संवादका एक पद यहाँ उद्धृत किया जाता है । इसका श्रीगौराङ्ग-लीला-रस-लोलुप कृपालु रसज्ञ पाठक-पाठिकावृन्दके रसास्वादन करनेसे मैं कृतार्थ होऊँगा—

काञ्चनाकी उक्ति—

कतइ साधिनु, कतइ काँदिनु गोरार चरण ध'रे ।	गौराङ्गके चरण पकड़ कर कितनी ही खुशामद की और कितनी ही रोयी ।

एकबार एसे, नदीया नगरे, देखा दिये जाओ तारे ।।	एक बार नदिया नगरमें आकर उसको दर्शन दे जाओ ।
नाम ना लइनु, पाछे नाहि शुने, कथागुलि अबलार ।	मैंने नाम इसलिये नहीं लिया कि कहीं अबला सम्बन्धी बात न सुनें ।
ठारे ठोरें तारे, कत ना बलिनु, नदीयार समाचार ।।	मैंने सैन-संकेत द्वारा ही नदियाके कितने समाचार सुना दिये ।
सकलि शुनिल, पुछिल कत ना, छाड़ा सुधु एक धनि ।	उन्होंने सब कुछ सुन लिया और एक श्रीमतीजीको छोड़कर बहुत-सी बातें पूछीं ।
मुखेर भावेते, बुझिलाम तारे, चतुरेर शिरोमणि ।।	उनके मुँहके भावसे मैं समझ गयी कि वे चतुर-शिरोमणि हैं ।
निजने पाइया, भये भये आमि, विरले पुछिनु तारे ।	एकान्त पाकर मैंने डरते-डरते उनसे चुपचाप पूछा ।
नारीर चातुरी, खेलिनु तखन, सखीर प्रबोध तारे ।।	उस समय मैंने अपनी सखीके सन्तोषके लिये नारीकी चतुरता प्रयोग की ।
पुछिलाम आमि, ओहे उदासीन्, विष्णुभक्त बड़ तुमि ।	मैंने पूछा--हे उदासीन ! तुम बड़े विष्णुभक्त हो ।
बाञ्छा बड़ मोर, विष्णुनाम-सुधा, तव मुखे शुनि आमि ।।	मुझे बड़ी अभिलाषा है कि तुम्हारे मुँहसे विष्णुनाम-सुधाका श्रवण करूँ ।
नदीयार आछे, अभागिनी एक, नाम तार विष्णुप्रिया ।	नदियामें एक अभागिनी है, उसका नाम विष्णुप्रिया है ।
सखी तार आमि, पाठायेछे मोरे, माथार दिव्य दिया ।।	मैं उसकी सखी हूँ । उसने शिरकी शपथ देकर मुझे भेजा है ।
शुनिते नामेर, आखर चारिटी, तोमार वदन - चन्द्रे ।	तुम्हारे मुखचन्द्रसे उसके चार अक्षरके नामको मैं सुनूँ ।

बल देखि, यति ! सेइ से नामटी, ललित मधुर छन्दे ।।	हे यति ! ललित मधुर छन्दमें वही नाम बोलो तो देखें।
आर किछु नाइ, बलिते आमार, नाम कर एक बार।	मुझे और कुछ नहीं कहना है, बस एक बार नाम लो।
पुराओ वासना, ओहे न्यासीवर, मन - साध अबलार ।।	हे संन्यासीवर ! मेरी वासना पूरी करो, यही अबलाके मनकी साध है।

× × ×

चमकि उठिल, सखिर नामेते, विनत हइल आँखि।	सखीके नामसे ही वे चमक उठे, आँखें विनत हो गयीं।
आर ना चाहिल, कथा ना कहिल, मरमे हइल दुखी ।।	फिर न तो देखा और न कोई बात की। मर्मस्थलमें व्यथा हो गयी।
(आमि) चलिया आइनु, सेखान हइते, किछु नाहि बलिलाम।	मैं कुछ कहे बिना ही वहाँसे चली आयी।
सखीर नामेर, मोहिनी शकति, भाल करि बुझिलाम ।।	मैंने सखीके नामकी मोहिनी शक्तिको भली भाँति पहचान लिया।
हरिदास भने, नदीया नागरी सखीरे जाइया कह।	हरिदास कहते हैं—री ! नदिया नागरी ! सखीसे जाकर कहना कि
गौर - हृदयें, से रूपेर खनि जागितेछे अहरह ।।	गौरके हृदयमें उस रूपकी ज्योति दिन-रात जागती रहती है।

●

द्वात्रिंश अध्याय

शची देवी और प्रभुकी लीला-संवरण कथा

गौराङ्ग विच्छेदे विष्णुप्रिया कातरा अति ।	श्रीगौराङ्गके विच्छेदसे श्री-
द्विगुण हइल शोक हइला विस्मृति ।।	विष्णुप्रिया अति कातर हैं। शोक
--प्रेम विलास	द्विगुण हो उठा और भान न रहा ।

● शची माँका प्रयाण

वृद्धा शची देवीका अति जीर्ण और क्षीण शरीर श्रीनिमाई चाँदके वियोगमें दिन-दिन क्षयको प्राप्त होने लगा। श्रीनिमाई चाँदके चन्द्रमुखका वे दिन-रात ध्यान करती थीं। वृद्धाका जप-तप, सब कुछ पुत्रका वह सुन्दर चन्द्र-वदन ही था। रातमें निद्रित अवस्थामें उसी चन्द्रमुखको देखकर वे रो पड़ीं।

निरन्तर दिवा निशि आन नाहि जानि ।	मैं और कुछ नहीं जानती,
स्वपनेह देखों तोर चाँद मुख खानि ।।	निरन्तर रात-दिन और स्वप्नमें तुम्हारा
--चै० मं०	ही चन्द्रवदन देखती हूँ।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी सारे कर्म परित्याग करके सासके सेवा-कार्यमें लगी रहती हैं। भक्तवृन्द सदा समाचार लेते रहते हैं। ईशान और वंशीवदन प्राणपणसे शची माताकी सेवा कर रहे हैं। सबने देखा कि इस बार शची माताके जीवनकी आशा नहीं है। सारे नवद्वीपके लोग प्रभुके गृहके द्वार पर एकत्रित हो गये। दलके दल नर-नारी वृन्दने आकर प्रभुके घरको आवृत्त कर लिया। चारों ओर हरि-संकीर्त्तनकी उच्च ध्वनि होने लगी। प्रभुके भक्तवृन्दने दल बाँधकर महासंकीर्त्तन-यज्ञमें श्रीगौराङ्ग प्रभुका आवाहन किया। हरि-नाम संकीर्त्तनकी तरङ्गमें नदिया नगरी डूबने लगी। 'जय ! शची माताकी जय !', 'जय ! श्रीगौराङ्गकी जय !' के निनादसे नदिया नगरी कम्पित हो उठी। प्रभुकी माताको दिव्य यानमें पुष्प-मालाओंसे सजाकर भक्तवृन्द श्रीधाम परिक्रमा करके पतित-पावनी सुरसरिके तीर पर

ले आये। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी रोते-रोते वस्त्रसे ढकी डोलीमें सवार होकर सासके साथ-साथ गङ्गाके तीर गयीं। सङ्गमें काञ्चना भी थीं।

गङ्गाके तीर जाकर शची माताने बहूको पास बुलाया। उनके कानोंमें क्या कहा, उसे कोई सुन न सका। बहूके गले लिपटकर वृद्धाने रोते-रोते अन्तिम विदा ली। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके नीरव रुदनसे उपस्थित भक्तोंका हृदय उन्मथित हो गया। श्रीनिमाई चाँदका नाम लेते-लेते शची माताने सचेत अवस्थामें ही नश्वर शरीर त्यागकर नित्यधामको प्रयाण किया। भक्तवृन्द उच्च स्वरसे रोते-रोते हरिनाम-संकीर्त्तन करने लगे। संकीर्त्तन-यज्ञेश्वर श्रीगौराङ्गने अलक्ष्य रूपमें आकर रसराज-मूर्तिसे माताको अन्तिम दर्शन दिये। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी प्राण-वल्लभकी रसराज-मूर्ति देखकर गङ्गाके तीर पर मूर्छित होकर गिर पड़ीं। काञ्चना उनको गोदमें उठाकर घर लायीं। शची माताके शोकमें भक्तगण विह्वल होकर रोते-रोते गङ्गाके तीरसे घर लौटे।

अन्धकारमयी नदिया नगरी पुन: गम्भीर अन्धकारसे पूर्ण हो गयी। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी अब अकेली हो गयीं; उनके प्राणवल्लभकी गोष्ठी शून्य हो गयी। श्रीगौराङ्गके वियोगमें नदियाके लोग शची माताका मुँह देखकर इतने दिन गौर-विरहके दु:खको सहते रहे, अब शची माताके वियोगमें वह दु:ख दूना बढ़ गया। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीका दु:ख और भी अधिक बढ़ गया। इस कथाको विस्तारसे कहनेसे हृदय विदीर्ण होने लगता है, यह दु:खकी कथा वर्णनातीत है।

● विष्णुप्रियाकी कठोर तपस्या

शची देवीके विरह और शोकमें श्रीमतीजी अतिशय कातर हो उठीं। सासके समक्ष वे घरकी बहू थीं; गृह-लक्ष्मीके समान गृहको आलोकित करती रहती थीं। सासके मनमें दु:ख न हो, इस हेतु देवी इच्छा न रहते हुए भी वस्त्राभूषण सब धारण करती थीं। बहूको सर्वदा सजाकर रखना शची देवीको अच्छा लगता था। देवीके मलिन मुख-चन्द्रको देखकर शची देवीका पुत्र-मुख न देख सकनेका विषम दु:ख कुछ हलका हो जाता था। अब सासके न रहने पर देवीने वस्त्राभूषणोंका पूर्णतया त्याग कर दिया और ब्रह्मचर्यव्रतके नियम ग्रहण कर श्रीगौराङ्ग-भजन करने लगीं।

इस प्रकार कुछ दिन श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने अकेली सखियोंसे परिवृत होकर प्राणबल्लभकी दी हुई काष्ठ-पादुकाओंकी विधि-पूर्वक पूजा और सेवा करके जीवनको सार्थक किया। भक्त-गण देवीके कठोर भजनकी बात सुनकर व्यथित-हृदय होकर हा-हाकार करने लगे।*

नीलाचलमें श्रीगौराङ्गके कानोंमें देवीके कठोर भजनकी बात पहुँची। दामोदर पण्डित नदियाके सब समाचार प्रभुको सुनाया करते। यह संवाद भी उन्होंने ही दिया। प्रभुने सुना कि उनकी प्राणप्रिया विष्णुप्रिया संन्यासिनी बनी है, तो उनके मनमें बड़ी व्यथा हुई। असह्य मनःकष्ट पाकर प्रभुने नीलाचलमें बैठकर इस समय कठोरसे कठोरतम श्रीकृष्ण-भजन प्रारम्भ कर दिया। प्रभुने मन-ही-मन सोचा, इतने दिनोंमें जाकर उनकी नदियाकी लीला ठीक उतरी। इतने स्नेहकी प्रेममयी प्राणप्रिया विष्णुप्रियाको संन्यासिनी बनाया। अब उनकी नर-लीला पूर्ण हुई, केवल स्वयं संन्यासी बनकर मनकी साध नहीं मिटी थी। कलिग्रस्त जीवके कलुषित मनको द्रवित करनेके

---

* श्रीबलरामदासजीने श्रीविष्णुप्रियाकी कठोर तथा अनवरत साधनाका मार्मिक वर्णन अपने एक पदमें किया है, जिसका उल्लेख उपयुक्त प्रसंगके कारण यहाँ कर देना समीचीन है--

विष्णुप्रिया नव बाला, हाथे लये जप माला, रूइ रूइ जपे गौर नाम।	विष्णुप्रिया नवबाला हाथमें जपमाला लेकर रो-रोकर गौर नामका जप करती हैं।
नवीना योगिनी धनी, विरहिणी कङ्गालिनी, प्रणमये नीलाचल धाम।।	वे नवीना योगिनी धनी विरहिणी हैं, कङ्गालिनी-सा वेष धारे हैं और नीलाचल धामको प्रणाम करती हैं।
सर्व्व अङ्गे माखा धूला, लम्बा केश एलो चूला सोणार अङ्ग अति दुरबल।	सब अङ्गोंमें धूल लगी है, लम्बे केश बिखरे पड़े हैं, स्वर्ण-सा अङ्ग अति दुर्बल हो रहा है।
बलराम दास कय, शुन प्रभु दयामय, मुछाये दाओ देवि आँखि-जल।।	बलराम दास कहते हैं--हे दयामय प्रभु सुनिये, देवीकी आँखोंका जल पोंछ दीजिये।

लिये जो कुछ बाकी रहा, वह प्रियाके द्वारा होगा। राज-रानीको भिखारिणीके वेषमें देखकर, जगन्माताको दुःखियाके रूपमें देखकर, कलिके जीव हरिनाम लेंगे। ऐसा होने पर ही उनका कार्य सम्पूर्ण होगा। श्रीगौराङ्गने इस प्रकार सोचकर मन-ही-मन स्थिर किया कि अब स्व-धाम गमन करना ही श्रेय है।

● प्रभुकी इहलोक लीलाकी पूर्णता और अन्तर्धान होनेकी कथा

प्रभुके अन्तर्धान होनेकी कथा गौर-भक्तोंको अविदित नहीं है। प्रियाके दुःखसे ही हमारे प्रभु इतने शीघ्र अन्तर्धान हुए। उनका संन्यास-ग्रहण कलि-ग्रस्त जीवोंके मङ्गलके लिये ही था। दीन-हीन वेषमें उनकी ऐसी कठोर साधना जीव-शिक्षाके लिये ही थी। लोक-शिक्षाके लिये ही उन्होंने भक्तवेष धारण किया था। भक्तवेषमें हमारे प्रभु सबके चित्तको आकर्षित कर लेते थे। उनकी साध्वी गृहिणीने लोक-शिक्षाके लिये प्राणवल्लभके पथका अनुसरण किया—यह देखकर पतित-पावन हमारे दयालु प्रभु निश्चिन्त होकर अन्तर्धान हो गये। श्रीगौराङ्ग-लीला इतने दिनोंमें पूर्ण हुई।

प्रभुके अन्तर्धान होनेका समाचार दावाग्निके समान चारों ओर फैल गया। सब लोग इस हृदय-विदारक दारुण संवादको सुनकर जीते ही मृतवत् हो गये। कुछ लोग प्रभुके शोकमें प्राणत्याग करने पर उतारू हो गये। उनमेंसे एक स्वरूप भी थे। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको भी यह संवाद प्राप्त हुआ। उनको यह संवाद किसने दिया, ज्ञात नहीं। वे चाहे कोई भी हों, हृदय-हीन थे। यह विषम संवाद सुनकर देवीकी जो दशा हुई, उसको मैं लिखना नहीं चाहता। वंशी-शिक्षा नामक ग्रन्थमें लिखा है—

विष्णुप्रिया आर वंशी गौराङ्ग विहने। उन्मत्तेर न्याय कान्दे सदा सर्व्वक्षणे।।	श्रीगौराङ्गके न रहने पर श्रीविष्णुप्रिया और वंशीवदन सदा सब समय उन्मत्तकी तरह क्रन्दन करते।
दुइ जने अन्न-पान करिया वर्ज्जन। हा नाथ गौराङ्ग बलि डाके सर्व्वक्षण।।	दोनों जन अन्न-जलका त्यागकर 'हा नाथ—हा गौराङ्ग' बोलकर सब समय पुकारते।

द्वात्रिंश अध्याय--प्रभुकी इहलोक लीलाकी पूर्णता और अन्तर्धान होनेकी कथा

सुना जाता है कि ये वंशीवदन श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके मन्त्र-शिष्य थे। शची माताके आदेशसे देवीने इस भाग्यवान महापुरुषको मन्त्र-शिष्य बनाया था।

प्रभुके अन्तर्धान होनेका समाचार सुनकर उनके अनुगत भक्त-वृन्द रो-रोकर व्याकुल होते रहे। बहुतेरे रो-रोकर अन्धे हो गये।

श्रीगौराङ्ग विरहे जत भक्तेर मण्डली।	श्रीगौराङ्गके विरहमें जितनी
कान्दिते लागिला हजा आकुलि विकुली।।	भक्त-मण्डली थी सब आकुल-व्याकुल
--वं० शि०	हो क्रन्दन करने लगी।

सोनेका नदिया हा-हाकारसे पूर्ण हो गया। श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवी महायोगिनी बनकर घरके द्वार बन्द कर, भीतर बैठकर, कठोर भजन करने लगीं। कलिके जीवोंकी मङ्गल कामनामें देवीने जीवन उत्सर्ग कर दिया। इस प्रकार कलिके जीवोंको भाग्यवान बना दिया। श्रीश्रीगौर-विष्णुप्रिया युगल होकर कलिग्रस्त जीवोंके मङ्गलके लिये निरन्तर रोते रहे। त्रिभुवनके ईश्वर श्रीगौराङ्ग तथा कैवल्य-दायिनी उनकी ह्लादिनी शक्ति श्रीमती विष्णुप्रिया देवी कलिग्रस्त जीवोंके लिये सब अवस्थाओंमें परमाराध्य वस्तु, साधनका परम धन है। श्रीश्रीगौर-विष्णुप्रियाकी कृपाके बिना कलिके जीवोंके लिये अन्य गति नहीं है। इसी कारण महाजनगण कह गये हैं—

एगोओ हे एगोओ हे आमार वैष्णव गोसाञि।
कलियुगे तराइते आर केह नाइ।।

हे मेरे वैष्णव गोसाईं भ्रातृगण ! श्रीगौराङ्गको छोड़कर इस कलियुगमें दूसरा कोई उद्धार करने वाला नहीं है।

●

त्रयस्त्रिंश अध्याय

श्रीनिवासपर देवीकी कृपा

एत कहि वस्त्रे वेष्टित चरण-अंगुलि ।	इतना कहकर वस्त्रसे आवृत
श्रीनिवासे डाकि चरण दिला माथे तुलि ।।	अपने चरणकी अंगुली श्रीनिवासको
--प्रे० वि०	बुलाकर उनके मस्तकसे स्पर्श कराई ।

● श्रीनिवासका नीलाचलसे नवद्वीप आकर प्राण-त्यागका संकल्प

प्रभुके अन्तर्धान होनेके कुछ दिन बाद श्रीनिवास ठाकुर नीलाचलसे यह दारुण समाचार प्राप्त कर, दुःख और शोकसे उन्मत्त-से होकर नवद्वीपमें आये। श्रीनिवास ठाकुर पण्डित गदाधर गोस्वामीके पास भागवत पढ़ने नीलाचल गये थे। जब वे गौड़ देश लौटे तो पण्डित गदाधर गोस्वामीने गदाधर दासके लिये उनके (श्रीनिवास ठाकुरके) द्वारा एक सन्देश भेजा था। श्रीनिवास श्रीश्रीमहाप्रभुके अन्तर्धान होनेके कारण शोक और दुःखसे अधीर होकर नवद्वीपमें आ उपस्थित हुए। पण्डित गदाधर गोस्वामीकी बात वे बिल्कुल ही भूल गये। गदाधर दासको यह बात किसी प्रकार ज्ञात हो गई और इस अपराधसे श्रीनिवासको बहिष्कृत कर दिया। श्रीनिवास उस समय तरुण वयस्क युवक थे। उनकी अवस्था केवल उन्नीस वर्षकी थी। वे परम सुन्दर आकृतिके थे। उनका सुगठित सर्वाङ्ग सुन्दर शरीर गौरप्रेममें बेसुध रहता था। वर्ण कच्चे सोनेके समान था। ऐसा सर्वाङ्ग सुन्दर ब्राह्मण बालक कभी किसीके देखनेमें नहीं आया था। इसी कारण भक्त वृन्दने श्रीनिवासको श्रीमन्महाप्रभुका द्वितीय कलेवर और उनकी प्रकाश-मूर्तिकी मान्यता दी थी।

नित्यानन्द छिला जेइ	जो श्रीनित्यानन्द थे वे ही
नरोत्तम हैला सेइ	नरोत्तम हुए और श्रीचैतन्य श्रीनिवास
श्रीचैतन्य हैला श्रीनिवास ।।	हुए।
--प्रे० वि०	

एक तो प्रभुके अन्तर्धान होनेसे तरुण-युवक श्रीनिवास मृतप्राय हो रहे थे, इसके ऊपर श्रीगौराङ्गके सर्वश्रेष्ठ भक्त गदाधर दासके द्वारा इस प्रकार बहिष्कृत होनेसे उन्होंने प्राणत्याग करनेका मन-ही-मन संकल्प किया। वे अन्न-जल छोड़कर प्रभुके गृह-द्वार पर पड़ रहे।

प्रभाते श्रीखण्ड छाड़ि
आइला नवद्वीपे।
वैराग्य करि रहिला
प्रभुर बाड़ीर समीपे॥

श्रीखण्डसे चलकर प्रातःकाल नवद्वीप पहुँचे और वैराग्य करके प्रभुके घरके समीप रहे।

पण्डित गोसाञि बलि
कान्दे उच्चैःस्वरे।
दुइ चारि दिवसे
अन्न ना दिला उदरे॥
——प्रे० वि०

'पण्डित गोसाईं' कह कर उच्च स्वरसे रोते रहे और दो चार दिन हो गये उदरमें अन्न-पानी नहीं दिया।

आठ दिन इसी प्रकार श्रीनिवास नवद्वीपमें प्रभुके घरके समीप पड़े रहे। वंशीवदनके साथ गङ्गाजीके घाटपर उनका प्रथम साक्षात्कार हुआ। वंशीवदनके साथ परिचय होने पर श्रीनिवासने अपने दुःखकी सारी बातें उनको बतलायीं। उसी समय प्रभुके पुराने भृत्य वृद्ध ईशान वहाँ आ उपस्थित हुए।

● ईशान द्वारा श्रीनिवासका श्रीविष्णुप्रियाजीको परिचय

ईशानने तरुण-वयस्क श्रीनिवासको देखते ही प्रभुके द्वितीय कलेवरके रूपमें उनको पहचान लिया और विष्णुप्रिया देवीके पास उस बालकका परिचय देनेके लिये उत्सुक हो उठे——

बुझिल चैतन्य-शक्ति बालकेर हय।
ईश्वरी निकटे मोर कहिते उचित हय॥

ईशानने समझा कि इस बालकमें चैतन्यकी शक्ति है, इसलिये ईश्वरी (श्रीविष्णुप्रिया माता) के पास जाकर यह कहना मेरे लिये उचित होगा।

फिरिया आइला घरे ईश्वरी निकटे।
एक अपूर्व्व बालक देखिल गङ्गाघाटे॥

वह घर पर ईश्वरीके पास लौट कर आये और बोले कि मैंने गङ्गाजी-के घाट पर एक अपूर्व बालक देखा है।

गदाधर पण्डित नामे सदाइ रोदन । द्वितीय नाहिक सङ्ग सजल नयन ।।	वह गदाधर पण्डितका नाम लेकर निरन्तर रुदन करता है, उसके सङ्ग दूसरा कोई नहीं है, उसकी आँखोंमें सदा ही आँसू भरे रहते हैं ।
ताहारे देखिते दया हइल आमार । अन्न बिना अति क्षीण शरीर ताहार ।।	उसको देखकर मुझे दया आ गयी । उसका शरीर भोजनके बिना अति क्षीण हो गया है ।
आज्ञा हय किछु अन्न दिइ तारे आमि । पश्चाते आनिया तारे दया कर तुमि ।।	यदि आज्ञा हो तो मैं उसे कुछ अन्न दे आऊँ । इसके पश्चात यहाँ बुलाकर तुम उस पर दया करना ।
देइ जाइ तण्डुल तारे जे उचित हय । चैतन्य अप्रकटे विरक्त मनेर संशय ।। —प्रे० वि०	(श्रीविष्णुप्रिया माताने कहा) तुम जाकर उसको जितने उचित समझो चावल दे आओ । मेरे मनमें संशय हो रहा है कि चैतन्यके अन्तर्धान होनेसे यह विरक्त हो गया है ।

ईशानके मुखसे वालक श्रीनिवासका वृत्तान्त सुनकर. दयामयी श्रीश्रीविष्णुप्रिया माताके कोमल हृदयमें दयाका उद्रेक हुआ । उन्होंने तत्काल ईशानको आज्ञा दी कि उस ब्राह्मण वालकको भोजनोपयोगी चावल आदि दे आओ । ईशानने एक आदमीके उपयुक्त आधा सेर चावलका सीधा ले जाकर श्रीनिवासके हाथमें दिया ।

● देवी द्वारा श्रीनिवासकी परीक्षा

देवी जान गयीं कि वह वालक सामान्य बालक नहीं है । उसकी परीक्षा लेनेका मनमें निश्चय करके उन्होंने दस वैष्णवोंको श्रीनिवासके पास उसी दिन अतिथि रूपमें भेजा और ईशानको आज्ञा दी कि ब्राह्मण बालक किस प्रकार अतिथि सत्कार करता है, इसका विशेष रूपसे संवाद ले आओ ।

तण्डुल दिया ईश्वरीर आनन्द हृदय । प्रेमरूपे जन्म बुझि बालकेर हय ।।	तण्डुल देकर देवीके हृदयमें आनन्द हुआ । जान पड़ता है—बालकका प्रेमरूपमें जन्म हुआ है ।

तण्डुल लइया विप्र रान्धिल जखन । सेइ काले पाठाइला वैरागी दशजन ।।	जब ब्राह्मणने तण्डुल लेकर रन्धन किया, उसी समय दस वैरागी साधुओंको उनके पास भेजा ।
अन्न प्रस्तुत काले वैरागी आकार । भक्षणेर काले जाइ हैला साक्षात्कार ।।	जैसे ही अन्न प्रस्तुत हुआ वैसे ही वैरागीके रूपमें भोजनके समय वे साधु वहाँ जाकर उपस्थित हो गये ।
वैष्णव देखिया बड़ आनन्द हइल । पाइया सबारे बहु सम्मान करिल ।।	वैष्णवोंको देख कर उसे बड़ा आनन्द हुआ और सबको आया देखकर उनका बड़ा सम्मान किया ।
ताँरा कहे आमरा बड़ आछये क्षुधित । अन्न देह महाशय तवे पाइ प्रीत ।।	वे वैरागी बोले कि हम बहुत भूखे हैं, महाशय ! अन्न दीजिये, तभी हमको सुख मिलेगा ।
बड़ दया करि आसि दिला दरशन । प्रसाद प्रस्तुत आसि करह भक्षण ।।	ब्राह्मण बालक बोला—आप लोगोंने बड़ी दया की, आकर दर्शन दिये । प्रसाद तैयार है, आइए भोजन कीजिए ।
अल्प अन्न रन्धन कैला आमरा अनेक । ना हइबे क्षुधा-तृप्ति देखि परतेक ।।	वैरागियोंने कहा—चावल तो बहुत थोड़े रांधे हैं, हम लोग कई जने हैं । ऐसा मालूम होता है सबकी क्षुधा-निवृत्ति नहीं होगी ।
क्षुधा तृप्ति हवे आछे प्रसाद लक्षण । मण्डली बन्धने बसिला वैष्णव दशजन ।।	(ब्राह्मण बोले) इसमें प्रसादके लक्षण हैं आप सबकी क्षुधा-तृप्ति होगी । (यह सुनकर) दसों वैष्णव मण्डली बाँधकर भोजन करने बैठे ।
एइ मत सबारे करेन परिवेशन । पात्रे पात्रे देन अति आनन्दित मन ।।	इस प्रकार सबको वे भोजन परोसने लगे और मनमें अत्यन्त आनन्दित होकर प्रत्येकके पात्रमें अन्न देने लगे ।

अर्द्धसेर तण्डुलेर अन्न प्रसाद करिया । एगार वैष्णवे पाइलेन आनन्दित हैया ।। --प्रे० वि०	आध सेर तण्डुलको प्रसाद-अन्न मानकर ग्यारह वैष्णवोंने आनन्द-पूर्वक भोजन किया ।

● देवीका बालक श्रीनिवाससे साक्षात्कार

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी ईशानके द्वारा ये सब समाचार जानकर उस ब्राह्मण बालकको देखनेके लिये व्याकुल हो उठीं। उस समय वह बालक तो गङ्गाके तट पर था, देवी उसे देखें कैसे ? कृपामयीकी कृपा अपार है। ऐसी कृपा कभी किसीके भाग्यमें नहीं लिखी थी। देवीने रातके समय दासीको साथ लेकर गङ्गा-स्नानके निमित्त जाकर साक्षात् प्रेम-मूर्ति सुन्दर बालकको देखा और मन-ही-मन बहुत आनन्दित हुईं। इतने दुःखके बीचमें भी देवीके मनमें तनिक सुख हुआ।

से वार्त्ता ईश्वरी शुनि ईशानेर द्वारे ।
प्रेमरूपे जन्म हैला बुझिला अन्तरे ।।
एमन बालक गुण शुनिते बड़ सुख ।
अवश्य देखिव आमि बालकेर मुख ।।
निशाभागे गङ्गास्नाने दासी सङ्गे करि ।
देखिलेन बालक अति प्रेमेर माधुरी ।।
स्नान करि निशा थाकिते गेला अन्तःपुरे ।
बालक देखिया हैल आनन्द अन्तरे ।।
--प्रे० वि०

देवी घर पर आकर सोचने लगीं कि इस बालकसे कैसे बातें करूँ ? उन्होंने परपुरुषके मुँहकी ओर देखकर कभी बातें नहीं कीं। लज्जाशीला श्रीमती विष्णुप्रिया देवी विषम समस्यामें पड़ गयीं।

किरूपे आनिया तारे कथा जिज्ञासिब । अन्य पुरुषेर मुख चाहि केमने पुछिब ।।	किस प्रकार उसे बुलाकर उससे बातें करूँगी ? परपुरुषके मुँहकी ओर देखकर मैं कैसे पूछूँगी ?

प्रभुर शक्ति यदि हय लज्जा जावे दूरे।
तबे से जानिब आछे करुणा प्रचुरे।।
--प्रे० वि०

यदि प्रभुकी शक्ति होगी तो मेरी लज्जा दूर हो जायगी और मैं जान जाऊँगी कि मुझपर प्रभुकी प्रचुर करुणा है।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके आदेशसे ईशान श्रीनिवासको प्रभुके घर ले आये। ईशानके मुखसे देवीका कृपादेश श्रवण करके श्रीनिवास प्रेमानन्दमें मत्त होकर दोनों भुजाएँ ऊपर उठाकर उद्दण्ड नृत्य करने लगे।

ऊर्ध्वबाहु करि अनेक नृत्य आरम्भिल।

श्रीनिवासकी मनोकामना पूर्ण हो गयी। श्रीगौराङ्गके विरहमें उनके हृदयमें जो अग्नि जल रही थी, वह श्रीदेवीके सुशीतल चरणोंके दर्शन पानेकी आशासे कुछ शान्त हुई। श्रीनिवास मन-ही-मन सोच रहे हैं कि क्या मेरा यह सौभाग्य होगा कि साक्षात् ईश्वरीके श्रीचरणोंका दर्शन कर जीवनको सफल करूँगा? मेरे जैसा अभागा त्रिलोकीमें कोई नहीं है। प्रभुके श्रीचरणोंके दर्शनोंसे बञ्चित होकर मर रहा हूँ। विषम साहसका सहारा लेकर असाध्य साधनकी आशासे प्रभुके स्वधाममें आया हूँ। देवीके श्रीचरणोंके दर्शन असाध्य साधन है। प्रभुकी कृपासे असंभव भी संभव हो जाता है, असाध्य वस्तु साध्य हो जाती है। बस, इतना ही भरोसा है। 'जय श्रीगौराङ्ग' कहकर श्रीनिवास अत्यन्त संकोचके साथ रोते हुए ईशानके पीछे-पीछे प्रभुके घरके भीतर गये। प्रभुके अन्तःपुरमें प्रवेश करते समय उनका सारा अङ्ग थर-थर काँपने लगा। प्रभुके आङ्गनमें दूर ही एक किनारे खड़े रहे।

कान्दिते कान्दिते चलिलेन ईशानेर पाछे।
भितर प्रकोष्ठे जाइ हइल सङ्कोचे।।
काँपिते काँपिते प्रविष्ट हैला अन्तःपुरे।
निकटे ना गेलेन रहिलेन किछु दूरे।।
--प्रे० वि०

श्रीनिवास प्रभुके आङ्गनमें खड़े न रह सके। 'हा गौराङ्ग' कहकर भूतल पर दण्डवत् गिरकर ऊँचे स्वरसे रुदन करने लगे।

श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीने अन्तःपटको ऊपर उठाकर श्रीनिवासको देखा। देखते ही स्पष्टरूपसे समझमें आ गया कि श्रीनिवासके भीतर प्रभुकी शक्ति निहित है। श्रीगौराङ्गकी गृहिणीने—परम लज्जाशीला होते हुए भी—लज्जा त्यागकर श्रीनिवासको समीप आनेका आदेश दिया।

अन्तःपट दूर करि करिला निरीक्षण।
आमार प्रभुर शक्ति बुझिला कारण।।
लज्जा उपेखिया ताँरे आपने डाकिला।
कि निमित्ते रोदन कर अमह एकला।।
—प्रे० वि०

● देवीके श्रीचरणोंमें श्रीनिवास

देवीकी अयाचित कृपाको देखकर किं-कर्त्तव्य-विमूढ़ होकर श्रीनिवास जड़वत् देवीके श्रीचरणोंमें गिर पड़े। मुँहसे कोई बात न निकली। दोनों नेत्रोंसे अजस्र अश्रुधारा बहने लगी। मुँह अवनत करके देवीसे अपने दुःखकी कहानी एक-एक करके निवेदन कर गये। पण्डित गदाधर गोस्वामीकी बात, भागवत-पठनकी कथा, प्रभुकी आज्ञासे श्रीधाम वृन्दावन जानेकी इच्छा, प्रभुके अदर्शनके कारण शोक—एक-एक करके सारी बातें श्रीनिवासने देवीके सामने रो-रोकर निवेदन कीं। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीका दुःख-सागर उथल उठा। बालक श्रीनिवासके दुःखसे दयामयीका कोमल हृदय व्यथित हो उठा। उन्होंने श्रीनिवासको बहुतेरा समझाया—"इस छोटी उम्रमें वैराग्य अत्यन्त कठिन वस्तु है, इस सुकुमार देहसे देश-देश भ्रमण कैसे होगा?" ऐसे प्रबोध वाक्यों द्वारा देवीने श्रीनिवासको मातृ-स्नेह-पूर्वक सान्त्वना दी।

अल्प वयस देखि अति सुकुमार। **वैराग्य कैले घर जाह ब्राह्मण कुमार।।**	मैं देखती हूँ, तुम्हारी अल्प अवस्था है, तुम अत्यन्त सुकुमार हो। हे ब्राह्मण कुमार! तुमने वैराग्य कर लिया, अब घर जाओ।
वैराग्य कठिन ताहा अति बड़ शक्ति। **जोड़ हात करि अनेक करिल मिनति।।**	वैराग्य कठिन है, उसके लिये बड़ी शक्ति चाहिए। (इस पर ब्राह्मण कुमारने) हाथ जोड़कर अनेक प्रकारसे विनती की।

आज्ञा हय थाकि आमि चरण निकटे। पराण जुड़ाय मोर एड़ाइ संकटे।। --प्रे० वि०	यदि आज्ञा हो तो मैं श्रीचरणोंके समीप रहूँ, मेरे प्राण शीतल हो जायँ और संकटसे बच जाऊँ।

श्रीनिवासने हाथ-जोड़कर देवीके चरणोंमें निवेदन किया--"माँ जगदीश्वरि! संसारमें इस हतभाग्यकी केवल एक माता है। मेरे प्रभुने भी वृद्धा जननीको छोड़कर संन्यास ग्रहण किया था। यह अधम प्रभुके आदेशसे श्रीधाम वृन्दावन जायगा, अनुमति देकर कृतार्थ करें।"

श्रीनिवासकी यह बात सुनकर देवीका हृदयान्तर उन्मथित हो उठा। श्रीगौराङ्ग-विरह-दुःख-सिन्धु उथल उठा। देवीके मुखसे बात न निकल सकी। जड़वत् होकर बैठ रहीं।

गौराङ्ग-विच्छेदे विष्णुप्रिया कातर अति।
द्विगुण हइल शोक हइला विस्मृति।।
--प्रे० वि०

कुछ देरके बाद प्रकृतिस्थ होकर देवीने बालक श्रीनिवाससे स्नेहपूर्वक कहा--"बेटा! सयाने होने पर तुम वृन्दावन जाना। अभी तो प्रसाद पाकर चित्तको स्थिर करो।"

चैतन्येर शक्ति बिना एमन दशा नहे। प्रवीण हइले जाबे एबे उपयुक्त नहे।।	(देवीने सोचा)--चैतन्यकी शक्ति विना ऐसी दशा नहीं हो सकती। (फिर बालकसे बोलीं)--प्रवीण होने पर (वृन्दावन) जाना, अभी उपयुक्त समय नहीं।
एइ आज्ञा पाइया सावधाने हइला बाहिर। प्रसाद भक्षण कर चित्त हउक स्थिर।। --प्रे० वि०	प्रसाद पाओ जिससे चित्त स्थिर हो। ऐसी आज्ञा पाकर (बालक) सावधानीसे बाहर आये।

पासमें बैठे ईशानने देवीका आदेश और श्रीनिवासकी कातरोक्ति निवेदन सब सुना। श्रीनिवासके प्रति देवीकी अपार कृपा देखकर वे विस्मित हुए। ऐसी कृपा इससे पहले देवीने कभी किसीके प्रति प्रदर्शित नहीं की। समस्त भक्तवृन्द श्रीनिवासको धन्य-धन्य कहने लगे। बालक श्रीनिवास देवीका आदेश प्राप्तकर आङ्गनसे उठकर गृह-द्वार पर आकर बैठ गये।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने ईशानसे श्रीनिवासका हाल-चाल पूछा। उस दिन फिर देवीके साथ श्रीनिवासका साक्षात्कार नहीं हुआ। श्रीनिवासने प्रभुके द्वारपर बैठकर 'हा गौराङ्ग! हा पण्डित गोसाई!' कहकर रोते-रोते दारुण उत्कण्ठापूर्वक सारी रात बितायी। ईशानने ये सारी बातें देवीसे निवेदन कर दीं। यह सुनकर देवीके भीतर श्रीनिवासके प्रति अधिकतर कृपा और करुणाका उद्रेक हो गया। देवी उस दिन रातमें सोती हुई भी यही सोचती रहीं कि कैसे बालक श्रीनिवासको शान्त किया जाय, कैसे उसका चित्त सुस्थिर हो?

● देवीको स्वप्नादेश और श्रीनिवास पर कृपा

श्रीगौराङ्गका स्मरण करके यही सोचते-सोचते देवीको तन्द्रा आ गयी। उस समय तीन पहर रात बीत गयी थी, चारों ओर निःस्तब्धता थी, कहीं किसी प्राणीका शब्द नहीं सुनायी देता था। उसी समय श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीने स्वप्न देखा——

रात्रि शेषे संकीर्त्तने एकत्रे दुइ भाइ। नाचिते नाचिते कहे कोथा मोर आइ॥	शेष रात्रिके समय संकीर्त्तनमें दोनों भाई नाचते-नाचते बोले——"मेरी माँ कहाँ है?
तोमार बधू मोर श्रीनिवासे बहिर्द्वारे। राखिया आनन्दे आछेन आपनार घरे॥	तुम्हारी बहू मेरे श्रीनिवासको बाहर द्वार पर रखकर स्वयं आनन्दसे अपने घरमें है।
आमार जतेक कार्य्य श्रीनिवास लैया। अभिरामस्थानेपाठाओ ईशान सङ्गे दिया॥ ——प्रे० वि०	मुझे सारे कार्य श्रीनिवास द्वारा करवाने हैं। उसे ईशानको साथ देकर अभिरामके पास भेजो।"

इस परम अद्भुत स्वप्नको देखकर देवीकी निद्रा टूट गई। देवीने रोते-रोते शय्यासे उठकर दासियोंके द्वारा तुरन्त ईशानको बुलवाया। ईशान सोये थे, बहुत पुकारने पर उनकी निद्रा टूटी। वे हाथ जोड़कर अपराधीके समान डरते-डरते आकर देवीके सामने खड़े हो गये।

ईशान ईशान ब'ले डाके दासीगण।
निद्रागत अति ईशान नाहिक चेतन।।

'ईशान! ईशान!' कहकर दासीगण पुकारने लगीं। ईशान गाढ़ निद्राग्रस्त थे, चेत नहीं हुआ।

बहुक्षणे ईशानेर चेतन हइल।
भये अति आपनाके अधन्य मानिल।।

बहुत देरके बाद ईशानको चेत हुआ, अति भयसे अपने आपको अधन्य (अपराधी) मानने लगे।

जोड़हस्ते ईश्वरीर निकट आइला।
मोर काछे श्रीनिवासे आनि आज्ञा दिला।।
--प्रे० वि०

हाथ जोड़े देवीके निकट आये। (देवीने) आज्ञा दी--"श्रीनिवासको मेरे पास लाओ।"

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने ईशानको आज्ञा दी कि श्रीनिवासको आङ्गनमें ले आओ। ईशानने तत्काल देवीकी आज्ञाका पालन किया। श्रीनिवासने पुन: प्रभुके आङ्गनमें देवीके सामने खड़े होकर उन्हें कोटि-कोटि प्रणाम किये। तब देवीने किस प्रकार बालक श्रीनिवास पर कृपा की, सुनिये! श्रीनिवासको देवीने निकट बुलाया और अपने शशि-कला-विनिन्दित चम्पक-पुष्प-सदृश श्रीचरणकी अंगुलीको वस्त्रावृत करके श्रीनिवासके मस्तक पर स्पर्श कराया। देवीकी श्रीपदरजके स्पर्शसे श्रीनिवास प्रेमावेशमें आ गये। वह प्रेमानन्दसे रोते-रोते देवीके चरणोंमें लोट गये।

एत कहि वस्त्रे वेष्टित चरण-अंगुलि।
श्रीनिवासे डाकि चरण दिला माथे तुलि।।
चरण परशे अति प्रेमावेश हैला।
लोटाजा धरणीतले कान्दिते लागिला।।
--प्रे० वि०

धन्य हो तुम श्रीनिवास! तुम्हारे समान सौभाग्यशाली पुरुष संसारमें जन्मा है या नहीं, इसमें सन्देह है। देवीने आज तुम्हारे ऊपर जो कृपा

प्रदर्शित की, उसको पानेके लिये शिव-विरञ्चि युग-युगान्तर तपस्या करते हैं। अज-भव-वाञ्छित श्रीश्रीगौराङ्ग-गृहिणीके पद-रजको पाकर तुम आज धन्य हो गये, देवताओंकी अपेक्षा भी श्रेष्ठ हो गये! तुम श्रीगौराङ्गके द्वितीय कलेवर, श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके वरपुत्र हो, इसीसे तुमको यह सौभाग्य प्राप्त हुआ। तुम्हारी कृपाके लिये प्रार्थी होकर मैं तुम्हारे चरणों पर गिरता हूँ। आचार्य ठाकुर! दयानिधे! श्रीगौराङ्गकी प्रकाश-मूर्ति! अधम समझकर चरणोंसे न हटाना। श्रीचरणोंकी धूलि बनाकर रखना। वैष्णव गोसाईं! इस अधम्को श्रीचरणोंकी धूलि बनाकर रखनेमें कृपणता न करना। क्या इस जीवाधमको यह भीख देंगे?

श्रीचरणोंकी धूलि देकर श्रीनिवास पर कृपा करके देवीने उनसे कहा--

शुन शुन ओहे बापु तुमि भाग्यवान।
तोमाते चैतन्य शक्ति इथे नाहि आन॥

हे वत्स! सुनो, तुम बड़े भाग्यवान हो, तुम्हारेमें चैतन्य-शक्ति है, इसमें सन्देह नहीं।

तबे शान्तिपुर जाइ खड़दहे जाबे।
आचार्य्य गोसाजि देखि परिचय पाबे॥

पहिले शान्तिपुर जाकर फिर खड़दह जाना, शान्तिपुरमें आचार्य गोसाईंसे मिलनेसे तुमको परिचय मिलेगा।

खड़दह जाइया देखिबे नित्यानन्द।
तोमा पाइया जाह्नवार हइबे आनन्द॥

खड़दह जाकर नित्यानन्दजीसे मिलना, तुमको देखकर जाह्नवा देवीको आनन्द होगा।

विलम्ब ना कर बड़ जाओ शीघ्र करि।
अनेक शुनिबे देखिबे रूपेर माधुरी॥

अब विलम्ब न करो बहुत शीघ्र जाओ। अनेक लोग तुम्हारी रूप-माधुरीको देखे-सुनेंगे।

सर्व्वत्र मिलन करि जाओ वृन्दावन।
सर्व्व सिद्धि हबे पथे करिबे स्मरण॥
--प्रे० वि०

सबसे मिलकर वृन्दावन चले जाना, तुम्हारे सब कार्य सिद्ध होंगे, मार्गमें भगवान्को स्मरण करते जाना।

● श्रीनिवासके प्रति गदाधर दासके रागका कारण और उसकी निवृत्ति

पहले लिखा गया है कि दास गदाधरके द्वारा श्रीनिवास ठाकुर वर्जित हुए थे। प्रेमविलास ग्रन्थमें यह बात नहीं है। यह कहानी श्रीनिवास ठाकुरके शिष्य मनोहर दास रचित 'अनुराग-बल्ली' ग्रन्थमें विस्तार रूपसे वर्णित है। पण्डित गदाधर गोस्वामीने श्रीनिवासके द्वारा गदाधर दासके लिये एक प्रहेलिका कहला भेजी थी--

"मिताके कहियो मिता जाबेन ओ बाड़ी।"

श्रीनिवास ठाकुरके द्वारा यह उपरोक्त संवाद भेजा गया था।

पण्डित गोसाञि जेइ सन्देश कहिल। दास गदाधर प्रति ताहा पासरिल॥	पण्डित गदाधर गोस्वामीने गदाधर दासको जो सन्देश भेजा था, वह भूल गया।
सर्व्वत्र फिरिया नवद्वीप आगमन। दास गदाधर देखि हइला स्मरण॥ --अ० व०	चारों ओर घूमकर जब श्रीनिवासका नवद्वीपमें आकर गदाधर दासके साथ साक्षात्कार हुआ तब स्मरण हुआ।

बालक श्रीनिवास उनकी बात बिल्कुल ही भूल गये थे। गदाधर दासको देखते ही उनको याद आई। अतएव बहुत संकोच पूर्वक उनसे निवेदन किया। इससे काम बिगड़ गया। गदाधर दास श्रीनिवासके मुखसे यह पहेली सुनते ही रुदन करते-करते भूतल पर गिर पड़े। नाना प्रकारके विलाप करते हुए रोते-रोते बेसुध हो गये। कुछ देरके बाद बाह्यज्ञान होने पर श्रीनिवाससे बोले--

बहुत विलाप करि रोदन करिला। कत क्षणे वाह्यदशा कहिते लागिला॥	बहुत विलाप करके रोने लगे। कुछ देरमें बाह्य-ज्ञान होने पर कहने लगे--
आरे विप्र-बालक तों करिलि अकार्य्य। प्रभुर विरह आर ए कथा असह्य॥	अरे विप्र-बालक! तुमने काम बिगाड़ दिया। प्रभुका विरह और यह बात असह्य है।
पण्डित गोसाञि अप्रकट-समाचार। आसियाछे दिना चारि कि करीब आर॥	पण्डित गोसाईंके अप्रकट होनेका समाचार चार ही दिन हुए आया है, अब मैं क्या करूँ?

आगे यदि जानि तो धाइ तो शीघ्र तरे । शुनि तो कि मर्म्मकथा कहिता आमारे ।।	यदि मैं आगे जान पाता तो अति शीघ्र दौड़कर जाता और जो मुझसे मर्मकी बात कहते उसे सुनता ।
ताहार आमार एइ सु-सत्य वचन । शेषकाले अवश्य पाठाब विवरण ।।	उन्होंने मुझसे यह सत्य वचन कहा था कि अन्तिम समय जब आयेगा तो उसकी सूचना मैं अवश्य भेजूँगा
यथा तथा थाक आमि हइवा विदित । कतदिन अपेक्षा करिब सुनिश्चित ।।	चाहे तुम जहाँ कहीं रहो। समाचार भेजनेके बाद मैं निश्चय पूर्वक कुछ दिन अपेक्षा करूँगा ।
से कथा नाहल मोर हैल बड़ दुःख । चलि जाह पुन मोरे ना देखाइह मुख ।। —अ० व०	परन्तु वह बात नहीं बनी, इसका मुझे बड़ा दुःख है । तुम यहाँसे चले जाओ, फिर मुझे मुँह न दिखाना ।

गदाधर दासने इसी कारण श्रीनिवासको वर्जन किया था। इसमें श्रीनिवासका कुछ विशेष अपराध नहीं है। पण्डित गदाधर गोसाईंका समाचार गदाधर दासको बतलानेमें कुछ विलम्ब हुआ था। इसी बीच उनको पण्डित गोसाईंका अप्रकट-समाचार प्राप्त हो गया था। इसीसे उनको विशेष दुःख है कि वे पूर्व-प्रतिज्ञाकी रक्षा न कर सके। इसी कारण गदाधर दास बालक श्रीनिवास पर क्रुद्ध हुए और उनको वर्जन किया। ब्राह्मण-बालक श्रीनिवास वैष्णवके कोपमें पड़ गए। वे शत अपराधीकी तरह नदियामें द्वार-द्वार रोते फिरे। गदाधर दासका क्रोध किसी प्रकार भी शान्त न होते देखकर उन्होंने मन-ही-मन निश्चय किया कि गङ्गामें प्राण विसर्जन कर दूँगा।

अपराधी देह राखिबारे ना जुयाय । आत्मघात महादोष कि करि उपाय ।। —अ० व०	यह अपराधी देह रखना ठीक नहीं जान पड़ता और आत्मघात महादोष है, अब मैं क्या उपाय करूँ ?

ऐसा सोचकर श्रीनिवास गङ्गाके घाट पर निश्चेष्ट होकर पड़ रहे और उन्होंने निश्चय कर लिया कि अन्न-जल त्याग कर प्राण छोड़ दूँगा। यह बात श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने ईशानके मुखसे सुनी। सुनकर गदाधर दासको

बुलवाया और श्रीनिवासको भी बुलवाया। प्रसाद बँटनेके समय दोनों ही भक्त-वृन्दके साथ प्रभुके आँगनमें खड़े हुए। तब देवीने कहा--

गदाधरे कहे एकि अपूर्व्व काहिनी।
ब्राह्मण बालक प्राण छोड़े इहा शुनि॥

गदाधर दाससे कहा--"यह क्या अपूर्व बात है? मैंने सुना है कि ब्राह्मण-बालक प्राण छोड़ रहा है।

जानिया ना कहे यदि अपराध भाल।
विस्मृति हइले ताहे कि करु छाओयाल॥

यदि जान-बूझकर न कहता तो जरूर अपराध था, भूल गया तो बेचारा बच्चा क्या करे?

यदि वा आमारे चाह मोर बोल धर।
साक्षाते आनिया अपराध क्षमा कर॥

यदि मुझमें तुम्हारी भक्ति है तो मेरी बात मानो, उसको अपने समक्ष बुलाकर उसका अपराध क्षमा कर दो।

आमार अग्रेते तुमि अकपट हैया।
करह प्रसाद अपराध घुचाइया॥
--अ० व०

मेरे सामने निष्कपट होकर तुम उसका अपराध भुलाकर उस पर कृपा करो।"

गदाधर दासने देवीके आदेशको शिरोधार्य करके बालक श्रीनिवासके सारे अपराधको क्षमा कर दिया। प्रभुके आङ्गनमें देवीके सामने श्रीनिवास ठाकुरका अपराध शमन हो गया। ब्राह्मण-कुमार श्रीनिवास गदाधर दासके चरण पकड़कर धूलिमें लोट गये। गदाधर दासने श्रीनिवासको हाथ पकड़ कर उठाया और प्रेमालिङ्गन प्रदान करके प्रसन्न किया।

गदाइ चरण धरि ठाकुर पड़िला।
उठाइया आलिङ्गन प्रसाद करिला॥--अ० व०

देवीकी कृपासे गदाधर दासका आलिङ्गन-प्रसाद पाकर श्रीनिवास कृतार्थ हो गये। उन्होंने उपस्थित भक्तवृन्दकी चरणधूलि ली। उसके बाद प्रसादान्न लेकर अपने स्थान पर आये और आकर सबको बाँटा।

सर्व्व पार्षदेर पाय दण्डवत् करि।
उठिया सभार लइल चरणेर धूलि॥
तबे प्रसादान्न लइया आइला सेखाने।
एक एक करि बाँटि दिला सर्व्वजने॥ --अ० व०

श्रीनिवासके अपराध-भञ्जनकी कहानी जो श्रद्धापूर्वक पढ़ते या श्रवण करते हैं, उनका वैष्णवापराध दूर होता है।

श्रद्धा करि एइ लीला शुने जेइ जन।
वैष्णवापराध तार हय विमोचन।।
——अ० व०

● श्रीनिवास ठाकुरका परिचय

यहाँ श्रीनिवास ठाकुरका कुछ परिचय दूँगा। इनके पिताका नाम श्रीचैतन्य दास था। यह राढ़ी-श्रेणीके कुलीन ब्राह्मण-सन्तान थे। नदिया जिलाके अन्तर्गत उत्तर चाकन्दी ग्राममें श्रीनिवास ठाकुरका जन्म हुआ। श्रीचैतन्य दासका पूर्व नाम था गङ्गाधर भट्टाचार्य। श्रीश्रीगौराङ्ग-सुन्दरका कृपापात्र होने पर वैष्णव-मतसे इनका नाम हो गया श्रीचैतन्यदास। श्रीनिवासकी माताका नाम था लक्ष्मीप्रिया। श्रीचैतन्यदासको कोई सन्तान न थी। नीलाचलमें प्रभुके दर्शन करनेके लिये जाने पर श्रीश्रीजगन्नाथ देवसे उन्होंने एक पुत्रकी कामना की। श्रीश्रीमहाप्रभुकी कृपासे वह पुत्ररत्न प्राप्त हुआ। अति शैशवकालमें श्रीनिवासका पितृ-वियोग हो गया। अपने मामाके यहाँ कटवा (कण्टक नगरी) के पास याजिग्राममें कुछ दिन निवास करके वहाँ ही विद्याध्ययन किया। शैशवकालसे ही बालक श्रीनिवासके मनमें तीव्र वैराग्यका उदय हुआ। संसाराश्रममें रहनेमें एक दण्ड भी उनका मन नहीं लगता था। मामाका आश्रय छोड़कर वे श्रीश्रीमहाप्रभुके श्रीचरण-दर्शनकी लालसासे नीलाचल चले गये। वहाँ पहुँचकर प्रभुके अदर्शन होनेका समाचार सुनकर जीते ही मृतवत् हो गये। पण्डित गोस्वामी गदाधरजीके साथ उनका साक्षात्कार हुआ। पण्डित गोस्वामीको महाप्रभुजीने आदेश दिया था कि श्रीनिवास नीलाचलमें आवे तो उसे भागवतकी श्रीकृष्णलीला सुनाना। पण्डित गोस्वामीकी भागवतकी पुस्तक नेत्रजलसे सिक्त होकर बिलकुल नष्ट हो गयी थी। वे श्रीनिवाससे बोले——

श्रीभागवत पड़ाइते प्रभुर आज्ञा आछे।
अश्रुजले अक्षर सब लुप्त हइयाछे।।

"श्रीभागवत पढ़ानेकी प्रभुकी आज्ञा है, परन्तु अश्रुजलसे इसके सारे अक्षर लुप्त हो गये हैं।

आमार लिखन दिह नरहरि हाते । नवीन पुस्तक एक देन तोमार साथे ।।	मेरा पत्र नरहरिके हाथमें देना, वे तुमको एक नयी पुस्तक देंगे ।
तोमार निमित्त प्रभुर आज्ञा बलवान । विलम्ब ना कर सब कर समाधान ।।	तुम्हारे निमित्त प्रभुकी बलवती आज्ञा है, अब देर न करो, सब काम सम्पादन करो ।
राधा-कृष्ण-लीलाकाले श्रीगुणमञ्जरी । सेइ से गोपाल भट्ट समान माधुरी ।।	राधा-कृष्णकी लीलाके समय जो श्रीगुणमञ्जरी थीं, वही गोपाल भट्ट हैं, दोनोंमें समान माधुरी है ।
शिष्य हव प्रभु बड़ साध आछे मने । गुणमञ्जरी नाम शुनि उल्लास श्रवणे ।।	प्रभुके शिष्य बननेकी श्रीनिवासके मनमें बड़ी साध है, गुणमञ्जरी नाम कानोंमें सुनकर उनको बड़ा उल्लास हुआ ।
मञ्जरीके प्रभुर आज्ञा हइयाछे देखि । नवद्वीपे ईश्वरी जिउ स्थाने पाबे साक्षी ।।	मञ्जरीको प्रभुकी आज्ञा हो गयी है, इसका नवद्वीपमें श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके यहाँ प्रमाण मिल जायगा ।
गोपीनाथेर अधर-शेष करिया भक्षण । आजि शुभ-दिन गौड़े करह गमन ।। --प्रे० वि०	इसलिये गोपीनाथका प्रसाद भक्षण करके आज ही शुभ दिनको गौड़देशके लिये प्रस्थान करो ।

पण्डित गोस्वामीकी उस समय अति वृद्धावस्था हो गयी थी, वे पूर्ण जरा-ग्रस्त थे। उनका नित्यधाम गमन करनेका समय आ गया है, यह देखकर श्रीनिवासने सोचा कि गौड़-देशसे लौटने पर अब इनके फिर दर्शनोंकी संभावना नहीं है। क्या करें, आज्ञा बलवती है। वे गौड़-देश लौट आये। रास्तेमें पण्डित गोस्वामीके स्वधाम-गत होनेका समाचार पाकर हा-हाकार करते-करते भग्न-हृदय होकर श्रीधाम नवद्वीपमें आ गये। नवद्वीपमें आकर किस प्रकार श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी कृपा प्राप्त की, इसका वर्णन पूर्वमें आ चुका है।

●

चतुस्त्रिंश अध्याय

श्रीधाम नवद्वीपमें श्रीश्रीमहाप्रभुकी श्रीमूर्ति-प्रतिष्ठा।

आमार आदेश एइ करह श्रवण। जे निम्ब-तलाय माता दिला मोरे स्तन।।	मेरा यह आदेश सुनो—"जिस निम्ब-वृक्षके नीचे मुझे माताने स्तन पान कराया था,
सेइ निम्बवृक्षे मोर मूर्त्ति निर्म्माइया। सेवन करह ताते आनन्दित हैया।।	उसी निम्ब-वृक्षसे मेरी मूर्ति निर्माण कराकर उसका आनन्द पूर्वक सेवन करो।
सेइ दारु-मूर्त्ति मध्ये मोर हबे स्थिति। ए लागि सेवाते तार पाइबे पीरिति।। —वं० शि०	उसी दारु-मूर्तिमें मेरी स्थिति होगी, उसकी सेवासे प्रेमभक्ति प्राप्त होगी।"

● श्रीविष्णुप्रिया देवी और वंशीवदनको स्वप्नादेश

श्रीगौराङ्गके निजधाम गमनका समाचार सुनकर भक्तवृन्द शोकाकुल होकर दिन-रात रोने लगे। नदियावासी शोकके समुद्रमें डूब गये।

वंशीवदनके दु:खकी सीमा न रही। ईशान नित्यधाममें गमन कर चुके हैं *। श्रीगौराङ्गके अन्तर्धान होनेका समाचार उनको सुनना नहीं

---

* महात्मा शिशिर कुमार घोष कृत 'श्रीनरोत्तम चरित' के 'आबार भ्रमण' (पुन: भ्रमण) शीर्षक प्रकरणके अनुसार ईशान भृत्य और दामोदर पण्डित दोनों ही श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीके अन्तर्धान होनेके उपरान्त भी वर्तमान थे और श्रीनरोत्तम ठाकुरके नवद्वीप पधारने पर उनको श्रीमन्महाप्रभुके लीला-स्थान दिखानेमें प्रवृत्त हुए थे।

श्रीश्रीचैतन्य चरितामृतकी "गौरकृपा-तरंगिणी" टीकाके टीकाकार श्रीराधागोविन्द नाथने भी अपने परिशिष्ट खण्डमें परिचय प्रकरणमें चतुर्थ

पड़ा। वे भाग्यवान थे। वंशीवदन ईशानके भाग्यका स्मरण करके अपने मन्द-भाग्यको सौ बार धिक्कारते हैं और दिन-रात रुदन करते हैं। रोते-रोते उनकी दोनों आँखें अन्धी होने लगी हैं। वंशीवदनके दु:खसे देवी भी कातर हो रही हैं। वे घरसे बाहर नहीं निकलतीं। द्वार बन्द करके घरमें बैठकर कठोर भजनमें दिन-रात बिताती हैं। वंशीवदन देवीके कठोर भजनकी रीति देखकर मनमें बड़े दु:खित होते हैं, परन्तु साहस करके कुछ

संस्करणके पृष्ठ ३८७ में श्रीश्रीविष्णुप्रियाके अन्तर्धानके उपरान्त भी ईशानके वर्तमान रहनेकी बातकी पुष्टि की है।

श्रीश्रीरूपानुगवर श्रीश्रीगौड़ीयवैष्णवाचार्यवर्य श्रीविश्वनाथ चक्रवर्ती ठाकुर महाशयके शिष्य श्रीजगन्नाथ चक्रवर्तीके आतमज श्रीनरहरि चक्रवर्ती कृत "श्रीश्रीभक्तिरत्नाकर" ग्रन्थके अष्टम तरङ्गके पयार छन्द संख्या १०० तक और विशेषत: निम्न पयारोंसे भी स्पष्ट है कि श्रीविष्णुप्रिया देवीके अन्तर्धान होनेके पश्चात् भी ईशान और दामोदर पण्डित वर्तमान थे।

निमाञीर पत्नी पतिव्रता विष्णुप्रिया। ताँर कथा कहिते विदीर्ण हय हिया ।।४८।।
साक्षात् श्रीलक्ष्मी–अलौकिक गुणगण। एइ कथो दिने तेंह हैल अदर्शन ।।४९।।

× × ×

तथा नरोत्तम प्रभु-प्रिय ईशानेरे। करिते प्रणाम धैर्य्य धरिते ना पारे ।।८८।।
श्रीईशान नरोत्तमे करि' आलिङ्गन। अति स्नेहावेशे मुख करे निरीक्षण ।।८९।।

× × ×

तथा दामोदर पण्डितेरे दरशने। हइया अधैर्य्य प्रणमिला से चरणे ।।९३।।
ब्रह्मचारी दिला श्रीपण्डिते परिचय। पण्डित श्रीनरोत्तमे दृढ़ आलिङ्गय ।।९४।।

ग्रन्थकार श्रीहरिदास गोस्वामीने भी श्रीश्रीविष्णुप्रिया चरित लिखनेके पश्चात् लिखे गये अपने "श्रीश्रीविष्णुप्रिया मंगल" काव्यमें मध्य खण्डके अष्टादश परिच्छेदमें और "श्रीश्रीविष्णुप्रिया नाटक" के षष्ठ अंकके द्वितीय गर्भाङ्कमें श्रीमन्महाप्रभुकी दारुमूर्तिकी स्थापनाके समय ईशानको वर्तमान दिखाकर इस भूलका संभवत: संशोधन किया प्रतीत होता है और "श्रीश्रीविष्णुप्रिया चरित" मूल बंगला ग्रन्थको उनके जीवनकालमें दुबारा मुद्रित होनेका अवसर न मिलनेसे यहाँ यह वर्णन इसी प्रकार रह गया लगता है।

--प्रकाशक

बोल नहीं सकते। इसी प्रकार कुछ दिन कट गये। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी और वंशीवदन दोनोंने एक रात स्वप्न देखा कि श्रीश्रीमहाप्रभु कह रहे हैं—"मेरे लिये तुम लोग व्यर्थ क्रन्दन मत करो। मेरा यह आदेश श्रवण करो। जिस निम्ब-वृक्षके नीचे मेरा जन्म हुआ था और जिस निम्ब-वृक्षके नीचे बैठकर मेरी माता मुझे स्तन-पान कराया करतीं, उसी निम्ब-वृक्षके द्वारा मेरी दारु-मूर्ति निर्माण कराकर इस नवद्वीप-धाममें प्रतिष्ठा करो और उसकी सेवा करो। उस दारु-मूर्तिमें मेरी स्थिति होगी।"

श्रीमती अन्दर महलमें अपने प्रकोष्ठमें शयन कर रही थीं। वंशीवदन बाहर दालानमें सोये थे। दोनों ही रातके अन्तिम पहरमें एक ही समय प्रभुका यह स्वप्नादेश पाकर दोनों स्थानोंमें दोनों आदमी चिल्लाकर रो पड़े।

प्रभुर एकथा स्वप्ने श्रवण करिया।
दुइ घरे दुइ जने उठेन कान्दिया।।
—वं० शि०

दोनों एक दूसरेका स्वप्न-वृत्तान्त सुनकर विस्मित हो उठे। मन-ही-मन प्रभुके आदेशके पालनका दृढ़ संकल्प करके वंशीवदनने उसी दिन बढ़ईको बुलाकर प्रभुके घरमें खड़े पुराने निम्ब-वृक्षको कटवाया।

रजनी प्रभात हइले डाकिया कामार।
सेइ निम्बवृक्ष काटे चट्टेर कुमार।।
—वं० शि०

रजनी (बीतकर) प्रभात होते ही बढ़ईको बुलाकर चट्टकुमार (वंशी वदन) ने उस निम्ब-वृक्षको कटवाया।

इसके बाद एक सुदक्ष मूर्त्तिकार (भास्कर) को बुलाकर उसे श्रीगौराङ्ग-सुन्दरकी दारु-मूर्ति बनानेका आदेश दिया। भास्करने आकर रोते-रोते हाथ जोड़कर वंशीवदनसे निवेदन किया कि ऐसा गुरुतर कार्य मेरे द्वारा सम्पन्न होनेकी आशा नहीं। वंशीवदनने उसको आश्वासन देते हुए कहा—"प्रभु शक्ति प्रदान करेंगे, तुम इस शुभ कर्ममें हाथ लगाओ।"

तबे डाक दिया वंशी कहेन भास्करे।
गौराङ्गेर मूर्त्ति एइ काष्ठे दाओ क'रे।।
भास्कर कान्दिया कहे मोर शक्ति नाइ।
वंशी कन—दिबे शक्ति ठाकुर निमाइ।।
—वं० शि०

महाप्रभुके स्वप्नादेशसे स्थापित उनकी दारु-मूर्त्ति

नदिया-नागर वेशमें

श्रीविष्णुप्रिया वेशमें

● दारु-मूर्त्तिका निर्माण और संस्थापन

तब लाचार होकर श्रीगौराङ्गका स्मरण करके मूर्त्तिकार इस शुभकार्यमें लग गया। एक पक्षके भीतर श्रीश्रीमहाप्रभुकी दारु-मूर्ति तैयार हो गयी। वंशीवदन प्रभुकी श्रीमूर्तिको देखकर आनन्दसे विह्वल हो उठे। उन्होंने श्रीमूर्तिके पद्मासनके अधोभागमें लौह-अस्त्र द्वारा अपना नाम खोद दिया। श्रीश्रीमहाप्रभुकी श्रीमूर्तिको भास्करने जब वस्त्रालंकार और चन्दन-मालासे भूषित किया तो वंशीवदन और श्रीमती विष्णुप्रिया देवी दोनों ही प्रभुकी श्रीमूर्तिके दर्शन करके व्याकुल होकर रोने लगे। प्रभुकी अविकल प्रतिकृति आँखोंके सामने देखकर श्रीमती––प्राणनाथके दर्शन तो पा लिये, यह सोचकर––अजस्र प्रेमाश्रु बहाने लगीं।

तबे त भास्कर करि प्रभुरे प्रणाम।
निर्ज्जने बसिया करे श्रीमूर्त्ति निर्म्माण।।

तब प्रभुको प्रणाम करके भास्कर (मूर्तिकार) निर्जनमें बैठकर श्रीमूर्तिका निर्माण करने लगा।

एक पक्ष मध्ये मूर्त्ति निर्माण करिया।
ठाकुरे संवाद दिल भास्कर जाइया।।

एक पक्षमें मूर्ति तैयार करके भास्कर मूर्तिकारने जाकर ठाकुर वंशीवदनको सूचना दी।

ठाकुर आसिया श्रीमूर्त्तिर पद्मासने।
लौह अस्त्रे निज नाम करिला लिखने।।

ठाकुर वंशीवदनने आकर श्रीमूर्तिके पद्मासनपर लौह-अस्त्रसे अपना नाम लिख दिया।

तबे वस्त्र सेवा आदि सारिया भास्कर।
प्रभुरे देखाय डाकि गौराङ्ग-सुन्दर।।

इसके बाद वस्त्र आदिसे सुसज्जित करके मूर्तिकारने वंशीवदन प्रभुको बुलाकर श्रीगौराङ्ग-सुन्दर दिखाये।

गौराङ्ग देखिया वंशी भावे मने मने।
सेइ त पराणनाथे पानु दरशने।।

श्रीगौराङ्गको देखकर वंशीवदन मन-ही-मन सोचते हैं––ये वे ही तो प्राणनाथ हैं, उन्हींके दर्शन कर रहा हूँ।

तबे विष्णुप्रिया जाञा गौराङ्ग सुन्दरे।
दरशन करि देवी भावेन अन्तरे।।

तब श्रीविष्णुप्रिया देवी जाकर श्रीगौराङ्ग-सुन्दरके दर्शनकर मनमें सोचने लगीं––

सेइ त पराणनाथे देखिते पाइनु ।
जाँर लागि मनागुने दहिया मरिनु ।।
--वं० शि०

ये वे ही प्राणनाथ दीख रहे हैं जिनके लिये मनकी आगमें जलकर मर रही थी ।

तब वंशीवदनने एक शुभ दिन स्थिर करके सब स्थानोंकी भक्त मण्डलियोंके पास पत्रिका भेज दी। निर्धारित दिनको सब भक्तगण श्रीधाम नवद्वीपमें आकर इस शुभ कार्यमें योगदान करके कृतार्थ हुए। वंशीवदनने इस शुभ कार्यके उपलक्ष्यमें एक महा महोत्सवका आयोजन किया। भारके भार भोजनके सामान कहाँसे किसने लाकर दिये, यह किसीकी समझमें न आया। श्रीश्रीमहालक्ष्मीरूपा श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीकी कृपासे वंशीवदनका भण्डार अक्षय हो गया। दीन-दुखियोंको दान, वैष्णव-सेवन आदि कार्य सुसम्पन्न हो गये। श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीके तत्त्वावधानमें यह महायज्ञ सुसम्पन्न हुआ। प्रच्छन्न भावसे देवगण आकर अन्तरिक्षसे श्रीश्रीगौरभगवान्के दर्शन करके महा आनन्दसे नृत्य करने लगे। स्वर्गीय सौरभसे यज्ञ-स्थल भर गया।

दिन स्थिर करि तबे मूर्ति-प्रतिष्ठार ।
सर्व्व ठाँइ पत्र दिला चट्टेर कुमार ।।

तब मूर्त्ति-प्रतिष्ठाका दिन स्थिर करके चट्टकुमार (वंशीवदन) ने सब जगह पत्र दिये ।

निरूपित दिने सबे कैला आगमन ।
श्रीमूर्ति-प्रतिष्ठा तबे करेन बदन ।।

निश्चित दिन सब लोग आये, तब वंशीवदनने श्रीमूर्त्तिकी प्रतिष्ठा की ।

मूर्ति प्रतिष्ठार कैल आयोजन जत ।
श्रीअनन्तदेव नारे वर्णिवारे तत ।।

श्रीमूर्त्ति - प्रतिष्ठाका जितना आयोजन किया, उसका श्रीअनन्त देव भी वर्णन नहीं कर सकते ।

प्रच्छन्न-भावेते आसि जत देवगण ।
प्रतिष्ठार काले गोरा करेन दर्शन ।।

जितने देवगण थे, सबने प्रच्छन्न भावसे आकर प्रतिष्ठाके समय श्रीगौराङ्गके दर्शन किये ।

प्रतिष्ठा करिया प्रभु श्रीवंशीवदन ।
सकले करान महाप्रसाद भोजन ।।
--वं० शि०

प्रतिष्ठा करनेके वाद प्रभु श्रीवंशीवदनने सबको महाप्रसाद भोजन कराया ।

● नित्य-पूजाका प्रबन्ध

प्रभुकी श्रीमूर्त्तिकी प्रतिष्ठाका कार्य समाप्त होने पर उनकी नित्य-पूजा और भोगके लिये श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीने अपने भाई श्रीपाद यादव मिश्रके पुत्रको नियोजित किया। देवीके भाई श्रीयादव और उनके पुत्र प्रभुकी सेवाका भार प्राप्त कर कृतार्थ हो गये। सर्व कर्म परित्याग करके उन पिता-पुत्रने श्रीश्रीमहाप्रभुके सेवाकार्यमें मन लगाया। आज तक श्रीपाद यादव मिश्रके वंशधर श्रीश्रीमहाप्रभुकी दारु-मूर्त्तिकी नित्य पूजा करते आ रहे हैं। श्रीधाम नवद्वीपके गोस्वामीगण इन्हीं यादव मिश्रके वंशज हैं। ये लोग शक्ति-मन्त्रमें दीक्षित होने पर भी श्रीश्रीमहाप्रभुके सालेके वंशज होनेके कारण वैष्णवोचित सारे कर्म करते आ रहे हैं। श्रीश्रीमहाप्रभुकी कृपासे इनको कोई अभाव नहीं, कोई कष्ट नहीं है। श्रीगौराङ्ग-सुन्दर अपने सालेके वंशजोंके ऊपर बड़े कृपाशील हैं। पाठकोंको स्मरण होगा कि प्रभुने अपने श्वशुर श्रीपाद सनातन मिश्रके अनुरोधसे उनके पुत्र यादवके प्रतिपालनका भार लिया था, आज तक प्रभु उसी अनुरोधकी रक्षा करते आ रहे हैं। श्रीश्रीमहाप्रभुके वंशमें दिया-बत्ती जलानेवाला भी कोई नहीं है, परन्तु उनके सालेके वंशकी श्रीवृद्धि दीख पड़ती है। इस कार्यमें भी प्रभुकी लीलाका रहस्य अनुभूत होता है। प्रभु ऐश्वर्य प्रदानकर अपने सालेके वंशजोंको भुलाए रखते हैं।

तबे देवी श्रीयादव मिश्रेर नन्दने।
नियोजित करिलेन प्रभुर सेवने।।
भाग्यवान् यादव नन्दन महाशय।
प्रभुर सेवार लागि सकल छाड़य।।
--वं० शि०

वंशीवदन प्रतिदिन श्रीश्रीमहाप्रभुके चरणोंमें तुलसी और गङ्गाजल अर्पित करते हैं तथा श्रीविष्णुप्रिया देवीकी सेवा करते हैं।

प्रतिदिन पूजा काले श्रीवंशीवदन।
प्रभुर चरणे करे तुलसी अर्पण।।
--वं० शि०

● वंशीवदनका प्रयाण

इस प्रकार कुछ दिन श्रीगौराङ्गका भजन करके वंशीवदन नवद्वीप-धाममें श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीके श्रीचरण-तलमें नश्वर शरीरको त्याग करके नित्य-धाम चले गये। श्रीश्रीमहाप्रभुकी दारु-मूर्त्तिके प्रतिष्ठाता, गौर-भक्त-प्रवर, श्रीश्रीवंशीवदन ठाकुरके प्रति नवद्वीपके सब लोग विशेष भक्ति और श्रद्धा किया करते। सभी जानते थे कि वंशीवदन श्रीगौराङ्गके चिह्नित दास हैं। सभी उनके देहावसानके समाचारको सुनकर मर्माहत हो उठे। श्रीगौराङ्गके अदर्शनसे उत्पन्न शोक नवद्वीपवासियोंके मनमें पुनः उद्दीपित हो उठा।

गौराङ्ग विरहे जैछे सन्ताप सबार।
वंशीर विरहे तैछे एइ जे प्रकार।।
——वं० शि०

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको प्रिय शिष्यके देहावसानके समाचारसे मनमें बड़ा सन्ताप हुआ। उनकी प्रिय सखी काञ्चना सदा उनकी सेवा-शुश्रूषा करती हैं। दामोदर पण्डित अभी वर्तमान हैं। अति वृद्ध हो गये हैं, वे देवीकी देख-भाल बराबर एक-सी करते आ रहे हैं। ईशान* और वंशीवदनके रहते तो उन्हें कोई चिन्ता नहीं थी। अब वृद्ध दामोदर पण्डितको विशेष रूपसे देवीकी देख-भाल करनी पड़ती है, क्योंकि वे अकेली हैं। बीच-बीचमें काञ्चना सखीके साथ देवी तड़के गङ्गा-स्नान करके श्रीश्रीमहाप्रभुकी श्रीमूर्त्तिके दर्शन करती हैं। देवी श्रीमूर्त्तिके दर्शन करते ही व्याकुल होकर रोने लगती हैं। वहाँ अधिक देर तक नहीं रह पातीं।

श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीके आदेशसे श्रीवंशीवदन ठाकुरके द्वारा प्रतिष्ठित श्रीश्रीमहाप्रभुकी श्रीमूर्त्ति आजतक श्रीधाम नवद्वीपमें परम भक्तिभाव और आदरपूर्वक समस्त गौड़ीय वैष्णव मण्डलीके द्वारा पूजित होती आ रही है। श्रीवंशीवदन ठाकुरके वंशधर, श्रीपाट बाघनापाड़ाके श्रीपाद गोस्वामीगणकी अचला-गौरभक्तिके प्रभावसे कलिग्रस्त जीवोंका महान् उपकार संसिद्ध हो रहा है। वे अपने पूर्वजोंके गौरवकी रक्षा करके कलि-ग्रस्त जीवोंको मुक्त

---

*ईशानके सम्बन्धमें पृष्ठ ४८२—४८३की पाद टिप्पणी देखें।

हृदयसे प्रेम-भक्ति प्रदान करें, संसारके रौरव-कूपसे उनके केश पकड़कर उद्धार करें, उनके श्रीचरणोंमें जीवाधम ग्रन्थकारकी यही प्रार्थना है। श्रीवंशीवदन ठाकुरके वंशधरोंमें यह शक्ति है, वे इस शक्तिको कलिके जीवोंके उद्धारमें नियुक्त करके अपने वंशके सम्मानकी रक्षा करें। ठाकुर वंशीवदन! तुम कृपामय हो। क्या इस नराधमके प्रति एक बार कृपा-दृष्टि न करोगे? कृपा करके केश पकड़कर संसारके नरक-कुण्डसे निकाल लो। पूतिगन्धमय नरक-कीट दंशन करके पाप-देहको जर्जरित कर रहे हैं। ठाकुर! तुम्हारी कृपा हुए बिना श्रीश्रीगौराङ्गसुन्दरकी कृपा प्राप्त करना अत्यन्त कठिन है। तुम्हारे श्रीचरणोंमें कोटि-कोटि प्रणिपात। कृपा करके श्रीगौर-प्रेमकी भिक्षा देकर इस नराधम संसार-कीटको कृतार्थ करो और श्रीगौराङ्गदास नामका प्रकृत परिचय दो। इस भिक्षाके सिवा इस अधमकी अन्य कोई प्रार्थना नहीं है। ठाकुर! तुम श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीके साक्षात् कृपापात्र हो। तुम्हारी इच्छा हो तो सब कुछ कर सकते हो। तुम्हारे कृपा-कटाक्षसे सर्व सिद्धियाँ प्राप्त हो सकती हैं। कृपा करके इस जीवाधमके सिर पर सैकड़ों-सहस्रों बार पदाघात कर कृतार्थ करो। इस कृपा-प्रदर्शनके द्वारा ही यथेष्ट कल्याण होगा। इसमें कृपणता न होने पाये। मैं सिर झुकाकर बैठा हूँ।

●

पंचत्रिंश अध्याय

देवीके कठोर भजनका वृत्तान्त सुनकर श्रीश्रीअद्वैत प्रभुको दुःख। श्रीश्रीजाह्नवा और सीता देवीके साथ प्रियाजीका मिलन।

जे कष्ट सहेन माता कि कहिमु ग्रार।
ग्रलौकिक शक्ति बिना ऐछे साध्य कार।।
——ग्रद्वैत प्रकाश।

माता श्रीविष्णुप्रिया देवी जो कष्ट सहन कर रही हैं, उसका ग्रौर क्या वर्णन करूँ? ग्रलौकिक शक्तिके बिना ऐसी साधना किसकी हो सकती है?

● श्रीविष्णुप्रिया देवीकी कठोरतर साधना

श्रीश्रीनित्यानन्द प्रभु स्वधाम गमन कर चुके हैं। श्रीश्रीग्रद्वैत प्रभु श्रीगौराङ्गके विरहमें जीवन्मृतके समान शान्तिपुरमें बास कर रहे हैं। वे ग्रब ग्रतिवृद्ध हो गये हैं। महा प्रभुके बाल्य-सहचर, ग्रपने शिष्य ईशान नागरको एक दिन बुलाकर उन्होंने कहा——"ईशान! एक बार नवद्वीपका समाचार ले ग्राग्रो। शची देवीका देहावसान हो गया है। विष्णुप्रिया माता कैसे हैं? कैसे जीवन बिता रही हैं? एक बार जाकर तुम समाचार ले ग्राग्रो।"

एक दिन मुञि कीट प्रभु ग्राज्ञा द्वारे।
नवद्वीपेर तत्त्व जानि ग्राइनु शान्तिपुरे।।
——ग्र० प्र०

एक दिन ग्रद्वैत प्रभुकी ग्राज्ञासे मैं कीट नवद्वीप-तत्त्व जानकर शान्तिपुर ग्राया।

ईशान नागरने प्रभुके ग्रादेशसे नवद्वीपमें ग्राकर श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी श्रीगौराङ्ग-भजनकी कठोर रीति ग्रपनी ग्राँखों देखी ग्रौर वापस जाकर श्रीश्रीग्रद्वैत प्रभुसे सारी बातें विस्तारपूर्वक कहीं। नवद्वीप जाकर दामोदर पण्डितके ग्रनुग्रहसे ईशान नागर देवीके श्रीचरणोंके दर्शन करके कृतार्थ हो गये। गदाधर दास, श्रीराम पण्डित ग्रादि भक्तगण प्रसाद लेनेके लिये देवीके मन्दिरमें

श्रीविष्णुप्रिया देवीका नाम-जप

नित्य आया करते। ईशान नागरने स्वप्रणीत श्रीश्रीअद्वैत-प्रकाश नामक ग्रन्थमें श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके कठोर भजनके सम्बन्धमें जो कुछ लिखा है, उसका पाठ करने पर महान पाखण्डीका पाषाण-हृदय भी द्रवित हो जाता है। जो जो अत्यन्त गुह्य भजनकी बातें ईशान नागरने दामोदर पण्डितसे सुनीं, वे सब शान्तिपुर जाकर श्रीश्रीअद्वैत प्रभुके निकट वर्णन कीं। कृपालु पाठक-पाठिकागण श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके कठोर भजनकी बात सुनकर जी भर कर रोवें और देवीकी कृपा——आशीर्वादकी प्रार्थना करके अपने अन्तःकरणको निर्मल करें। देवीके दुःखसे आपके दो बूँद अश्रुजल गिरने पर आपकी चित्त-शुद्धि होगी, सारे पाप धुल जायँगे। श्रीमतीके कठोर भजनकी बात भक्ति-पूर्वक श्रवण कीजिए। श्रीईशान नागर कहते हैं——

विष्णुप्रिया माता शचीदेवीर अन्तर्द्धाने।
भक्त-द्वारे द्वाररुद्ध कैला स्वेच्छाक्रमे॥

शची देवीके अन्तर्धान होनेके बाद श्रीविष्णुप्रिया माताने अपनी इच्छासे भक्तोंके लिये द्वार रुद्ध कर दिया।

ताँर आज्ञा बिना ताने निषेध दर्शने।
अत्यन्त कठोर व्रत करिला धारणे॥

उनकी आज्ञाके बिना उनके दर्शन निषेध हैं। उन्होंने अत्यन्त कठोर व्रत धारण किया है।

प्रत्यूषेते स्नान करि कृताह्निक हञा।
हरिनाम करे किछु तण्डुल लइया॥

प्रत्यूष-कालमें स्नानकर, नित्यकर्म समाप्त कर, कुछ तण्डुल लेकर हरिनाम जपती हैं।

नाम*प्रति एक तण्डुल मृत्पात्रे राखय।
हेन मते तृतीय प्रहर नाम लय॥

प्रति नाम*पर एक तण्डुल मिट्टीके पात्रमें रखती हैं। इस प्रकार तीसरे प्रहर तक नाम जप करती हैं।

---

* श्रीविष्णुप्रिया देवीकी कठोर तपस्याके सम्बन्धमें श्रीअद्वैताचार्यके प्रिय शिष्य श्रीईशान नागरने अपने श्रीग्रन्थ 'अद्वैत-प्रकाश' में **'नाम प्रति एक तण्डुल मृत्-भाण्डे राखय'** लिखा है तथा प्रियाजीके चिह्नित दास विशेष कृपा-पात्र श्रीनिवास आचार्यके शिष्यानुशिष्य श्रीमनोहरदासने अपने 'अनुराग-वल्ली' श्रीग्रन्थमें लिखा है——

जपान्ते सेइ संख्यार तण्डुल मात्र लञा । यत्ने पाक करे मुख वस्त्रेते बाँधिया ।।	जपके अन्तमें केवल उतने ही तण्डुल लेकर वस्त्रसे मुख ढक कर यत्न पूर्वक पकाती हैं ।
अलवण अनुपकरण अन्न लञा । महाप्रभुर भोग लागाय काकुति करिया ।।	बिना लवण और बिना और कोई लगावनके अन्नको लेकर कातर बिनती करके महाप्रभुके भोग लगाती हैं ।
विविध विलाप करि दिया आचमनी । मुष्टिक-प्रसाद मात्र भुञ्जेन आपनि ।।	विविध विलाप करती हुई आचमन देती हैं । उसमेंसे मुट्ठी भर प्रसाद स्वयं पाती हैं ।

'षोलनाम पूर्ण हइले एकटि तण्डुल । राखेन सराते अति हइया व्याकुल ।।

इसी प्रकार 'श्रीप्रेमविलास'के रचयिता श्रीनित्यानन्द दासने––जिनकी दीक्षा-गुरु श्रीनित्यानन्द-गृहिणी स्वयं भगवती श्रीजाह्नवा देवी थीं––लिखा है–

'एक बार जपि षोल नाम बत्रिश अक्षर । एक तण्डुल राखेन पात्रे आनन्द अन्तर ।।'

तृतीय प्रहर तक महामन्त्र-नाम-जप चलता था, यह सभीने लिखा है।

ठाकुर जयानन्दने––जिनका बाल्यकालका पुकारनेका नाम 'गुइया' था, जब श्रीमन् महाप्रभुजीने नीलाचलसे गौड़ जाते समय स्वयं पधार कर इनके घरको पवित्र किया था, उस समय इनका नाम जयानन्द रखा था–– अपने "चैतन्य-मङ्गल" श्रीग्रन्थमें प्रभु द्वारा संन्यास ग्रहणके पूर्व देवीको दी गई वैराग्य शिक्षाका वर्णन इस प्रकार किया है––

अरुण उदयकाले गङ्गा स्नान करि । मन्दिरे आसिया दिव्य धौतवस्त्र परि ।।
एक मुष्टि आतप तण्डुल भूमे फेलि । एकटि तण्डुल लइया हरे कृष्ण बलि ।।
हरिनाम बत्रिश अक्षर हइले । सेइ तण्डुल गुटि धुबे गङ्गाजले ।।
एइ मत तिन प्रहर जत पारे । रन्धन करिया कृष्णे निवेदन करे ।।
सेइ अन्न भक्षण करे देह रक्षा हेतु । तोमार चरित्र लोके धर्म्म शिक्षा सेतु ।।

नियमित रूपसे अधिक नाम-जप करने वाले कोई-कोई सज्जन तो एक घण्टेमें १२ माला तक जप लेते हैं लेकिन साधारणतया ८ मालाका जप तो घण्टे भरमें साधारण शीघ्रतासे हो ही जाता है। तीन प्रहरके ९ घण्टोंमें ७२ माला जप अर्थात् ७७७६ महामन्त्र––

अवशेषे प्रसादान्न विलाय भक्तेरे।	बाकी बचा प्रसादान्न भक्तोंको
ऐच्छन कठोर व्रत के करिते पारे।। --अ० प्र०	बँटवा देती हैं। ऐसा कठोर व्रत कौन कर सकता है?

श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीके इस अति कठोर भजन-वृत्तान्तको सुनकर ईशान नागरको मर्मान्तिक कष्ट हुआ। उनके हृदयपर कठोर भजनके ये सब वाक्य वज्रके समान लगे। वे व्याकुलता पूर्वक रोते-रोते सोचने लगे कि किस उपायसे एक बार श्रीश्रीविष्णुप्रिया माताके श्रीचरण-कमलोंके दर्शन करके जीवनको सार्थक करूँ और कृतार्थ होऊँ। दयामयी माताके कानोंमें भक्तका

हरे कृष्ण हरे कृष्ण कृष्ण कृष्ण हरे हरे। हरे राम हरे राम राम राम हरे हरे।। पूरे हो जाते हैं। प्रति मन्त्रपर एक चावल रखा जाय तो ७७७६ चावलोंका वजन लगभग १० तोले अर्थात् दो छटाँक हो जाता है। ८ चावलोंकी एक रत्ती, ८ रत्तीका एक मासा और १२ मासेका एक तोला होता है। इस तरह एक तोलेमें ७६८ चावल होते हैं। यदि नाम प्रति चावल रखा जाय तो तीन प्रहरके जपमें २ छटाँककी जगह २ सेर चावल हो जायँगे। प्रति नाम पर एक-एक चावल रखनेसे चावल रखनेमें यन्त्रकी तरह हाथ इतना शीघ्र चलाना पड़ेगा कि सारा ध्यान चावल उठाने-रखनेमें ही लग जायगा तथा बराबर ६ घंटे इतना शीघ्र हाथ चलाते रहना व्यवहारमें भी असंभव-सा है। श्रीमन् महाप्रभुजीके आदेशानुसार तथा व्यवहारिक दृष्टिसे भी देह-रक्षा हेतु एक महामन्त्र पर एक चावल रखना ही अधिक युक्ति-संगत है। अतः श्रीईशान नागरके वर्णन **'नाम प्रति एक तण्डुल मृत्-भाण्डे राखय'** में 'नाम प्रति' का अर्थ सोलह नाम बत्तीस अक्षरके एक महामन्त्रका लेना ही अधिक उपयुक्त है।

ध्यान रहे कि श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवी भाव विभोर रहा करती थीं। भाव-विभोर अवस्थामें जपमें शीघ्रता हो ही नहीं सकती। अतः उनके मन्त्र-जपकी संख्या, जिस दिन भावावेशमें वे मूर्च्छाको प्राप्त न होती हों, उस दिन भी तीन प्रहरके समयमें उपरोक्त संख्यासे अनुमानतः आधी या उससे भी कम ही रहती होगी।

प्रेम-विलासमें लिखा है—

रात्रि दिन हरिनाम प्रभुर संख्या कत। से चेष्टा बुझिते नारि बुद्धि प्रतिहत।।

—प्रकाशक

कातर क्रन्दन पहुँचा। उनके आदेशसे गदाधर पण्डित, श्रीराम पण्डित, दामोदर पण्डित आदि भक्तगणके साथ देवीके अन्तःपुरमें जानेकी अनुमति प्राप्त हुई।

वज्राघात-सम वाक्य करिया श्रवण।
भाविनु मातारे कैछे पाइमु दर्शन॥
हेनकाले आइला तथा दास गदाधर।
श्रीराम पण्डित आदि भकत प्रवर॥
प्रसाद लइते सभे दामोदर सने।
अन्तःपुरे प्रवेशिला सजल नयने॥
तबे विष्णुप्रिया मातार आज्ञा अनुसारे।
मो अधमे लञा पण्डित गेला अन्तःपुरे॥ —अ० प्र०

ईशान नागरने वहाँ जाकर जो देखा, उससे उसका सर्वाङ्ग सिहर उठा। उन्होंने देखा कि श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीके सारे अङ्ग मलिन, जीर्ण वस्त्रसे आच्छादित हैं। वस्त्राच्छादिता विषादमयी देवीकी प्रतिमाके केवल श्रीचरण-कमल-द्वय दिखलायी दे रहे हैं। ईशान नागरके कोटि जन्मोंके भाग्यके फलसे देवीके श्रीचरणोंके दर्शन प्राप्त हुए। वे कृतार्थ हो गये।

जाञा देखि काण्डा पटे मायेर अङ्ग ढाका।
कोटी भाग्ये श्रीचरण मात्र पाइनु देखा॥ —अ० प्र०

ईशान नागर महाभाग्यवान पुरुष हैं। श्रीश्रीगौराङ्ग-वक्ष-विलासिनी श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीके श्रीचरणोंके दर्शन पाये और उनके दिये हुए महाप्रसादके लाभसे जीवन सार्थक किया। ईशान नागरके मनका विषाद दूर हुआ, वे कृतार्थ हो गये।

भक्त कृपा बले किञ्चित पाइनु प्रसाद।
कृतार्थ हइनु मनेर घुचिल विषाद॥ —अ० प्र०

'प्रेमविलास' श्रीग्रन्थमें श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीके कठोर भजन-वृत्तान्तका इस प्रकार वर्णन है—

ईश्वरीर नाम ग्रहण शुन भाइ सब।
जे कथा श्रवणे लीलार हय अनुभव॥

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके नाम जप करनेके विषयमें आप सब भाई सुनें। इस बातके सुननेसे लीलाका अनुभव होता है।

नवीन मृत्भाजन आने दुइ पाशे धरि। **एक शून्यपात्र आर पात्र तण्डुल भरि।।**	नये दो मिट्टीके पात्र लेकर उन्हें पास रखती हैं। एक पात्र खाली होता है और दूसरेमें तण्डुल भरे होते हैं।
एक बार जपे षोल नाम बत्रिश अक्षर। **एक तण्डुल राखेन पात्रे आनन्द अन्तर।।**	जब बत्तीस अक्षरोंके सोलह नामोंका एक बार जप कर लेती हैं तो एक तण्डुल निकाल कर हृदयमें आनन्द भर खाली पात्रमें रखती हैं।
तृतीय प्रहर पर्य्यन्त लयेन हरिनाम। **ताते जे तण्डुल हय लैया पाके जान।।**	तीसरे पहर तक हरिनाम जपती हैं। इससे जो तण्डुल इकट्ठे होते हैं, उन्हें लेकर पकाने जाती हैं।
सेइ से तण्डुल मात्र रन्धन करिया। **भक्षण करान प्रभुके अश्रुयुक्त हैया।।**	उतने ही तण्डुल राँध करके आँसू बहाते हुए प्रभुको भोग लगाती हैं।
रात्रि दिन हरिनाम प्रभुर संख्या जत। **से चेष्टा बुझिते नारि बुद्धि अतिहत।।**	रात-दिनमें प्रभुके हरिनाम जपकी कितनी संख्या होती है, इस चेष्टाको समझनेमें बुद्धि प्रतिहत हो जाती है, बात समझमें नहीं आती।
प्रभुर प्रेयसी जेंहो ताँहार कि कथा। **दिवा निशि हरिनाम लयेन सर्व्वथा।।**	वे प्रभुकी प्रिया हैं, अतः उनकी बात ही और है। दिन-रात सदा नाम ही जपती रहती हैं।
ताँहार असाध्य किवा नामे एत आर्त्ति। **नाम लयेन ताहे रोपन करेन प्रभुर शक्ति।।**	उनके लिये क्या असाध्य है, जो नाममें इतनी आर्त्त हैं। वे नाम लेती हैं और उसमें प्रभुकी शक्ति आरोपित करती हैं।

देवीके आहारकी अल्पताका परिमाण कृपालु पाठक समझ लें। सोलह नाम, बत्तीस अक्षरका जप करके एक चावल मिट्टीके पात्रमें रखती हैं। तृतीय पहर तक उन चावलोंकी संख्या कितनी होगी? इसका पाठकवृन्द अनुमान कर सकते हैं।

उस जपके द्वारा इकट्ठे हुए चावलोंको पकाकर प्रसाद बाँटकर जो कुछ बचता, उसे पाती थीं।* यह कहना पड़ेगा कि देवीका भोजन होता ही नहीं था।

ईशान नागर नवद्वीपसे शान्तिपुर लौटकर आये और श्रीश्रीअद्वैत प्रभुके सामने देवीके कठोर भजनका वृत्तान्त यथावत् वर्णन करते समय रो-रोकर कहने लगे——

जे कष्ट सहेन माता कि कहिमु आर।
अलौकिक शक्ति बिना ऐछे साध्य कार।।
——अ० प्र०

माता श्रीविष्णुप्रिया देवी जो कष्ट सहन कर रही हैं, उसका और क्या वर्णन करूँ? अलौकिक शक्तिके बिना ऐसी साधना किसकी हो सकती है?

श्रीश्रीअद्वैत प्रभु श्रीश्रीविष्णुप्रिया माताके कठोर भजनकी बात सुनकर बालकके समान क्रन्दन करने लगे। 'सब कृष्णकी इच्छा है'——कहकर वृद्ध ब्राह्मण रो पड़े तथा बहुत कष्टपूर्वक मनकी व्यथाको शान्त किया।

ताहा शुनि मोर प्रभु करये क्रन्दन।
कृष्ण इच्छा मानि करे खेद सम्वरण।। ——अ० प्र०

---

*पृष्ठ ४९१।४९२ में "श्रीअद्वैत-प्रकाश" ग्रन्थमें उद्धरण आया है——
विविध विलाप करि दिया आचमनी। मुष्टिक प्रसाद मात्र भुञ्जे आपनि।।
अवशेषे प्रसादान्न विलाय भक्तेरे। एच्छन कठोर व्रत के करिते पारे।।

पृष्ठ ५०८ में "श्रीप्रेम विलास" ग्रन्थका उद्धरण आया है——
ताहा पाक करि शालग्रामे समर्पिया। भोजन करेन कत निर्वेद करिया।।
सेवक लागिया किछु राखे पात्र शेष। भक्त सब आइसे पाइया आदेश।।

दोनों वर्णनोंके क्रमके अनुसार पहले स्वयं प्रसाद पानेका और पीछे भक्तोंमें बँटवानेका भाव झलकता है। श्रीविष्णुप्रिया देवी अपने कठोर व्रतकी साधनामें एकान्तमें किस समय क्या करती थीं, इसको जाननेका कोई साधन न था। भक्तोंका और बाहरी लोगोंका अनुमान यही होगा कि स्वयं प्रसाद पा लिया होगा तब बचा हुवा भक्तोंमें बँटवाया होगा। किन्तु, शुद्ध वैष्णव प्रथा सबके बादमें प्रसाद पानेकी है। श्रीविष्णुप्रिया देवी भी इसका अतिक्रमण नहीं करती होंगी। इससे यह बात उपयुक्त लगती है कि मुट्ठी भर प्रसाद अपने लिए रखकर बाकी भक्तोंमें बँटवा देती थीं और स्वयं पीछे प्रसाद पाती थीं।

पंचत्रिंश अध्याय---श्रीविष्णुप्रिया देवीकी कठोरतर साधना

श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीके अतिशय कठोर भजनका वृत्तान्त श्रीश्रीमहाप्रभुके सब भक्तोंने सुना। शची माता हैं नहीं, दूसरा कौन देवीको इस कार्यसे विरत कर सकता है? देवी आहार नहीं करती हैं यह कहना ही पड़ेगा। शरीर जीर्ण-शीर्ण हो गया है। परन्तु सारा अङ्ग दिव्य ज्योतिसे पूर्ण है। श्रीमती विष्णुप्रिया देवी इस समय मनकी साधसे महायोगिनी बन रही हैं। वह योगिनी-मूर्त्ति श्रीश्रीगौर-भक्तगणकी आँखोंमें अच्छी नहीं लगती। श्रीश्री-गौराङ्गकी संन्यासमूर्त्ति उनकी आँखोंमें जैसे नहीं जँचती, उसी प्रकार देवीकी योगिनी-मूर्त्ति भी उनकी आँखोंमें नहीं जँचती। देवीकी योगिनी-मूर्ति याद आते ही वे व्याकुल होकर रो पड़ते हैं। क्या करें, कोई उपाय नहीं है। देवीको कुछ कहनेका किसीका अधिकार या सामर्थ्य नहीं है। श्रीश्रीविष्णुप्रिया माता इच्छामयी हैं। वे भक्तोंके क्लेशको ध्यानमें रखकर इच्छापूर्वक अपने पास किसीको भी आने नहीं देतीं।

भक्त-द्वारे द्वाररुद्ध कैला स्वेच्छाक्रमे।

गदाधर और दामोदर पण्डित आदि अत्यन्त अनुरक्त भक्तोंके सिवा देवीके भजन-मन्दिरके पास जानेकी अनुमति किसीको भी प्राप्त नहीं है। ईशान नागर बहुत चेष्टा करके देवीके श्रीमन्दिरमें जानेकी अनुमति प्राप्त कर सके थे।

श्रीगौराङ्ग जीव-शिक्षाके लिये स्वयं आचरण करके कठोर भजनका चरम आदर्श दिखला गये हैं। प्रभुके कठोर भजनकी सारी बातें देवीके श्रुति-गोचर हुई हैं। वे भी अपने प्राणवल्लभ द्वारा प्रदर्शित पथका अवलम्बन करनेका प्रयास बहुत दिनोंसे कर रही थीं। परन्तु यह जानकर कि इससे वृद्धा सासके मनमें दारुण व्यथा होगी, देवी इस कार्यसे विरत रहीं। श्रीमतीजीने अपने प्राणवल्लभसे एक समय प्रार्थना की थी--

आपनि जे सब तुमि नियम पालिबे।	आप जो जो नियम पालन करेंगे,
ता ह'ते कठोर नियम ए दासीरे दिबे॥	उनकी अपेक्षा कठोर नियम इस दासीको देवें।

अब समय पाकर देवी अपने मनकी अभिलाषा पूर्ण कर रही हैं; श्रीगौराङ्गकी गृहिणी अपने प्राण-वल्लभके मार्गका अनुसरण कर रही हैं, इसमें किसीके बोलनेका क्या है? परन्तु देवीके इस कार्यसे भक्तगणके हृदय फटते

जा रहे हैं। त्रैलोक्यकी अधीश्वरी, राज-राजेश्वरी श्रीश्रीगौराङ्ग-गृहिणीको दीना, भिखारिणी, योगिनीका वेष बनाए देखकर आज उनका हृदय विदीर्ण हो रहा है। इस हृदय-विदारक दृश्यसे उनके मर्मके अन्तस्तलमें चोट लगती है। श्रीश्रीअद्वैत प्रभु जैसे लोग—सब कृष्णकी इच्छा है—कहकर अपने हृदयके आवेग और मनके खेदको शान्त करते हैं।

● श्रीजाह्नवा देवी आदिका श्रीविष्णुप्रिया देवीसे मिलन

श्रीश्रीनित्यानन्दकी गृहिणी श्रीश्रीजाह्नवा देवीके कानोंमें श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीके कठोर भजनकी बात पहुँच गयी है। रमणीका कोमल हृदय इससे बड़ा व्यथित हुआ। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके साथ श्रीमती जाह्नवा देवीका कभी साक्षात्कार नहीं हुआ है। अपने पतिके मुखसे तथा जनश्रुतिसे उन्होंने श्रीमती विष्णुप्रिया देवीकी सारी बातें सुनी थीं।

पहले वर्णन आ चुका है कि प्रभुके घरके समीप ही नवद्वीपमें वंशीवदन रहते थे। प्रभुका घर और वंशीवदनकी कुटिया आस-पास थी। श्रीमती जाह्नवा देवी वंशीवदनके पुत्र चैतन्यके घर नवद्वीपमें आयीं। आनेका प्रथम उद्देश्य था श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीके दर्शन करना, दूसरा उद्देश्य था चैतन्यके पुत्र रामचन्द्र (रामाई पण्डित) को दीक्षा देना। ये रामाई पण्डित श्रीवंशीवदन ठाकुरके प्रकाश-मूर्त्ति थे। वंशीवदन ठाकुरके तिरोभावके समय उनकी पुण्यवती ज्येष्ठा पुत्रवधू चैतन्यकी पत्नी जब वंशीवदनके श्रीचरणोंको धारण कर रोने लगी, उस समयका 'वंशी शिक्षा' का वर्णन पढ़िये—

सेइ काले गोसाञिर पुत्र-बधूगण।	उस समय उनकी पुत्रवधुएँ उनके
प्रभुर चरणे पड़ि करेन रोदन॥	चरणोंमें पड़कर रोने लगीं।
ज्येष्ठ-पुत्र चैतन्येर पत्नी साध्वी-सती।	ज्येष्ठ पुत्र चैतन्यकी सती-साध्वी
काँन्दिते लागिला बहु करिया मिनति॥	पत्नी बहुत विनती करके रोने लगी।
गोसाञि कहेन मागो केन कान्द तुमि।	गोसाईंने कहा—बेटी तुम क्यों रो
तोमार गर्भेते जन्म लभिब से आमि॥	रही हो ? तुम्हारे गर्भसे मैं जन्म लूँगा।
तुया प्रेमे वश हैञा कैनु अङ्गीकार।	तुम्हारे प्रेमके वश होकर मैंने यह
मोर एइ कथा काँहा ना कर प्रचार॥	अङ्गीकार किया है। मेरी इस बातका
—वं० शि०	कहीं प्रचार न करना।

वंशीवदन श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीके प्रिय शिष्य थे। उनके ऊपर देवीकी

विशेष कृपादृष्टि थी। वंशीवदन अपनी पुत्रबधूके गर्भसे पौत्र रूपमें जन्म ग्रहण करके श्रीगौराङ्ग-लीलाका प्रचार करेंगे, देवीको यह अविदित न था। वंशीवदनके दो पुत्र थे, चैतन्य और निताई। चैतन्यकी पत्नीके गर्भसे रामचन्द्रके रूपमें वंशीवदनका पुनर्जन्म हुआ। इससे सभीको विशेष आनन्द हुआ। श्रीमती जाह्नवा देवी, वसुधा देवी, अच्युतकी माँ श्रीश्रीसीता देवी, श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवी सभी चैतन्य-नन्दन रामचन्द्ररूपी वंशीवदनको देखने आयी थीं।

वीरचन्द्रे कोले लञा,
वसुधा आइल धाञा,
विष्णुप्रिया अच्युत-जननी।
वस्त्र-गुप्त-याने चड़ि,
दासीगण सङ्गे करि,
आइलेन सब ठाकुराणी॥

श्रीवसुधा देवी अपने पुत्र वीरचन्द्र को गोदमें लेकर दौड़ी आयीं, श्रीविष्णुप्रिया, अच्युतकी माँ श्रीसीता देवी आदि सब ठाकुरानियाँ दासियोंको साथ लेकर वस्त्रसे ढँकी सवारी पर चढ़कर आयीं।

देखिया बालक ठाम,
सबे करे अनुमान
सेइ वंशीवदन प्रकाश।

बालकके मुखादि अङ्गोंको देखकर सबने अनुमान कर लिया कि वंशीवदन ही प्रकट हुए हैं।

करिते विविध लीला,
पुनः प्रभु प्रकटिला
ए राजबल्लभ करे आश॥
--वं० शि०

(श्रीमुरली-विलासके प्रणेता) राजवल्लभ कवि आशा करते हैं कि विविध प्रकारकी लीलाएँ करनेके लिये पुनः श्रीवंशीवदन प्रभु प्रकट हुए हैं।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी अपने भजन-मन्दिरसे कहीं भी बाहर नहीं जाती थीं। अपने प्रिय भक्त और शिष्य वंशीवदनका पुनराविर्भाव सुनकर उसको एक बार देखनेके लिये देवीके मनमें बड़ी इच्छा हुई। विशेषतः चैतन्य उनका शिष्य-पुत्र था, वंशीवदनका कुटीर देवीके भजन-मन्दिरके सन्निकट ही था और दूर देशसे श्रीश्रीअद्वैतकी गृहिणी तथा श्रीनित्यानन्द प्रभुकी दोनों गृहिणियाँ आयी थीं। उनके विशेष आग्रह तथा चैतन्यके विशेष अनुरोधसे श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने चैतन्यके घर पदार्पण करके उनके कुटीरको पवित्र किया।*

---

* 'श्रीमुरली-विलास' श्रीग्रन्थके १२वें परिच्छेदमें श्रीवंशीवदनके पौत्र श्रीरामाई ठाकुर (श्रीरामचन्द्र) के श्रीपुरुषोत्तम-क्षेत्र पुरी-धाम दर्शन करके नवद्वीप लौटने पर श्रीविष्णुप्रिया देवीसे मिलनेका प्रसंग इस प्रकार वर्णित है--

सेइ काले विष्णुप्रिया चैतन्येर घरे । आगमन करिलेन आनन्द-अन्तरे ।।	उस समय हृदयमें आनन्द भरे श्रीविष्णुप्रिया चैतन्यके घर आईं।
बसिते आसन दिया कहेन चैतन्य । तुया आगमने मोर गृह हैल धन्य ।। —वं० शि०	बैठनेको आसन देकर चैतन्य बोले—"आपके आगमनसे मेरा घर धन्य हो गया।"

सङ्गीगणे पाठाइया आपनार घरे । आपने चलिला विष्णुप्रियार मन्दिरे ।।	सङ्गीगणको अपने घर भेजकर स्वयं श्रीविष्णुप्रियाके मन्दिरको चले ।
अष्टाङ्ग लोटाये ताँर प्रणाम करिला । श्रीमती ईश्वरी ताँरे आशीर्व्वाद दिला ।।	साष्टाङ्ग लेटकर उनको प्रणाम किया । श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने उनको आशीर्वाद दिया ।
विविध प्रसाद राम दिला ताँर हाथे । प्रसाद लइला तिँह परम आह्लादे ।।	रामचन्द्रने उनके हाथमें विविध प्रकारका प्रसाद दिया । उन्होंने परम आह्लाद पूर्वक प्रसाद ले लिया ।

इसके बाद फिर भी लिखा है——

नित्य नित्य चलि जान् विष्णुप्रिया धाम । प्रेमावेशे करे ताँर पदेते प्रणाम ।।	नित्य प्रति श्रीविष्णुप्रियाके धाम चले जाते और प्रेमावेशमें उनके चरणोंमें प्रणाम करते ।
कृष्णलीला गुणवृन्द शुने ताँर मुखे । देह प्रेमार्णवे डूबे भासे तार सुखे ।।	उनके मुखसे कृष्णलीला, कृष्ण-गुण-गाथाएँ सुना करते । प्रेम-सागरमें देह डूबी रहती और वे उस सुखमें निमग्न रहते ।
जगन्नाथ क्षेत्रे जत प्रभु कैला लीला । क्रमेते ठाकुर ताहा विवरि कहिला ।।	श्रीजगन्नाथ-क्षेत्रमें प्रभुने जो लीलाएँ की थीं क्रमसे उनका वर्णन करके ठाकुर रामचन्द्रने सुनाई ।
शुनिया ईश्वरी मने प्रेम बाड़े दून । सेइ सुख आस्वादिते पूछे पुनः पुन ।।	इन लीला-कथाओंको सुनकर श्रीविष्णुप्रिया देवीके मनमें प्रेम दूना बढ़ जाता । अतः उस सुखके आस्वादनके लिये वे बार-बार पूछतीं ।

पंचत्रिंश अध्याय--श्रीजाह्नवा देवी आदिका श्रीविष्णुप्रिया देवीसे मिलन

श्रीश्रीगौर-वक्ष-विलासिनी श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीके साथ श्रीश्रीनित्यानन्द-वक्ष-विलासिनी श्रीश्रीजाह्नवा देवीका यह सर्वप्रथम शुभ सम्मिलन है। इसके पहले उनमेंसे किसीने आपसमें एक दूसरेको नहीं देखा था। श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने सुना था कि उनके प्राणवल्लभके आदेशसे अवधूत नित्यानन्द दार-परिग्रह करके संसारी बन गये थे। इतने दिनोंके बाद दो बहनोंका साक्षात्कार हुआ। दोनों एक दूसरेके गले लिपट कर आकुल होकर

विस्तारि से सब लीला कहेन ठाकुर। शुनिते शुनिते प्रेम बाड़ये प्रचुर॥	ठाकुर उन सभी लीलाओंका विस्तार पूर्वक वर्णन करते, जिसको सुन-सुन कर बहुत प्रेम बढ़ता।

इसके उपरान्त अपने मन्त्र-गुरू श्रीजाह्नवा देवीके पास खरदह जानेके समय श्रीविष्णुप्रिया देवीसे विदा लेनेके प्रसङ्गका वर्णन इस प्रकार है--

संकीर्त्तन अन्ते गेला ईश्वरी दर्शने। भक्ति भावे केला चरण वन्दने॥	संकीर्त्तनके अन्तमें श्रीविष्णुप्रिया देवीके दर्शन करने गये और भक्ति-भावसे चरण-वन्दना की।
कत क्षण केला प्रश्न उत्तर आनन्दे। पुनः पुनः राम ईश्वरीर पद वन्दे॥	कितनी ही देर तक आनन्दसे प्रश्नोत्तर करते रहे। रामचन्द्रने बार-बार श्रीविष्णुप्रियाकी चरण-वन्दना की।
ठाकुर कहेन प्रभु ! करि निवेदन। श्रीपाट जाइते कल्य करेछि मनन॥	ठाकुर रामचन्द्र बोले--"प्रभु ! निवेदन करता हूँ--मैंने कल श्रीपाट जानेका मनमें संकल्प किया है।
बहु विध द्रव्य सङ्गे आछये आमार। वीरचन्द्र प्रभु अग्रे सँपि पुनर्व्वार॥	मेरे साथ अनेक प्रकारके द्रव्य हैं, जिन्हें वीरचन्द्र प्रभुके सन्मुख फिरसे सौंप दूँ।
जगन्नाथ देखिलाम प्रभु भक्त गण। गौड़ भक्तगण सने करिब मिलन॥	श्रीजगन्नाथमें प्रभुके भक्तगणोंके दर्शन कर चुका, अब गौड़के भक्तगणोंके दर्शन करूँगा।
तव आशीर्व्वादे मोय हबे सर्व्व सिद्धि। तव कृपा वले मुञि पाब प्रेम भक्ति॥	आपके आशीर्वादसे मेरे सभी कार्य सिद्ध होंगे और आपके कृपाबलसे मैं प्रेम-भक्ति प्राप्त करूँगा।"

रोने लगीं। श्रीमती जाह्नवा देवी श्रीमती विष्णुप्रिया देवीका हाथ पकड़कर एक निर्जन स्थानमें जाकर बैठीं। दोनोंने एक दूसरेसे मनका दुःख-सन्ताप कहकर पतिविरहकी ज्वालाको कुछ शान्त किया। दोनोंके नयनद्वयसे अविरल अश्रु-धाराएँ बह रही हैं। दोनों उन्मादिनीके समान एक दूसरेकी ओर शोक-विह्वल नेत्रोंसे देख रही हैं। अवस्थामें स्वयं कुछ बड़ी होने पर भी श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने श्रीमती जाह्नवा देवीको दीदी (बड़ी बहिन) कहकर सम्बोधन किया।

चैतन्यके घर दोनों बहनोंमें जो बातें हुई, उसका विस्तृत विवरण ग्रन्थोंमें नहीं मिलता। श्रीमती जाह्नवा देवी श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके कठोर भजनकी बात सुनकर स्वेच्छासे उनके साथ भेंट करने आयी थीं। उद्देश्य था देवीको कुछ समझाने-बुझानेका। क्योंकि देवीको इस विषयमें दूसरा कोई भी कुछ कहनेका साहस नहीं कर पाता था। श्रीमती जाह्नवा देवीने श्रीमती विष्णुप्रिया देवीके दोनों हाथ पकड़कर स्नेह-पूर्वक आँखोंमें आँसू भर कर कहा--"बहिन! अत्यन्त कठोरता पूर्वक शरीर-पात न करो। शरीरके नष्ट हो जाने पर भजन-साधन कैसे होगा? तुम्हारे प्राणवल्लभके आदेशसे मेरे अवधूत पति संसारी बने थे। वे मुझको उपदेश दे गये हैं कि कठोर भजन श्रीगौराङ्गको अभिप्रेत न था।"

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी यह बात सुनकर कुछ हँसीं। क्षणमात्रमें देवीकी वह म्लान हँसी विषादमय मुख-मण्डलमें छिप गयी। देवीने सिर झुकाकर बहुत ही सम्मानपूर्वक उत्तर दिया--"दिदि! अपने पतिके उपदेशको

ईश्वरी कहेन बापु! तुमि भाग्यवान्। निश्चय तोमारे कृपा कैला भगवान्।।	श्रीविष्णुप्रिया बोलीं--"वत्स! तुम भाग्यवान हो, निश्चय ही भगवान्ने तुम पर कृपा की है।
महामोह निगड़ नारिल परशिते। अतएव तव जन्म धन्य ए जगते।।	दुष्ट महामोह तुमको स्पर्श नहीं कर सका, अतः तुम्हारा जन्म इस जगतमें धन्य है।"
शुनिया ठाकुर राम दण्डवत् हैला। ठाकुराणी श्रीचरण तार माथे दिला।।	यह सुनकर ठाकुर रामने दण्डवत की और ठाकुरानी श्रीविष्णुप्रियाने उनके मस्तकसे अपना चरण छुवाया।

तुम सर्वथा पालन करो। मेरे प्राणवल्लभके कठोर भजनकी बात तुमको अज्ञात नहीं है। उस कठोरताकी तुलनामें मेरी कठोरता कुछ भी नहीं है। मेरे प्रभु लोकशिक्षाके लिये स्वयं आचरण करके कलिग्रस्त जीवोंको श्रीकृष्ण-भजनकी शिक्षा दे गये हैं। मैं केवल प्रभुके पद-चिह्नोंका अनुसरण मात्र कर रही हूँ। मैं भी स्वयं आचरण करके कलिके जीवोंको श्रीगौराङ्ग-भजनकी शिक्षा देनेके लिये कृतसंकल्प हूँ।" इतना कहते-कहते देवी रो पड़ीं।

श्रीमती जाह्नवा देवी इस बातका क्या उत्तर देतीं। श्रीमती विष्णु-प्रिया देवीको दृढ़व्रता देखकर वे और कुछ कहनेका साहस न कर सकीं। तथापि उन्होंने कहा--"बहिन! शरीरकी रक्षा करना। तुम्हारे शरीरकी अवस्था जैसी देख रही हूँ उससे लगता है कि कुछ दिनोंमें तुम्हारी देह-रक्षा भी भार हो जायगी। मैं तुमको और कुछ नहीं कहना चाहती, शरीरका ध्यान रखते हुए भजन साधन करना।" देवीने रोते-रोते उत्तर दिया--"दिदि! किसके लिये यह पाप-शरीर धारण करके हृदयाग्निमें जलकर दग्ध होती रहूँ? आत्महत्याको महापाप जानकर ही इस पाप-देहको रक्खे हुए हूँ।" यह बात कहते-कहते देवीके विशाल नयन-द्वय जलसे पूर्ण हो गये। नेत्रोंके आँसुओंसे उनका वक्षःस्थल तर हो चला। श्रीमती जाह्नवा देवी प्रिय बहिनको गोदमें लेकर बैठ गयीं। सागर-जलमें गङ्गा-जल मिल गया। दोनोंके अश्रुजलसे दोनोंके वस्त्राञ्चल भीग गये। नयन-जलमें नयन-जल मिलकर सागर-सङ्गम हो गया। वंशीवदनके पुत्र चैतन्यका कुटीर महातीर्थमें परिणत हो गया।

अश्रुपूर्ण नेत्रोंसे श्रीमती जाह्नवा देवीने प्रिय बहिन श्रीमती विष्णुप्रिया देवीसे विदा मांगी। विदाके समयका दृश्य बड़ा ही शोकोद्दीपक और मर्मान्तिक क्लेशदायक था। श्रीमती जाह्नवा देवीने अन्तिम विदाके समय देवीके दोनों हाथ अपने हाथोंमें पकड़कर रोते-रोते कहा--"बहिन! फिर कब भेंट होगी?" रोरुद्यमाना, विषादमयी, कनक-प्रतिमा श्रीमती विष्णुप्रियाने अस्फुट भाषामें गद्गद स्वरमें कहा—"दिदि! आशीर्वाद दो, जिससे यह पाप-देह शीघ्र पतन हो और मैं शीघ्र ही प्राणवल्लभके समीप जा सकूँ।"

● श्रीसीता देवी और श्रीविष्णुप्रिया

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी श्रीमती जाह्नवा देवीके पाससे विदा लेकर

श्रीश्रीअद्वैत-गृहिणी श्रीश्रीसीतादेवीको प्रणाम करने गयीं। सीता देवीने अति व्यग्रतापूर्वक देवीको गोदमें उठाकर आदरके साथ मुख चूम लिया, उनको प्रणाम नहीं करने दिया। सीता देवीका आदर-प्रेम पाकर श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको सास याद आ गयीं। देवी मुँह नीचा करके सीता देवीकी गोदमें बैठकर अजस्र आँसू बहाती हुई रुदन करने लगीं। सीता देवीने अपने आँचलके द्वारा देवीकी आँखोंको पोंछते हुए कहा--"बेटी! तुमको देखकर मैं श्रीगौराङ्गका शोक भूल जाती हूँ, तुमको हृदयसे लगाकर मेरे प्राण शीतल हो गये। बेटी! तुम रोओ मत। तुम जगतके जीवोंको श्रीगौराङ्गके भजनकी शिक्षा देकर अपने हृदयाधिपतिके आदेशका पालन करो। तुम्हारे आदर्श चरित्रका श्रवण और पठन करके कलिग्रस्त जीव सब पापोंसे मुक्त हो जायँगे। तुम्हारा कठोर ब्रह्मचर्य-व्रत नारी-जीवनका आदर्श धर्म है। तुम साध्वी हो, तुम्हारे नयन-जलसे महा पापीके भी सारे पाप धुल जायँगे। तुम्हारे नामके साथ श्रीगौराङ्ग-नाम सदाके लिये युक्त होकर समस्त देशमें पूजित होगा। श्रीगौर-विष्णुप्रिया विग्रहकी गौड़ देशमें घर-घरमें पूजा होगी। माँ! तुम सर्वमङ्गलमयी महालक्ष्मी हो, कलिके अधम जीवके प्रति कृपा-दृष्टि करो। माँ! तुम चिर करुणामयी हो, अधम पातकीके प्रति करुणा करो। यही तुम्हारी सर्वश्रेष्ठ साधना है, यही तुम्हारे प्राणवल्लभका आदेश है।"

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने अपना विषण्ण मुख-मण्डल सीतादेवीके वक्षःस्थलमें छिपाकर स्थिर चित्तसे सारी बातें सुनीं। सुनकर कोई उत्तर न दिया। श्रीश्रीअद्वैत-गृहिणी सीता देवी अब वृद्धा हो गयी हैं। परन्तु उनका मुख-मण्डल दिव्य ज्योतिसे पूर्ण है। वे जिस समय यह बात श्रीमती विष्णुप्रिया देवीको सम्बोधन करके कहने लगीं, उस समय उनके स्वभाव-सिद्ध गम्भीर मुख-मण्डल पर स्वर्गीय ज्योति विकीर्ण हो रही थी, वे देवी प्रकृतिका पूर्ण परिचय दे रही थीं। श्रीश्रीसीता देवीके स्नेहमय उत्साह-वर्द्धक वचनोंसे श्रीमती विष्णुप्रिया देवीका सन्तप्त हृदय कुछ शान्त हुआ। वे आँखोंका जल पोंछकर स्थिर होकर बैठीं और श्रीश्रीसीता देवीको सम्बोधन करके बोलीं--"माँ! तुमने माताके समान मेरे प्राणवल्लभका पालन किया है। मेरी सासजी नित्य-धाममें चली गयीं। माँ! तुम जीवित हो।

तुम्हारा आदेश मुझे शिरोधार्य है। माँ! तुम्हारी उत्साहपूर्ण उपदेशवाणी श्रवण करके मेरे शुष्क प्राणोंमें बल आ गया, निराश हृदयमें आशाका सञ्चार हुआ है। कलिके जीवोंकी मङ्गल-कामनाके हेतु मेरा यह कठोर व्रत-ग्रहण है। मेरे प्राणबल्लभ कलिके जीवोंके दुःखोंसे कातर होकर भिखारीके वेषमें देश-देश भिक्षा करके घूमते रहे, मैं घरमें बैठकर अति सामान्य उपायसे उनका भजन करनेके लिये प्रवृत्त हुई हूँ, इसमें भी भक्तगण विरोधी हैं। यह दुःख रखनेको मेरे पास जगह नहीं है। माँ! तुम्हारी आश्वासन-वाणी सुनकर मैं दूने उत्साहके साथ श्रीगौराङ्ग-भजन-व्रतका उद्यापन करूँगी। माँ! तुम आशीर्वाद दो, जिससे सफल मनोरथ होऊँ।"

सीता देवीने धीरे-धीरे उत्तर दिया--"माँ! तुमको आशीर्वाद देनेकी अधिकारिणी मैं नहीं हूँ। तुम्हारी कृपाके बलसे जगतके जीवोंका उद्धार होगा। तुम कृपामयी हो। सब जीवोंके प्रति कृपा-कटाक्ष करो। तुम्हारी कृपाके बिना श्रीगौराङ्गकी कृपाकी प्राप्ति जीवके लिये सुदुर्लभ है।"

श्रीमती विष्णुप्रिया देवीने फिर उत्तर नहीं दिया। सजल नयन होकर श्रीश्रीसीता देवीसे विदा माँगकर अपने भजन-मन्दिरमें चली आयीं और द्विगुण कठोरता पूर्वक श्रीगौराङ्ग-भजनमें व्रती बन गयीं। देवीकी समस्त शक्ति जीवोद्धारके लिये लग गयी। कलिग्रस्त जीवोंको और कोई चिन्ता न रही। वे प्रेमानन्दसे हँसते खेलते फिरने लगे। इसी कारण एक दिन ग्रन्थकारने हृदयके आवेगमें लिखा था--

विश्वविधाता जगतेर माता
मिलियाछे एक सङ्गे।
भावना कि आर पापी दुराचार
हास खेल सब रङ्गे।।

श्रीश्रीअद्वैत-गृहिणी श्रीश्रीसीता देवीकी भविष्यवाणी प्रतिफलित हुई है। श्रीश्रीगौराङ्ग-विष्णुप्रियाकी युगल-मूर्त्ति अनेक स्थानोंमें प्रतिष्ठित होकर पूजी जा रही है। इससे कलिग्रस्त जीवोंका परम मङ्गल साधित हो रहा है। कलिके एकमात्र उपास्य देव-देवी श्रीश्रीगौर-विष्णुप्रियाजीकी जय!

●

षट्त्रिंश अध्याय

देवीके शेष जीवनकी कठोर साधना

प्रभुर प्रेयसी जिहो ताँहार कि कथा।	प्रभुकी जो प्रेयसी हैं उनकी क्या
दिवानिशि हरिनाम लयेन सर्व्वथा।।	बात कही जाय ? वे दिन-रात सर्वदा
--प्रे० वि०	हरिनाम जपती हैं।

● देवीकी कठोरतम एकान्त साधना

श्रीश्रीजाह्नवा और सीता देवीके साथ श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीका मिलन होनेके बाद उनके भजनकी कठोरता और भी बढ़ गयी। दोनों देवियोंका अनुरोध उनकी साधनाके अनुकूल बना। अपने प्राण-बल्लभकी कठोर साधनाकी बातें देवीने दो-एक बार दामोदर पण्डितके मुखसे कुछ-कुछ सुनी थीं। श्रीश्रीजाह्नवा देवीके सामने यह बात कहते समय देवीका दुःख-समुद्र एक बारगी उथल पड़ा था। प्राणबल्लभकी कठोर साधनाकी बात याद करके उन्होंने अपने जीवनको शतशः धिक्कार दिया। उनके प्राण-बल्लभ गृह-त्यागी थे, वृक्षतल उनका आवास-स्थान था, भिक्षासे प्राप्त सामान्य आहारसे वे प्राण धारण करते थे। उनकी अर्द्धाङ्गिनी होकर, उनकी दासी होकर, देवीको गृहवासिनी बनकर तथा दास-दासी और परिजनसे परि-वेष्टित होकर रहना अच्छा नहीं लगता। वे स्त्रीजन हैं, गृह त्याग करके बनमें नहीं जा सकतीं, पर निर्जनमें कठोर भजन करनेमें क्या बाधा है?

काञ्चना तथा दो-एक मार्मिक सखियोंको लेकर श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवी घरके भीतर रहकर निर्जनमें गौराङ्ग-भजन करने लगीं। घरका द्वार बन्द करके देवी भजनमें बैठती थीं। देवीके भजन-मन्दिरमें जानेका किसीको अधिकार न था। अन्दर महलमें भक्तवृन्दको जानेका जो अधिकार था, देवीके आदेशसे अब वह भी बन्द हो गया। उन्होंने बाहरी दरवाजा भी बन्द कर देनेका आदेश दिया। प्रभुका गृह-प्राङ्गण उच्च प्राचीरसे वेष्टित था।

बाहरी दरवाजा भी एक दम बन्द हो गया। प्राचीरकी भीत पर दोनों ओर सीढ़ी लगाकर दासियाँ और दामोदर पण्डित देवीकी पूजाके लिये गङ्गाजल और पूजाकी सामग्री लाया करते थे। दामोदर पण्डित भी अति-वृद्ध हो गये हैं। परन्तु देवीकी सेवाके लिये वे नित्य गङ्गाजीसे जल लाकर सीढ़ीसे प्राचीर लाँघकर प्रभुके महलमें अन्दर दे आते थे। देवीके स्नान और पूजाके लिये जो जल लगता था, सब वे ही लाया करते थे। यह कार्य वे किसीको करने नहीं देते थे। देवीकी दासियाँ बाहरी कामके लिये जल लाती थीं। दामोदर! तुम धन्य हो!

प्रभु अप्रकटे विष्णुप्रिया ठाकुराणी।
विरहसमुद्रे भासे दिवस रजनी॥

प्रभुके अन्तर्धान होने पर श्रीविष्णुप्रिया ठाकुरानी दिन-रात विरह समुद्रमें डूबी रहतीं।

बाड़ीर बाहिर द्वार मुद्रित करिया।
भितरे रहिला दासी जना कथो लैया॥

घरका बाहरी द्वार बन्द करके कुछ दासियोंको लेकर भीतर रहने लगीं।

दुइ दिगे दुइ मइ भिते लागा आछे।
ताहे चड़ि दासी आइसे जाय आगे पाछे।

दीवालके दोनों ओर दो काठकी सीढ़ियाँ लगी हैं उनपर चढ़कर दासियाँ आती-जाती हैं और इधर-उधरका काम सम्पन्न करती हैं।

भितरे पुरुष मात्र जाइते ना पाय।
दामोदर पण्डित जाय प्रभुर आज्ञाय॥

भीतर कोई भी पुरुष नहीं जा सकता, केवल दामोदर पण्डित--प्रभु-की आज्ञा है, इससे—जाते हैं।

पण्डितेर अद्भुत शक्ति अद्भुत प्रकृति।
महाप्रभुर गुणे निरपेक्ष जार ख्याति॥

इन पण्डितकी अद्भुत शक्ति और प्रकृति है, महाप्रभुके प्रभावसे इनकी निरपेक्षताकी ख्याति है।

कदाच केह करे अल्प मर्य्यादा लङ्घन।
सेइ क्षणे दण्ड करे मर्य्यादा स्थापन॥

कदाचित कोई मर्यादाका थोड़ा भी उल्लंघन करता है तो उसी क्षण दण्ड दे कर मर्यादाकी स्थापना करते हैं।

निरवधि प्रेमावेश जाहार शरीरे।
हेन जन नाहि जे सङ्कोच नाहि करे ।।

निरन्तर इनके शरीरमें प्रेमावेश बना रहता है, ऐसा कोई जन नहीं जो उनका संकोच नहीं करता हो।

गङ्गाजल भरि दुइ घट हस्ते लैया।
सेइ पथे लज्रा जाय निलक्षे चलिया ।।

गङ्गाजल भरकर दो घड़े हाथोंमें लेकर उसी पथसे (दिवाल लांघकर) बिना किसी ओर लक्ष किये ले जाते हैं।

प्रत्यह सेवार लागि लागे जत जल।
प्राय दामोदर तत आनये एकल ।।

प्रति दिन सेवाके लिये जितना गङ्गाजल खर्च होता है वह सभी दामोदर पण्डित अकेले लाते हैं।

बहिराचरण लागि दासीगण आने।
कलस लइया जबे जाय गङ्गास्नाने ।।
—अ० व०

बाकी बाहरी कामोंके लिये दासी-गण जब कलश लेकर गङ्गास्नानको जाती हैं, तब ले आती हैं।

देवीके कठोर भजनकी बात पहले कुछ निवेदन कर चुका हूँ। श्रीईशान नागर अपनी आँखों देखकर जो वर्णन कर गये हैं, उससे कलिके जीवका कठोर हृदय द्रवित होगा, इसमें सन्देह नहीं है। श्रीग्रन्थ अनुराग-वल्लीमें श्रीमनोहरदासने* उन सब बातोंको दोहराया है। कृपालु पाठक-पाठिकाओंके ज्ञानार्थ वह नीचे उद्धृत किया जाता है—

अन्तः पुरे ठाकुराणी प्रातःस्नान करि।
शालग्रामे सर्मपिया तुलसी मञ्जरी ।।

ठाकुरानी श्रीविष्णुप्रिया देवी अन्तःपुरमें प्रातःकाल स्नान करके शालग्रामको तुलसी-मञ्जरी सर्मपित करती हैं।

पिड़ाते बसिया करे हरेकृष्ण नाम।
आतप-तण्डुल किछु राखे निज स्थान ।।

फिर आसन पर बैठकर हरे कृष्ण नाम जपती हैं। कुछ अरवा चावल अपने पास रखती हैं।

---

* मनोहरदास श्रीनिवास आचार्यके मन्त्र-शिष्य थे। १६१८ शाके चैत्र शुक्ला १० को श्रीधाम वृन्दावनमें बैठकर श्रीमनोहरदासने अनुराग-वल्ली ग्रन्थकी रचना की। कटुवाके निकट बेगुणकोला ग्राममें पैदा हुए थे। वे संस्कृतके अच्छे पण्डित थे।

षोल नाम पूर्ण हइले एकटि तण्डुल । राखेन सराते अति हैइया व्याकुल ।।	जब सोलह नाम पूरे होते हैं तो एक चावल अति व्याकुलता पूर्वक मिट्टीकी सराईमें रखती हैं ।
एइरूपे तृतीय प्रहर नाम लय । ताहाते तण्डुल सब सराते देखय ।।	इस प्रकार तीसरे पहर तक नाम जपती हैं । तब सराईके चावलोंको देखती हैं ।
ताहा पाक करि शालग्रामे समर्पिया । भोजन करेन कत निर्ब्बेद करिया ।।	उन्हें पकाकर शालग्रामको भोग लगाकर अत्यन्त विरक्ति पूर्वक भोजन करती हैं ।
सेवक लागिया किछु राखे पात्र शेष । भक्त सब आइसे तबे पाइया आदेश ।।	पात्रमें कुछ सेवकोंके लिये भी बचा रखती हैं । तब आदेश पाकर सब भक्त लोग आते हैं ।
बाड़ीर बाहिरे चारिदिके छानि करि । भक्त सब रहियाछे प्राण मात्र धरि ।।	भक्त लोग घरके बाहर चारों ओर घास-फूसकी छान बना कर केवल प्राणधारण करके पड़े रहते हैं ।
कोन भक्त ग्रामे केह आछे आस्पाश । एकत्र हञा अभ्यन्तर जान सब दास ।।	कोई भक्त ग्राममें रहता है, कोई आस-पासमें रहता है । सब भक्त एकत्रित होकर अन्दर जाते हैं ।
तावत् ना करे केह जलपान मात्र । अनन्य-शरण जाते अति कृपापात्र ।।	तब तक कोई जलपान तक भी नहीं करता । इसलिये अनन्यशरण वे भक्तगण अत्यन्त ही कृपाके पात्र हो गये हैं ।

● देवीके चरण-दर्शन और प्रसादान्नकी प्रतीक्षामें भक्तगण

प्रभुके भक्तगण, जो लोग देवीके पास श्रीधाम नवद्वीपमें वास करते हैं, वे सब एक साथ मिलकर देवीका प्रसादान्न पानेकी आशासे घरके बाहर चारों ओर इधर-उधर प्रच्छन्न भावसे बैठे रहते । देवीके आदेशसे उनकी

दासी एक ब्राह्मण कन्या (सम्भवत: श्रीमती काञ्चना देवी) सब भक्तोंको घरके भीतर बुलाकर प्रसादान्न बाँटा करतीं।

तबे सेइ प्रसादान्न बाहिर करये।

तब वह प्रसादान्न बाहर लाया जाता है।

सेविका ब्राह्मणी देइ एक एक करि।
जे केह आइसे तार हये बराबरि।।

ब्राह्मणी सेविका एक-एक करके सबको देती हैं। जो भी कोई आता है, उसका बराबर भाग हो जाता है।

प्रसाद पाइया पुन यथास्थाने जाइया।
रहे यथा कथञ्चित आहार करिया।।
—अ० व०

प्रसाद पाकर फिर यथास्थान लौटकर निर्वाह मात्र आहार करके रहते हैं।

देवीका प्रसादान्न प्राप्तकर भक्तगण उसको मस्तक पर धारण करते थे तथा देवीके श्रीचरण-कमलोंके दर्शनकी आशासे सब एकत्र होकर अन्त:पुरके आङ्गनके बीच खड़े होते थे। घरकी उच्च वेदिका पर देवी वस्त्रावृता होकर आती थीं। वस्त्राच्छादित घेरेके बीचसे वे कभी-कभी किसी भक्त विशेषसे बात भी कर लेती थीं। प्रतिदिन प्रसादान्न बँटनेके बाद देवी उस स्थान पर आया करती थीं। दासियों द्वारा उस घेरेके एक किनारेके वस्त्रके उठाये जाने पर भक्तगण देवीके श्रीचरण-कमलोंके दर्शन प्राप्त कर कृतार्थ होते थे।

पिंड़ाते काँड़ार टाना वस्त्रेर आछये।
ताहार भितरे ठाकुराणी ठाड़ ह'ये।।

वेदी पर वस्त्रकी कनात तनी हुई है, उसके भीतर ठाकुरानी खड़ी होती हैं।

आङ्गिनाते सब भक्त एकत्र हइले।
दासी जाइ काँड़ार रञ्चेक धरि तोले।।

आङ्गनमें सब भक्तोंके एकत्र होने पर दासी जाकर कनातको जरा-सी ऊपर उठाती है।

चरण कमल मात्र दर्शन पाइते।
केह केह ढलिया पड़ये कोन भिते।।
—अ० व०

चरण-कमलके दर्शन पाते ही कोई-कोई तो भित्तिके सहारे लुढ़क पड़ते हैं।

उनको श्रीगौराङ्ग-भजनके फल-स्वरूप यह सुकृति प्राप्त हुई है। नदियाके भक्तोंको प्रभु बहुत स्नेह करते थे। इसी कारण भक्त-वाञ्छा-कल्पतरु, भक्त-वत्सल श्रीगौर भगवान्‌से नदियावासी भक्तोंको देवीके श्रीचरण-कमल-दर्शनका सुख प्रदान कर कृतार्थ किया है। श्रीगौराङ्ग जानते थे कि उनको इतना-सा सुख भी न मिला तो उनके वियोगमें उन भक्तोंमें कोई भी जीवित न रहेगा। नदियावासियोंके सौभाग्यकी बात मैं और क्या कहूँ? उनके भाग्यकी वाञ्छा देवगण भी करते हैं। श्रीगौराङ्गका विशेष कृपा-पात्र हुए बिना यह सौभाग्य किसीके भाग्यमें नहीं होता। देवीके श्रीचरणोंके दर्शन करके भक्तगण आनन्दसे गद्‌गद होकर प्रेमाश्रु-वर्षण करते हुए अपने घर लौटते थे। नदियावासी भक्तोंका यही नित्यकर्म था।

अनुराग-वल्ली ग्रन्थके रचयिता श्रीमनोहरदासने श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीके श्रीपाद-पद्मोंकी रूप-शोभाका इस प्रकार वर्णन किया है। कृपालु पाठक-पाठिकागण एक बार मनकी साधसे देवीके श्रीपाद-पद्मोंको हृदयमें अंकित कर ध्यान करके कृतार्थ होवें।

देखिते चरण-चित्र कराये प्रतीत।
उपमा दिवारे लागे दुःख आर भीत॥

चरण-चित्रको देखते ही श्रद्धा उत्पन्न होती है। चरणोंकी उपमा देनेमें दुःख होता है और डर भी लगता है।

तथापि कहिये किछु शाखा-चन्द्र न्याय।
ना कहि रहिते चाहि रहा नाहि जाय॥

तथापि शाखा-चन्द्र-न्यायसे कुछ कहा जाता है, क्योंकि बिना कहे रहना चाहूँ तो भी रहा नहीं जाता।

उपरे चमके शुद्ध सोणार वरण।
दश नख दशचन्द्र प्रकाशे किरण॥

ऊपर शुद्ध स्वर्णके समान अङ्ग-कान्ति शोभा देती है। दश नख मानो दश चन्द्रके समान अपनी किरणोंकी छटा प्रकाशित करते हैं।

चरणेर तल अरुणेर परकाश।
मधुरिमा सीमा किवा सुधार निर्य्यास॥

चरणोंके तलवे अरुणोदयकी लालिमा युक्त प्रकाशके समान हैं, मधुरिमाकी सीमा हैं, अथवा सुधाका सार है।

माँ! जगज्जननि! तुम जगदीश्वरी हो। तुम्हारे दासका दास बननेकी आशा करना धृष्टता मात्र है। पूज्यपाद प्रभुके साक्षात् कृपापात्र महाजन कवि कह गये हैं—

चैतन्य-वल्लभा तुमि जगत ईश्वरी।	चैतन्य-वल्लभा! तुम जगतकी
तोमार दासेर दास हैते बाञ्छा करि॥	ईश्वरी हो। तुम्हारे दासोंका दास
—वं० शि०	होनेकी बाञ्छा करता हूँ।

महाजनगण जो आशा कर गये हैं, वह आशा तुम्हारा अकृती, अधम सन्तान कैसे करेगा? इतनी बड़ी ऊँची आशा वह नहीं कर सकता। परन्तु कृपामयी माँ! तुम्हारे दासके दासका पद बड़ा ऊँचा है। क्या इस उच्च और महाजनगणके द्वारा बाच्छनीय पदकी प्राप्तिका अहंकार मैं छोड़ सकता हूँ?

तोमार दासेर दास हैते मुञि चाइ।	मैं तुम्हारे दासोंका दास होना
सेइ से आमार मागो जानिह बड़ाइ॥	चाहता हूँ। हे माँ! इसीमें मेरी बड़ाई मानना।

दयामयी माँ! तुम्हारे श्रीचरण दर्शन करनेका सौभाग्य जिनको प्राप्त है, उन सबकी पदधूलि मस्तकपर धारण करके कातर कण्ठसे तुमको पुकारता हूँ—

ओ मा! विष्णुप्रिये! करुणा करिये,	माँ विष्णुप्रिये! करुणा करके
अधमेर प्रति चाह गो।	इस अधमपर दृष्टिपात करो।
तोमार चरणे, जीवने मरणे,	जीवन-मरणमें सदा-सर्वदा तुम्हारे
मति जेन मोर थाके गो॥	चरणोंमें मेरी प्रीति बनी रहे।
तुमि मा आमार जीवनेर सार	माँ! तुम मेरे जीवनका सार हो,
साधन - प्रतिमा जननी।	हे जननी! तुम्हीं मेरे साधनकी प्रतिमा हो।
धरिया तोमाय पाइ गोरा राय	तुम्हारे आश्रयसे ही श्रीगौराङ्गको
तुमि मा भवेर तरणी॥	पाया जा सकता है। तुम्हीं भव-सागरकी तरणी हो।

माँ! कृपाके कणको वितरण करनेमें कृपणता न करना। इस अधम सन्तानको चरणोंसे न ढकेलना। माँ! तुम पतित-पावनी हो। इस

अधमके समान पतित तुम्हें खोजने पर भी न मिलेगा। इस अधम, अकृती सन्तानका उद्धार करके अपने पतितोद्धारिणी नामको सार्थक करो।

देवीके इस कठोर भजनका समाचार नदियामें सर्वत्र प्रचारित हो गया। भक्तवृन्द इसे सुनकर रो-रोकर आकुल होने लगे। कोमल हृदय कुल-ललनाएँ कठोर भजनकी इन सब बातोंको सुनकर देवीके पूर्व वृत्तान्तको स्मरण करके एकान्तमें बैठकर फुंकार मारकर रोने लगीं। पुरुष लोग लम्बी साँस छोड़ते हुए--'हा गौराङ्ग', 'हा गौराङ्ग'--कहते हुए हाय-हाय करने लगे। दामोदर पण्डित अत्यन्त बूढ़े हो गये हैं। उस बूढ़ेका शरीर गौराङ्ग-विरह-व्याधिसे जर्जर हो गया है। इसके ऊपर देवीकी कठोरता देखकर वे विषम व्यथा भोग रहे हैं। वे बूढ़े आदमी देवीको कुछ कह नहीं पा रहे हैं, मनमें दारुण दु:खका शूल चुभ रहा है। इस दु:खमें ही वे वृद्ध ब्राह्मण देह-त्याग करके नित्यधाम चले गये।* देवीके कानोंमें यह बात पहुँची। उनको मर्मान्तिक कष्ट हुआ तथा श्रीगौराङ्ग-भजनको कठोरसे कठोरतम कर दिया।

इस प्रकार कठोर भजनमें श्रीमती विष्णुप्रिया देवी दिन व्यतीत कर रही हैं। काञ्चना, अमिता आदि सखियाँ सदा देवीके समीप रहकर उनकी सेवा-परिचर्या करके कृतार्थ हो रही हैं। काञ्चना देवीकी प्रधाना सखी हैं। देवी उनको आदरपूर्वक 'सखी काञ्चनमाला' कहकर पुकारती हैं। दीन ब्राह्मण-कन्या दीन-भावसे देवीकी सेवा करती हैं। 'सखी' कहकर पुकारने पर वे खिन्न होती हैं। देवीकी दासी कहलानेकी काञ्चनाको बड़ी वासना है। देवीके सामने एक दिन काञ्चनमालाने अपने मनकी बात खोलकर कह दी। देवीको यह सुनकर मनमें बड़ी व्यथा हुई। उन्होंने सखीसे कहा--"सखि काञ्चनमाला! तुम मेरी प्रधाना सखी हो। दासीका पद मैं तुमको नहीं दे सकती। श्रीगौराङ्ग-भजनमें तुम मेरी प्रधान सहायिका हो। तुम दिन-रात मुझको मेरे प्राण-वल्लभकी गुण-गाथा, लीला-कथा सुनाती हो। कलिके जीवके लिये श्रीगौराङ्ग-भजनकी तुम प्रधान सहायिका होवोगी। तुम्हारा अनुसरण करते हुए जो श्रीगौराङ्ग-भजन करेंगे, उनकी साधना शीघ्र सिद्ध होगी।"

---

* पृष्ठ ४८२-४८३ की पाद टिप्पणीका एतत संबंधी अंश देखिये।

देवीकी बातें सुनकर काञ्चना लज्जित हो गयीं। दूसरी कोई बात कहनेका साहस न हुआ। काञ्चना एक-एक करके गौर-लीलाकी कथाएँ देवीके सामने सुनातीं और देवी हृदय खोलकर प्राण-बल्लभकी लीला-रस-माधुरी श्रवण करके हृदय, मन और कानोंको परितृप्त करतीं और श्रीगौराङ्गके लीलारसामृतका पान करके सन्तप्त प्राणोंको शीतल करतीं।

श्रीधाममें प्रभुकी दारुमूर्त्ति प्रतिष्ठित हुई है। देवीके भ्राता श्रीपाद यादवाचार्य पर प्रभुकी सेवाका भार है। बीच-बीचमें देवी बहुत तड़के श्रीमन्दिरमें जाकर आँखें भरकर श्रीमूर्त्तिके दर्शन कर अजस्र आँसू बहातीं, श्रीमन्दिरमें अधिक देर नहीं रह पातीं। प्राण-वल्लभके दर्शन करते ही उनको मूर्च्छा आ जाती। यह मूर्च्छा दूर करनेमें भक्तगणका हृदय-विदीर्ण हो जाता। उस दृश्यको कोई देख नहीं सकता, इस कारण देवी कभी-कभी ही श्रीमन्दिरमें जाया करतीं। श्रीपाद यादवाचार्य अपनी बहिनकी सर्वदा देख-भाल करते रहते। * दामोदर पण्डितके नित्यधाममें जानेके बादसे देवीकी सार-सम्हालका भार श्रीपाद यादवाचार्यने लिया है। वे प्रभुकी सेवा छोड़ कर भी दोनों समय आकर बहिनको देख जाते हैं।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी इस समय प्रकृत संन्यासिनी हैं, पूर्ण योगिनी हैं। प्रेम-भक्ति-योगकी शिक्षाके लिये वे पूर्ण आदर्श हैं। प्रभुका पदानुसरण करके देवीने कठोरसे कठोरतम नियमोंका अनुसरण कर प्रेम-भक्ति-योगकी साधनामें पूर्ण सिद्धि प्राप्त की है। उनके दर्शन-भिखारी होकर भक्त-वृन्द अनेक स्थानोंसे श्रीधाममें आ रहे हैं। देवी-प्रतिमा साक्षात् जगदम्बाके श्रीचरणोंके दर्शन प्राप्त करना अत्यन्त दुर्लभ है। वे द्वार बन्द करके साधन-यज्ञके दृढ़ासन पर आसीन हैं। महासंकीर्त्तन-यज्ञेश्वर श्रीगौराङ्गके चरणोंके चिन्तनके सिवा वे अन्य कोई वासना नहीं रखतीं। भक्तवृन्दका आतुर क्रन्दन उनके कानोंमें पहुँचने नहीं पाता। किसीको उनसे कोई बात करनेका साहस नहीं होता। देवी-प्रतिमाकी परम ज्योतिर्मयी दिव्य प्रतिभासे भजन-मन्दिर आलोकित है। पद्म-गन्धसे देवीका भजन-कुटीर सदा ही सुवासित रहता है। उस स्थानके प्रभाव और देवीकी भजन-निष्ठाके प्रभावने मिलकर प्रभुके गृह-प्राङ्गणको देवालयसे भी पवित्र बना दिया है। उस गम्भीर निस्तब्धतामें

* पृष्ठ ४८२-४८३ की पाद टिप्पणी देखिये।

उस कमनीय पवित्रताकी विमल ज्योतिसे नदियावासी भक्तवृन्दके मन, हृदय और प्राण परिपूर्ण हो रहे हैं। प्रभुके गम्भीराके भजन-कुटीर और नदियाके श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीके भजन-मन्दिरमें कोई अन्तर नहीं है। कलि-ग्रस्त जीवोंके मङ्गलकी कामनासे, कलिक्लिष्ट जीवोंके भवरोगके शमनके लिये हमारे कृपालु प्रभुने जिस प्रकार कठोरतापूर्वक स्वयं आचरण करके कलिके जीवोंको प्रेम-भक्तिकी शिक्षा दी है तथा उनकी सहधर्मिणी पतिगत-प्राणा श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवी अपने साधन-धन श्रीगौराङ्ग-सुन्दरके आदेशके अनुसार संन्यासिनी बनकर, योगिनीके वेशमें घर बैठकर तदनुरूप कठोरतापूर्वक लोकशिक्षार्थ जो प्रेम-भक्ति-योगका अनुष्ठान करती हैं, वह गौर-भक्तोंके लिये सर्वथा अनुष्ठेय है। *

---

*जिनको बंग भाषाका अभ्यास है उनसे अनुरोध है कि वे यदि श्रीविष्णुप्रिया देवीकी कठोर साधनाकी झाँकी देखना चाहें तो ग्रन्थकार रचित बंगला ग्रन्थ 'गम्भीराय श्रीविष्णुप्रिया' पढ़ें और श्रीमन्महाप्रभुकी कठोर विरह-साधनाके लिए परम वैष्णव श्रीरसिक मोहन विद्याभूषण कृत 'गम्भीराय श्रीगौराङ्ग' पढ़ें।

——प्रकाशक

●

सप्तत्रिंश अध्याय

देवीका लीला-संवरण

ब्राह्म - मुहूर्त्ते प्रभुर जन्म-दिने। दारु-मूर्त्ति लीन देवी हइला आपने ।। --ग्रन्थकार	ब्राह्म-मुहूर्तके समय प्रभुके जन्मके दिन देवी स्वयं ही दारु-मूर्त्तिमें लीन हो गईं।

● देवीकी अन्तिम साधनाकी झांकी

शची देवीके स्वधाम गमन करनेके बाद श्रीमती विष्णुप्रिया देवीका कठोर भजन प्रारम्भ हुआ। श्रीश्रीजाह्नवा और सीता देवीके साथ साक्षात्कार होनेके बाद उन्होंने किसीसे भी बातें करना बन्द कर दिया, वे एक प्रकारसे मौन हो गयीं। उनका शरीर दिन-दिन जीर्ण-शीर्ण और क्षीण होने लगा। देवीका आहार बहुत अल्प था ही, अब किसी दिन प्रसाद पाती हैं, किसी दिन नहीं पातीं। भाई श्रीपाद यादवाचार्यके द्वारा लाई प्रभुकी श्रीचरण-तुलसी और गङ्गाजलको पान करके ही देवीका कोई-कोई दिन कट जाता था। प्रभुके शयन-गृहके समस्त पदार्थ आज भी उसी प्रकार सज्जित पड़े हैं। प्रभुकी दी हुई काष्ठ-पादुकाकी जोड़ी देवीके भजन-मन्दिरमें एक ऊँची वेदी पर गन्ध-पुष्पसे सज्जित होकर संस्थापित है। देवी इस परम वस्तुकी नित्य पूजा करती हैं। प्रभुके स्मरण-चिह्न स्वरूप वे श्रीचरण-रेणु-युक्त पादुकाद्वय कभी मस्तक पर, कभी हृदय पर धारण करके अजस्र आँसू बहाकर रुदन करती हैं। कभी हृदयावेगके कारण प्राणवल्लभकी चरण-पादुकाके ऊपर प्रेम-विगलित नेत्रोंसे शत-शत चुम्बन करके दग्ध-हृदयको शीतल करती हैं। गृहत्यागके दिन प्रभुके द्वारा त्यक्त रेशमी वस्त्र, चादर, शय्या, पलङ्ग आदि सारी वस्तुओंकी देवी बहुत यत्न पूर्वक इतने दिनों तक रक्षा करती आ रही हैं। प्रिय सखी काञ्चनमाला देवीके आदेशसे प्रभुके द्वारा परित्यक्त इन सारी वस्तुओंकी देख-भाल करती आ रही हैं। प्रभुके पलङ्गके नीचे

जमीन पर देवी शयन करती हैं। प्रभुके गृहमें बैठकर देवी प्रभुके श्रीचरणोंकी वन्दना करती हैं और प्रभुके द्वारा परित्यक्त द्रव्यादिको देखकर अजस्र आँसू बहाती हैं। सखी काञ्चनमाला यथासाध्य देवीको सान्त्वना देती हैं। गौर-कथाके सिवा अन्य कोई बात काञ्चना नहीं जानतीं। देवीके दुःखके उपशमका एक मात्र उपाय है--उनको गौर-कथा श्रवण कराना। काञ्चना सखी इस विषयमें सिद्धहस्त हैं। देवीके रोते ही काञ्चना 'हा-गौराङ्ग' कहकर रोती हुई भूतल पर पड़ जाती हैं। सखीकी अवस्था देखकर देवीके मनमें दारुण दुःख होता है। वे फिर स्थिर नहीं रह सकतीं, अपना दुःख भूल जाती हैं, और रो नहीं सकतीं। देवी और काञ्चना दोनों मिलकर रात-दिन इसी प्रकार श्रीगौराङ्ग-भजन करती हैं।

शची देवीके स्वधामगत होनेके पहले ही श्रीपाद सनातन मिश्र नित्यधामको गमन कर चुके हैं। देवीकी माता महामाया देवीने भी अपने पतिका अनु-गमन किया है। गदाधर दास आदि प्रभुके भक्तवृन्द श्रीगौराङ्ग-विरहमें एक-एक करके नित्यधामको जा चुके हैं। जो लोग बचे हैं, वे देवीके दुःखसे मृतप्राय हो रहे हैं। इनमें एक शुक्लाम्वर ब्रह्मचारी भी हैं। इनके घरमें प्रभुने जननी और जन्मभूमिके दर्शन-कालमें नवद्वीप आकर एक दिन वास किया था। शुक्लाम्बर अत्यन्त बृद्ध हो गये हैं, परन्तु दोनों बेला प्रभुके घर जाकर देवीकी देख-भाल करना नहीं भूलते।

श्रीमती विष्णुप्रिया देवी बीच-बीचमें बहुत तड़के या सन्ध्याकालके बाद श्रीमन्दिरमें प्रभुकी दारुमूर्त्तिके दर्शन करने जाती हैं। काञ्चना सखी देवीके साथ जाती हैं। जैसे ही देवी उस दारु-मूर्त्तिके दर्शन करती हैं, उनका कोमल हृदय दुःखसे विदीर्ण हो जाता है, वे जब तक श्रीमूर्त्तिके दर्शन करती रहती हैं, तब तक अजस्र रुदन करती रहती हैं। टकटकी लगा देवी प्राण-वल्लभके मुख-चन्द्रकी ओर ताकती हैं। उनकी आँखोंकी पलकें गिरती नहीं, अश्रु-प्रवाहसे वक्षःस्थल डूब जाता है। काञ्चनाके अङ्गके सहारे अपने अङ्गको टेक कर देवी खड़ी-खड़ी प्रभुके दर्शन करती हैं। काञ्चनाको डर लगता रहता है कि देवी कहीं मूर्च्छित होकर भूतल पर गिर न पड़ें। श्रीमन्दिरके एक बगलमें देवी शत-अपराधिनीके समान खड़ी रहती हैं। प्राण-वल्लभकी विषम विरह-वेदना उनसे अब और नहीं सही जा रही है।

● देवीकी अन्तर्धान-लीला

देवीने रोते-रोते एक दिन मन-ही-मन प्रभुके श्रीचरणोंके समीप थोड़ेसे स्थानके लिये प्रार्थना की। दयामय प्रभुके कानोंमें प्राणप्रिया अनाथिनी श्रीमती विष्णुप्रिया देवीका कातर निवेदन पहुँचा। श्रीश्रीमहाप्रभुके मुखचन्द्र पर ईषत् हास्यकी रेखा प्रकट हुई। देवीने उसे देखा। उन्होंने प्राण-बल्लभके मनोभावको समझकर काञ्चना सखीसे कहा—"सखि! यादवको कहो, मैं श्रीमन्दिरके भीतर एक बार जाकर प्रभुके श्रीचरणोंके दर्शन और स्पर्श करके कृतार्थ होऊँगी। आज श्रीगौर-पूर्णिमा—प्रभुका जन्म-दिवस—है। मङ्गला आरती समाप्त होने पर मुझे श्रीमन्दिरके भीतर रखकर कुछ देर तक द्वार बन्द कर देनेके लिये कहो।"

देवीका आदेश प्राप्त होते ही काञ्चनाने द्रुत गतिसे जाकर श्रीपाद यादवाचार्यको देवीकी आज्ञा निवेदन की। श्रीपाद यादवाचार्यने सब प्रबन्ध कर दिया। श्रीगौराङ्ग-गृहिणीने सबके सामने प्राण-बल्लभके श्रीमन्दिरमें प्रवेश किया। द्वार रुद्ध हो गया। उस समय मङ्गला आरतीके बाजे बज रहे थे। बाहर भक्तवृन्द जय-ध्वनि कर रहे थे। हरि-संकीर्त्तनकी आनन्द ध्वनिसे प्रभुका श्रीमन्दिर मुखरित हो उठा। श्रीगौर-विष्णुप्रियाका युगल-मिलन हुआ। श्रीश्रीनवद्वीपचन्द्र श्रीश्रीनवद्वीपमयीके साथ एक हो गये। अहा! कैसा सुन्दर युगल-मिलन है! कैसा मधुर दृश्य है! अन्तरिक्षसे देवगण मनोरम अपूर्व दृश्यको देखकर पुष्प-वर्षा करने लगे। श्रीश्रीगौर-विष्णुप्रियाका यह अभिनव युगल-मिलन-दृश्य-दर्शन जीवके भाग्यमें न था। हमारे प्रभु श्रीश्रीजगन्नाथजीके साथ मिल गये थे। श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवी अपने प्राण-बल्लभके साथ मिल गयीं। यह शुभ मिलन स्वाभाविक था, यह युगल-मिलन प्रभुकी इच्छासे संघटित हुआ।

कुछ देरके बाद श्रीमन्दिरका द्वार खुलने पर कोई फिर देवीको न देख सका। प्रभुके मुखचन्द्र पर हास्यकी छटा और नयनोंमें प्रेम-घटा देखकर श्रीपाद यादवाचार्य सब समझ गये। 'जय गौर-विष्णुप्रिया!' कहकर भक्तवृन्दने महासंकीर्त्तन आरम्भ किया। काञ्चना रोते-रोते लज्जा-शर्म त्याग कर श्रीगौराङ्गके सामने उन्मत्तके समान मधुर नृत्य करने लगीं। नवद्वीपमयीने नवद्वीपचन्द्रके साथ मिलकर मधुर मनमोहन रूपमें नदियाधामको

आलोकित किया। श्रीधाममें युगल-मिलन-मूर्त्ति प्रकाशित हुई। प्रभुके इस अभिनव और अपरूप युगल-मिलनका जिन भक्तोंने दर्शन किया, उन्होंने श्रीश्रीगौर-विष्णुप्रिया युगल-रूपको एक साथ देखा। हमारे प्रभु श्रीराधाका भाव और कान्ति लेकर भूतल पर अवतीर्ण हुए थे। उनमें असीम रूपछटा थी। उनके रूप-सागरमें पड़कर भक्त लोग गोते खाते थे। प्रभुकी इस अपरूप रूपराशिके ऊपर और भी अपूर्व रूप प्रकाशित हुआ। मणि-काञ्चन संयोग हुआ। प्रभुके श्रीअङ्गमें श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीके मिलित होने पर उनकी अपरूप रूपराशि मानो उमड़ पड़ी, अनुपम रूपमाधुरी और सौन्दर्य-छटासे दशों दिशाएँ दीप्त हो उठीं। भक्तवृन्द प्रेमानन्दमें नृत्य करते-करते युगल-मिलन-गीति गाने लगे। मधुर कीर्त्तनके साथ दिगन्त प्लावित करके उस मधुर संगीत-ध्वनिने नदियावासियोंके हृदयोंको अभूतपूर्व आनन्द-रससे पूर्ण कर दिया। वनके पशु-पक्षी, वृक्ष-लता, तरु-तृण, जड़-चेतन सबने मिलकर श्रीगौर-विष्णुप्रियाके युगल-मिलनके मधुर संगीतकी तानको पकड़ा। अधम ग्रन्थकार-रचित एक युगल-मिलन-गीत यहाँ उद्धृत किया जाता है––

(तोरा) वदन भरे, बल देखिरे (जय) गौर-विष्णुप्रिया।	अरे! जरा मुँह खोलकर 'जय गौर-विष्णुप्रिया!' तो बोलो;
प्राण जुड़ाबे, प्रेम पाबे घुच्बे भवेर माया।।	अन्तःकरण शीतल हो जायगा, प्रेमकी प्राप्ति होगी और संसारकी माया मिट जायगी।
युगल नामे, डाक्ले गोरा युगल हये आसे।	युगल नामसे पुकारने पर गौर युगल बनकर आते हैं और
युगल हये, कलिर जीवेर मनेर तम नाशे।।	युगल रूपमें कलिके जीवके मनके अन्धकारको नष्ट कर देते हैं,
आयरे सब, पापी तापी समय बहे जाय।	अरे पापी-तापी! सब आओ, समय चला जा रहा है,
युगल मिलन, भवे अतुलन हयेछे नदीयाय।।	संसारमें अनुपम युगल-मिलन नदियामें हुआ है।
देख्रे चेये, वनेर पाखी युगल नाम गाय।	देखो! वनके पक्षी युगल नाम गा रहे हैं और

युगल हये, मधुर भावे हास्‌चे गोरा - राय ।।	गौरचन्द्र युगल-रूप होकर मधुर भावसे हँस रहे हैं।
चल्‌चे नदी, सागर पाने युगल नाम गेये।	युगल नाम गाती हुई नदी सागरसे मिलने जा रही है और
वनेर पशु, युगल नामे आस्‌चे देख धेये ।।	देखो ! युगल नाम पर वनके पशु दौड़े आ रहे हैं।
वृक्ष - लता, दुल्‌चे देख युगल महिमाय।	युगल-महिमासे सारे वृक्ष-लता डोल रहे हैं और
जड़ - अजड़, सबाइ मिले युगल नाम गाय ।।	जड़-चेतन सब मिलकर युगल नाम गा रहे हैं।
गौर सने, मिलेछे प्रिया देखरे नयन भरि।	प्रियाजी गौरके साथ सम्मिलित हो गयी हैं, नयन भर कर देख लो;
बञ्चित सुधु, एहेन सुखे दीन पामर हरि ।।	इस सुखसे केवल यह दीन पामर हरिदास ही बञ्चित है।

श्रीगौर-पूर्णिमा तिथिके इस अपूर्व युगल-मिलनके पूर्व दिन देवीने स्वप्न देखा था कि श्रीनिवास पर कृपा करके उनका अन्तिम कार्य सम्पन्न हो गया है। प्रभुकी मनोबाञ्छा पूर्ण हो गयी है। देवीके दुःखसे और विरहसे प्रभु बहुत कातर थे, इसी कारण उनको बुला लिया।

देवीके अन्तर्धानकी कहानी जनश्रुतिके अनुसार लिखी गयी है। देवीके आदेशसे उनके भाईके वंशज गौर-भक्त-चूड़ामणि श्रीयुत नृत्यगोपाल गोस्वामीने कृपा करके अधम ग्रन्थकारको निम्नलिखित पत्र लिखा था। इसमें देवीकी संगोपन-कथा संक्षेपमें लिखी गयी है——

"श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीके अन्तर्धानके विषयमें अपने चाचा तथा दादीके मुखसे जो सुना है, वही लिख रहा हूँ। दादी दस आना घरकी कन्या थीं। उन्होंने बाल्यकालमें जो सुना था, वही बातों-बातोंमें कहानीके रूपमें मुझसे कहा था। मैं बाल्यकालमें बड़ा ही कहानी-प्रिय था। प्रायः दस वर्षकी उम्र तक सदा उनके साथ रहा। उनकी अनेक बातें मुझे याद हैं।

एक दिन श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीने अत्यन्त विरह-कातर होकर श्रीश्रीमन्महाप्रभुकी दारु-मूर्त्तिके समीप व्याकुल चित्तसे रोदन करते-करते प्रभुके श्रीचरणोंके

समीप स्थान पानेकी प्रार्थना की। उसी रात श्रीश्रीमहाप्रभुने प्रियाजीको स्वप्नादेश दिया--"एक ब्राह्मण-कुमार तुम्हारे दर्शनोंकी आशासे व्याकुल होकर नदियामें आ रहा है, उस पर कृपा करना, यही तुम्हारा अन्तिम कार्य है।" इसके कुछ दिन बाद श्रीनिवास आचार्य नवद्वीपमें आकर उपस्थित हुए। देवीने उन पर कृपा की। श्रीनिवास आचार्यके नवद्वीप छोड़नेके बाद प्रियाजी श्रीगौराङ्गकी दारुमूर्त्तिमें लीन हो गयीं। श्रीमन्दिरमें उनको प्रवेश करते कई आदमियोंने देखा, परन्तु बाहर निकलते किसीने नहीं देखा। इसके सिवा मैं और कुछ नहीं जानता।"

देवीके अन्तर्धान होने पर नदियावासी भक्तोंकी क्या दशा हुई, मैं वर्णन नहीं कर सकता। श्रीश्रीगौर-विष्णुप्रिया-युगल-विरह-दुःख-सिन्धुमें वे निमग्न हो गये। दुःखकी तरङ्गके ऊपर शोकका आवर्त्त आया। उस भीषण आवर्त्तमय शोक-समुद्रमें पड़कर नदियाके अनेकों भक्तोंने प्राण त्याग दिये।

जीवाधम ग्रन्थकारने देवीके सङ्गोपनकी कहानी लेकर निम्नलिखित पदकी रचना की थी, कृपालु पाठक-पाठिकावृन्दको यहाँ वह उपहार दे रहा हूँ--

गौर हे !

साङ्ग करि नदेर लीला युगले बसिले।	हे गौर! नदिया-लीला सम्पन्न करके तुम युगलरूपमें बैठ गये;
प्राणेर प्रिया बुकेर माझे लुकाये राखिले।।	अपनी प्राण-प्रियाको हृदयमें छिपाकर रख लिया।
सुधुइ तुमि देख्बे ब'ले ए खेला खेलिले।	तुमने केवल अपने ही देखनेके लिये यह खेल खेला;
नदीया वासी पराणे मरे देखे ना देखिले।।	परन्तु नदियावासियोंके प्राण निकलते देखकर भी उधर ध्यान नहीं दिया।
(मायेर) दुःखे तुमि कातर हये निकटे डाकिले।	माँके दुःखसे कातर होकर तुमने उन्हें समीप बुला लिया;
दुखेर भार हरण करे पराण जुड़ाले।।	उनके दुःखका भार हरकर प्राणोंको शीतल कर दिया।
युगल रूपे प्रियाके लये भुवन भुलाले।	प्रियाको युगलरूपमें मिलाकर संसारको भुलावेमें डाल दिया;

रूपेर राशि छड़ाये तुमि जगत भासाले ।।	रूपकी राशि छिटका कर तुमने जगतको उसमें डुबो दिया।
सन्न्यासी ह्'ये प्रकृति सने केमने मिशिले ।	संन्यासी होकर तुम प्रियाके साथ कैसे मिल गये ?
प्रियार रूप कान्ति लये (एकि) चातुरी शिखिले ।।	प्रियाके रूप और कान्तिको लेकर यह क्या चातुरी सीखी ?
काँदाये जत नदीया वासी भकत सकले ।	नदियावासी सब भक्तोंको रुलाकर,
सङ्गोपने राखिले तुमि सोनार कमले ।।	तुमने उनको—उस स्वर्ण-कमलको—छिपा कर रख लिया ।
काञ्चनादि सखीरा सबे काँदिला विरले ।	काञ्चना आदि सब सखियाँ एकान्तमें रोती रह गईं,
युगल हये प्रियार सने गोपने मिशिले ।।"	तुम युगल रूप होकर छिपे-छिपे प्रियाके सङ्ग मिल गये।
देवीके प्रति	देवीके प्रति—
गौर-प्रिये !	हे गौर-प्रिये !
चिर दिनेर अधीन जने फेलिया चलिले ।	इन सर्वदा आश्रित रहनेवाले जनोंको छोड़कर तुम चली गयीं;
दुखेर दुखी सुखेर सुखी केमने भुलिले ।।	अपने दुखमें दुखी और सुखमें सुखी जनोंको कैसे भूल गईं ?
आपन सुखे आश्रित जने चरणे ठेलिले ।	तुम्हारे अपने सुखके लिए आश्रित जनोंको पैरोंसे ठुकरा दिया।
लिखिछे हरि लेखनी भरि नयन सलिले ।।	यह हरिदास अश्रुजलसे लेखनी भर कर लिख रहा है,
(मागो!) ठेलना तारे करुणा क'रे चरण कमले ।	माँ! इसको करुणा करके चरण-कमलसे दूर न हटाओ।

जय श्रीश्री गौर-विष्णुप्रियाकी जय! जय श्रीश्री गौर-विष्णुप्रियाकी जय!!

जय श्रीश्रीगौर-विष्णुप्रियाकी जय!!!

श्रीश्रीगौरचन्द्राय समर्पणमस्तु।

श्रीश्रीविष्णुप्रिया देवीका अहर्निश-रुदन

श्रीश्रीविष्णुप्रियाजीका तपोमय जीवन स्वयंमें अप्रतिम एवं अतुलनीय है। भारतीय इतिहास तथा वाङ्मयमें उनके समकक्ष कोई दूसरा पात्र दृष्टिगोचर नहीं होता। जीवनकी स्वर्णिम अवस्थामें इन्हें साक्षात प्रभु-स्वरूप पतिके संन्यास-ग्रहण जनित वियोगके दुःसह दुःखकी अपार वेदनाको स्वीकार करना पड़ा था। इनकी आँखोंका पानी कभी सूख नहीं पाया। बारहों महीने इन्होंने विरहकी तापाग्निमें अपने आपको तिल-तिल कर होमा। किस प्रकार इनका रोम-रोम अपने प्राणाधिक-प्रिय स्वामीके लिये विलख रहा था—इसका किञ्चित-सा आभास इन पदावलियोंमें वर्णित अंतरुंदनके स्वरोंसे हो सकता है।

(१)

फाल्गुने गौराङ्गचाँद
पूर्णिमा दिवसे।
उद्वर्त्तन, तैले स्नान
कराव हरिषे॥
पिष्टक, पायस, आार
धूप, दीप, गन्धे।
संकीर्त्तन कराइव
मनेर आनन्दे॥

ओ गौराङ्ग पँहु हे!
तोमार जन्म-तिथि पूजा।
आनन्दित नवद्वीपे
बाल-वृद्ध युवा॥

फाल्गुनमें गौराङ्ग
पूर्णिमाके अवसरपर,
प्रमुदित नहलाऊँगी
उबटन तेल लगाकर।
धूप - दीप - मृदुगन्ध
सुमन नैवेद्य सजाकर,
संकीर्त्तन करवाऊँगी
आनन्द हृदय भर॥

हे प्रभु! हे गौराङ्ग मनोहर!
तव प्राकट्य पूत तिथि पूजन—
में आबाल-वृद्ध नदियाके
जन सारे हैं आनन्दित मन॥

(२)

चैत्रे चातक पक्षी
पिउ पिउ डाके ।
ताहा शुनि प्राण कान्दे
कि कहिब काके ।।
बसन्ते कोकिल सब
डाके कुहु - कुहु ।
ताहा शुनि आमि
मूर्च्छा जाइ मुहुर्मुहु ।।
ओ गौराङ्ग पँहु हे !
आमि कि बलिते जानि ।
विन्धाइल शरे जेन
व्याकुल हरिणी ।।

चैत्र-मासमें चातक पक्षीका
पिऊ - पिऊ स्वर,
कहूँ किसे क्या ? प्राण
बिलखते उसको सुनकर ।
ऋतु वसन्तमें कुहु-
कुहु कोकिला मचाती,
सुन उसको मैं बार-बार
मूर्च्छित हो जाती ।।
हे प्रभु ! हे गौराङ्ग मनोहर !
क्या बोलूँ मैं ? कुछ न विदित ।
मैं व्याकुल हरिणी, मम उरमें
बिंधा हुआ नाराच निशित ।।

(३)

वैशाखे चम्पकलता
नूतन गामछा ।
दिव्य धौत कृष्णकेलि
वसनेर कौँचा ।।
कुंकुम चन्दन अङ्गे
सरु पैता काँधे ।
से रूप ना हेरि मुञि
जीब कोन छाँदे ।।
ओ गौराङ्ग पँहु हे !
विषम वैशाखेर रौद्र ।
तोमा नादेखिया मोर
विरह समुद्र ।।

नव दुकूल **वैशाख-मासमें**
स्वर्णिम सुन्दर,
कृष्णकेलि पट दिव्य धौत, पहने
चुनिया कर ।
चारु जनेऊ, कुंकुम-चन्दन
चर्चित - विग्रह,
देखे बिन यह रूप सकेंगे
प्राण कहाँ रह ?
हे प्रभु ! हे गौराङ्ग मनोहर !
विषम धूप वैशाख-मासकी ।
सिन्धु बन गयी विकट-विकलता
तव दर्शनकी अबुझ प्यासकी ।।

(४)

ज्यैष्ठेर प्रचण्ड-ताप
तपन सिकता ।
केमने बञ्चिबे प्रभु
पदाम्बुज राता ।।

सोङरि सोङरि प्राण
कान्दे निशि-दिन ।
छट्-फट् करे जेन
जल बिनु मीन ।।

ओ गौराङ्ग पँहु हे !
तोमार निदारुण हिया ।
अनले प्रवेश करि
मरिबे विष्णुप्रिया ।।

ज्येष्ठ मासके उग्र तापसे
तपती पथ - रज,
कैसे उसपर अरुण बचेंगे
प्रभु - पद - पंकज ?

सुधि कर-करके प्राण, बिलखते
हैं निशि - बासर,
जिस प्रकार है मीन तड़पती
जलके बाहर ।

हे प्रभु ! हे गौराङ्ग मनोहर !
निष्ठुर-निर्मम हृदय तुम्हारा ।
तनको देगी विष्णुप्रिया तज
पावकमें प्रवेशके द्वारा ।

(५)

आषाढ़े नूतन मेघ
दादुरीर नादे ।
दारुण विधाता मोरे
लागिलेक वादे ।।

शुनिया मेघेर नाद
मयूरीर नाट ।
केमने जाइव आमि
नदीयार वाट ।।

ओ गौराङ्ग पँहु हे !
मोरे सङ्गे लये जाओ ।
यथा राम तथा सीता
मने चिन्ति चाओ ।।

घन गरजे **आषाढ़ मासमें**
दादुर टेरे,
क्रूर विधाता पड़ा हुआ है
पीछे मेरे ।

मुदित मयूरी सुन घन-गर्जन
रही नृत्यकर,
किस प्रकार मैं निकलूंगी नदिया
के पथ पर ?

हे प्रभु ! हे गौराङ्ग मनोहर !
मुझे साथ अपने ले जाओ ।
जहाँ राम हैं वहीं जानकी
मनमें इसे विचारो-ध्याओ ।।

(६)

श्रावणे गलित धारा
घन विद्युल्लता ।
केमने बञ्चिब प्रभु
कारे कब कथा ।।

श्रावणमें अविराम झड़ी,
घन विद्युन्नर्त्तन,
कैसे जीऊँ किसे करूँगी
व्यथा निवेदन ?

लक्ष्मीर विलास-घरे
पालङ्के शयन ।
से सब चिन्तिया मोर
ना रहे जीवन ।।

लक्ष्मी-केलि-विलास-भवनमें
शयन-पलँग पर,
सोच-सोच जीवन मेरा
बुझनेको तत्पर ।।

ओ गौराङ्ग पँहु हे !
तुमि बड़ दयावान ।
विष्णुप्रिया प्रति
किछु कर अवधान ।।

हे प्रभु ! हे गौराङ्ग मनोहर !
दया तुम्हारी अतुल-अपरिमित ।
दयावान हो, नाथ ! ध्यान दो
विष्णुप्रियाके प्रति भी किंचित ।।

(७)

भाद्रे भास्वत ताप
सहने ना जाय ।
कादम्बिनी-नादे निद्रा
मदन जागाय ।।

तपन **भाद्रपदमें** सविताकी
सही न जाती,
मेघ - गर्जना निद्रागत
मन मदन जगाती ।

जार प्राणनाथ प्रभु
ना थाके मन्दिरे ।
हृदये दारुण शेल
वज्राघात शिरे ।।

स्वामिन् ! जिसके प्राणनाथ हैं
नहीं स्वगृहगत,
दारुण शल्य विंधा उसके उर,
सिर वज्राहत ।।

ओ गौराङ्ग पँहु हे !
विषम भाद्रेर खरा ।
प्राणनाथ नाहि जार
जीयन्ते से मरा ।।

हे प्रभु ! हे गौराङ्ग मनोहर !
विषम भाद्रपदकी खर ज्वाला ।
जीवित भी वह मृतक-तुल्य है
बिना प्राणपतिके जो बाला ।।

(८)

आश्विने अम्बिका पूजा	**आश्विनमें** अम्बा पूजन,
दुर्गा महोत्सवे ।	दुर्गा-उत्सव पर,
कान्त बिना जे दुःख	कान्त-विरह-दुख कैसे सकते
ता कार प्राणे सबे ।।	प्राण सहन कर ?
शरत समये जार	शरत्कालमें जिसके नाथ
नाथ नाहि घरे ।	नहीं हैं घर पर,
हृदये दारुण शेल	दारुण शल्य रहा उसका उर
अन्तरे विदरे ।।	खण्ड-खण्ड कर ।।
ओ गौराङ्ग पँहु हे !	हे प्रभु ! हे गौराङ्ग मनोहर !
मोरे कर उपदेश ।	मुझे उचित उपदेश सुनाओ ।
जीवने मरणे मोर	जीवन और मरणमें मेरा
करिह उद्देश ।।	कृपया क्या उद्देश्य बताओ ।।

(९)

कार्त्तिके हिमेर जन्म	**कार्त्तिक**-सुत, हेमन्त,
हिमालयेर वा ।	हिमालय-अनिल बुलाता,
केमने कौपीन वस्त्रे	किस प्रकार कौपीन-मात्र
आच्छादिबा गा ।।	तनको ढक पाता ?
कत भाग्य करि तोमार	भाग्य कमा कितना थी,
हैयाछिलाम दासी ।	हुई तुम्हारी चेरी,
एबे अभागिनी मुञि	अब अभागिनी मैं, ऐसी
हेन पापराशि ।।	पातककी ढेरी ।।
ओ गौराङ्ग पँहु हे !	हे प्रभु ! हे गौराङ्ग मनोहर !
तुमि अन्तरयामि ।	तुम अन्तर्यामी, उर-वासी ।
तोमार चरणे आमि	चरणोंमें क्या करूँ निवेदन,
कि बलिते जानि ।।	नहीं जानती कुछ यह दासी ।।

(१०)

अघ्राने नूतन धान्य
जगते विलासे ।
सर्व्व सुख घरे प्रभु
कि काज सन्न्यासे ।।

अगहन नूतन धान्य,
विलास जगतका लाया
प्रभु ! सभी सुख घरमें,
क्यों संन्यास सजाया ?

पाटनेते भोट प्रभुर
शयन कम्बले ।
सुखे निद्रा जाओ तुमि
आमि पद-तले ।।

रुचिर-शयन-पट पर निज
ले भूटानी कम्बल,
तुम सुखसे सोवो,
सेवूँ मैं चरण-कमल-तल ।।

ओ गौराङ्ग पँहु हे !
तोमार सर्व्व जीवे दया ।
विष्णुप्रिया मागे
राङ्गा चरणेर छाया ।।

हे प्रभु ! हे गौराङ्ग मनोहर !
सब जीवों पर दया तुम्हारी ।
मांग रही है, अरुण-चरण-युग-
छाया विष्णुप्रिया बेचारी ।।

(११)

पौषे प्रबल शीत
ज्वलन्त पावके ।
कान्त आलिङ्गने दुःख
तिलेक ना थाके ।।

पौषमासके प्रबल
शीतमें आग जगाकर,
कान्तालिङ्गन-सेवनसे दुख
रहे न तिल भर ।

नवद्वीप छाड़ि प्रभु
गेला दूर देशे ।
विरह - अनले
विष्णुप्रिया परवेशे ।।

चले गये हो दूर त्याग
नदिया, जीवनधन !
विरहानलमें होम रही है
विष्णुप्रिया तन ।।

ओ गौराङ्ग पँहु हे !
परवास नाहि शोहे ।
सङ्कीर्त्तन अधिक
सन्न्यास-धर्म्म नहे ।।

हे प्रभु ! हे गौराङ्ग मनोहर !
शोभन दूर-निवास नहीं है ।
संकीर्त्तनसे अधिक भला, क्या
महिमामय संन्यास कहीं है ?

(१२)

माघे द्विगुण शीत	द्विगुण **माघका** शीत
कत निवारिब ।	भला कैसे टारुँगी,
तोमा ना देखिया	तुमको देखे बिना प्राण
प्राण धरिते नारिब ।।	कैसे धारुँगी ?
एइ त दारुण शेल	दारुण शल्य हृदयमें यही
रहिल सम्प्रति ।	कसकता सम्प्रति,
पृथिवीते ना रहिल	पृथ्वी पर है नहीं
तोमार सन्तति ।।	तुम्हारी कोई सन्तति ।।
ओ गौराङ्ग पँहु हे !	हे प्रभु ! हे गौराङ्ग मनोहर !
मोरे लेह निज पाश ।	मुझको लो निज बांहोंमें भर ।
विरह सागर डूबे	लोचनदास तुम्हारा सेवक
ए लोचनदास ।।	डूब रहा विरहोदधि भीतर !!

श्रीश्रीविष्णुप्रियाष्टकम्

गौराकृतेर्भगवतो महिमार्णवस्य
श्रीप्रेमभक्तिरसदानविधौ विभोर्या * ।
साचिव्यशक्तिघनमूर्त्तिरिवेह भक्ति-
र्विष्णुप्रिया विजयतां जगतां जयश्रीः ॥१॥

चौदहों भुवनोंकी विजयलक्ष्मीरूपा भक्तिस्वरूपिणी भगवती विष्णुप्रियाकी सदा जय हो, जिनकी इस रूपमें भावना की जा सकती है कि महिमाके अगाध सागर भगवान् गौराङ्गदेवके प्रेम-भक्ति-रस-वितरणके कार्यमें उनका साथ देनेके लिये मानो उनकी सहकार शक्ति ही मूर्तरूप धारण करके प्रकट हुई हो ॥१॥

मायापुरेन्दु महिषी महिमोज्ज्वलश्री-
रभ्यर्च्यचारुचरणामरमुख्यवृन्दैः ।
या प्रेमभक्तिरसदा शुभदा नतानां
विष्णुप्रिया विजयतां जगतां जयश्रीः ॥२॥

जिनके चारुचरण बड़े-बड़े देवताओंके समूहों द्वारा (भी) सब प्रकार अर्चन करने योग्य हैं, जो (अधिकारियोंको) प्रेमभक्तिके रसका पान कराती तथा नमन करनेवालोंको शुभफल प्रदान करती हैं, वे समस्त लोकोंकी विजय-लक्ष्मीरूपा तथा अपनी (अलौकिक) महिमासे प्रकाशित शोभाको धारण करनेवाली, मायापुरको आह्लादित करनेवाले चन्द्रमारूप भगवान् श्रीकृष्ण-चैतन्यदेवकी महारानी भगवती विष्णुप्रियाकी सदा सर्वोपरि जय हो ॥२॥

देवी शुभाशय सनातनमिश्रपुत्री
श्रीपादसेवनरतानतदुःखहन्त्री ।
कान्तावरा द्विज पुरंदरनन्दनस्य
विष्णुप्रिया विजयतां जगतां जयश्रीः ॥३॥

सदाशय सनातनमिश्रकी आत्मजा तथा ब्राह्मणश्रेष्ठ (श्रीजगन्नाथ मिश्र) के आत्मज श्रीगौराङ्गदेवकी श्रेष्ठ पत्नी भगवती विष्णुप्रिया, जो चरण-सेवामें प्रेमपूर्वक लगे हुए भक्तजनोंके अशेष दुःखोंका नाश करनेवाली तथा सम्पूर्ण लोकोंकी विजयलक्ष्मीरूपा हैं, सदा जयशील हों ॥३॥

---

* पाठ भेद—विभाव्या

श्रीश्रीविष्णुप्रियाष्टकम्

वैकुण्ठनाथदयिताविततीविमृग्यैः
सौन्दर्यसौभगगुणैरनुवश्यकान्ता ।
वृन्दारकेन्द्रललनाकुलजुष्टकीर्ति-
विष्णुप्रिया विजयतां जगतां जयश्रीः ।।४।।

बैकुण्ठाधिपति भगवान् विष्णुकी प्रेयसीगण (भगवती लक्ष्मी, भूदेवी आदि) भी जिन्हें विशेष चावके साथ चाहती रहती हैं (परन्तु पाती नहीं), ऐसे सौन्दर्य एवं सौभाग्यादि अनुपम गुणोंसे जिन्होंने अपने प्रियतम प्रभु श्रीगौराङ्गदेवको वशमें कर रखा है तथा जिनकी कीर्तिका बड़े-बड़े देवताओंकी ललनाएं भी गान करती रहती हैं, वे सम्पूर्ण जगतकी विजयलक्ष्मीरूपा भगवती विष्णुप्रिया सदा जयशील हों ।।४।।

कारुण्यसौरभसुवासितसर्वविश्वा
लावण्यवीचिपरिदिग्धदिगन्तरा या ।
श्रीमच्छचीहृदयनन्दननन्दयित्री
विष्णुप्रिया विजयतां जगतां जयश्रीः ।।५।।

जिनकी करुणाकी सुगन्धसे विश्वब्रह्माण्ड सुरभित है तथा लावण्यरूप समुद्रकी तरंगोंसे दिशाओंके अन्तराल परिव्याप्त हैं तथा जो परम सौभाग्य-शालिनी शची माताके हृदयनन्दन भगवान् श्रीगौराङ्गदेवको भी (जो स्वयं आनन्दरूप हैं) आह्लादित करनेवाली हैं, समस्त भुवनोंकी विजयलक्ष्मीरूपा वे भगवती विष्णुप्रिया सदा जयशील हों ।।५।।

या श्रीशचीसुतकटाक्षशरार्द्दितापि
लीलोच्छलन्मदनकार्मुकसंनिभभ्रूः ।
जेत्रीव वर्म्म विपुलं पुलकं वहन्ती
विष्णुप्रिया विजयतां जगतां जयश्रीः ।।६।।

भगवान् शचीनन्दनके कटाक्षवाणोंसे पीड़ित होनेपर भी विलासपूर्वक तने हुए अपनी भृकुटिरूप कंदर्पशरासनके प्रभावसे जो उन्हें (अनायास) स्मर-समरमें जीत लेती हैं और सघन पुलकावलीरूप कवचको धारण किये रहती हैं, वे समस्त भुवनोंकी विजयलक्ष्मीरूपा भगवती विष्णुप्रिया सदा जयशील हों । ।।६।।

यानङ्गतप्तनिजकान्तकरीन्द्रसङ्गा-
दारब्धतुङ्गरससंगररङ्गनेत्री ।
कंदर्पकोटिजयिगौरमनोऽभिरामा
विष्णुप्रिया विजयतां जगतां जयश्रीः ॥७॥

अनंग-वाणोंसे पीड़ित गजेन्द्रसदृश अपने प्रियतमके साथ प्रस्तुत प्रकृष्ट रसमय संग्रामकी रंगस्थलीका नेतृत्व करती हुई जो करोड़ों कामदेवोंको पराजित करनेवाले उन गौरचन्द्रके चित्तको भी बरबस मोह लेती हैं, वे त्रिभुवनकी विजयलक्ष्मीरूपा श्रीश्रीविष्णुप्रिया सदा जयशील हों ॥७॥

प्रेमामृताब्धिकनकाङ्गहरे रसज्ञा
या सर्वकामवरदा हृदयाधिदेवी ।
केलीकलासुकुशला सुखदा सखीनां
विष्णुप्रिया विजयतां जगतां जयश्रीः ॥८॥

जो प्रेम-सुधा-सागर श्रीगौरहरिके रस (प्रेम) की पूर्ण मर्मज्ञ ही नहीं अपितु उनके हृदयकी अधिष्ठातृदेवी हैं, सम्पूर्ण अभीष्ट वरोंको देनेवाली, केलीकलाओंमें सुचतुर तथा सखीजनोंको आनन्द दान करनेवाली हैं, वे त्रिलोकीकी विजयलक्ष्मीरूपा भगवती विष्णुप्रिया सदा जयशील हों ॥८॥

केनचिद् गौरदासेन राधिकावनसेविना ।
नवद्वीपं समाश्रित्य लिखितं पद्यमष्टकम् ॥६॥

वृन्दावननिवासी किसी गौर-सेवकने नवद्वीपकी शरण लेकर उपर्युक्त आठ पद्योंकी रचना की ॥६॥

यः पठेच्छृणुयान्नित्यं श्रद्धया परया मुदा ।
विन्देद्विष्णुप्रियादेवीपददास्यमसंशयम् ॥१०॥

जो श्रद्धापूर्वक परम प्रसन्नतासे उपर्युक्त अष्टकका नित्य पाठ एवं श्रवण करेगा, वह विष्णुप्रियादेवीकी चरण-सेवा निस्संदेह प्राप्त करेगा ॥१०॥

इति श्रीगौराङ्गमहाप्रभु-बाल्यलीलापरिकर-तैर्थिकविप्र-सत्यभानुउपाध्याय-स्यात्मज-प्रसिद्धपदकर्तृ द्विज-बलरामदासठक्कुरस्य वंशोद्भव-प्रभुपाद-श्रीहरिदास-गोस्वामिकृतं श्रीश्रीविष्णुप्रियाष्टकं स्तोत्रं सम्पूर्णम् ।

श्रीश्रीविष्णुप्रियावल्लभार्पणमस्तु ।